उन्नीसवीं शताब्दी का अजमेर
(Ajmer in Ninteenth Century)

लेखक
डा० राजेन्द्र जोशी
इतिहास विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
(Dr. Rajendra Joshi)



राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
जयपुर-8

शिक्षा तथा समाज कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार की विश्वविद्यालय ग्रन्थ योजना के अन्तर्गत राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी द्वारा प्रकाशित :

प्रथम संस्करण—१९७२

मूल्य—१६.००

मुद्रक—
अणिमा प्रिंटर्स,
पुलिस मेमोरियल,
जयपुर-४

स्वर्गीय श्री विष्णुदत्त जी शर्मा
की पुण्य स्मृति में
श्रद्धाञ्जलि के रूप में

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

प्रस्तावना

भारत की स्वतन्त्रता के बाद इसकी राष्ट्रभाषा को विश्वविद्यालय शिक्षा के माध्यम के रूप में प्रतिष्ठित करने का प्रश्न राष्ट्र के सम्मुख था। किन्तु हिन्दी में इस प्रयोजन के लिए अपेक्षित उपयुक्त पाठ्यपुस्तकें उपलब्ध नहीं होने से यह माध्यम-परिवर्तन नहीं किया जा सकता था। परिणामत. भारत सरकार ने इस न्यूनता के निवारण के लिए "वैज्ञानिक तथा पारिभाषिक शब्दावली आयोग" की स्थापना की थी। इसी योजना के अन्तर्गत पीछे १९६९ में पांच हिन्दी भाषी प्रदेशों में ग्रंथ-अकादमियों की स्थापना की गयी।

राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी हिन्दी में विश्वविद्यालय स्तर के उत्कृष्ट ग्रंथ-निर्माण में राजस्थान के प्रतिष्ठित विद्वानों तथा अध्यापकों का सहयोग प्राप्त कर रही है और मानविकी तथा विज्ञान के प्रायः सभी क्षेत्रों में उत्कृष्ट पाठ्य ग्रंथों का निर्माण करवा रही है। अकादमी चतुर्थ पंचवर्षीय योजना के अंत तक तीन सौ से भी अधिक ग्रंथ प्रकाशित कर सकेगी, ऐसी हम आशा करते हैं। प्रस्तुत पुस्तक इसी क्रम में तैयार करवायी गयी है। हमें आशा है कि यह अपने विषय में उत्कृष्ट योगदान करेगी।

चंदनमल बैद
अध्यक्ष

यशदेव शल्य
का. वा. निदेशक

प्राक्कथन

अजमेर नगर राजस्थान की हृदयस्थली रहा है। यह महत्वपूर्ण नगर आधुनिक इतिहास मे ही नहीं अपितु भारत के प्राचीन इतिहास मे भी आकर्षण एव घटनाओं का केन्द्र बिन्दु रहा है। अंग्रेजी राज्यकाल मे सुदीर्घकाल तक यह एक राजनीतिक प्रकाश स्तम्भ के रूप मे अवस्थित रहा है।

आधुनिक इतिहास मे तो अजमेर बहुत समय से समूचे राजस्थान मे सभी राजनीतिक हलचलो का एक अप्रतिम केन्द्र रहा है। प्रशासन मे आधुनिकता एव वैज्ञानिकता के तत्त्व ने सभवत इसी नगर का सर्वप्रथम स्पर्श किया और फिर समूचा राजस्थान उससे किसी न किसी रूप में प्रभावित हुआ। इसलिए अजमेर-मेरवाडा के प्रशासन के अध्ययन का ऐतिहासिक महत्व हो जाता है क्योकि सच्चे अर्थों मे प्रशासन का शुभारम्भ आधुनिक इतिहास मे अजमेर से ही हुआ और कालातर मे समूचे रजवाडो ने प्रशासन का सूत्र किसी न किसी रूप मे यही से ग्रहण किया। यह स्वय स्पष्ट है कि अजमेर के राजनीतिक एव प्रशासनिक स्पदन ने समूचे राजस्थान को सुदीर्घकाल तक स्पदित रखा। अभी तक वैज्ञानिक दृष्टि से अजमेर-मेरवाडा के प्रशासन का अध्ययन नहीं हुआ था। सभवत इस दिशा मे प्रस्तुत ग्रन्थ पहला कदम है। लेखक ने ३ वर्षों के कठिन परिश्रम मे सभी मौलिक स्रोतो का अध्ययन किया और पहली बार सम्बन्धित मौलिक सामग्री के आधार पर समूची सूचनाए एकत्र कर उसे सुश्रृंखलित रूप मे प्रस्तुत किया।

ब्रिटिश राज्यकाल मे अजमेर-मेरवाडा के प्रशासन का एक सागोपाग चित्र इस ग्रन्थ में प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है और इसके लिए छोटी से छोटी

और बड़ी से बड़ी सूचना मौलिक एवं अधिकृत सूत्रों से ही ग्रहण की गई है। मैं उन सबके प्रति कृतज्ञ हूं जिनसे सूचना-संचय में मुझे सहायता मिली है। स्वर्गीय श्री नाथूराम खड़गावत के प्रति मैं विशेष रूप से कृतज्ञ हूं जिनके सौजन्य से मेरी पहुंच मौलिक सामग्री के लेखागार तक हो सकी।

यह ग्रन्थ विनीत लेखक की ओर से अपनी जन्मभूमि के प्रति एक मौन श्रद्धाञ्जलि भी है। अजमेर मेरी जन्मभूमि है—स्वर्गादपि गरीयसी।

राजस्थान विश्वविद्यालय,
जयपुर।

राजेन्द्र जोशी

१

ऐतिहासिक सन्दर्भ

भौगोलिक एवं प्राकृतिक परिचय

अजमेर-मेरवाडा जो इन दिनो वर्तमान अजमेर जिले का भू भाग है, स्वाधीनता के पूर्व, अंग्रेज शासित भारत मे चीफ कमिश्नरी का एक छोटा सा प्रांत मात्र था। यह राजस्थान के केन्द्र मे स्थित था। चारो ओर से राजपूत रियासतो से घिरा हुआ था। इसके पश्चिम मे मारवाड, उत्तर मे किशनगढ और मारवाड, पूर्व मे जयपुर और किशनगढ तथा दक्षिण मे मेवाड की रियासतें थी। इसका कुल क्षेत्रफल २,७७१ वर्गमील तथा जनसख्या ३८०,३८४ थी। अजमेर मेरवाडा की स्थिति पूर्वी गोलार्द्ध मे २५° २३' ३०" और २६° ४१ अक्षाश तथा ७३° ४७' ३०" और ७५° २७' ०" देशान्तर के मध्य थी। अंग्रेजो के शासन काल मे अजमेर दो जिलो (अजमेर व मेरवाडा) मे विभक्त था जिनका क्षेत्रफल क्रमश २०६९ और ६४१ वर्गमील था।[1]

अरावली पर्वत श्रेणी जो दिल्ली से आरम्भ होती है वास्तव मे अजमेर की उत्तरी सीमा से अपना मस्तक उठाती है और उस स्थान पर जहा अजमेर स्थित है अपना पूर्ण स्वरूप प्रदर्शन करने लगती है। अजमेर के दक्षिण मे कुछ ही मील की दूरी पर यह पर्वत श्रेणी दुहरी हो जाती है।[2] अजमेर नदियो से वचित है। बनास केवल इसके दक्षिणी पूर्वी सीमान को छूती है और खारी व ढाई नदिया

जिले के दक्षिणी पूर्वी भू-भाग के कुछ अंशो को ही प्रभावित करती हैं। साबरमती जो अजमेर की परिक्रमा सी करती है, गोविन्दगढ मे सरस्वती से संगम करती हुई मारवाड मे लूनी नदी के नाम से प्रख्यात होकर कच्छ की खाडी मे गिरती है।[3]

भारत के तलहटी क्षेत्र में स्थित होने और मरुस्थलीय भू-भाग का सीमांत होने के कारण यह बंगाल की खाडी और अरबसागर के मानसूनो के लाभ से वंचित सा रह जाता है। अजमेर मे बहुत कम और अनिश्चित वर्षा होती है। इससे यहा आये दिन अकाल एवं अभाव तथा सूखे की स्थिति बनी रहती है। वर्षा की भारी कमी के बावजूद अजमेर क्षेत्र में खरीफ और रबी की दो फसलें होती हैं। कुओं और जलाशयो द्वारा सिंचित कृषि से लोगो को गुजारे लायक खाद्यान्न उपलब्ध हो जाता है। जिले मे केवल दो झीलें हैं जिनमे एक पुष्कर मे तथा दूसरी सरगाव और करन्थिया के मध्य स्थित है। करन्थिया झील ही अकेली ऐसी है, जिसका पानी सिंचाई के काम आता है। कर्नल डिक्सन के द्वारा इस जिले मे कई तालाबो के निर्माण के कारण इस क्षेत्र मे सदियो मे पानी की कमी नही रहती।[4]

अजमेर मेरवाडा की वनस्पति और पशु-पक्षी राजपूताना के पूर्वी भाग में पाये जाने वाली वनस्पति और पशु पक्षियो से मिलते हैं। वृक्षों मे अधिकांश नीम, बबूल, पीपल, बरगद, सेमल सालर, ढाव, खेजडा और गागा मिलते हैं। यद्यपि बाघ बहुत ही कम थे, तथापि चीते, लकडबग्घा, सूअर, काला हरिण, नीलगाय, बतखें, तीलोर, जलमुर्गा, खरगोश और तीतर साल भर नजर आते थे। अजमेर के प्रथम सुपरिंटेंडेंट ने अपने प्रशासनकाल मे यहा घने जगलो का उल्लेख किया है परन्तु बाद मे यह सम्पूर्ण क्षेत्र वृक्षविहीन सा होगया था। ब्यावर शहर, नसीराबाद की छावनी तथा तालाब निर्माण के लिए चूना तैयार करने मे ईंधन की आवश्यकता के कारण, वन, वृक्ष विहीन हो चले थे और कहीं कही इक्के दुक्के पेड नजर आते थे। सन् १८७१ मे जगलात नियम लागू किये गये और वन विभाग न कुछ क्षेत्र वन उगाने के लिए अपने अधिकार मे लिए जिसके फलस्वरूप इस राज्य के सुरक्षित वनों का क्षेत्र १४२ वर्गमील और १०१ एकड होगया था।[5]

राजपूती रियासतों मे अजमेर के लिये संघर्ष

फरिश्ता के अनुसार अजमेर का अस्तित्व ६६७ ईस्वी मे भी था जब कि हिन्दुओ ने सुबुक्तगीन के विरुद्ध संघर्ष के लिए संघ स्थापित किया था।[6] किन्तु वास्तव में अजमेर शहर मूल रूप से अजयमेरु के नाम से प्रख्यात था और ११२३ ईस्वी मे अजयराज ने इसकी स्थापना की थी।

अजयराज के पुत्र और उत्तराधिकारी अर्णोराज के शासन काल मे लाहौर और गजनी के यमीनी अजमेर तक चढ आये थे। नगर के बाहर खुले मैदान मे हुए युद्ध में यमीनी सेनापति बुरी तरह से हारा और चौहानो से अपनी जान बचाने को

भाग गया था। कई मुस्लिम सैनिक अपने भारी भरकम जिरह बख्तरों के बोझ से मर गये और अधिकांश जल शून्य मरु भूमि मे प्यास से छटपटाते हुए दम तोड बैठे। अजयमेरु ने इस तरह यश भरी विजय श्री ग्रहण की और उसकी गणना शक्तिशाली दुर्ग के रूप मे की जाने लगी।[७] अर्णोराज ने मालवा, हरियाणा और अन्य सीमावर्ती क्षेत्रों पर चढाई करके अपने राज्य की सीमाए विस्तृत की थी। जयानक लिखते हैं कि "उसे वर्तमान मन्दिरो का निर्माता तथा भावी मन्दिरो का प्रोत्साहक कहा जायेगा क्योंकि यदि वह मुसलमानों को नही हराता तो वे बिना उल्लेख के ही रह जाते।[८] यद्यपि उपर्युक्त वाक्य प्रशस्ति मात्र है, तथापि इसमे सत्य का पर्याप्त अंश है।

विग्रहराज चतुर्थ का शासनकाल—

अर्णोराज की हत्या कर उनका पुत्र जगद्देव अजमेर की गद्दी पर बैठा परन्तु वह अधिक समय तक शासन नही कर सका, क्योंकि उसके जघन्य कृत्यों से असन्तुष्ट उसके छोटे भाई विग्रहराज तथा अन्य सरदारों ने उसके विरुद्ध विद्रोह कर उसे मार डाला। विग्रहराज ने चालुक्य साम्राज्य के विरुद्ध कतिपय सैनिक अभियानों का नेतृत्व किया था।[९] विग्रहराज ने भादनक को भी पराजित किया था।[१०] बिजोल्या प्रशस्ति में उल्लिखित विजय अभियानों मे विग्रहराज के दिल्ली और हांसी के अभियान महत्वपूर्ण हैं। दिल्ली और हांसी पर विग्रहराज के अधिकार के पश्चात् चौहानो और तोमरो के बीच लम्बे समय से जारी कलह का अन्त हुआ। मुसलमानो, गढ़वालो और चौहानो से निरन्तर संघर्ष के कारण तोमर साम्राज्य अत्यन्त शिथिल हो गया था, इसीलिए अन्त मे उन्हे शाकम्भरी चौहानों का आधिपत्य स्वीकार करना पड़ा। ११६५ ईस्वी मे, दिल्ली पर मदनपाल तोमर का शासन था।[११] मुहम्मद गौरी के आक्रमण के समय दिल्ली का सीधा शासन पृथ्वीराज तृतीय के हाथो म न होकर एक अधीनस्थ राजा के हाथों मे था जो कदाचित् मदनपाल के वंशधरो में से रहे होंगे।[१२]

दिल्ली पर विजय प्राप्ति से शाकम्भरी और अजमेर के चौहान शक्तिशाली साम्राज्य के स्वामी बन गये थे और उनके कधो पर मुसलमान आक्रांताओ से देश की रक्षा का भार आ पड़ा था। चौहानो के उत्कर्षकाल मे अजमेर की चतुर्मुखी प्रगति हुई। विग्रहराज चौहान को यह श्रेय है कि उसने कतिपय हिन्दू राजाओं को गजनवी साम्राज्य से मुक्ति दिलाई थी। वह केवल महान् विजेता ही नहीं था परन्तु एक अनुभवी शासक भी था। वह साहित्य मर्मज्ञ, कला प्रेमी और शिल्पकला का ज्ञाता था। उसे ही अजमेर की समृद्धि का अधिकाश श्रेय है।[१३]

उसने एक उत्कृष्ट संस्कृत नाटक 'हरकेलि' की रचना की थी और अजमेर में 'सरस्वती कंठाभरण महाविद्यालय' स्थापित किया था। ऐसा कहा जाता कि यह

न्नोज द्वारा धार में स्थापित सरस्वती कठामरण महाविद्यालय के आधार पर था। यद्यपि सुबुक्तगीन के समय मे इसे मस्जिद म परिवर्तित कर दिया गया था, परन्तु अभी भी इसकी आकृति एव स्वरूप प्रकट करते हैं कि यह हिन्दू कलाकृति थी। कर्नल टॉड के अनुसार यह प्राचीन हिन्दू शिल्पकला का एक सम्पूर्ण एव कलात्मक स्मारक है।[१४] कन्नीघम ने भी इस भव्य भवन की मुक्तकठ से प्रशसा की है।[१५]

विग्रहराज ने ही प्रसिद्ध विशालसर जलाशय का निर्माण करवाया था। यह ढाई मील के घेरे म है।[१६] विग्रहराज ने अपने पूर्व नाम विसाल के आधार पर विसालपुरा नामक एक नगर भी बसाया था। यह नगर गोरवाड पर्वत के मध्य दर्रे के बीच स्थित है जिसके दोनो ओर दो ऊची सकरी पर्वतमालाए हैं। उनके बीच जलधारा प्रकट होती है जो मेवाड म राजमहल तक गई है और वहा से वह बनास में मिल गई है। पहाड सकडे दर्रे के रूप म है परन्तु अजमेर के निकट आकर वह खुले विस्तृत मैदान का स्वरूप ग्रहण कर लेता है जहा बनास नदी वर्षा के जल से एक बडे जलाशय का रूप लेती है। इसे विसलदेव के पिता आनाजी के नाम पर आना-सागर कहा जाता है।[१७] पृथ्वीराज विजय के अनुसार विग्रहराज चतुर्थ ने उतने ही देवालय भी बनवाये जितने उसने पहाडो दुर्ग विजय किये थे। मुस्लिम विजेताओं की धर्मान्धता के कारण इनमे से केवल कुछ ही बच पाये थे। विग्रहराज चतुर्थ का शासनकाल सपादलक्ष के इतिहास मे स्वर्णयुग रहा है।

तुर्कों का प्रवेश—

पृथ्वीराज तृतीय के शासनकाल में मुसलमानो के विरुद्ध सघर्ष निरतर जारी रहा परन्तु चौहानो एव गुजरात के चालुक्यो के आपसी सघर्ष के कारण मुसलमानों के विरुद्ध पूर्ण शक्ति नही लगाई जा सकी थी। जब पृथ्वीराज द्वितीय ने शासन भार सम्भाला तब चौहानो को दक्षिण मे चालुक्यो से ही नही परन्तु उन्हे पूर्व मे कन्नोज के गहड़वालों से भी युद्ध करना पडा। यही वह काल था जब मुहम्मद गोरी के नेतृत्व में मुसलमानो ने भारत पर आधिपत्य के लिए गभीर प्रयत्न किए और यह दुर्भाग्य ही था कि ऐसे समय भी भारतीय राजा लोग अपने मतभेदो को मिटा नहीं सके। तराई की दूसरी लडाई मे पृथ्वीराज की हार के बाद अजमेर पर सुल्तान ने अधिकार कर लिया और वहा का चौहान शासक पकडा गया और उसे मार डाला गया। परिणामस्वरूप अजमेर को भयकर लूट पाट और हिंसा का शिकार होना पडा।[१८]

ताजुल मासीर के लेखक ने जो शाहबुद्दीन गोरी का समकालीन था—अजमेर की अत्यन्त अलकृत भाषा मे प्रशसा की है।[१९] अपने अल्पकालीन प्रवास मे सुल्तान ने बहुत सारे देवालयो एव सास्कृतिक प्रतिष्ठानो को ध्वस्त किया। वीसलदेव का महाविद्यालय नष्ट कर दिया गया और उसके एक भाग को मस्जिद का रूप दे दिया गया। इसी भवन मे बाद मे शम्सुद्दीन अलतमश ने (१२११–१२३६ ई०) सात

महराबें जुड़वाई थी। चौहानो की पराजय के बाद अजमेर में सूबेदार रहने लगा और नगर की समृद्धि को इतना धक्का लगा कि पन्द्रहवी शती के मध्य तक ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती की मजार के पास जगली पशु और बाघ घूमते हुए नजर आते थे।[२०] इस तरह उत्तरी भारत के इतिहास म अजमेर की यशोगाथा का अंत हुआ और तत्पश्चात् अजमेर राजस्थान के हृदय म मुस्लिम चौकी की तरह बना रहा जिसका उद्देश्य राजपूत राजाओ पर नियन्त्रण रखना था।

सन् ११९३ में मुहम्मद गौरी के हाथो पृथ्वीराज की पराजय के बाद अजमेर मुसलमान गतिविधियो का एक केन्द्र बन गया। मुहम्मद गौरी ने स्वय अजमेर के निकटवर्ती पड़ौसी क्षेत्रो के विरुद्ध सैनिक अभियान का नेतृत्व किया परन्तु अजमेर पर पूरी तरह मुसलमान शासन को स्थापित करने का भार कुतुबुद्दीन एबक को सौंपा। पृथ्वीराज के छोटे भाई हरिराज ने जिसे फरिश्ता ने हेमराज और हसन निजामी ने जिसे हीराज ठहराया है, अपने भतीजे को, जिसने मुसलमानों का आधिपत्य स्वीकार कर रखा था गद्दी से उतार कर स्वयं अजमेर का राजा बना। हरीराज के सेनापति छत्रराज ने दिल्ली पर आक्रमण किया, परन्तु कुतुबुद्दीन के हाथो पराजित होकर उसे अजमेर भाग आना पड़ा। कुतुबुद्दीन ने उसका अजमेर तक पीछा किया तथा हरिराज को युद्ध मे पराजित कर अजमेर पर अधिकार कर लिया।[२१] उसका उद्देश्य अजमेर से लेकर अन्हिलवाड़ा[२२] तक का क्षेत्र जीतना था परन्तु मेरो ने राजपूतो के सहयोग से उसे भारी पराजय दी जिसमे उसे घायल होकर प्राण बचाने के लिए भाग कर अजमेर के किले मे शरण लेनी पड़ी। पीछा करते हुए राजपूतो ने अजमेर दुर्ग को घेर लिया। यह घेरा कई महीनो तक चला परन्तु गजनी से कुमुक पहुचने पर राजपूतों को पीछे हटना पड़ा।[२३] कुतुबुद्दीन की मृत्यु के बाद राजपूतो ने कुछ काल के लिए तारागढ़ पर पुन अधिकार कर लिया था।[२४] परन्तु इल्तुतमीश ने शीघ्र ही उन्हें खदेड़ कर अजमेर पर अपना अधिकार कर लिया। तब से लेकर तैमूर के आक्रमण तक अजमेर दिल्ली सल्तनत के अधीन बना रहा।[२५]

अजमेर चौदहवी सदी के अन्त तक दिल्ली सल्तनत के कब्जे मे रहा। इन दो सदियो के इतिहास मे अजमेर के बारे मे वहा के सूबेदारो के परिवर्तन की चर्चा को छोड़कर अन्य किसी तरह का विशेष उल्लेख नही मिलता है।[२६]

तैमूर के आक्रमण और अकबर द्वारा अजमेर पर विजय के बीच के समय मे अजमेर ने कई सत्ता परिवर्तन देखे। पहले मालवा के मुसलमान सुल्तानो इसके बाद गुजरात के सुल्तान और अत मे राजपूतों के अधिकार मे यह रहा। इस समय में नगर की समृद्धि का काफी ह्रास हुआ। सन् १३९७ और सन् १४०९ के मध्यवर्ती काल मे, जब दिल्ली सल्तनत को दिल्ली पर भी अपना अधिकार बनाये रखना कठिन लगता था, सिसोदिया राजपूतो ने मारवाड़ के राव रणमल[२७] के नेतृत्व मे

जो उन दिनों अपनी बहन के पुत्र मोकल की बाल्यावस्था के कारण मेवाड़ के प्रशासन की देखरेख का काम करते थे, अजमेर पर आक्रमण कर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया था। अजमेर सन् १४५५ तक मेवाड़ के अधीन रहा। उसी वर्ष मांडू के सुल्तान महमूद खिलजी[२८] ने अजमेर के हाकिम गजधरराय[२९] को पराजित कर अजमेर अपने अधिकार में कर लिया था। पचास वर्ष के अंतराल के बाद राणा रायमल के पुत्र पृथ्वीराज[३०] ने अजमेर के गढ़ बीटली (तारागढ़ दुर्ग) पर अधिकार कर एक बार पुनः इस क्षेत्र पर मेवाड़ का आधिपत्य स्थापित किया[३१]।

गुजरात के सुल्तान बहादुरशाह[३२] ने सन् १५३३ में शमशेरउल मुल्क[३३] को भेजकर अजमेर पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया था। कदाचित् अजमेर पर हमेशा के लिए गुजरात का अधिपत्य हो जाता, परन्तु केवल दो वर्ष बाद ही मेड़ता के राव वीरमदेव[३४] ने गुजरात के हाकिम को अजमेर से खदेड़ दिया[३५]। मारवाड़ के राव मालदेव[३६] ने सन् १५३५ में इसे सीधे अपने नियन्त्रण में ले लिया और सन् १५४३ तक इसे अपने अधिकार में रखा[३७] उसके बाद शेरशाह सूरी के मारवाड़ पर आक्रमण के समय अजमेर उसके अधिकार में चला गया[३८]।

इस्लाम शाह सूर[३९] के पतन के पश्चात् सन् १५५६ में हाजीखान[४०] ने अजमेर पर अधिकार कर लिया था परन्तु अकबर का मुकाबला करने में असमर्थ होने के कारण वह गुजरात भाग गया और अकबर के सेनापति कासिम खान ने अजमेर दुर्ग पर बिना किसी संघर्ष के अधिकार स्थापित कर लिया[४१]।

दिल्ली साम्राज्य की महत्वपूर्ण शृंखला में जुड़ जाने से अजमेर सन् १७३० तक मुगल साम्राज्य का अंतरंग भाग बना रहा। मुगलों के अधीन अजमेर सम्पूर्ण राजपूताना प्रान्त या सूबे का सदर मुकाम था। राजपूताना के मध्यवर्ती होने से मुगलशासकों के लिए अजमेर पर आधिपत्य बनाये रखना अत्यन्त महत्वपूर्ण था। सैनिक दृष्टि से यहां का किला भी दुर्गम दुर्जेय था। अजमेर एक ओर उत्तर भारत से गुजरात के मार्ग तथा दूसरी ओर मालवा के मार्ग का नियन्त्रण करता था। एक सुदृढ़ किला होने के साथ ही अजमेर व्यापार व्यवसाय का महत्वपूर्ण केन्द्र भी था। इसकी सुदृढ़ स्थिति का कारण यहां की जलवायु था। रेतीले भूभागों की तरह यहां का पानी खारा न होकर स्वादिष्ट था। मुगल सम्राटों को इसका महत्व समझने में देर नहीं लगी और अजमेर शाही निवास का एक महत्वपूर्ण स्थान बन गया[४२]।

सम्राट अकबर अजमेर की समृद्धि में अत्यधिक रुचि रखता था। उसने शहरपनाह बनवाई, खास (दरगाह) बाजार और शस्त्रागार बनवाये। वह बहुधा साल में एक बार अजमेर आया करता था। जहांगीर अजमेर में तीन साल तक रहा। उसने यहां महल बनवाए और आनासागर की पाल पर एक उद्यान दौलतबाग का निर्माण करवाया। शाहजहां को अजमेर की सुन्दरता में चार चांद लगाने का

श्रेय है। उसने आनासागर पर संगमरमर की बारादरी और दरगाह में जामामस्जिद का निर्माण करवाया। औरंगजेब भी सन् १६५६ मे अजमेर के निकट देवराई[४३] की निर्णायक लडाई जीतने के बाद ही वास्तविक रूप से दिल्ली की गद्दी प्राप्त कर सका था। उसके पुत्र अकबर ने अजमेर के निकट युद्ध मे उसे लगभग हराने की स्थिति पैदा कर दी थी। औरंगजेब बडी कठिनाई से यह विद्रोह शांत कर पाया था[४४]।

अकबर के साम्राज्य मे राजपूताना और गुजरात के विरुद्ध मुगल अभियानों मे अजमेर एक दृढ मुगल छावनी बना रहा। मुगल सम्राट ने इसे एक सूबे का रूप दिया और जयपुर, जोधपुर, जैसलमेर, बीकानेर, सिरोही इसके अधीनस्थ कर दिये। आइन-ए-अकबरी के अनुसार अजमेर का सूबा ३३६ मील लंबा और ३०० मील चौडा था और इसकी सीमा पर आगरा, दिल्ली, मुल्तान और गुजरात स्थित थे। इसके अतर्गत १८७ सरकारें और १६७ परगने थे जिनका कुल राजस्व २८, ६१, ३७, ६६८ दाम या ७१, ५३, ४४ रुपये था। मुगल साम्राज्य के कुल राजस्व १४, १६, ०६५८४ रुपयों मे से अजमेर का अंश ७१, ५३, ४४६ रुपये था।[४५] इस सूबे पर मुगल सेना के लिए ८६, ५०० घुडसवार, ३,४७ ००० पैदल सैनिक प्रदान करने की जिम्मेदारी थी। जिनमे अजमेर सरकार को जिसके अन्तर्गत २८ महल थे १६ हजार घुडसवार और ८४,००० हजार पैदल सैनिक प्रदान करने होते थे। अजमेर दो सौ वर्षों से भी अधिक समय तक मुगल साम्राज्य का अंग बना रहा[४६]।

औरंगजेब की मृत्यु के बाद मुगल साम्राज्य का पतन आरम्भ हुआ। फर्रुखसियर[४७] के शासनकाल मे जोधपुर नरेश अजीतसिंह अधिक शक्तिशाली बन गए थे। यहा तक कि सैय्यद बंधु[४८] अपनी स्थिति को बनाए रखने के लिए उन पर निर्भर थे और एक तरह से महाराजा अजीतसिंह अपने समय मे युद्ध और शांति के निर्णायक माने जाते थे[४९]। सन् १७१६ मे सैय्यद बंधुओ के पतन के बाद अजीतसिंह ने अजमेर पर आधिपत्य कर लिया था[५०]। सन् १७२१ मे मुहम्मद शाह ने अजमेर को वापस लेने का प्रयत्न किया। उसने काजी मुजफ्फर के नेतृत्व मे अजमेर पर आक्रमण के लिए सेना भेजी परन्तु अजीतसिंह के बडे पुत्र अभयसिंह ने इस आक्रमण को विफल कर दिया। अपनी शक्ति का प्रदर्शन करने[५१] के दृष्टिकोण से अभयसिंह ने इसके बाद शाहजहापुर व नारनौल पर चढाई कर इन्हे खूब लूटा तथा कई ग्रामो को खडे खडे आग लगा दी[५२]।

इस कठिन परिस्थिति मे जयपुर के शासक जयसिंह ने मुगल सम्राट की मदद की। उन्होने अजमेर पर आक्रमण किया, अमरसिंह जिन पर कि अभयसिंह की अनुपस्थिति में अजमेर की रक्षा का भार था दो महीनो से अधिक इसकी रक्षा नहीं कर सके। फलस्वरूप दोनो पक्षों के बीच जो संधिवार्ता हुई उसके अनुसार अजमेर मुगल साम्राज्य को सौंप देना पडा[५३]।

सन् १७३० में गुजरात ने सरबुलन्दखान[२४] के नेतृत्व में दिल्ली की अधीनता अस्वीकार कर दी थी। इस परिस्थिति में मुगल सम्राट ने उसके विरुद्ध अभयसिंह से सहायता मांगी और यह वचन दिया कि उसे अजमेर और गुजरात का हाकिम बना दिया जायेगा[२५]। अभयसिंह ने १७३१ में गुजरात को जीत कर वापस मुगल साम्राज्य का अधिकार स्थापित किया परन्तु मुगल सम्राट ने अजमेर, जयपुर के सवाई-जयसिंह[२६] को भरतपुर के जाट शासक चूड़ामण को दबाने के उपलक्ष में उन्हें प्रदान कर दिया। मुगल सम्राट के इस कदम ने राजपूताने के दो प्रमुख रजवाड़ों, राठौड़ों और कछवाहों के बीच अजमेर के लिए संघर्ष अवश्यम्भावी कर दिया।

सन् १७४० में भिनाय और पीसांगन के राजाओं की मदद से अभयसिंह के भाई बखतसिंह ने अजमेर के हाकिम को परास्त कर अजमेर पर राठौड़ों का अधिकार पुनः स्थापित किया। फलस्वरूप जयपुर व जोधपुर के बीच अजमेर के दक्षिण-पूर्व में १६ मील दूर गगवाना नामक स्थान पर एक महत्वपूर्ण युद्ध ८ जून १७४१ को हुआ। मुट्ठी भर राठौड़ों ने जयसिंह की विशाल सेना को भारी पराजय दी। जयसिंह को संधि करनी पड़ी। राठौड़ों को जयसिंह से सात परगने प्राप्त हुए जिनमें अजमेर भी एक था[२७]।

सवाई जयसिंह की मृत्यु के बाद उनके उत्तराधिकारी ईश्वरी सिंह अजमेर पर पुनः अधिकार स्थापित करने को बहुत उत्सुक थे। उन्होंने अजमेर पर आक्रमण की तैयारी भी की परन्तु जयपुर के रायमल व जोधपुर के पुरोहित जगन्नाथ की मध्यस्थता के कारण युद्ध टल गया[२८]। तब से लेकर सन् १७५६ तक अजमेर पर राठौड़ों का शासन रहा।

१८ वीं सदी का अंतिम मध्यवर्ती काल, जहां तक राजपूताने का प्रश्न है, मराठों के भारी संख्या में घुसपैठ का समय था। राजपूतों के आंतरिक कलह से उन्हें इनके मामलों में हस्तक्षेप का अवसर प्राप्त हुआ जो अंत में इस क्षेत्र में उनके आधिपत्य के रूप में परिणित हुआ। राजपूतों के इन आपसी संघर्षों में होलकर और सिंधिया ने बहुधा एक दूसरे के विरुद्ध पक्षों की अलग अलग सहायता की। मेड़ता के युद्ध में जयपुर के राजा ईश्वरीसिंह की सेना और मराठों की मिलीजुली शक्ति के आगे जोधपुर के राजा विजय सिंह की पराजय ने एक लंबे समय के लिए अजमेर का भाग्य निर्णय कर दिया। सन् १७५६ से लेकर १७५८ तक अजमेर मराठों व रामसिंह के अधिकार में रहा। रामसर, खरवा, भिनाय और मसूदा जयपुर नरेश रामसिंह के और शेष भाग मराठों के पास रहा। छोटी मोटी घटनाएं इस बीच अजमेर को मराठा आधिपत्य से मुक्त करने के लिए हुईं परन्तु सन् १७९१ तक अजमेर पर मराठों का आधिपत्य बना रहा। सन् १७९१ में मारवाड़ के भीमराज ने मराठा सूबेदार अनवरजंग से अजमेर छीन कर अपने छोटे भाई सिंघवी धनराज को वहां का

प्रशासन सौंप दिया था[५९]। परन्तु शीघ्र ही मारवाड के राजा विजयसिंह ने खरवा के ठाकुर सूरजमल (अजमेर दुर्ग के किलेदार) को आदेश दिया कि वे अजमेर मराठो को वापस सौंप दे। इस प्रकार अजमेर वापस मराठो को मिल गया। जनरल पैरो को अजमेर मे व्यवस्था स्थापित करने का कार्य सौंपा गया क्योंकि घेरे के दौरान शाति भग हो चली थी[६०]। पूरे ९ वर्षों तक, अर्थात् सन् १८०० तक अजमेर मराठो और उनके सूबेदारो के हाथो असहनीय अत्याचार सहन करता रहा। विद्रोही मेरो का पूरी तरह से दमन किया गया और उनकी पुलिस चौकियो में सेवाए ली गई। जिन लोगो ने पिछली लडाई मे जोधपुर का साथ दिया था उन पर भारी अर्थ दड थोपा गया, कई उदाहरण ऐसे भी हैं जिनमे दड की मात्रा लाख रुपये तक थी। यह राशि कठोरता से वसूल की गई और जो न चुका सके उनकी जागीरें खालसा कर ली गई। इसके फलस्वरूप मराठो के विरुद्ध असतोष की गहरी आग धधकती रही जो कभी कभी ठिकानेदारो द्वारा मराठो के विरुद्ध हिंसक कारवाइयो के रूप मे फूट पडती थी[६१]।

मराठा फौज मे अनुशासन की बडी कमी थी। सन् १८०० मे लकवा दादा ने मराठा शक्ति के विरुद्ध खुली बगावत की, इसके पूर्व वह मराठा सेनाओ का सर्वोच्च सेनापति था, अतएव यह आवश्यक समझा गया कि यथा शीघ्र उसे पगु बना दिया जाय जिससे विद्रोह तीव्र रूप ग्रहण न कर सके। अजमेर लकवा दादा की "जायदाद" थी। जनरल पैरो को अजमेर पर आधिपत्य सौंपा गया। १४ नवम्बर, १८०० को पैरो को यह जानकारी दी गई कि लकवा मालवा भाग गया है। उसने मेजर बोरगुई को अजमेर दुर्ग पर आक्रमण के लिए भेजा। जिसके अनुसार ८ दिसम्बर, १८०० को अजमेर दुर्ग पर धावा बोल दिया गया, यद्यपि मेजर ने उक्त आदेशों का बहादुरी से पालन करने का प्रयत्न किया, परन्तु उसे पीछे धकेल दिया गया। उसने पूरे पाच माह तक जी जान लगाकर रात दिन एक कर दिया परन्तु अजमेर दुर्ग को हस्तगत नही कर सका। अन्त मे वह रिश्वत के माध्यम से ८ मई, १८०१ को किले पर अधिकार पाने मे सफल हुआ। पैरो अजमेर के सूबेदार बने और लो महोदय के जिम्मे अजमेर के प्रशासन की देख-रेख का काम सौंपा गया[६२]।

सन् १८०३ से १८१८ तक अजमेर का इतिहास मराठो और अग्रेजी के बीच उत्तर भारत मे आधिपत्य स्थापित करने के लिए सघर्ष का इतिहास है। लार्ड वैलेजली के समय में अग्रेजो और सिंधियो के बीच युद्ध छिड जाने पर मारवाड के राजा मानसिंह ने मराठो से अजमेर छीन कर तीन साल तक इसे अपने अधीन रखा था[६३]। बाद मे जब अग्रेजो और मराठो के बीच सधि हो गई तो अजमेर पुन. मराठों के हाथ मे आ गया तथा १८१८ तक उनके पास रहा। सन् १८०५ मे दौलत राव सिंधिया और अग्रेज सरकार के मध्य सधि के बाद देश मे केवल अराजकता व लूटपाट का बोलबाला था। इस सधि के बाद सिंधिया की फौजें

चौथ वसूली मे आनाकानी करने वाले सरदारों को दवाने के नाम पर दिनरात सक्रिय हो चली थी। अतएव अजमेर मे इस संधि के बाद अस्थिरता एव असुरक्षा की भावना कम होने के बजाय उसका बढना स्वाभाविक ही था[६४]।

२५ जून, १८१८ को ईस्ट इन्डिया कम्पनी और महाराजा आलीजाह दौलतराव सिंधिया के मध्य एक संधि हुई जिसके अनुसार अजमेर अंग्रेजों को प्राप्त हुआ[६५]।

अंग्रेजो ने जब अजमेर प्रांत का शासन भार सम्भाला तो यह भू-भाग आठ परगनों और ५३४ ग्रामो मे विभक्त था तथा इसमे कृषि योग्य १६ लाख पक्का बीघा भूमि थी। इस क्षेत्र के सभी जमीदार अधिकांशत राठौड थे, केवल कुछ ही पठान, जाट, मेर और चीता थे। मेर और चीता लोग जिले के अन्तिम छोर पर आबाद थे। केवल इन दो जातियो के जमीदारो को छोडकर शेष सभी शातिप्रिय और परिश्रमी थे[६६]।

अजमेर मे मराठो के एक सदी के कुशासन के फलस्वरूप जनता मे भय की भावना व्याप्त हो गई थी और अधिकाश जनता यहा से दूसरे स्थानो पर चली गई थी। अजमेर पर अंग्रेजो के आधिपत्य के साथ ही वे लोग जो दूसरे प्रदेशो मे जा बसे थे, अपने घर पुन लौटने लगे। लोगो मे विश्वास का प्रादुर्भाव हुआ और खेतो मे फसलें फिर से लहलहाने लगी। तातिया और बापू सिंधिया ने जो हानिप्रद व अदूरदर्शितापूर्ण तरीका अपनाया उसके कारण मराठो को कभी भी ३,४५,७४० रुपये से अधिक की राशि का लगान या ३१ ००० हजार की चुगी को मिलाकर केवल ३७६,७४० रुपये से अधिक की राशि प्राप्त नही हुई[६७]।

आठ परगनो मे से केवल एक परगना खालसा था। इसमे से भी आधा भू-भाग इस्तमरार या जागीर भूमि मे था[६८]। इस इस्तमरार भूमि पर जिनका अधिकार था वह किसी पट्टे से या कानूनी हक के अन्तर्गत नही था। केवल दीर्घकालीन कब्जा ही उन्हे इस जमीन का हकदार बनाये हुआ था। इन परिस्थितियो मे अंग्रेजो की व्यवस्था के अन्तर्गत उस समय केकडी का कस्बा और अजमेर परगने के केवल १०५ ग्राम अंग्रेजो के हाथ लगे। इन क्षेत्रो पर अंग्रेजो के आधिपत्य के बाद ही खेती मे इतनी वृद्धि हुई कि केवल आवी फसल ही बापू सिंधिया के उस समय के मराठा भूमि कर व अन्य करो की सम्मिलित राशि से अधिक थी[६९]। मराठो के समय खालसा और इस्तमरार भूमि से लगान अव्यवस्थित एव मनमाने ढग से वसूल किया जाता था[७०]।

मराठों की व्यवस्था लालच की प्रवृत्ति पर आधारित थी। जब कभी उन्हे धन की आवश्यकता होती वे ग्रामो मे जाते और एक न एक बहाने से पैसा बटोर लाते। सन् १८०५ तक इस प्रदेश ने कभी फौज खर्च (सैनिक व्यय के लिए कर) का नाम

मी नहीं सुना था। सन् १८०५ में बालाराव ने अचानक भिनाय पहुच कर वहा के ठाकुरों से अपनी हैसियत के अनुसार भेंट देने को कहा। उन्हे बाध्य किया गया कि वे ६०,००० रुपये की राशि प्रदान करें। परन्तु बालाराव एक पाई भी वसूल करने में असफल रहे। भिनाय के राजा ने इस शर्त पर कि बालाराव उसके जामा में से एक चौथाई माफ कर दे तो फौज खर्च देना स्वीकार किया।[७१]

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि मराठों को जब भी धन की आवश्यकता होती राजस्व के नियमो की परवाह किये बिना ही वसूली के लिए चल पड़ते थे। इस तरह बार बार धन की माग बने रहने से क्षेत्र का सम्पूर्ण राजस्व प्रशासन अव्यवस्थित हो गया था। उस पर फौज खर्च और थोपा गया जिससे भूराजस्व मे बडी भारी कमी आगई थी। बालाराव ने जालीया से फौज खर्च के नाम पर ३५,००० रुपये का कर अजमेर शहरपनाह की मरम्मत व खाई की खुदाई के नाम पर वसूल किया। उसने फौज खर्च के अलावा मुसद्दी खर्च भी वसूल किया। मसूदा से ३५,०००, देवलिया से १५,००० व भिणाय से ३५,००० रुपये फौज खर्च के नाम पर वसूल किए गए। इस तरह के वित्तीय दड भार दिनो दिन बढते जाते थे इस कारण सन् १८१० मे जब तातिया अजमेर का सूबेदार नियुक्त हुआ तो उसने एक लाख की रकम की माग की परन्तु वह केवल ३५,००० रुपये की राशि ही बटोर पाया था। यह माग उसने इस आधार पर की कि उसे अजमेर की सूबेदारी पाने के लिए एक भारी रकम रिश्वत मे देनी पडी थी। अगर कोई इस्तमरारदार उनकी माग पूरी नहीं करता तो उसके ठिकाने पर आक्रमण किया जाता था। सन् १८१५ मे बडली के ठाकुर द्वारा भुगतान से इकार करने के कारण उसके ठिकाने पर आक्रमण किया गया। ठाकुर अपने कतिपय सगे सम्बन्धियो सहित मारा गया और उसका ठिकाना लूट लिया गया।[७२] मराठा प्रशासन वास्तव मे सगठित लूट था जिसमे कतिपय अनुचित कर वसूली से दबकर[७३] गरीब किसान दरिद्रता की चरम सीमा तक पहुच गया था।[७४]

अजमेर जिला अजमेर और केकडी को मिलाकर बनाया गया था। जिन्हे किशनगढ़ पृथक् करता था। जागीर इस्तमरार व भोम म विभाजित होने के कारण यहा खालसा अथवा सरकारी राजस्व भूमि बहुत ही कम थी। जागीर दान तथा बख्शीश के अतर्गत ६५ ग्राम थे तथा उसका वार्षिक भू राजस्व एक लाख के लगभग था। इनमे सबसे महत्वपूर्ण जागीर ख्वाजा साहिब की दरगाह की थी, जिसमे १४ गाव थे व उनसे २६,६३० रु० की भू राजस्व आय होती थी। अन्य छोटी जागीरें कुछ व्यक्तियो और धार्मिक सस्थानो से सम्बद्ध थीं जो विशिष्ट व्यक्ति, देवस्थान तथा प्रथम श्रेणी और द्वितीय श्रेणी के उमरावो को भेंट मे दी हुई थीं।[७५]

इस्तमरार जागीरें ६६ थीं जिनमें २४० ग्राम थ और इनका क्षेत्रफल

८०० ३ वर्गमील था। इनकी वार्षिक आय ५,५६,१५८ रुपये थी तथा ये जागीरें १,१४,१२६ रुपये का सालाना राजस्व दिया करती थी। ये इस्तमरारदार अपनी जागीरो को वश परम्परा से इस शर्त पर कि वे सरकार को नियमित बधा हुआ राजस्व देते रहेंगे, ग्रहण किए हुए थे। इस राजस्व मे वृद्धि नही की जा सकती थी। प्रारम्भ मे इन जागीरो के उपलक्ष मे सैनिक सेवायें प्रदान की जाती थी जो कालातर मे सेवा के स्थान पर धीरे-धीरे धनराशि मे परिवर्तित हो गई थी। मराठो ने अजमेर पर सन् १७८६ मे पुन आधिपत्य करने के बाद ही इन सब पर नगदी मे राजस्व कूतकर इन्हे तालुकेदारो के हक प्रदान किये। अब उनका उत्तरदायित्व केवल निर्धारित धनराशि देने तक सीमित रह गया था।[७६]

इस तरह अग्रेजो को मराठो से वह भू भाग विरासत मे मिला जो सभी वास्तविक अर्थों मे मराठा लूट खसोट के कारण प्राय नष्ट हो चला था। इस क्षेत्र के निवासी मराठा कर उगाहको के हाथो कगाल हो चुके थे। लोगो ने अपनी कृषि को विकसित करने के प्रयास छोड दिये थे क्योकि उन्हे यह भय था कि विकास के साथ उन पर और अधिक भार आ पडेगा। अजमेर वास्तव मे मराठा आधिपत्य के अन्तर्गत कष्टो और दरिद्रता का क्षेत्र बन चला था।

अध्याय १

१ सारदा, अजमेर हिस्टोरिकल एण्ड डिस्क्रिपटिव (१९११) पृ० ७१ मेरवाडा के कुछ विशिष्ट भू-भागो का मारवाड और मेवाड में हस्तातरण के पश्चात् जनसख्या और क्षेत्रफल घट कर ५०६९६४ और २३६७ वर्ग मील क्षेत्र रह गया। (सी सी वाटसन, अजमेर–मेरवाडा गजेटियर्स पृ०१)

२ सी सी. वाटसन, राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, खड १ ए, अजमेर-मेरवाडा (१९०४)

३ थॉर्टन, गजेटियर्स ऑफ इण्डिया (१८५०) पृ० १८ सारदा, अजमेर हिस्टोरिकल एण्ड डिस्क्रिपटिव (१९११) पृ० १८ सी. सी. वाटसन, राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स खड १-ए, अजमेर–मेरवाडा (१९०४) पृ० २।

४. सारदा, अजमेर हिस्टोरिकल एण्ड डिस्क्रिपटिव (१९११) पृ १८।

५ उपरोक्त।

६ जे ब्रिग्ज, तारीख ए-फिरश्ता, १ (१९११) पृ० ७ और ८ (ऐसे किसी सघ का उत्वी, इब्न, उल असर व निजामुद्दीन जैसे पूर्ववर्ती तथा प्रामाणिक इतिहासकारो ने उल्लेख नही किया अतएव फिरश्ता का कथन विश्वसनीय प्रतीत नही होता है।

७ जयानक, पृथ्वीराज विजय, (६), १-२७ (गौरीशकर हीराचन्द ओझा एव गुलेरी सस्करण, अजमेर १९४१) चौहान प्रशस्ति, की पंक्ति १५ मे भी कहा गया है 'अजयमेरु की भूमि तुर्कों के रक्तपात से इतनी लाल हो गई थी कि मानो उसने अपने स्वामी की विजय के उल्लास मे गहरा लाल वस्त्र धारण कर लिया हो।'

८ जयानक, पृथ्वीराज विजय, (६), (पृ १५१, डा ओझा सस्करण, १९४१)

९ एपिग्राफिया इडिका, (२६), पृ० १०५ छद २०।

१०. बीजोल्या स्मारक छद १९।

११ ठक्कर फेरू ने दिल्ली के तोमरो के दो सिक्के मदन पलाहे और अनग पलाहे का उल्लेख किया है।

१२ उपरोक्त

१३ उपरोक्त लेखक की दिल्ली शिवालिक स्मारक ५,१२२०।

१४. जेम्स टॉड, एनल्स एण्ड एन्टिक्विटीज ऑफ राजस्थान, खड १ (ओ यू पी १९२०) पृ० ६०९।

१५ आर्कियोलोजीकल सर्वे ऑफ इडिया, वार्षिक (२) पृ० २६३।

१६ उपरोक्त पृ० २६१।

१७ सारदा, स्पीचेज एण्ड राइटिंग्स (१९३५) पृ० २५५।

१८ रेवर्टी, तवाकाते-नासिरी (१८८०)। पृ० ४६८, जे० ब्रिग्ज, तारीख ए फिरश्ता, । (१९११) पृ० १७७।

१९ सारदा, अजमेर हिस्टोरिकल एण्ड डिस्क्रिपटिव (१९४१) पृ० ३४, ३५।

२० उपरोक्त, पृ० ३५।

२१. मुस्लिम इतिहासज्ञो का कहना है कि सन् १२०९ मे कुतुबुद्दीन की मृत्यु पर राजपूतों ने गढ बीटली पर आक्रमण किया और वहा की मुस्लिम टुकडी को तलवार के घाट उतार दिया और सैयद हुसैन खगसवार इस मौके पर शहीद हुए। उक्त घटना किसी भी प्रामाणिक

इतिहास में उपलब्ध नही होती (सारदा, अजमेर-हिस्टोरिकल एण्ड डिस्क्रिपटिव १६४१-पृ० १४८)।

२२ अन्हलवाडा अन्हिलवाडा पट्टन के नाम से जाना जाता है। गुजरात की अंतिम एवं प्रख्यात हिन्दू राजधानी। चावडो ने ७४६ ई० में इसकी स्थापना की थी। (वेले हिस्ट्री ऑफ गुजरात,–१६३८-५)।

२३ सारदा, अजमेर, हिस्टोरिकल डिस्क्रिपटिव (१६४१) पृ० १४६।

२४ तारागढ का दुर्ग तारागढ पर्वत पर स्थित है। यह पर्वत धरातल से १३०० फीट ऊंचा है। ये चट्टानें आनासागर के पूर्व की पहाडियो तक फैली हैं। किंवदन्ती के अनुसार, तारागढ दुर्ग राजा अजय ने बनवाया था। उनके द्वारा निर्मित यह दुर्ग "गढ बीठली" कहलाता था। सी०सी० वाटसन, राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, अजमेर मेरवाडा (१६०४) खंड १ पृ० ५ और ६।

२५ सारदा, अजमेर हिस्टोरिकल एण्ड डिस्क्रिपटिव (१६४१) पृ० १५६।

२६. टॉड एनल्स एण्ड एन्टिक्विटीज ऑफ राजस्थान, खण्ड (१२) (ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस (१६२०) पृ० १६।

२७. राव रणमल मारवाड के प्रसिद्ध राजा थे। उनका जन्म २८ अप्रेल, १३६२ में हुआ था।

२८. महमूद खिलजी खान जहां खिलजी का पुत्र था। उसने १५ मई, १४३६ में मालवा की गद्दी पर अधिकार स्थापित कर लिया था। २६ वी सव्वल ८३६ हिजरी। उसने ३४ चांद वर्षो तक राज्य किया, मृत्यु २७ मई १४६६, ६ वीं जी का दा ८७३ हिजरी, आयु ६८ वर्ष (बील्, ओरियन्टल बायोग्राफिकल डिक्सनेरी १८८१ पृ०१६४)।

२६ ब्रिग्ज, तारीख ए फरिश्ता खंड (२) (१६११ पृ० २२२)।

३० पृथ्वीराज मेवाड के राणा रायमल का ज्येष्ठ पुत्र था। जब ज्योतिषियो ने यह भविष्यवाणी की कि रायमल के बाद उसका कनिष्ठ पुत्र सांगा राजगद्दी पर बैठेगा तब वह गोडवाड चला आया। नाडलाई प्रशस्ति के अनुसार राणा रायमल के जीवन काल में पृथ्वीराज का शासन गोडवाड में था (गहलोत, राजपुताना का इतिहास—१६३७-पृ० २१५)।

३१. टॉड–एनल्स एण्ड एन्टिक्विटीज ऑफ राजस्थान (ऑक्स० यूनिवर्सिटी प्रेस १६२०) खण्ड (२) पृ० ३७६–४।

३२. बहादुरशाह गुजरात के मुजफ्फरशाह द्वितीय का दूसरा पुत्र था। अपने

पिता की मृत्यु के समय वह अनुपस्थित था तथा जौनपुर मे था, परन्तु जब उसका भाई महमूदशाह अपने बड़े भाई सिकन्दरशाह की हत्या कर गुजरात की गद्दी पर बैठा तो वह गुजरात लौट आया और बीस अगस्त, १५२६ को महमूद से गुजरात का राज्य छीनकर स्वय गद्दी पर बैठा। उसने २६ फरवरी १५३१ मे मालवा विजय किया और वहा के शासक सुल्तान महमूद द्वितीय को पकड कर बन्दी बना चापानेर भेज दिया। (बील ओरियन्टल बॉयोग्राफिकल डिक्सनरी १८८१–पृ० ६४)।

३३ बायले–गुजरात, पृ० ३७१।

३४ वीरमदेव राव बाघा के पुत्र थे। यद्यपि उनके दादा ने इन्हे अपना उत्तराधिकारी बनाया था, मारवाड के सरदारो ने इनके भाई गागा को राजगद्दी पर बिठा दिया। वीरमदेव को सोजत का परगना जागीर मे मिला। उसने शमशेर-उल मुल्क को हटाकर अजमेर पर अधिकार कर लिया। (रेऊ-मारवाड का इतिहास) खण्ड। १९३८-पृ० ११८)।

३५. मुहणोत नेणसी ने उल्लेख किया है कि वीरमदेव ने अजमेर का किला परमारो से छीना जो सत्य नही है। (रेऊ मारवाड का इतिहास-खण्ड १-१९३८-पृ० ११८)।

३६ राव मालदेव राजपूतो के राठौड़ वंश का मारवाड का शासक था और जोधा का जिसने जोधपुर बसाया वशधर था। सन् १५३२ म उसने राजपूताना मे अत्यन्त प्रसिद्धि एव महत्व का स्थान प्राप्त कर लिया। फरिश्ता के अनुसार वह हिन्दुस्तान के प्रमुख राजाओ मे से था। (बील, ओरियन्टल बॉयोग्राफिकल डिक्सनरी, १८८१-पृ० १६६)।

३७ रेऊ-मारवाड का इतिहास खण्ड १ (१९११) पृ० ११९।

३८. ब्रिग्ज, तारीख ए फिरश्ता, खण्ड १ (१९११) पृ० २२७२८ खफीखान मुन्तखाबुललुबाब, खण्ड-१-पृ० १००-१, रेऊ, मारवाड का इतिहास खण्ड-१ (१९३८) पृ० १३१।

३९ इस्लाम शाह सूर शेरशाह सूर का पुत्र था।

४० हाजीखान पठान नागौर का शासक था। वह शेरशाह का गुलाम था।

४१ इलियट हिस्ट्री ऑफ इन्डिया, खण्ड ६ (१८६६-६७) पृ० २२।

४२ सी० सी० वाटसन, राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, अजमेर मेरवाड़ा खण्ड १ ए (१९०४) पृ० ११।

४३ देराई का युद्ध दारा और औरंगजेब के बीच ११,१२ और १३ मार्च १६६५ को लडा गया। इसने औरंगजेब का प्रभुत्व स्थापित कर दिया। देराई अजमेर से तीन मील दूर स्थित है। (सारदा अजमेर हिस्टोरिकल एण्ड डिस्क्रिपटिव १६११-पृ० १६२-६३)।

४४ सी० सी० वाटसन, राजपूताना गजेटियर्स, खण्ड (२) (१६०४) पृ० १७। अकबर औरंगजेब का सबसे छोटा लडका था। उसका जन्म १० सितम्बर, १६५७ को हुआ। उसने अपने पिता के विरुद्ध विद्रोह किया और जून १६८१ मे मराठा सरदार शंभू जी से जा मिला। बाद मे उसने मुगल दरबार छोड दिया और फारस चला गया जहाँ १७०६ मे उसकी मृत्यु हुई। (बील, ओरियन्टल बॉयोग्राफिकल डिक्शनरी १८८१-पृ० ३१)।

४५ एडवर्ड थॉमस, क्रोनीकल्स ऑफ दी पठान किंग्ज ऑफ देहली (१८७१)। पृ० ४३३-३४।

४६ ब्लोचमेन, आईन ए-अकबरी।

४७. फर्रुखसियर दिल्ली का बादशाह था। उसका जन्म १८ जुलाई १६८७ को हुआ। वह बहादुरशाह द्वितीय का द्वितीय पुत्र था। और औरंगजेब का पौत्र था। शुक्रवार ६ जनवरी १७१३ को वह राजगद्दी पर आसीन हुआ। १६ मई १७१६ को उसकी हत्या कर दी गई। (बील, ओरियंटल बायोग्राफिकल डिक्शनरी १८८१ पृ० ८८)।

४८ सैय्यद बन्धु दिल्ली के राज निर्माताओं के नाम से प्रख्यात हैं। ये लोग सैय्यद अब्दुल्ल और सैय्यद हुसैन अली खान थे। इन दोनो ने मुगल साम्राज्य के अन्तिम दिनो मे विशेषकर फर्रुखसियर और मुहम्मद शाह के शासन काल मे महत्वपूर्ण भूमिका प्रस्तुत की।

४६ टॉड एनल्स एण्ड एन्टीक्विटीज ऑफ राजस्थान (आक्स० यूनि० प्रेस १६२०) खड ॥ पृ० ८८।

५० उपरोक्त, पृ० ८८।

५१ इरविन, लेटर मुगल्स, खड ॥ (१६२२) पृ० १०६-१०, सैरूल-मुतखरीन, पृ० ४५४, अजीतोदय, सर्ग ३० श्लोक ६ से ११। रेऊ-मारवाड का इतिहास (१६३८) खण्ड १ पृ० ३२२॥

५२ जब अजीतसिंह को यह पता चला कि नुसरतयार खान को उसके विरुद्ध भेजा गया है उसने अपने पुत्र अभयसिंह को नारनोल पर चढाई और दिल्ली तथा आगरा के आसपास लूट के लिए भेजा

अभयसिंह ने, १२००० सांडनी सवारों के साथ नारनौल पर धावा बोला वहां के फौजदार बयाजीद खान मेवाती को हराया, नारनौल को लूट लिया और अलवर, तिजारा और शाहजहांपुर को गम्भीर क्षति पहुंचाई। वह सराय अलीवर्दी खान तक जा पहुंचा जो दिल्ली के ६ मील के घेरे मे थी। (रेऊ, मारवाड का इतिहास–१६३८–खंड १ पृ० ३२२)।

५३ अजीतोदय, सर्ग ३०, श्लोक ५३ से ६५। राजरूपक मे जयसिंह की चर्चा नही है, पृ० २३६।
टॉड एनल्स एण्ड ऐन्टीक्विटीज ऑफ राजस्थान (ऑक्स० यूनी० प्रेस) खंड ॥ (१६२०) पृ० १०२८।

५४ सरबुलन्द खान जिसका खिताब नवाब मुबरिज उल मुल्क था फर्रुख-सियर के समय मे पटना का हाकिम था। उसे सन् १७१८ मे वापस मुगल दरबार मे बुला लिया गया। मुहम्मदशाह के समय मे सन् १७२४ मे उसे गुजरात का हाकिम बनाया गया था। परन्तु सन् १७३० में उसे इस पद से इसलिए हटा दिया गया कि उसने मराठो को चौथ देना मंजूर किया था। (बील, ओरियन्टल बॉयोग्राफिकल डिक्शनरी १८८१ पृ० २३६)।

५५ रेऊ, मारवाड का इतिहास, खंड १ (१६३८) पृ० ३३६, सारदा अजमेर, पृ० १६७।

५६ चूरामन महरवाकाजी जाट नेता था, उसने शाहशाह आलमगीर के अन्तिम दक्खन अभियान के समय उसका माल असबाब लूट लूट कर धन बटोर लिया और उससे भरतपुर का किला बनवाया। चूरामन जाटों का नेता बन गया। नवम्बर, १७२० मे शहशाह मुहम्मद शाह और कुतबुलमुल्क सैय्यद अब्दुल खान की सेनाओ के बीच युद्ध मे मारा गया। (बील, ओरियन्टल बॉयोग्राफिकल डिक्शनरी १८८१-पृ० ७७)।

५७ टॉड-एनल्स एण्ड एन्टिक्विटीज ऑफ राजस्थान खण्ड २ (१६२०)। पृ० १०५०-५१। रेऊ मारवाड़ का इतिहास, खण्ड १ (१६३८) पृ० ३५२-५४।

५८ रेऊ मारवाड का इतिहास, खण्ड १ (१६३८) पृ० ३५५-पुरोहित जग्गू प्रसिद्ध पुरोहित जगन्नाथ थे, इनके प्रभाव से आनन्दसिंह को ईडर की राजगद्दी विक्रम संवत् १७८७ फाल्गुन कृष्णा सप्तमी (४ मार्च, १७३१)।

५६ सारदा, अजमेर-हिस्टोरिकल एण्ड डिस्क्रिप्टिव (१६११) पृ० १७२।

६० उपरोक्त पृ० १७२-७३। टॉड एनल्स एण्ड एन्टिक्विटीज ऑफ राजस्थान (१६२०) खण्ड २ पृ० १३६।

६१ सारदा, अजमेर-हिस्टोरिकल एण्ड डिस्क्रिप्टिव (१६११) पृ० १७३।

६२ उपरोक्त पृ० १७४-७५।

६३ उपरोक्त, पृ० १७५।

६४ सरकार, सिंधियाज अफेयर्स (१६५१) पृ० ७।

६५ एचीसन, ट्रीटीज एण्ड एन्गेजमेन्टस् (१६३३) खण्ड ५ संधि क्रमांक ८ पृष्ठ ४०६ ४१०-११

६६. एफ विल्डर सुपरिनटेंडेन्ट अजमेर का मेजर जनरल सर डेविड ऑक्टरलोनी को पत्र, दिनांक २७-६-१८१८। (रा० रा० पु० मण्डल)।

६७. उपरोक्त।

६८ केविडिश द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट।

६९ एफ विल्डर का ऑक्टरलोनी को पत्र दिनांक २७-६-१८१८, (रा० रा० पु० मण्डल)।

राजस्व वसूली की विगतें निम्नांकित हैं

क्रमांक	मराठा हाकिम का नाम	वर्ष	वसूल राशि	विशेष
१.	शिवाजी नाना	१७९१	१,२२,६९३	रुपये ६७९६ का नजराना भी सम्मिलित फौज खर्च लागू नहीं किया गया ।
२.	" "	१७९२	२,०४,८९६	स० ९९५१ का नजराना शामिल, फौज खर्च लागू नहीं किया गया ।
३.	पैरों	१८०१	२,००,९९२	न तो नजराना और न फौज का खर्च लागू किया गया ।
		१८०२	२,०२,३६५ वतपंक	" "
		१८०३	२,०२,८७०	
४.	बालाराव	१८०४-९	२,०२,०९	न तो नजराना और न फौज खर्च वतपंक लागू किया गया ।
५.	तातिया सिंधिया	१८१०-१५	२,२९,४०५ "	नजराना, फौज खर्च लागू ।
६.	बापू सिंधिया	१८१६	२,४७,२९९	भू-राजस्व (असेसमेन्ट)
		१८१७	७३,०४२	फौज खर्च
७.	"	१८१७	२,५४,४३३ ७८,२९९	भू-राजस्व, फौज खर्च
८.	"	१८१८	२,३४,७०५ १,२२,०९०	भू-राजस्व, फौज खर्च

७०. विल्डर का पत्र, दिनांक १८-२-१८२० । (रा रा. पु. मण्डल) ।

७१ मावकटन महोदय का पत्र, दिनाक ३०-७-१८४० । (रा रा पु मण्डल) ।

७२ लेफटीनेन्ट कर्नल सदरलैंड ए जी जी. का तत्कालीन भारत सचिव जेम्स थाम्पसन को पत्र, दिनाक ७ २-१८४१ । (रा रा पु मण्डल) ।

७३ विल्डर द्वारा लिखे गये आक्टरलोनी को दिनाक २७-९-१८१९ का पत्र जिसमे मराठो द्वारा उगाहे जाने वाले कर लागो का विवरण निम्न है —

क्रमांक	असेसमेन्ट	कर प्रतिशत	कर का हवाला
१	फौज खर्च	५ से ७५	ग्रामों की रक्षा के लिए नियुक्त सेना पर व्यय के कारण ।
२	पटेलवाब	२ से १२	यह मुकदमों और गांव मुखियाओ पर उनके द्वारा दूसरो की अपेक्षा ज्यादा हिस्सा वसूल करने पर लागू कर ।
३	भूमवाब	५ से २०	उस सम्पूर्ण भूमि पर जो ठिकानेदारो के पास प्राचीन काल से चली आरही थी और कर मुक्त थी । यह कर इन भूमियो पर लागू किया गया ।
४.	घी बाब	१ से ३	चूंकि ग्रामो को फौज के लिए घी बाजार भाव से कही अधिक सस्ता देना पडता था अतएव उन्होने इससे मुक्ति पाने के लिए निश्चित राशि पर देना स्वीकार किया तब से यह कर चलता रहा ।

क्रमांक	असेसमेन्ट	कर प्रतिशत	कर का हवाला
५.	भेंट सरकार		प्रत्येक गाँव से हाकिम को १५ रुपया प्रतिवर्ष नजराना।
६.	तहरीर	१ से ४ रु०	राजस्व खाता लिखने वालों की सेवाओं पर व्यय कर।
७.	फोतादार	१ से ७ रु०	खजांची का वेतन कर।
८.	मुरोते फोतादार	१ से ४ रु०	खजांची की वेतन सम्बन्धी फीस।
९.	गणेश चौथ	प्रति गाँव १ रुपया	गणेश चतुर्थी पर भेंट।
१०.	भेंट दशहरा	प्रत्येक गाँव से २ से ४ रु०	दशहरे के अवसर पर फसल कटाई की पहली किस्त के समय दशहरे की भेंट।
११.	जबबावकन	प्रत्येक गाँव से ५ से २० रु० तक	सभी चरागाह भूमि पर सरकार का आधिपत्य है और जो जमीन कृषि योग्य नहीं मानी गई है उस पर पशु चराने का कर।
१२.	भेंट होली	१ से ५ रु० प्रति गाँव	फसल कटाई की पहली किस्त के समय होली की भेंट।
१३.	चैरसा	१ से ५ रु० प्रति गाँव	प्रत्येक गाँव के मृत्य मवेशियों की खालों की निश्चित संख्या पर सरकार का हक मानकर यह कर वसूल किया जाता था।
१४.	भेंट जमाबन्दी	२ से ५ रु०	उन गाँवों में जहाँ फसल का राजस्व जिन्सों में चुकाया जाता था वहाँ हिसाब लिखने के लिए मुसद्दियों के वेतन के लिए नजराना।

क्रमांक	असेसमेन्ट	दर प्रतिशत	कर का हवाला
१५.	माचोतरा	२ से ५ रु०	यह प्रतिशत जिन्सो मे राजस्व चुकाने पर वसूल हो जाता था।
१६.	लाव्यचा	२ से ५ रु०	सूबे के हाकिम की पोशाक खर्च।
१७	पैमायश	१ से २ रु०	जमीन नापने पर।

७४ भारत सचिव श्री थोमसन द्वारा आगरा से गवर्नर को लिखे पत्र पर श्री सदरलैंड की टिप्पणी, सदर्भ—अजमेर इस्तमरारदार, आगरा, मई १८४१। (रा०रा०पु० मण्डल)।

७५ लेफ्टिनेन्ट कर्नल सदरलैंड द्वारा जेम्स थॉमसन सचिव भारत सरकार को पत्र दिनाक ७–२–१८४१।

७६. केवेंडिश रिपोर्ट दिनाक ११ जुलाई, १८२९।

२

मेरवाड़ा में अंग्रेज़ी शासन का सुदृढ़ीकरण

मेरवाडा का पूर्व इतिहास

जून, १८१८ मे अजमेर पर अपना अधिकार स्थापित करने के बाद अंग्रेजो का ध्यान सबसे पहले मेरो की तरफ आकर्षित हुआ।[1] अंग्रेजो के आगमन के पूर्व कोई भी शक्ति मेरो को परास्त नहीं कर पाई थी। अपनी लूट मार की प्रवृत्तियों तथा पाशविक अत्याचारो के कारण निकटवर्ती पडौसी रियासतो मे मेर कुख्यात थे। उनका आतक एव दुस्साहस इतना बढ गया था कि अब अजमेर पर भी उनके धावे होने लगे थे।[2] मेरो की उत्पत्ति पृथ्वीराज चौहान से बताई जाती है। उसके पुत्र गौड लाखन ने बूदी की एक मीणा जाति की महिला से विवाह किया था और उनके वशधर मेर कहलाये। इस तरह के मिश्रित विवाहो एव सम्बन्धो के कारण मेर आज भी बरार, चीता, मेरात आदि कई उपजातियों (खापो) मे विभाजित हैं।[3] कर्नल टॉड के अनुसार पन्द्रहवीं शताब्दी मे इनमे से अधिकाश ने इस्लाम धर्म अंगीकार कर लिया था। अजमेर के तत्कालीन हाकिम ने बुध मेर को मुसलमान बनाकर उसका नया नाम दाऊदखान रखा था। सामान्यत. मेरवाडा के पर्वतीय क्षेत्र के निवासियो को मेर कहा जाता है।[4] १९०१ मे मेरो की कुल जनसख्या ६२,४१२ थी।[5]

मेर भारतीय आर्य नस्ल के थे। इनका कद लम्बा, शरीर हृष्ट पुष्ट, गोल मुखाकृति तथा उभरे हुए नाकनक्श होते थे। ये मारवाडी बोली बोलते थे जो कि

अजमेर मेरवाड़ा के जन-साधारण की बोली से मेल खाती थी और बहुत कम भिन्नता लिए हुए थी। यद्यपि ये लोग मुख्यतः मांसाहारी थे परन्तु मक्का की राबड़ी और घाट इनका प्रमुख आहार था। ये लोग ज्वार के आटे से बने रोटले प्याज के साथ विशेष रुचि से खाते थे। धूम्रपान और मद्यपान इनमें खूब प्रचलित था।[7] मेर लोग गांवों में भौंपड़िया बना कर रहा करते थे। इन भौंपड़ियों की छतें खपरैलों की होती थीं। पुरुष का पहनावा धोतिया बगलबंदी लंगोटी तथा झूनिया थीं। मेर महिलाएं रंगीन ओढ़नी, कांचली और छींट का घाघरा पहना करती थी।[8]

अंग्रेजों द्वारा मेरवाड़ा क्षेत्र में आधिपत्य जमाने के पूर्व मेरों की आजीविका कृषि पर निर्भर न होकर लूट खसोट पर निर्भर थी। वैसे यह जाति अपने आदिम काल से ही कृषि जीवी थी।[9] मेर सामान्यतया विश्वासपात्र, सहृदय और उदार होता था। वह अपनी कौम, कबीला परिवार तथा घर वालों को प्यार करता था।[10] मेर जितना जल्दी आवेश में आता था उतनी जल्दी ही सान्त्वना की दो बातों से शांत भी हो जाता था।[11] क्रोधाविष्ट मेर को मरने-मारने में देर भी नहीं लगती थी।

मेरों का पेशा लूट पाट होते हुए भी उनमें कई चारित्रिक विशेषताएं भी थी। ये लोग कभी ब्राह्मण, स्त्री, जोगी या फकीर पर हाथ नहीं उठाते थे। अपने बाल-बच्चों व पत्नी को हृदय से प्रेम करते थे। पत्नी के अपमान के प्रश्न को लेकर ये लोग मरने-मारने पर उतारू हो जाते थे। साधारण सी उकसाहट ही एक मेर को पागल बनाने के लिए पर्याप्त होती थी। मेर के हाथ में ढाल तलवार होने पर वह बेधड़क होकर काल से भी दो-दो हाथ करने को आमादा हो जाता था। यद्यपि इनमें मद्यपान तथा फिजूलखर्ची जैसे दुर्व्यसन अवश्य थे, तथापि इनका सामान्य चरित्र ऊंचा था। स्वभावतः मेर आलसी और सशयपूर्ण मनोवृत्ति के होते थे।[10]

अजमेर के दक्षिणी भू-भाग का पहाड़ी क्षेत्र मेरवाड़ा, मेरों की मातृभूमि थी। यह क्षेत्र ६४ मील लम्बा तथा ६ से लेकर १२ मील तक चौड़ा था। आदिम युग में ये लोग वनों में विचरण करते और शिकार द्वारा भरण-पोषण करते थे। इस आदिम अवस्था में न तो इन्हें खेतीबाड़ी का ही ज्ञान था और न ये कपड़ों का उपयोग ही जानते थे। इस पर्वतीय क्षेत्र में घने वन फैले हुए थे व पथरीली भूमि होने के कारण यहाँ कृषि संभव नहीं थी। यह क्षेत्र उन समाज विरोधी तत्वों के लिए सुरक्षित शरणस्थली था जो आसपास के क्षेत्रों में लूट-मार कर यहाँ छिप जाया करते थे। दुर्गम क्षेत्र होने के कारण कानून व दंड से बचने के लिए अपराधी यहां प्रायः शरण लिया करते थे।[11]

अतीत में कई बार इन मेरों को कुचलने के लिए सैनिक अभियान भी किये गए थे। अट्ठारहवीं सदी के तीसरे दशक में जयपुर रियासत के ठाकुर देवीसिंह[12] ने जयपुर नरेश के कोप से आक्रांत होकर इस क्षेत्र में मेरों के यहाँ शरण ली

थी।[13] जयपुर नरेश सवाई जयसिंह ने मेरों से इस व्यक्ति को लौटाने की माग का परन्तु उन्होंने यह अनुरोध ठुकरा दिया। फलस्वरूप सवाई जयसिंह ने मेरों पर चढ़ाई कर उनके गांवो और गढ़ो को तबाह कर दिया था। लगभग एक करोड़ रुपये इस सैनिक अभियान पर जयपुर द्वारा व्यय किये गए थे परन्तु मेरो को दबाने में ये सभी प्रयत्न निष्फल रहे। सन् १७५४ में उदयपुर के महाराणा ने भी मेरो पर आक्रमण किया परन्तु उनको भी सफलता नही मिली।[14] इसी प्रकार जोधपुर के विजयसिंह को भी सन् १७८८ मे मेरो ने खदेड दिया था। सन् १७९० मे कटालिया के ठाकुर ने भायनी पर आक्रमण किया परन्तु उसे भी अपने प्राणो से हाथ धोने पडे और मेरो ने उसके डेरे को लूट लिया।[15] सन् १८०० मे अजमेर के मराठा सूबेदार ने भी मेरो को दबाने का प्रयत्न किया था परन्तु सफलता नही मिली।[17] सन् १८०७ मे साठ हजार सैनिको ने मेरो पर आक्रमण किया परन्तु वे भी इन्हे दबाने मे सफल नही हो सके। सन् १८१० मे मेरो ने टौंक के अमीर मोहम्मद शाहखान और राजा बहादुर को अपने पहाडी क्षेत्र से भगा दिया था। सन् १८१६ मे इन्होने उदयपुर के राणा को एक बार फिर बुरी तरह से हराया था।[18] इस क्षेत्र मे व्यवस्था स्थापित करने हेतु अंग्रेजो के लिए इन विद्रोही मेरो का दमन करना आवश्यक हो गया था।

मेरवाडा क्षेत्र से होकर कई ऐसे मार्ग गुजरते थे जो कि व्यापार के दृष्टिकोण से काफी महत्वपूर्ण थे, इसलिए जबतक इस क्षेत्र मे शांति स्थापित नही की जाती, तबतक व्यापार को प्रोत्साहन नही मिल सकता था।[19]

अंग्रेजी आधिपत्य

अजमेर के प्रथम अंग्रेज सुपरिटेंडेन्ट विल्डर ने मेरो को समझा बुझाकर शाति स्थापित करने का प्रयत्न किया था। उसने झाक,[20] श्यामगढ[21] और लूलवा[22] मे रहने वाले मेरो से समझौता कर लिया था। यद्यपि इन प्रयासों के फलस्वरूप क्षेत्र मे लूटपाट की घटनाओ मे कुछ कमी अवश्य हुई तथापि स्थिति मे विशेष सुधार नही हो सका और मेरो ने अपने वादो को निभाने में अधिक दिलचस्पी नहीं दिखाई।[23]

मेरो पर अभियान करने से पूर्व अंग्रेजो ने सर्वप्रथम स्थानीय सूचनाओ एव जानकारी का सग्रह किया। मार्च १८१९ म इन्होने नसीराबाद से तीन स्थानीय पैदल रेजिमेंट, एक घुडसवार दस्ता और हाथियो पर हल्की तोपो से मेजर लोवूरी के नेतृत्व मे मेरो के विरुद्ध सैनिक अभियान प्रारम्भ किया। सेना को तीन भागो म विभक्त किया गया था। एक ने लूलवा पर आक्रमण किया, शेष दो ने अलग-अलग दिशाओ व भिन्न भिन्न मार्गों से झाक पर हमला किया। यद्यपि इस सेना की प्रत्येक टुकडी को कडे प्रतिरोध का मुकाबला करना पडा परन्तु सुदृढ

सैन्य सचालन के कारण अग्रेजो को अपने अभियान में सफलता प्राप्त हुई। मसूदा के ठाकुर देवीसिंह ने भी इस अभियान मे अंग्रेजो को सहायता दी। अंग्रेज फौज पहाडी व जगल के क्षेत्रो मे प्रवेश कर गई तथा वहाँ तीन पुलिस चौकियाँ स्थापित करने मे सफल रही। मेरो को मजबूर होकर भविष्य मे लूटमार न करने व राजस्व कर देने के समझौतो पर हस्ताक्षर करने पडे।[२४]

कैप्टिन टॉड जो कि उन दिनो उदयपुर मे पोलिटिकल एजेन्ट थे, मेवाड सीमा क्षेत्र मे स्थित मेरो को अपने अधीन करने म सफल रहे थे।[२५] इन अभियानो के फलस्वरूप, क्षेत्र मे शाति छा गई, परन्तु यह शाति आने वाले तूफान की सूचक थी। नवबर १८२० मे मेरो ने सशस्त्र आक्रमण कर तीनो पुलिस चौकियो को रौंद डाला, भीम [२६] दुर्ग पर अधिकार कर लिया और चारो ओर मारपीट मचा दी थी। अग्रेज सुपरिन्टेडेन्ट विल्डर ने तत्काल मकसूदाबाद के नेतृत्व मे कई सैनिक टुकडिया भेजकर झाक, श्यामगढ और लूलवा पर पुन अधिकार स्थापित किया था।[२७]

अंग्रेजो ने उदयपुर और जोधपुर से भी सहयोग मागा तथा आवश्यक तैयारी के बाद बोरवा [२८] और हथून [२९] पर भारी सैनिक शक्ति से आक्रमण किया। यद्यपि अंग्रेजो ने बोरवा पर अधिकार कर लिया था परन्तु मेरो ने अंग्रेजी सेना को गभीर क्षति पहुचाई और पीछे खदेड दिया। अंग्रेजो ने मेवाड की सेना की सहायता से एकबार और प्रयत्न किया परन्तु बडी ही कठिनाई से मेरो को पराजित कर बरासवाडा और माडला पर अधिकार स्थापित किया जा सका[३०]। मेरो को हार माननी पडी और अंग्रेजो ने मेवाड और मारवाड की सैनिक टुकडियो की सहायता से कोटकीराना,[३१] बगडी[३२] और रामगढ[३३] आदि दुर्गों पर अधिकार कर लिया तथा दो सौ मेरो को बदी बनाया गया[३४]। इस तरह मेरवाडा अंग्रेजो के अधिकार मे आगया। इस अभियान के शीघ्र बाद ही केप्टिन टॉड द्वारा उदयपुर के अधिकतर मेर क्षेत्रो मे भी प्रयास किये गये। मेवाड मे ६०० बदूकधारी सैनिको की टुकडी गठित की गई और स्थाई भू-राजस्व की व्यवस्था स्थापित की गई। जोधपुर रियासत ने सीमावर्ती ठाकुरो को मेर ग्रामो की व्यवस्था का भार सौंपने के अलावा मारवाड-मेरवाडा क्षेत्र म स्थिति को सुधारने का और कोई प्रयत्न नही किया।[३५]

अंग्रेजो के हिस्से म जो भूभाग आया उसे उन्होने खालसा भूमि मे परिवर्तित कर दिया। प्रारम्भिक स्थिति मे यद्यपि कुछ क्षेत्र की व्यवस्था का भार खरवा तथा मसूदा के ठाकुरो को सौंपा गया था। झाक, श्यामगढ और लूलवा तथा अन्य ग्रामों मे शाति और व्यवस्था बनाये रखने के लिये अंग्रेजो ने इन ठिकानेदारो को कतिपय अधिकार प्रदान किय। उन्हें विल्डर की देखरेख मे काम करना पडता था।[३६]

इस तरह मेरवाडा को अंग्रेजों द्वारा पहली बार जीता जा सका था। इसके पूर्व मेरो ने कभी भी किसी बाहरी शक्ति के सम्मुख समर्पण नहीं किया था, और न वहाँ इसके पूर्व कभी इस तरह के दमनकारी कदम ही उठाये गये थे। परन्तु इस क्षेत्र मे स्थाई शान्ति व व्यवस्था कायम करने के पूर्व कई कठिनाइयो का सामना करना पड़ा। केप्टिन टॉड उदयपुर के अन्तर्गत जो मेरवाडा का क्षेत्र था उस पर मे विशेष ध्यान नही दे पाये।[39] यही हालात जोधपुर राज्य की थी। उसने भी अपना क्षेत्र स्थानीय ठाकुरो के हाथ मे छोड इस ओर कोई ध्यान नही दिया।

इसलिए कुछ ही समय बाद यह महसूस होने लगा कि मेरवाडा मे तिहरी (अंग्रेज-मेवाड व मारवाड) शासन व्यवस्था दोषपूर्ण व नही के बराबर है। एक भाग के अभियुक्त दूसरे भाग मे शरण लेने लगे। इससे मेरवाडा की स्थिति पहले से भी अधिक शोचनीय हो गई थी। इन परिस्थितियो मे आवश्यक समझा जाने लगा कि मेरवाडा के तीनों हिस्से (अंग्रेज-मेवाड-मेरवाड) एक ही अधिकारी व प्रशासन के अन्तर्गत रखे जाय तथा उक्त अधिकारी मे दीवानी व फौजदारी के सभी अधिकार निहित हो। उमे पूर्व प्रशासनिक व सैनिक अधिकार भी प्रदान किए जाए। उक्त अधिकारी रेजिडेन्ट की देखरेख व नियन्त्रण मे कार्य करे। यह भी तय किया गया कि ८ कम्पनियों की एक बटालियन जिसमे प्रत्येक कम्पनी मे ७० व्यक्ति हो, मेरवाडा के लिए गठित की जाय। इनमे भर्ती मेरो मे से की जाय।

मेवाड़ तथा मारवाड़-मेरवाड़ा

उपर्युक्त फैसले को कार्यान्वित करने के दृष्टिकोण से मेवाड के साथ हुई वार्ता के फलस्वरूप मेवाड व अंग्रेजो के बीच मई १८२३ मे एक समझौता सम्पन्न हुआ। जिसके अनुसार मेवाड ने मेवाड मेरवाडा के तीन परगने जिसमे ७६ ग्राम थे, अंग्रेज सरकार को दस साल के लिए सौंप दिये। महाराणा ने स्थानीय फौजी टुकड़ियों के व्यय के लिये पन्द्रह हजार की वार्षिक राशि भी प्रदान करना स्वीकार किया। प्रारम्भ मे मेवाड महाराणा को इन परगनो का प्रशासन अंग्रेजो को हस्तांतरित करने मे काफी हिचकिचाहट रही थी।

उदयपुर के महाराणा को इस व्यवस्था से अत्यधिक लाभ पहुँचा था। इस व्यवस्था की अवधि सन् १८३३ में समाप्त होने पर, वे इस अवधि को आगामी आठ साल तक और जारी रखने के लिए तत्काल राजी हो गए। इस आशय का एक समझौता दोनो पक्षों के बीच ७ मार्च, १८३३ को ब्यावर मे सम्पन्न हुआ। उदयपुर नरेश ने इस बार स्थानीय सैनिक टुकडिया के लिऐ निर्धारित पन्द्रह हजार की वार्षिक राशि के अतिरिक्त पाच हजार की वार्षिक राशि प्रशासनिक व्यय के लिए भी अंग्रेजो को देना स्वीकार किया।[40]

अंग्रेजों को जोधपुर (मारवाड) के साथ समझौते म प्रारम्भ मे कुछ कठिनाई

का सामना करना पड़ा, क्योंकि जोधपुर नरेश अपने अधीनस्थ भाग के प्रशासन को अंग्रेजों को हस्तांतरित करने मे झिझक अनुभव कर रहे थे। परन्तु अन्त में मार्च, १८२४ मे जोधपुर के साथ भी अंग्रेजो का ठीक इसी तरह का समझौता हो गया जैसा मेवाड के साथ सन् १८२३ म हुआ था। इस समझौते के अनुसार जोधपुर ने अपने मेरवाडा क्षेत्र के २१ गाँवो के प्रशासन को आठ वर्षों के लिए अंग्रेजो के अधीन रखना तथा साथ ही पन्द्रह हजार की वार्षिक राशि, क्षेत्र मे व्यवस्था बनाये रखने के लिए गठित मेर टुकडियो के व्यय स्वरूप देना स्वीकार कर लिया। समझौते के अनुसार दोनो रियासतो के नरेशो को खर्चा काटने के बाद हस्तातरित क्षेत्रो के गाँवो का राजस्व मिलते रहने की व्यवस्था की गई थी। इस व्यवस्था को २३ अक्टूबर, १८३५ मे पुन नये समझौते के द्वारा ८ वर्षों के लिए जारी रखा गया, इसमे भी जोधपुर को पहले की भांति अंग्रेजो को प्रति वर्ष पन्द्रह हजार की राशि देने का प्रावधान था। इसके अतिरिक्त जोधपुर ने पहले के २१ गाँवो के अतिरिक्त ७ और नये गाँवो का प्रशासन भी अंग्रेजो को हस्तातरित कर दिया।[४१]

मेवाड के साथ १८३३ मे तथा जोधपुर के साथ १८३५ मे किया गया उपर्युक्त समझौता सन् १८४३ मे समाप्त होने वाला था। इस व्यवस्था को जारी रखने के लिए नये समझौते की आवश्यकता अनुभव की गई। मेवाड नरेश ने यह पहल की कि अंग्रेजो को जबतक वे चाहें तबतक मेवाड के मेरवाडा क्षेत्र के गाँवो का प्रशासन उनके अधीन रखने की अनुमति प्रदान करदी।[४२] जोधपुर रियासत ने भी ऐसा ही किया। वे सात गाँव १८३५ के समझौते के अतर्गत अंग्रेजो ने अपने प्रशासनिक अधिकार मे लिए थे पुन जोधपुर रियासत को लौटा दिए। परन्तु इस सबध मे कोई स्पष्ट इकरारनामा नही हुआ। अंग्रेजो ने सन् १८४७ मे दोनो रियासतो द्वारा उनके हिस्से स्थाईतौर पर अंग्रेजो को हस्तातरित कर दिए जाने के आशय के प्रयत्न किए परन्तु इसमे उन्हें सफलता नही मिल सकी। इस प्रकार इन्हीं असतोषजनक आधारो पर मेरवाड़ा मे अंग्रेज प्रशासन कई वर्षों तक जारी रहा।[४३]

मेवाड के मेरवाडा सम्बन्धी गाँवो का प्रश्न सन् १८७२ और १८७६ मे पुन उठाया गया परन्तु सन् १८८३ मे अन्तिम रूप से समझौता हो सका। इसमे यह तय किया गया कि ब्रिटिश सरकार मेवाड के मेरवाडा क्षेत्र के प्रशासनिक व्यय तथा मेरवाडा बटालियन और भील कोर के खर्च की एवज म इस क्षेत्र के पूरे राजस्व की हकदार होगी। अबतक की बकाया राशि के लिए मेवाड के राणा से माग नहीं की जाएगी। महाराणा को इसके साथ ही स्पष्टतौर से यह आश्वासन दिया गया कि इस समझौते के कारण मेवाड मेरवाडा पर उनका स्वामित्व किसी तरह भी प्रभावित नहीं होगा। साथ ही अंग्रेजों द्वारा अपने अधिकार मे लिए गए उनके क्षेत्रो का राजस्व जब कभी ६६,००० रुपये की वार्षिक राशि से जो मेवाड के मेरवाडा

क्षेत्र के प्रशासन तथा मेरवाडा बटालियन और भील कौर पर व्यय के लिए मेवाड द्वारा अंग्रेजों को देना निर्धारित हुआ था, उससे अधिक की प्राप्ति होने पर इस तरह की पूरी रकम मेवाड को लौटा दी जाएगी । इस बारे में मेवाड मे स्थित अंग्रेज रेजीडेन्ट प्रति वर्ष पिछले वर्ष के राजस्व का हिसाब मेवाड सरकार को प्रस्तुत करते रहेंगे ।[४४]

मारवाड-मेरवाडा के बारे मे भी जो मेरवाडा क्षेत्र मे जोधपुर रियासत का भाग था, कई वर्षों के बाद अंग्रेज सरकार व जोधपुर महाराजा के बीच सन् १८८५ मे सतोषजनक समझौता हो पाया था । जिसके अनुसार यह तय हुआ कि जोधपुर रियासत का इन गांवों पर सार्वभौमिक अधिकार रहेगा और अंग्रेज सरकार उन्हें प्रति वर्ष तीन हजार रुपये देगी । यदि अंग्रेज सरकार को कभी इन जोधपुर के गांवो से लाभ होगा तो उसका ४० प्रतिशत जोधपुर रियासत को मिला करेगा । इन शर्तों के आधार पर अंग्रेज सरकार इन गांवो पर अपना सपूर्ण एव स्थाई प्रशासनिक नियत्रण स्थापित कर सकी थी ।[४५]

न्याय-व्यवस्था

अंग्रेजों के आगमन से पूर्व मेरों की अपनी अनोखी न्याय व्यवस्था थी । यह व्यवस्था कठोर दड पर आधारित थी । इन लोगो की यह विचित्र मान्यता थी कि निरपराध व्यक्ति का हाथ यदि गर्म तेल मे डलवाया जाए या उसकी हथेलियो पर गर्म लोहे का गोला भी रख दिया जाय तो वह नहीं जलता है । साथ ही वे यह भी मानते थे कि मन्दिर मे देवता के सम्मुख रखी हुई सपत्ति को यदि कोई व्यक्ति बिना न्यायोचित अधिकार के उठाने का साहस करता है तो उसे निश्चय ही दैवी प्रकोप का पात्र बनना पडेगा । अंग्रेजो की न्याय-व्यवस्था के सम्मुख इन मान्यताओ को समाप्त होना पडा । मुकदमो का पचायतो के द्वारा निपटाने की प्रक्रिया पुन स्थापित की गई । वादी को अपनी शिकायत लिखित मे पचायत को प्रस्तुत करनी होती थी । प्रतिवादी को अपनी सफाई के लिए लिखित अथवा मौखिक उत्तर देना आवश्यक था । उसे इस बात की सुविधा दी जाती थी कि वह अपने मामले की सुनवाई के लिए पचायती व्यवस्था अथवा अन्य उपायो में से जिसे चाहे पसन्द कर सकता था । यदि पचायत प्रक्रिया निर्विवाद होती तो दोनों ही पक्षों से उनके सदस्यों के नाम आमन्त्रित किए जाते थे । दोनों ही पक्षो के सदस्यों की समान सख्या रहती थी । उन्हें यह लिखित आश्वासन देना होता था कि यदि उनमें से कोई भी पचायत के निर्णय को नहीं माने तो उस व्यक्ति को पचायत प्रक्रिया के लिए सरकार द्वारा व्यय की गई राशि का एक तिहाई या एक चौथाई भाग स्वय वहन करना होगा । तत्पश्चात् दोनों पक्षों के कागजात जाचे जाते थे व उनमे अपेक्षित भूलें ठीक करने के बाद दोनों पक्षों को वे पढ़कर सुनाए जाते थे । उन्हें सुझाव देने तथा भूल सुधारने

का पूर्ण हक होता था। तत्पश्चात् स्थानीय अधिकारी को आदेश दिया जाता था कि वह पचायत बुलाए, गवाहो के नाम उपस्थिति का आदेश जारी करे और कार्यवाही को लेखबद्ध करे। यदि पच लोग रिश्वत के प्रभाव या अन्य कारणों से न्यायपूर्ण निर्णय न लेकर किसी के हक मे अनुचित निर्णय लेते तो उन्हे भी दडित करने का प्रावधान था। पचायत के निर्णयो को अन्तिम स्वीकृति एव आदेशो के लिए अग्रेज अधिकारियो को प्रस्तुत किया जाता था। अधिकाश मामलो मे पचायतों का निर्णय सर्वसम्मत हुआ करता था। व्यावहारिक दृष्टिकोण से पचायती न्याय प्रक्रिया विलम्ब के दोषो से रहित थी।[४६]

फौजदारी मुकदमे अग्रेज अधिकारीगण सक्षिप्त विचारण के द्वारा तय करते थे। परन्तु कतिपय ऐसे मुकदमे जिनमे सबूत पूरे अथवा सतोषजनक नही होते, उन्हें पचायतो को सौप दिया जाता था।[४७]

मृत्युदण्ड बहुत कम दिया जाता था। हत्या अथवा खून के गम्भीर मामलों मे ही शारीरिक दण्ड दिया जाता था। साधारण मामलो मे चार माह तक के कारावास का प्रावधान था। बाल अपराधो या महिलाओ की बदचलनी के मामले मे सजा नही दी जाती थी। जेल-व्यवस्था अपने आप मे सुव्यवस्थित थी। कैदियो को प्रतिदिन एक सेर जौ का आटा दिया जाता था। कैदियो की प्रार्थना पर उन्हें कम्बल और कपडे भी दिए जाते थे, परन्तु इनकी कीमत कैदियो के खर्चे मे से काट ली जाती थी। यहाँ तक कि खुराक खर्च तथा अन्य खर्चे भी कैदियों की रिहाई के बाद उनसे वसूल किए जाते थे। जेलो मे काम का समय दोपहर से सायकाल तक रहता था। काम मे लापरवाही या अवहेलना करने पर उन्हे दण्ड स्वरूप अतिरिक्त काम करना होता था।[४८]

भूमि-व्यवस्था

भूमि भूस्वामी की सपत्ति होती थी। इनके मालिक अधिकाशत किसान ही होते थे। भूस्वामी अपनी इच्छानुसार भूमि को बेच सकता था, व रहन रख सकता था। परन्तु भूस्वामी को यह अधिकार था कि वह उक्त राशि का भुगतान कर जब भी चाहे अपनी जमीन को पुन प्राप्त कर सकता था। भूमि को दूसरो से जुतवाकर लाभ उठाने वाली व्यवस्था का जन्म यहाँ अभीतक नही हुआ था। कृषि अधिकाशत स्वय के गुजारे का साधन थी। राजस्व सम्बन्धी सभी अपीलो की सुनवाई अग्रेज अधिकारियों के समक्ष होती थी। फसल का चौथा हिस्सा पटेलो द्वारा सरकार को भूराजस्व के रूप मे दिया जाता था जो कि तत्कालीन भूराजस्व की अधिकतम सीमा थी। जब कि क्षेत्र के अन्य किसानों से एक तिहाई ही वसूल किया जाता था।

यह निर्विवाद सत्य है कि भूराजस्व निर्धारण की इस पद्धति में किसानो के साथ सख्ती व भ्रष्टाचार के द्वार खुले थे परन्तु समाज मे उन दिनों ऐसी ही व्यवस्था

लागू थी और इसमे किसी तरह के मूल-भूत परिवर्तन का मतलब सारी व्यवस्था को अव्यवस्थित कर देना था। भूराजस्व वसूली मे कोई विशेष दिक्कत पैदा नही होती थी और फसल के मूल्याकन की प्रक्रिया से किसान परिचित थे। अंग्रेज अधिकारियो की राय मे तो यदि सरकार फसल का आधा हिस्सा भी भू-राजस्व मे लेती तो उन्हे देने मे कोई आपत्ति नही थी। परन्तु इतनी अधिक भू राजस्व वसूली इसलिए नही की जाती थी कि किसान इतने गरीब थे कि वे कदाचित् ही इतना लगान दे पाते।[49]

सामाजिक सुधार

लूटमार, गुलामी, कन्या-हत्या, महिलाओ की बिक्री जैसी सामाजिक कुरीतियो के अलावा भी मेरो मे और कतिपय सामाजिक दोष पाए जाते थे। महिलाओ की सामाजिक प्रतिष्ठा कितनी थी इसका अन्दाज इससे लगाया जा सकता है कि उन्हे चौपायो की तरह बेचा जा सकता था। यहाँ तक कि एक बेटा अपने पिता की मृत्यु के बाद मा को बेचने का हकदार था। इस तरह का अधिकार माँ की ममता व उसके प्रति अपने प्रेम की कमी पर आधारित नही था। इसके मूल मे केवल यही भावना काम करती थी कि उसकी माँ को प्राप्त करने मे उसके पिता ने नाना को अच्छी खासी रकम दी थी अतएव बेटे को यह हक प्राप्त था कि वह अपनी माँ को बेचकर यह रकम वापस प्राप्त कर सकता था। दुनियाँ के किसी भी समाज मे ऐसी व्यवस्था कही भी देखने को नही मिलती है। अंग्रेजो को यह श्रेय दिया जा सकता है कि उन्होने इस कुरीति को समाप्त करने मे योग दिया, फलस्वरूप लडकियो के विधिवत् विवाह होने लगे, कन्याओं का वालवध भी कम हुआ और कालातर मे धीरे-धीरे अन्य सामाजिक सुधारों का मार्ग भी प्रशस्त हो सका।[50]

सामान्यत मेरो मे चार तरह के दास होते थे। दास-दासियो का क्रय-विक्रय किया जा सकता था। स्वामी और दासी के बीच इस आशय का समझौता होता था कि वह आजन्म अपने स्वामी की बनी रहेगी। इसके अतिरिक्त लूटमार में प्राप्त स्त्री पुरुष जिन्हें दो या तीन साल मे छुटकारे की राशि चुका कर छुडाया

इस आधार पर मिलती थी कि वह चोटी काट कर मालिक के हाथ में दे दे। मालिक उसे दूत शिखा दासों में शामिल कर लेता और उसे संरक्षण व सुरक्षा प्रदान करता था। दूतशिखा के मरने पर उसकी सारी संपत्ति मालिक की होती थी। जबतक दूतशिखा जीवित रहता, मालिक उसकी लूट-खसोट में से एक चौथाई का अधिकारी होता था।[४१]

यह स्वीकार करना पड़ेगा कि मेरों में व्याप्त उपर्युक्त तथा अन्य कई कुरीतियों को मिटाने में अंग्रेजों को अत्यंत सफलता मिली। धीरे-धीरे इनमें सुधार होने लगे। एक दूसरे के प्रति उनके आपसी व्यवहार में भी सुधार आया। उनके अपने क्षेत्र में भी शांति स्थापित हुई तथा साथ ही पड़ोसी क्षेत्र जोधपुर, उदयपुर भी उनके हस्तक्षेपों से मुक्त रहे। मेरवाड़ा में शांति स्थापना का जो काम अंग्रेजों ने किया, वह कम महत्वपूर्ण नहीं है। इनमें व्याप्त सामाजिक कुरीतियों को मिटाने में तत्कालीन अंग्रेज अधिकारियों ने जिस दृढ़ता, साहस और अपनी कार्यकुशलता का परिचय दिया है, वह सराहनीय है।

मेरवाड़ा बटालियन

अंग्रेजों ने मेरों की मेरवाड़ा बटालियन एक ऐसी अनुशासित सेना तैयार की थी कि जिस पर अंग्रेज सरकार किसी भी संकट के समय भरोसा कर सकती थी। बहुत ही कम समय में इन टुकड़ियों को सैनिक तत्परता, चुस्ती और अन्य फौजी नियमों के अनुकूल ढाल दिया गया और सारी बटालियन किसी भी तरह के शत्रु व संकट का सामना करने में सक्षम थी। इस तरह के सैनिक अनुशासन ने जनता में यथासमय जिम्मेदारी निभाना, स्वच्छता का पालन करना, आदेश मानना, सहज व्यवहार तथा अंग्रेज हुकूमत के प्रति विश्वास की भावना पैदा की। इस क्षेत्र में जो अब-तक लूट-मार और हत्याओं के कारण कुख्यात था, शान्ति स्थापित हुई। व्यवस्थित समाज का रूप लेने के लिए आवश्यक श्रम और संयम की आदतें धीरे-धीरे मेरों में घर करने लगी।[४३]

कर्नल हाल और डिक्सन की उपलब्धियां

कर्नल हाल ने इस क्षेत्र के विकास के लिए इतना अधिक कार्य किया था कि जब अस्वस्थता के कारण उन्होंने अपना पद कर्नल डिक्सन को सौंपा तो लोगों को बड़ा दुःख हुआ। गवर्नर जनरल थी सी. टी. मेटकाफ को कर्नल डिक्सन की नियुक्ति इस क्षेत्र में करते समय यह पूर्ण विश्वास था कि डिक्सन उदार, तत्पर, कार्यकुशल, लगनशील और जनसामान्य के हितैषी के रूप में इस क्षेत्र की विषम समस्याओं को निपटाने में सफल होंगे।[४४]

मेरवाड़ा मुख्यतः पहाड़ी क्षेत्र है, जहाँ अच्छी खेती का विकास संभव नहीं

था। सिंचाई के लिए वर्षा के अतिरिक्त अन्य साधनो का भारी अभाव था। सन् १८३२ मे इस क्षेत्र में भीषण अकाल के कारण लोगों को अपनी तथा अपने मवेशियो के प्राण बचाने के लिए यह क्षेत्र छोड कर इधर-उधर अन्यत्र जाने को बाध्य होना पडा था। सारा क्षेत्र वीरान रेगिस्तान मे परिवर्तित हो गया था। प्रशासन के समक्ष यह प्रश्न उठ खडा हुआ था कि कही कर्नल हाल ने जो विकास के काम हाथ मे लिए थे, वे निरर्थक नहीं हो जाए। लोगो मे लूटमार की प्रवृत्ति पुन जन्म न ले ले, और लोग अपने घरो व खेतो के धन्धे को छोड न दें। प्रशासन के लिए यह जरूरी हो गया था कि वे जनता की आवश्यकताओं की पूर्ति करके उन्हे इस प्राकृतिक प्रकोप से मुकाबले के लिए तैयार करें। इसमे इस व्यय के लिए बहुत बडी धनराशि अपेक्षित थी। जनता इतनी गरीब थी कि उससे इसके जुटाने की बात कही नहीं जा सकती थी। पिछडी कृषि को विकसित करने की प्रशासन की योजनाओं व कार्यक्रमों मे लोग केवल सहयोग मात्र कर सकते थे।[४५]

सबसे प्रमुख काम पुराने तालाबो की मरम्मत और नये जलाशयो का सरकारी खर्चे पर निर्माण का था। प्रत्येक गाँव मे खेती को सुधारने के लिए पूरा श्रम और शक्ति लगाने का वातावरण तैयार किया गया। बेरोजगार लोगों की सूचियां तैयार की गई जिससे उन्हें भी खेती के काम मे लगाया जा सके। १८३२ के अकाल से लोगो मे विश्वास की भावना बनाए रखने के लिए अथक परिश्रम किया गया। सरकारी खर्चेपर बडे पैमाने पर कुएँ खुदवाने का काम हाथ म लिया। इन कुओ को बाद मे किसानो को सौंप दिया गया। सरकार के इस कदम ने स्थानीय लोगो मे उसके प्रति गहरे विश्वास की भावना उत्पन्न की। जिस क्षेत्र मे कुएँ खोदना कठिन काम था, वहाँ सरकार ने बडे-बडे तालाबो का निर्माण कराया जिससे कि आपत्काल मे न संचित-सुरक्षित जलभंडार का काम दे सकें। पहाडी धाराओं से खेतो की मिट्टी बह जाने और वर्षा के जल का जमीन मे न रहने की समस्या भी विकट थी। इस दिशा मे खेतों के चारो ओर पत्थरो की दीवारें खडी की गई।[४६]

उपर्युक्त प्रयासो के अतिरिक्त अन्य कतिपय भूमि विकास आयोजनाओं को इस तरह व्यवस्थित ढग से अपनाया गया कि हजारो बीघा पडती भूमि, जहाँ पहले जगल थे—अल्प समय में ही कृषि योग्य भूमि मे बदल गई। जब लोगो को पता लगा कि सरकार इस भूमि को खेती के लिए वितरित करना चाहती है तो उन्होने प्रार्थना-पत्र देना शुरू किया। पटेलो की नियुक्तियां की गई और उनके सीमा क्षेत्र निर्धारित किए गए। शुभ मुहूर्त देखकर कई नये गाँवों की स्थापना की गई। पटेलों को पट्टा दिया गया, लोगो को बसने के लिए सरकार की ओर से पूरी रियायतें प्रदान की गईं। यहाँ तक कि उनमे कृषि के सामान का भी सरकार की ओर से नि शुल्क वितरण किया गया।[४७]

सरकार और जनता के बीच सम्पर्क स्थापित करने व उनकी समस्याओं को अविलम्ब दूर करने के लिए अजमेर के सुपरिन्टेन्डेन्ट दौरा करते थे जहाँ वे जाते जनता उनके डेरे पर इकट्ठी हो जाती थी। उनकी कठिनाइयों को सुनकर वहीं उनके निवारण का प्रयत्न किया जाता था। इसका परिणाम यह निकला कि जनता में अंग्रेज सरकार के प्रति विश्वास की भावना उत्पन्न हुई[४८]।

सामाजिक जीवन

प्रशासनिक कर्तव्यों की पूर्ति के साथ-साथ सरकार ने इन लोगों में सामाजिक जीवन की भावना पैदा करने के प्रयत्न भी किए। सामाजिक जीवन में प्रमुख रूप से किसानों तथा दस्तकारों का जिनमें मुख्यतः लुहार, बढ़ई, कुम्हार, नाई, सेवक, बलाई आदि का बाहुल्य था। ये जातियाँ कृषि के साथ ही साथ अपने परपरागत व्यवसाय भी किया करती थी। किसान का एकमात्र व्यवसाय कृषि था। अन्य जातियों को सेवा के उपलक्ष में किसानों के यहां से निःशुल्क अनाज मिला करता था। उदाहरणतया ढोली को गाँव में सभी उत्सवों पर ढोल बजाना होता था और चमार को ग्रामवासियों के जूते बनाने व उनकी निःशुल्क मरम्मत करनी होती थी। चमार का मृत पशु पर अधिकार होता था और उसकी आजीविका एवं निर्वाह का भार सारे ग्रामीण समाज को वहन करना होता था। इसी तरह ढोली का भी सभी परिस्थितियों में समाज पर निर्वाह का दावा रहता था। कुछ ऐसे भू-भाग भी थे जिन्हें कई कारणों से लोग जोतने को तैयार नहीं थे। अंग्रेज चूंकि उन्हें खेतों का रूप देना चाहते थे, इसलिए जब किसान इसके लिए सहमत नहीं हुए तो उन्होंने बलाइयों को—जिन्होंने खेती और अन्य कृषि जन्य कामों में अपने कौशल का परिचय दिया था, यह भूमि दे दी गई और वहाँ उन्हें बसा कर रहने के झोंपड़े भी बनवा दिए गए।[४६] इस प्रकार अंग्रेज् सरकार ने मेरवाड़े में कृषि को प्रोत्साहित करने का प्रयास किया।

कृषि विकास

इस तथ्य को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है कि मेरवाड़ा में कृषि विकास का इतिहास अंग्रेज् प्रशासन के बड़े परिश्रम का परिणाम है। पहाड़ी नाले जो बरसात में बह कर खेतों के बीच से गुजरते थे उन्हें बाँध दिया गया, कुएँ खोदे गए और लोगों से बिना किसी तरह की व्यय राशि लिए ही प्रशासन ने उन्हें उपयोग के लिए गौर किया, बांध और तालाब राज्य के खर्चे से तैयार किए गए। प्रशासन को सफलता तभी प्राप्त हुई जब लोग स्वयं उत्साहित होकर प्रशासन को सहायता देने लगे। लोग उत्साहित होते हैं या अनुत्साहित, यह बहुत कुछ प्रशासन पर निर्भर करता है और इस संदर्भ में तत्कालीन अंग्रेज-प्रशासन काफी हद तक इस इलाके में सफल रहा।

अंग्रेजो के प्रशासन को यह श्रेय भी देना होगा कि उन्होंने मेरवाडा के इलाके मे लुटेरो के दलो को समाप्त कर व मेरो को अनुशासित कर शाति स्थापित की। मार्ग, व्यापार के लिए निष्कटक हो गए। इस क्षेत्र मे अराजकता काफी कम हो गई थी। अकाल के दिनो मे मवेशियो के अपहरण की घटनाओं को छोड कर इस क्षेत्र मे शान्ति स्थापित हो गई। फलस्वरूप यही मेर आगे चलकर अंग्रेजो के लिए सैनिक कार्यों मे बडे सहायक सिद्ध हुए।[६०]

सन् १८५७ के सैनिक विद्रोह मे मेरवाडा बटालियन पूर्ण रूप से अंग्रेजों की भक्त रही और इसके फलस्वरूप उसे विशेष आदर भी प्राप्त हुआ था। सन् १८७० मे लार्ड मेयो ने इसे पूरी तरह सैनिक कोर में पुनर्गठित कर और इसका सदर मुकाम ब्यावर से अजमेर स्थानान्तरित कर दिया था। १८९७ मे यह बटालियन भारत सरकार के कमांडर-इन-चीफ के अधीन कर दी गई थी। सन् १९०३ मे इसे भारतीय सेना का अग बना कर और इसका नाम ४४ मेरवाडा इन्फेंट्री रख दिया गया था।[६१]

अध्याय २

१. "उन दिनो पश्चिमी घाट के समुद्री तट से देश के आन्तरिक भागो मे पूर्व की ओर, उत्तर-पश्चिम तथा दक्षिणी पूर्वी क्षेत्रो तक सचारित होने वाला व्यापार-मार्ग मेरवाड क्षेत्र से होकर गुजरता था। यह क्षेत्र इस व्यावसायिक मार्ग के मध्य मे स्थित था तथा मेवाड और मारवाड की सीमाओ को पृथक् करता था। इस क्षेत्र से केवल व्यापार ही प्रभावित नहीं होता था वरन् दो राज्यो के बीच दृढ कपाट के रूप मे भी इस भूभाग का महत्व था। इस क्षेत्र की प्राकृतिक बनावट ही ऐसी है कि गाडियो के पहिए उधर से गुजर नही सकते थे।"

असि० पोलीटिकल ऐजेन्ट ब्यावर को श्री एफ विल्डर पोलीटिकल एजेन्ट तथा सुपरिटेंडेन्ट द्वारा प्रेषित पत्र—अजमेर दि० २० जुलाई, १८२२।

२ सन् १८१८ से लेकर १८३४ तक—अंग्रेजों के राजपूताना मे आगमन काल से लेकर मेरवाडा की ऐतिहासिक रूप-रेखा, सरकार के आदेशो से प्रस्तुत, फाइल क्रमांक १११० पृ० १ सन् १८७३ (पूर्व फाइल क्रमांक १८५३) अजमेर।

३ अंग्रेजो के आगमन के पूर्व मेरो की उत्पत्ति, उनका धर्म, इतिहास सम्बन्धित सक्षिप्त विवरण। फाइल क्रमांक १११० सन् १८७३, पूर्व क्रमाक

१४५३ पृ० ६. स्केच ऑफ मेरवाडा डिक्सन (१८५०) पृष्ठ १ से ६

जोधा रिडमलोत की ख्यात, राजस्थान राज्य पुरातत्व मण्डल पाडुलिपि क्रमाक ७०५ पुरातत्व श्रेणी जो पहले भूतपूर्व जोधपुर रियासत के इतिहास विभाग से उपलब्ध (क्रमाक १३)

४ पश्चिमी राजपूताना की रियासतो के पोलीटिकल एजेन्ट कर्नल जेम्स टॉड द्वारा सी० एफ० विल्डर सुपरिटेन्डेन्ट अजमेर को प्रेषित पत्र, दिनांक ५-१२-१८२० ।

५ भारत की जनगणना सम्बन्धी रिपोर्ट—राजपूताना और अजमेर सन् १६०१ पृष्ठ ६२ ।

६ केप्टिन हॉल द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट, दिसम्बर १८३४, फाइल क्रमाक ८ (१८२१) मेर गाँवो की सामान्य जानकारी सदर्भ सामग्री (राज० रा० पु० मण्डल) । स्केच ऑफ मेरवाडा, डिक्सन, (१८५०) पृ० ६–१८ ।

७ कर्नल जेम्स टॉड द्वारा दिल्ली के रेजीडेन्ट सर डेविड ऑक्टरलोनी को प्रेषित पत्र दि० १८–६–२१ फाइल, क्रमाक ए (१) पूर्व, क्रमांक ८ । १८२१ (राज० रा० पु० म०) मेर गाँवो सम्बन्धी सामान्य जानकारी ।

८. कार्यवाहक पोलिटीकल एजेन्ट द्वारा मेजर जनरल सर डेविड ऑक्टरलोनी रेजीडेन्ट मालवा राजपूताना को प्रेषित पत्र दिनाक १७ जून १८२२ । (राज० रा० पु० मण्डल) ।

९ सचिव भारत सरकार द्वारा राजपूताना मालवा के पोलिटिकल एजेन्ट मेजर जनरल ऑक्टरलोनी को पत्र फोर्ट विलियम दिनाक १७ जून, १८२२ (राज० रा० पु० मण्डल) ।

१०. फाइल क्रमाक १११०, अग्रेजो के मेरवाडा मे आधिपत्य के पूर्व मेरों की उत्पत्ति, उनके धर्म तथा इतिहास का सक्षिप्त विवरण पृ० ६–११, (राज० रा० पु० मण्डल) स्केच ऑफ मेरवाडा डिक्सन (१८५०) पृ० १३–२० ।

११. सी० सी० वाट्सन—राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटीयर्स, अजमेर मेरवाडा, खड १ ए (१६०४) पृ० १३–१७, फाइल क्रमाक १११०—अग्रेजों के आधिपत्य के पूर्व मेरो की उत्पत्ति, उनका धर्म तथा इतिहास सम्बन्धी सक्षिप्त विवरण, पृ० ६–१३ (राज० रा० पु० मण्डल) स्केच ऑफ मेरवाडा-डिक्सन (१८५०) पृ० १ से ६ ।

१२. ठाकुर देवीसिंह पारसोली के जागीरदार थे । (शिवप्रसाद त्रिपाठी) मगरा मेरवाडा का इतिहास पृ० स० ४४ और ४५ (१६१४) बूदी सिरीज

न ४८ आलेख सख्या ५३ मेघराम की दीवान नो अर्जी दिनांक आसोज शुक्ला सप्तमी, विक्रम संवत् १७८७ (रा० पु० मण्डल)।

१३. मेरो की उत्पत्ति, इतिहास तथा धर्म का संक्षिप्त विवरण पृष्ठ ७ से ८ (रा० रा० पु० मण्डल) तथा शिवप्रसाद त्रिपाठी का मगरा मेरवाडे का इतिहास (१६१४) पृष्ठ ४४-४५, वाकया दस्तावेज जयपुर रियासत, बूदी क्रमाक ७, आलेख सख्या ८५ कार्तिक शुक्ला अष्ठमी विक्रम संवत् १७८७।

१४ मेर, उनकी उत्पत्ति धर्म तथा इतिहास का संक्षिप्त विवरण (रा० रा० पु० मण्डल) पृष्ठ ८। "मेवाड की सेना ने बदनोर के ठाकुर तथा मसूदा के ठाकुर सुल्तानसिंह के साथ हथून पर आक्रमण किया। भयकर लडाई हुई जिसमे ठाकुर सुल्तानसिंह खेत रहा। मेवाड की सेना भाग छूटी।" (शिव प्रसाद त्रिपाठी—मगरा मेरवाडो का इतिहास (१६१४) पृष्ठ ४६)।

१५ मेरो का संक्षिप्त विवरण 'उनकी उत्पत्ति, धर्म तथा इतिहास" (रा० पु० मण्डल) पृष्ठ ६ "महाराजा विजयसिंह ने अपने भण्डारी के नेतृत्व मे एक बडी फौज भेजकर चागवास दुर्ग पर आक्रमण करवाया था परन्तु फौज को हताश होकर बिना लडे ही वापस जोधपुर लौटना पडा। कुछ माह बाद रायपुर के ठाकुर अर्जुनसिंह के नेतृत्व मे पुन जोधपुर की फौज ने कोट किशना पर धावा किया परन्तु रावतो ने आक्रमण करके इन्हें खदेड दिया। (शिवप्रसाद त्रिपाठी—मगरा मेरवाडा का इतिहास (१६१४) पृष्ठ ४६-४७)।

१६ मेरो का संक्षिप्त विवरण, उनकी उत्पत्ति, धर्म तथा इतिहास (रा० पु० मण्डल) पृष्ठ ६। भायला टाडगढ तहसील मे है।

१७ मेरों का संक्षिप्त विवरण, उनकी उत्पत्ति, धर्म तथा इतिहास (रा० पु० मण्डल) पृष्ठ ६। जोधपुर के महाराजा मानसिंह ने उन्हें आक्रमण के लिए उकसाया था।

१८ यह अभियान भगवानपुरा के ठाकुर ने महाराणा भीमसिंह के आदेश पर किया था। बरार के निकट हुई लडाई में ठाकुर को अपने प्राणों से हाथ धोने पडे। (शिव प्रसाद त्रिपाठी—मगरा मेरवाडा का इतिहास १ १६१४—पृष्ठ ४८)।

१६. श्री एफ विल्डर पोलिटिकल एजेन्ट तथा सुपरिन्टेन्डेन्ट का असि पोलिटिकल एजेन्ट ब्यावर को पत्र, अजमेर दिनांक ३०-७-१८२२।

२० भाग ब्यावर से ६ मील दूर पूर्व मे स्थित गांव है। यह चारो ओर से

पहाड़ियो से घिरा हुआ है। (शिव प्रसाद त्रिपाठी—मगरा-मेरवाड़ा का इतिहास १६१४—पृष्ठ २२)।

२१ श्यामगढ ब्यावर से ६ मील दूर नयानगर के पूर्व मे तथा मसूदा के पश्चिम मे है। यहाँ के निवासी अपने पड़ोसी क्षेत्र मे सगठित रूप से लूटपाट किया करते थे। (शिवप्रसाद त्रिपाठी—मगरा मेरवाड़ा का इतिहास १६१४ पृष्ठ २३)।

२२ सूरवा ब्यावर से ६ मील दूर पूर्व मे श्यामगढ़ के दक्षिण मे दो मील की दूरी पर स्थित है। शिवप्रसाद त्रिपाठी मगरा—मेरवाड़ा का इतिहास १६१४—पृष्ठ २४)।

२३. फाइल स० ११११० मेरो का सक्षिप्त विवरण पृष्ठ ११-१२ (रा० पु० मण्डल) कैप्टिन एच० हॉल सुपरिटेन्डेन्ट ब्यावर का रेजीडेन्ट मेजर जनरल सर डेविड ऑक्टरलोनी को पत्र दिनाक २०-१०-१८२३।

२४ उपरोक्त।

२५ फाइल क्रमाक ११११०, मेरो का सक्षिप्त विवरण पृष्ठ ११-१२ (राज० रा० पु० मण्डल) एफ विल्डर पोलिटिकल एजेन्ट तथा सुपरि-अजमेर का मालवा, राजपूताना और नीमच के रेजीडेन्ट मेजर जनरल सर डेविड ऑक्टरलोनी को पत्र दिनाक २०-५-१८२२।

२६ भीम जिसका प्रचलित नाम पडला है, टाडगढ़ से पूर्व मे १० मील की दूरी पर स्थित है। इस स्थान के निवासी पड़ोसी रियासतें मेवाड़ और मारवाड के क्षेत्रो मे लूटमार करते रहते थे। (शिवप्रसाद त्रिपाठी—मगरा मेरवाड़ा का इतिहास १६१४—पृ० ३६)।

२७ चीफ कमीश्नर कार्यालय फाइल क्रमाक १४६६२ (१२) सामान्य विविध फाइल क्रमाक ३—अजमेर और मेवाड के मेरो का विद्रोह जेम्स टॉड द्वारा विल्डर को प्रेषित पत्र दिनाक ५-१२-१८२०। जेम्स टाड द्वारा मेक्सवेल को प्रेषित पत्र दिनाक १६-१२-१८२०। विल्डर द्वारा ऑक्टरलोनी तथा टॉड को प्रेषित पत्र दिसम्बर १८२० तथा विल्डर द्वारा कर्नल मेक्सवेल को प्रेषित पत्र (राज० रा० पु० मण्डल)।

२८. बोरवा ब्यावर के दक्षिण मे ७ मील की दूरी पर स्थित गाँव है। महाराणा भीमसिंह ने यहाँ एक किला बनवाया था। (शिवप्रसाद त्रिपाठी-मगरा, मेरवाड़ा का इतिहास १६१४—पृष्ठ २६)।

२६ हथूण या अथूण ब्यावर से ६ मील की दूरी पर दक्षिण मे स्थित एक गाँव

है । (शि० प्र० त्रिपाठी—मगरा-मेरवाड़ा का इतिहास १६१४—पृष्ठ २५) ।

३० मडला, भीम का प्रचलित नाम था ।

३१ कोट किराना टाडगढ़ से पूर्व में १२ मील दूर एक गाँव है । (शि० प्र० त्रिपाठी—मगरा—मेरवाड़ा का इतिहास १६१४ पृष्ठ ३७) ।

३२ बगड़ी टाडगढ़ से २० मील दूर है । यह जवाजा से ६ मील की दूरी पर है । शि० प्र० त्रिपाठी—मगरा-मेरवाड़ा का इतिहास १६१४ पृष्ठ ३०) ।

३३ रामगढ़ सेंदरा स्टेशन से एक मील दूर है । (शि० प्र० त्रिपाठी—मगरा मेरवाड़ा का इतिहास—१६१४ पृष्ठ २६) ।

३४ फाइल क्रमांक १११०—मेरवाड़ा की रूपरेखा १८१८ में अंग्रेजों के आगमन से लेकर १८३६ तक, केप्टिन हॉल द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट के आधार पर तैयार साराश, दिसम्बर १८३४ (राज० रा० पु० मण्डल) ।

३५ फाइल क्रमांक ६—१८२१, कमीश्नरी कार्यालय, अजमेर १ ए (१) पुरानी । जी । मेवाड़—मेरवाड़ा १८२१–४७ (रा० रा० पु० मण्डल) । श्री एफ विल्डर को श्री मेक्समेल द्वारा प्रेषित पत्र दिनांक १३–२–१८२१ तथा कर्नल जेम्स टॉड को श्री सी० मार्टिन द्वारा प्रेषित पत्र दिनांक १८–१–१८२१, २२–१–१८२१ ।

३६ फाइल क्रमांक १८२१, कमीश्नर कार्यालय, अजमेर १ ए (१) पुरानी । ८ मेर गाँव, सामान्य मामले (राज० रा० पु० मण्डल) सचिव भारत सरकार द्वारा मेजर जनरल डेविड ऑक्टरलोनी को प्रेषित पत्र दिनांक २४–१२–१८२२ तथा २६–१–१८२३ ।

३७. कमीश्नरी कार्यालय अजमेर, फाइल क्रमांक ६ (३) पुरानी । क्रमांक १ सन् १८२१ ।

३८ फाइल क्रमांक ए (१) । पुरानी ८, मेर गाँवों सम्बन्धी सामान्य मामले (राज० रा० पु० मण्डल) फाइल क्रमांक १११० सन् १८७३ दिसम्बर सन् १८३४ में केप्टिन हॉल द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट के आधार पर तैयार विवरण (राज० रा० पु० मण्डल) ।

३९ सी० सी० वाट्सन, राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स अजमेर (१६०४) क्रमांक १–१ पृष्ठ १४–१५, राजपूताना गजेटियर्स (१८७६) पृष्ठ २० स्केच आफ मेरवाड़ा—डिक्सन (१८५०) पृष्ठ १३-२८ कमिश्नरी कार्यालय अजमेर (१६०४) फाइल क्रमांक १० सन् १८२१, ए (१) पुरानी ।

क्रमांक १० मेरवाड़ा में मेवाड़ और मारवाड़ के दावों के बारे में कैप्टिन हॉल द्वारा प्रस्तुत जाच रिपोर्ट, कमिश्नर कार्यालय, अजमेर, फाइल क्रमांक ६ सन् १८२१, ए (१) पुरानी ६। मेवाड़—मेरवाड़ा सम्बन्धित मामले। (राज० रा० पु० मण्डल)।

४० फाइल क्रमांक ६, १८२१ पश्चिमी राजपूताना रियासतों के पोलीटिकल एजेन्ट का पत्र दिनाक २३–१०–१८३५। सी० सी० वाटसन राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटीयर्स, खण्ड १ ए (१९०४) पृष्ठ १४–१५।

४१. अजमेर कमिश्नर फाइल क्रमाक ७ सन् १८२३ मारवाड़—मेरवाड़ा से सम्बन्धित मामले। (राज० रा० पु० मण्डल) पश्चिम राजपूताना की रियासतों के पोलीटिकल एजेन्ट के पत्र दिनाक २–११–१८३५। वीर विनोद पृष्ठ ८६१–८६३।

४२ फाइल क्रमाक ६, १८२१, ए (१) पुरानी क्रमाक ६, अजमेर-मेरवाड़ा १८२१—४७ सदर्भ मामले (राज० रा० पु० मण्डल)। पश्चिमी राजपूताना की रियासतो के पोलीटिकल एजेन्ट का पत्र दिनांक १–७–१८४३।

४३. फाइल क्रमांक ७, १८२२ कमिश्नरी कार्यालय अजमेर ए (१) पुरानी क्रमाक ७ खण्ड २ मेरवाड़ा १८३३–५३। पश्चिमी राजपूताना की रियासतो के पोलीटिकल एजेन्ट का पत्र दिनाक ४–३–१८४७। सबधित सामग्री (राज० रा० पु० मण्डल)।

४४. अजमेर फाइल क्रमाक ४८ ए २ चीफ-कमिश्नरी द्वारा सचिव भारत सरकार को प्रस्तुत रिपोर्ट (राज० रा० पु० मण्डल)।

४५. जोधपुर सरकार, फाइल क्रमाक पी० ४ (३) २१–ए–२ मेरवाड़ा सबधी दावे और प्रतिनिधित्व (राज० रा० पु० मण्डल)।

४६ फाइल क्रमाक १११० सन् १८७३। सन् १८३४ मे हॉल द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट के आधार पर तैयार साराश (राज० रा० पु० मण्डल)।

४७. उपरोक्त।

४८. मेरवाड़ा के वृत्तात की रुपरेखा फाइल क्रमाक १११० (राज० रा० पु० मण्डल)।

४९. डिक्सन, स्केच ऑफ मेरवाड़ा (१८५०) पृष्ठ ३५–४२।

५० फाइल क्रमांक १११०। सन् १८३४ मे कैप्टिन हॉल द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट के आधार पर तैयार सारांश (राज० रा० पु० मण्डल)।

५१ फाइल क्रमांक ११११० सन् १८३४ म केप्टिन हॉल द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट के आधार पर तैयार सारांश (राज० रा० पु० मण्डल)।

५२ सी० सी० वाट्सन, राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटीयर्स अजमेर—मेरवाड़ा, खंड १ ए (१९०४) पृष्ठ १५-१७।

५३ सी० सी० वाट्सन, राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटीयर्स अजमेर-मेरवाड़ा खंड १ ए (१९०४) पृष्ठ १५-१७।

५४ डिक्सन-स्केच आफ मेरवाड़ा, (१८५०) पृष्ठ ८२।

५५ उपरोक्त पृष्ठ ८२-८४।

५६ फाइल क्रमांक ११११०, राजपूताना रेजीडेन्सी कार्यालय चीफ कमिश्नर शाखा, जेल फाइल क्रमांक १४५३ (राज० रा० पु० मण्डल)।

५७ चीफ-कमिश्नर कार्यालय, फाइल क्रमांक ११११०, मेरवाड़ा की रूपरेखा (१८५०) पृष्ठ ८४-८८।

५८ उपरोक्त।

५९ चीफ-कमिश्नर कार्यालय फाइल क्रमांक ११११०—स्केच ऑफ मेरवाड़ा, डिक्सन पृष्ठ ८४ से ८८। (राज० रा० पु० मण्डल)।

६० फाइल क्रमांक ए (१) पुरानी।८ मेर ग्रामों के सामान्य मामले फाइल क्रमांक ११११० सन् १८७३। केप्टिन हॉल द्वारा दिसम्बर १८३४ मे प्रस्तुत रिपोर्ट तथा उसके आधार पर तैयार विवरण (राज० रा० पु० मण्डल) स्केच ऑफ मेरवाड़ा—डिक्सन (१८५०) पृष्ठ १३-२८।

६१ सी० सी० वाट्सन, राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटीयर्स भाग १ ए, अजमेर-मेरवाड़ा (१९०४) पृष्ठ १३।

२

अजमेर-मेरवाड़ा में अंग्रेज़ी प्रशासन

अंग्रेजो द्वारा अजमेर-मेरवाड़ा का प्रशासन सीधा अपने हाथ में सम्भाल लेने के बाद भी जिले की तत्कालीन क्षेत्रीय सीमाओ मे कोई विशेष परिवर्तन नही हुआ। एकमात्र परिवर्तन यह हुआ कि सन् १८६० मे सिंधिया से अंग्रेजों की संधि के अनुसार इस क्षेत्र मे पाच गाँव और जोड दिए गए। फूलिया का परगना जो कि अजमेर का ही भाग था परन्तु शाहपुरा के राजा के पास था, उसे अंग्रेजो ने सन् १८४७ मे अपने अधिकार में ले लिया था और इस तरह शाहपुरा का अजमेर से सम्बन्ध विच्छेद हो गया। मेरवाडा के वे गाँव जो अंग्रेजो ने जीतकर १८२३ मे अजमेर मे मिला लिए थे उन पर अंग्रेजो का सीधा प्रशासन उसी रूप मे बना रहा। मारवाड के सात गाँव जो अंग्रेजो के प्रशासन को सौंपे गए थे उनमे भी किसी प्रकार का कोई विशेष परिवर्तन नही हुआ।[1]

प्रारम्भिक काल (१८१८–१८३२)

अजमेर, अंग्रेजो के आधिपत्य मे आ जाने के बाद, विल्डर को वहाँ प्रथम सुपरिन्टेडेन्ट नियुक्त किया गया। इसके पूर्व विल्डर दिल्ली के रेजीडेंट के सहायक के रूप मे कार्य कर रहे थे।[2]

उन्होने २६ जुलाई, १८१८ के सिंधिया के अधिकारियों से अजमेर का कार्यभार संभाला। अंग्रेजो ने अजमेर शहर को एकदम वीरान पाया। मराठा व

पिंडारियों के अत्याचारों और दमन के कारण इसकी हालत अत्यंत दयनीय हो गई थी।[४] उन दिनों अजमेर आठ परगनों में विभाजित था, जिसके अन्तर्गत ५३४ गाँव थे और ३९ लाख बीघा (पक्का) कृषि भूमि थी। भूमि यद्यपि बालुई थी, तथापि अत्यन्त उपजाऊ थी, जिसमें खरीफ और रबी की दोनों फसलें होती थी। कोई भी गाँव बिना कुएँ के नहीं था। इन कुओं का पानी भी पन्द्रह बीस हाथ से अधिक गहरा नहीं था। इन कुओं का जल, यद्यपि कुछ क्षेत्रों में पीने योग्य नहीं था तथापि सिंचाई के लिए पूर्णतया उपयुक्त था। लगभग सभी जमीदार राठौड थे, केवल कुछ ही जमीदार पठान, जाट, मेर और चीता थे। मेर और चीता जिले के एक छोर पर रहते थे। इस क्षेत्र में एक लम्बे समय तक अशांति बने रहने के कारण यहाँ की जनसंख्या काफी घट गई थी। शान्ति की स्थापना होते ही दूसरी रियासतों में शरण पाने के लिए गए हुए लोग तेजी से अपने घरों को लौटने लगे। लोगों में विश्वास पुनर्जागृत हो जाने के फलस्वरूप कृषि में भी काफी वृद्धि हुई और पुनः समृद्धि के संकेत दृष्टि-गोचर होने लगे।[५]

विल्डर के समक्ष सबसे बड़ी कठिनाई इस क्षेत्र में प्रचलित विभिन्न मुद्राओं के कारण उत्पन्न हुई। कम्पनी के सिक्के केवल जयपुर तक ही प्रचलित थे, इससे आगे दक्षिण में उनका चलन नहीं के बराबर था। देशी ६ टकसालें मुख्यतः ऐसी थी जिनके सिक्कों का प्रचलन अजमेर में था। इन टकसालों के लिए चांदी सूरत और बम्बई से आयात होती, और पाली के माध्यम से इन टकसालों को मिला करती थी। अजमेर की टकसाल अकबर के समय से ही चालू थी और प्रतिवर्ष डेढ लाख के लगभग सिक्के वहाँ ढाले जाते थे। ये सिक्के शेरशाही कहलाते थे। किशनगढ़ी रुपया जो किशनगढ़ टकसाल में ढलता था पिछले पचास वर्षों से प्रचलित था, यद्यपि कभी-कभी अजमेर-शासकों के हस्तक्षेप के कारण इसे बंद कर दिया जाता था। कुचामनी रुपया कुचामन के ठाकुर द्वारा जोधपुर रियासत की आज्ञा के बिना ही ढाला जाता था। जोधपुर के तत्कालीन नरेश उन दिनों इतने असमर्थ थे कि वे इस पर रोक नहीं लगा सके। शाहपुरा टकसाल को भी काम करते हुए ७० वर्ष हो चले थे, यद्यपि उदयपुर के महाराजा ने इसे बंद करने की कई बार कोशिशें की थी। चित्तौडी रुपया मेवाड़ का मान्यता प्राप्त सिक्का था। झाड़शाही सिक्का जयपुर की टकसाल में ढलता था। विल्डर ने विभिन्न मुद्राओं की इस समस्या के निवारणार्थ यह नियम लागू किया कि सरकारी राजस्व फर्रुखाबादी सिक्कों में चुकाया जाय। इस्तमरारी क्षेत्रों के राजस्व की राशि जो शेरशाही सिक्कों में होती थी, ९ प्रतिशत का "बाघ" देकर फर्रुखाबादी सिक्कों में बदली जा सकती थी। इसके फलस्वरूप प्रत्येक ठिकाने के राजस्व का हिसाब रुपये–आना–पाई में प्रचलित हो सका।[६]

मेरवाड़ा क्षेत्र के पूर्णत अंग्रेजो के अधीन हो जाने के बाद मेरवाड़ा को विल्डर ने ९ परगनो मे विभाजित किया। चार परगने जो अंग्रेज सरकार को सधि के अतर्गत सौपें गए वे अजमेर के अग बने। मेवाड के हिस्से मे तीन परगने टाडगढ़, दवेर और सारोठ रहे तथा मारवाड के हिस्से म दो परगनें चाग और कोटकिराना आए। इस विस्तृत भूभाग के प्रशासन के लिए तीन प्रमुख भारतीय अधिकारी नियुक्त किए गए। पुलिस का काम अपने कामो के अतिरिक्त राजस्व वसूली भी था। दवेर, टाडगढ़, भापला और कोटकिराना की राजस्व वसूली टाडगढ़ के तहसीलदार को सौंपी गई। इनमे आठ गाँव थे और कुल १३ ढाणिया थी। उन दिनो तहसीलदार ही अपने जिले का सबसे बडा पुलिस अधिकारी भी होता था। सारोठ के तहसीलदार के अधिकार क्षेत्र मे सारोठ बरार और बर काकड के परगने थे। इसके अन्तर्गत ५१ गाँव और ढाणिया थी। उत्तरी भूभाग ब्यावर, झाक और श्यामगढ के परगने थे इनमे कुल १०६ गाँव और ८५२ ढाणिया थी। इस क्षेत्र के लिए तीसरे तहसीलदार की नियुक्ति की गई थी।[६] सन् १८२४ म विल्डर का स्थानान्तरण कर दिया गया था। अजमेर मेरवाडा मे इनके प्रशासन के ६ वर्ष कोई विशेष महत्वपूर्ण सिद्ध नहीं हुए। प्रात के किसी भी विभाग मे उन्होने कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नही किया। कई पुरानी प्रशासनिक अनियमितताए विशेषकर राजस्व एव चुगी विभाग म यथावत रही।

विल्डर ने जिस भूमि का बन्दोबस्त किया उसकी न तो कीमत आकने की कोशिश की और न लोगो की स्थिति समझने का प्रयत्न ही किया। उसकी असफलता का प्रमुख कारण अत्यधिक कार्यभार और अन्यत्र व्यस्त रहना था। वह अजमेर के सुपरिंटेंडेंट होने के साथ जोधपुर जैसलमेर और किशनगढ का पोलिटिकल एजेंट था। केवल इतना ही नही उसे प्रशासनिक कार्यों के लिए पूरे कर्मचारी भी प्राप्त नहीं थे। विभागो मे कर्मचारियो का भारी अभाव था। सम्पूर्ण जिले का राजस्व तथा पुलिस विभाग का कुल वेतन सर्व प्रति माह १३७४ रुपये था जो विल्डर के मासिक वेतन तीन हजार रुपये के आधे से भी कम था। भारत सरकार ने प्रशासन को विकसित करने के लिए उन्हे निर्देश व निर्धारित नियम भी प्रदान नही किए। यहाँ तक कि एक दफा उन्होंने कलकत्तागजट की प्रति चाही तो उन्हे इकार कर दिया गया।[७] वर्षों के बाद एक अंग्रेज सहायक अजमेर के लिए नियुक्त किया गया। विल्डर ने अजमेर के लोगो को पुनर्वास म काफी योगदान दिया। उसने व्यापारियो, व्यवसायियो और उद्योगपतियो को अजमेर मे बसने के लिए प्रोत्साहित किया। इसके लिए उसने देश के कोने-कोने से व्यापारियो को अजमेर म बसने के लिए आमन्त्रित किया। इतना ही नही उसने कई व्यापारियों और सेठो को सिफारिशी पत्र दिए। इन न्यायाधीशों और दडनायको से प्रार्थना की गई थी कि वे इनको बकाया राशि की वसूली मे सहायता दें।[८]

श्री हेनरी मिडलटन ने विल्डर की कार्य निवृत्ति के बाद अजमेर का पदभार सम्हाला। मिडलटन के समय में प्रशासन में कोई महत्वपूर्ण कार्य नहीं हुआ। अक्टूबर, १८२७ में मिडलटन के स्थान पर श्री केवेंडिश की नियुक्ति हुई। श्री केवेंडिश ने कई महत्वपूर्ण सुधार कार्य किए और प्रशासन को व्यवस्थित रूप प्रदान किया। उनके अथक प्रयत्न के फलस्वरूप इसमरार, भोम और जागीर बन्दोबस्त किया जा सका। १८३२ में केवेंडिश के स्थान पर मेजर स्वेयर्स की नियुक्ति हुई।

द्वितीय चरण (१८३२-४६) अजमेर जिला पश्चिमी सूबे के अन्तर्गत—

सन् १८३२ में अजमेर जिले को उत्तर पश्चिमी सूबे के अन्तर्गत ले लिया गया।[9] सन् १८३७-३८ से लेकर १८४०-४१ तक के चार वर्ष अजमेर के लिए भारी विपदा के वर्ष रहे। कर्नल सदरलैंड के समय में लोगों की हालत बुरी तरह बिगड़ गई थी, एक तो वर्षा न होने से अकाल की स्थिति हो गई थी, दूसरे प्रशासन अपने उद्देश्यों में बुरी तरह असफल सिद्ध हुआ था। लगान की सख्ती के कारण पाँच सौ परिवारों ने अजमेर जिले से पलायन कर दिया था क्योंकि उनकी सामर्थ्य इतना लगान चुकाने की नहीं थी[10]। मरम्मत के अभाव में आधे से लगभग तालाब वर्षों से टूटे पड़े थे। कुएँ बिना मरम्मत के ढह गए थे। लोगों का आत्मविश्वास इतना टूट चुका था कि कृषि विकास के नाम पर कोई भी किसी को ऋण देने को तैयार नहीं था। किसान एडमस्टन के प्रस्तावित कम लगान की अपेक्षा फसल का आधा हिस्सा देना अच्छा समझते थे[11]। घरों की हालत वीरान खंडहरों जैसी हो चली थी। कमिश्नर के मतानुसार सम्पूर्ण खालसा क्षेत्र गरीबी की चपेट से जकड़ा हुआ था जबकि तालुकेदारों की जमींदारियां इनके मुकाबले में कहीं अधिक अच्छी अवस्था में थीं।[12]

अजमेर जिले में जिस तरह के प्रशासनिक प्रयोग किए गए, उनका परिणाम दुर्भाग्यपूर्ण रहा। राजस्व वसूली घटते घटते इस सीमा तक पहुँच गई थी कि मराठों को प्राप्त राजस्व जितनी भी नहीं रही। श्री विल्डर ने आय के स्त्रोतों का वास्तविकता से अधिक अनुमान लगा लिया था। इस प्रारम्भिक भूल के कारण विल्डर और मिडलटन द्वारा किया गया बन्दोबस्त अच्छे वर्षों में किए जाने वाले बन्दोबस्त से भी कहीं अधिक बढ़ चढ़ कर था। एडमस्टन का बन्दोबस्त जो इन तीनों में सबसे कम था, वह भी फसल के आधे हिस्से की वसूली का था। परन्तु फसलों में दोनों ही फसलें शामिल थी, अतएव एक न एक फसल चौपट होने की स्थिति के कारण यह व्यवस्था बुरी तरह से असफल रही। प्रति सिंचित एकड़ भूमि पर ३१ प्रतिशत के अनुसार ३६ रुपये का राजस्वभार था जो १८३३ के रेगुलेशन ६ के अन्तर्गत उत्तर-पश्चिमी सूबे के लिए निर्धारित लगान की दर से कहीं दुगना था। अजमेर में लागू

किया गया बन्दोबस्त साधारण नही था, और लोगो को भारी कष्ट में डाले बिना इसकी वसूली संभव नहीं थी।

दाशनिक करारोपण व्यवस्था अस्त व्यस्त हो गई थी, क्योंकि व्यक्तिगत निर्धारित देय की वसूली की उचित व्यवस्था नही थी। पुरानी व्यवस्था के स्थान पर, जिसके अन्तर्गत पटेल और पटवारी हर किसान से फसल का आधा भाग वसूल किया करते थे, संयुक्त जिम्मेदारी के सिद्धान्त को लागू किया गया था। परन्तु यह व्यवस्था असभव सिद्ध हुई क्योकि प्रत्येक किसान से उसकी भूमि के आधार पर निर्धारित लगान सरकार द्वारा वसूल कर लेने पर उसके पास भरण-पोषण जितना भी नही बच पाता था[१३]।

फरवरी, १८४२ म मेजर डिक्सन को अजमेर का सुपरिंटेंडेन्ट नियुक्त किया गया। इस पद के अतिरिक्त उनके पास मेरवाडा के सुपरिन्टेन्डेन्ट तथा मेरवाडा बटालियन के कमाडर का कार्यभार भी था। इनके कार्यभार सम्हालने के साथ ही अजमेर के प्रशासनिक इतिहास म एक नये युग का आरम्भ हुआ। आगामी ६ वर्षों के दौरान ४,५२,७०७ रुपयो की राशि तालाबो, बाध और इनकी मरम्मत पर व्यय की गई। कृषि विकास के लिए किसानो को अग्रिम राशि दी गई तथा डिक्सन अपने व्यक्तिगत उत्साह के कारण किसानो को प्रोत्साहित करने मे सफल हुए। सरकार को इन कामो से लाभ पहुँचाने के दृष्टिकोण से भी ऐसे गांवो को जो अपनी जगह से नये बाधों के समीप बसना चाहते थे अनुमति प्रदान की गई।[१४]

डिक्सन की उपलब्धियां—

सन् १८४२ का वर्ष अजमेर के प्रशासनिक काल की विभाजक रेखा माना जा सकता है। इसी वर्ष कर्नल डिक्सन मेरवाडा के साथ साथ अजमेर के भी सुपरिन्टेन्डेन्ट नियुक्त हुए। उनकी सेवाओ का समादर करने के दृष्टिकोण से सरकार ने उन्हे यह अधिकार दिया कि वे उत्तरी पश्चिमी सूबे के लेफ्टीनेन्ट गवर्नर से सीधा पत्र व्यवहार कर सकते थे तथा दोनो जिलो का सम्पूर्ण असैनिक प्रशासन उनके अधीन रख दिया गया था। इस तरह वे सीधे लेफ्टीनेन्ट गवर्नर के प्रति उत्तरदायी थे और अजमेर मेरवाडा के प्रति ए० जी० जी० उतने ही उत्तरदायी रह गये जितने कि वे राजपूताना की रियासतो के बारे मे थे। इस तरह के परिवर्तन से केवल दोनो जिलो का विलय ही नहीं हुआ वरन् दोनो जिलो के सामान्य प्रशासन पर भी व्यापक प्रभाव पडा। इस तरह सुपरिन्टेन्डेन्ट के पद और अधिकारो मे भी वृद्धि हुई और उसका सीधा सम्पर्क लेफ्टीनेन्ट गवनर से हो गया[१५]।

अपने वर्तमान पदभार के अतिरिक्त मेरवाडा बटालियन की कमान भी जून, १८५७ तक डिक्सन के हाथो मे रही। ब्यावर गिर्जाघर मे उनकी कब्र आज भी मेरो के लिए श्रद्धास्थली है और काफी लोग वहाँ जाकर मनौती मानते हैं। मेरो ने

इस उदार अधिकारी की सेवाओ की स्मृति को आज तक जाग्रत रख छोड़ा है। परकोटे से घिरे ब्यावर शहर का निर्माण डिक्सन की देन थी और सभवतया भारत मे डिक्सन ही अन्तिम अंग्रेज थे जिन्होने परकोटे वाले किसी शहर का निर्माण कराया हो। डिक्सन के देहावसान के साथ ही अजमेर मेरवाडा के प्रशासनिक इतिहास का द्वितीय चरण समाप्त होता है। यह समय अजमेर मेरवाड़ा के लिए भौतिक विकास का चरण था और केवल इसी काल में सभवतया पहली बार निर्धारित लगान वसूल हो सका।[१६]

सन् १८४८ तक अजमेर के सरकारी आय-व्यय का निरीक्षण कलकत्ता से हुआ करता था परन्तु १८४६ के बाद अजमेर के आय व्यय का निरीक्षण आगरा में होने लगा। गवर्नर जनरल की यह मान्यता थी कि अजमेर जिला, स्पष्टतया नागरिक प्रभार होने से इसे उत्तर-पश्चिमी सूबो के लेफ्टिनेण्ट-गवर्नर के अधीन रखना लाभप्रद होगा। इन दिनों कर्नल डिक्सन का ओहदा कमिश्नर स्तर तक उन्नत कर अजमेर जिले का प्रशासन सीधा लेफ्टिनेन्ट के नियन्त्रण मे रख दिया गया था। डिक्सन की अदालतों से सभी न्यायिक अपीलें भविष्य मे आगरा मे होने लगी। इससे पूर्व ये अपीलें राजपूताना के ए० जी० जी० सुना करते थे।[१७]

तृतीय चरण (१८४८–६१)

सन् १८४८ तक ए०जी०जी० अजमेर के कमिश्नर हुआ करते थे तथा सुपरिटेंडेंट उनके अधीन कार्य करते थे। इस समय तक अजमेर जिला स्पष्टतया गैर नियमन् क्षेत्र था। जिले से सरकार को राजस्व की केवल वार्षिक रिपोर्ट ही प्रस्तुत हुआ करती थी। ब्रिटिश कानून न तो यहाँ लागू ही किए गए थे और न यह सदर न्यायालय के न्यायिक अधिकार क्षेत्र म था। १८५३ मे कर्नल डिक्सन की नियुक्ति कमिश्नर के पद पर की गई व ए०जी०जी० को अजमेर के प्रशासन-कार्य से मुक्त कर दिया गया।[१८] १८५३ के पहले, अजमेर मेरवाडा के अधिकारी सुपरिटेंडेंट कहलाते थे और ये दिल्ली के रेजीडेंट के अन्तर्गत थे, बाद में मालवा-राजपूताना के रेजीडेंट के तहत रहे और सन् १८३२ के बाद इन्हे कमिश्नर के अन्तर्गत रखा गया।[१६] अजमेर-मेरवाडा को राजस्व सदर बोर्ड के अन्तर्गत लेने मे किसी तरह के विशेष आदेश नही पारित हुए। परन्तु अन्तिम वर्षों मे यह स्वतं धीरे-धीरे उस कार्यालय के नियन्त्रण मे चला गया। सन् १८६२ मे न्यायिक सेवाओ और पुलिस विभाग को पृथक् कर दिया गया। उत्तर-पश्चिमी सूबे मे प्रचलित सभी कानून धीरे धीरे अजमेर मेरवाडा मे भी लागू किए गए। इन वर्षों में अजमेर-मेरवाडा भी नियमन् प्रान्त मे शुमार किया जाने लगा।[२०] सन् १८५८ मे अजमेर व मेरवाडा को मिलाकर एक जिला कर दिया गया तथा उसे डिप्टी-कमिश्नर के अधीन रखा गया। ए० जी० जी० को अजमेर के कमिश्नर का पद

भी प्रदान किया गया था और कमिश्नर के कार्य के लिए उसे उत्तर-पश्चिम सूबे (एन डब्ल्यू पी) के अधीन रखा गया।[२१] ए. जी जी. राजस्व कमिश्नर, सेशन कोर्ट के न्यायाधीश व सिविल कोर्ट के जज की हैसियत से काम करते थे। सामान्य प्रशासनिक मामलो मे वे उत्तर-पश्चिमी सूबे की सरकार के विभिन्न विभागों के अध्यक्षो के प्रति उत्तरदायी थे।[२२]

प्रथम डिप्टी कमिश्नर कैप्टिन जे०सी०ब्रूक्स के अनुसार अजमेर और राजगढ परगने के किसानो की स्थिति रामसर के किसानो से अच्छी थी। रामसर के किसान सामान्यत बहुत गरीब थे। श्री ब्रूक्स को भी अपने पूर्वाधिकारियो की भाति उन सभी बाधाओ से सघर्ष करना पडा। क्षेत्रीय समस्याओ का निवारण पहले की तरह ही जटिल बना रहा। जिलो मे मवेशियो का व्यापक अभाव हो चला था। सन् १८४८ के भीषण अकाल ने क्षेत्र को एक तरह से झकझोर दिया था। हजारो की सख्या मे मवेशी जो निकटवर्ती क्षेत्रो मे चरने के लिए ले जाए गए थे, नष्ट हो गए। *जिला इस भयकर क्षति की पूर्ति आसानी से नही कर सका। खाद की इतनी भारी* कमी हुई कि तालाबो के पेटे मे जमी मिट्टी ही खाद के रूप म काम मे ली जाने लगी। इस दिशा मे मेरवाडा की स्थिति दूसरे जिलो की अपेक्षा कुछ अच्छी रही। बन्दोबस्त के बाद टाडगढ परगने मे अफीम की खेती काफी अधिक मात्रा मे चल चली थी। परन्तु नयानगर शहर के आसपास के किसानो की हालत दयनीय हो थी।[२३]

इनके अतिरिक्त और भी कई कठिनाइया पैदा हो चली थीं जिससे लगान वसूली मे बाधा होने लगी। पटवारियो के कागजात खाली बन्दोबस्त रेकार्ड की नकलें मात्र थे। प्रत्येक किसान यह मान कर चलता था कि उसका लगान निर्धारित है और लगान नही चुकाने वालो के स्थान पर घाटे की पूर्ति किसानो से करने की व्यवस्था को वे अन्यायपूर्ण समझते थे। मेरवाडा मे अधिकाश सिपाहियो मे लगान की रकम बकाया चली आ रही थी। जहाँ बन्दोबस्त कठोर था वहाँ ये लोग जमीन जोतने की मेहनत से जी चुराया करते थे। कर्नल डिक्सन जो मेरवाडा बटालियन के कमाडर और जिले के सुपरिटेंडेंट भी थे सिपाहियो का बकाया लगान उनके वेतन से काट लिया करते थे। परन्तु जब ये कमाडर और सुपरिटेंडेंट के पद पृथक् कर दिए गए, तब यह दुहरी व्यवस्था सभव नही रह सकी।[२४]

उन दिनो जिस किसान की फसल नष्ट हो जाती वह अपना निर्धारित लगान इधर-उधर से कर्ज लेकर चुकाता था। बन्दोबस्त के बाद लगान न चुकाने वालो की शेष राशि की क्षतिपूर्ति के लिए गाँव समाज म राशि के विभाजन की प्रक्रिया समाप्त करा दी गई थी। सम्मिलित जोतो से आय सम्बन्धी हिसाब नहीं रखे जाते थे और सरकार से अकाल के दिनो मे प्राप्त सहायता को राशि सारे गाँव द्वारा काम मे ली जाती थी। फलस्वरूप उन लोगो को बहुत कम राशि मिल पाती थी

जिन्हे वास्तविक सहायता की जरूरत होती थी। पटवारियों को नाममात्र का वेतन मिलता था और वे गांवो मे लोगो को सूद पर कर्जा देने का काम किया करते थे। कैप्टिन ब्रुक्स ने पटवारियो के सेवा नियमो मे परिवर्तन किया था। सरकारी खजाने पर भार डाले बिना पटवारियो को भी अच्छा पारिश्रमिक मिल सके इस आशय से उन्होंने उनके क्षेत्र व हलको का विस्तार किया और प्रत्येक पटवारी के अन्तर्गत आने वाले छोटे छोटे गांवो की सख्या दुगुनी कर दी।[२५]

डिप्टी कमिश्नर मेजर लॉयड ने तो सन् १८६० मे सम्पूर्ण क्षेत्र का व्यापक दौरा कर अजमेर-मेरवाडा क्षेत्र की सामान्य स्थिति तथा क्षेत्रीय विकास के लिए आवश्यक व अविलम्ब कार्यवाहियो के बारे मे विस्तृत एव महत्वपूर्ण रिपोर्ट सरकार को प्रस्तुत की। अपनी इस रिपोर्ट मे उन्होंने सन् १८४६ से लेकर १८५३ तक अजमेर-मेरवाडा क्षेत्र की स्थिति का १८६० की स्थिति के साथ तुलनात्मक विवरण प्रस्तुत किया। मेजर लॉयड के अनुसार 'जिले की स्थिति मे दिनो-दिन तेजी से सुधार होता जा रहा था। वे क्षेत्र जहाँ झाडियाँ व छितराए हुए जगल थे वहाँ अब लह-लहाते खेत नजर आने लगे थे। नये-नये भवनो का निर्माण तीव्रगति से हो रहा था।"[२६]

सन् १८६६ में डिप्टी कमिश्नर ने लगान वसूली की प्रक्रिया मे एक महत्वपूर्ण परिवर्तन लागू किया जिसके अतर्गत सम्पूर्ण सरकारी लगान पटेलो के माध्यम से वसूल करने के आदेश जारी किए गए। इसके पहले प्रत्येक किसान से लगान अलग-अलग वसूल किया जाता था। यह वसूली वास्तव मे लम्बरदार के माध्यम से होती थी जिसे तहसील का चपरासी मदद करता था। यह प्रक्रिया साधारणतया अटपटी अवश्य लगती है परन्तु किसानो के अनुकूल होने के कारण यह चल निकली थी।[२७]

अंग्रेज प्रशासन की लोकप्रियता

सन् १८१८ से लेकर १८६६ तक के अजमेर के सम्पूर्ण प्रशासन को असफल ठहराना उचित नहीं होगा। इस काल मे कर्नल हॉल और कर्नल डिक्सन के प्रयासो से जनता को लूटपाट से काफी हद तक छुटकारा मिला व मेरों को कृषि प्रधान व शान्तिप्रिय बनाने मे सरकार को सफलता मिली। मेर-बटालियन ने इस काम में सरकार की बहुत मदद की। मेर बटालियन केवल पुलिस निगरानी ही नही वरन् सैनिक गार्ड का काम सम्हालने के भी योग्य हो गई थी। दोनो जिलो मे जो तालाब व बधे बांधे गए उनसे भी क्षेत्र की समृद्धि को बल मिला। यद्यपि सरकार द्वारा लगान वसूली प्रतिवर्ष एक सी दर पर नहीं हो पाई। थॉमसन के आदेशो के अन्तर्गत जो व्यवस्था की गई उसके अनुसार जमीन पर किसान का कब्जा स्वीकार किया गया तथा प्रत्येक गाँव के लिए बीस वर्षों की अवधि के लिए साधारण लगान की दरें निर्धारित की गई थीं। व्यवस्था की इस नई प्रक्रिया से क्षेत्र के किसानो को

जमींदारो व सरकारी अधिकारियो की मनमानी व शोषण से मुक्ति मिली और वे लोग अपने श्रम व उद्यम का लाभ उठाने मे समर्थ हो सके। जिले का पुलिस-प्रशासन अन्य प्रान्तो के प्रशासनो के आधार पर गठित किया गया। थोडे बहुत उत्पात कुछ जमीदारो ने अवश्य किए जिनका सदेहास्पद सम्बन्ध डाकुओ और चोरो से था, अन्यथा सारे क्षेत्र मे शाति बनी रही। जेल अनुशासन अच्छा था। एक कालेज की स्थापना की गई और गाँवो मे शिक्षा को प्रोत्साहन दिया जाने लगा। इन सभी प्रशासनिक विभागो मे विभागीय अध्यक्षों द्वारा वार्षिक निरीक्षण तथा देखरेख की समुचित व्यवस्था की गई थी।[२९]

अजमेर-मेरवाडा मे अंग्रेजी प्रशासन को जिलो मे कानून और व्यवस्था की स्थिति मजबूत होने तथा अजमेर शहर मे कई विभिन्न क्षेत्रों से उकसाहट और तनाव का सकट पैदा होने पर भी जून, १८५७ से मार्च, १८५८ तक शाति बने रहने से बल मिला। यहाँ तक कि इस सकट की परिस्थिति मे भी अजमेर के कमिश्नर की कचहरी प्रतिदिन लगा करती थी और व्यापार निर्विघ्न जारी था।[३१]

अजमेर-मेरवाडा के निवासियो के इस तरह के शातिप्रिय और राजभक्त स्वभाव की सराहना अजमेर के कार्यवाहक डिप्टी कमिश्नर कैप्टिन ब्रुक्स,[३०] अजमेर के सहायक कमिश्नर लेफ्टिनेन्ट वाल्टर,[३१] कार्यवाहक सहायक कमिश्नर (ब्यावर) एव लेफ्टिनेन्ट पियर्स[३२] ने अपनी रिपोर्टों मे की थी। ब्रिगेडियर जनरल पी लॉरेंस ने घटनाओ की जो रिपोर्ट प्रेषित की थी उसमे यह आशा उन्होने व्यक्त की कि इस जिले द्वारा राजभक्ति का जो परिचय दिया गया उसकी वायसराय तथा भारत सरकार सराहना करेगी[३३]। अपनी रिपोर्ट के साथ जिले मे घटित अपराधो की जो सूची इन्होने भेजी उसमे बहुत कम सगीन अपराधो का उल्लेख था। राजनीतिक उथल-पुथल के वर्ष मे इतने कम अपराध की घटनाए जिले की प्रशासनिक स्थिरता पर अच्छा प्रकाश डालती हैं। मेरों ने १८५७ के विद्रोह की घटनाओ के घटते ही यह दृढ निश्चय कर लिया था कि वे अपने यहाँ आतरिक उत्पात और अपराधों पर कडी निगाह रखेगें। जिले के केन्द्रस्थल नसीराबाद मे भारतीय सैनिकों की एक पूरी ब्रिगेड द्वारा विप्लव और कतिपय अन्य विद्रोही पलटनो द्वारा कूच करते समय राह मे पडने वाले गाँवो के विद्रोह के बावजूद भी उन्होने अपनी प्रतिज्ञाओं का दृढता से पालन किया। सन् १८५५, १८५६ तथा १८५७ मे सगीन जुर्म और अन्य अपराध क्रमश २०३६, १४७७ तथा १५०७ रहे। १८५६ के मुकाबले मे १८५७ मे अपराधो मे नाममात्र की ही वृद्धि हुई जबकि १८५५ के अपराधों की तुलना मे सन् ५७ के अपराध के आंकड़े बहुत कम थे।[३४]

अग्रेजों के अधीन अजमेर-मेरवाडा का प्रशासन जैसा अच्छा होना चाहिए था वैसा नहीं था। प्रशासन के किसी भी विभाग का कार्य इतना अच्छा नहीं था

कि वह पड़ोसी रियासतों के लिए आदर्श बन सकता।[35] यदि अजमेर के लोगों ने खुले विद्रोह में भाग नहीं लिया तो इसका श्रेय अजमेर के प्रशासन को नहीं दिया जा सकता। इसका मुख्य कारण जिले के लोगों का राजनीतिक पिछड़ापन था।

अंग्रेजों के प्रशासन-तंत्र की कमजोरियां

प्रशासन के बहुत अच्छा नहीं होने के कई कारण थे। अजमेर चारों ओर से पर्वत श्रेणियों से घिरा विस्तृत मैदानी भूभाग है। इसके दक्षिण में स्थित मेरवाड़ा सम्पूर्ण पहाड़ी क्षेत्र है। यहां तक कि कई गांवों में तो बैलगाड़ी का पहुंचना भी असम्भव था। ढालू घाटियों में ही खेती की जाती थी। कर्नल डिक्सन ने अधिकांश जलाशय इसी पहाड़ी क्षेत्र में बनवाए थे। इनमें से कुछ जलाशयों तक पहुंचने का मार्ग ही नहीं था। वहां केवल पैदल चलकर पहुंचा जा सकता था।

इसके अतिरिक्त मेरवाड़ा जिले का एक बड़ा भूभाग अंग्रेजों के अधिकार में नहीं था। यह अत्यन्त ही असन्तोषजनक ढंग से कुछ अवधि के लिए पट्टे पर लिया हुआ क्षेत्र था। लोगों की बोली और रहन सहन उत्तर-पश्चिमी सूबों की अपेक्षा गुजरात के अधिक निकट थी। फिर भी इन जिलों को उत्तर पश्चिमी सूबों के अन्तर्गत रखा गया। सबसे बड़ा असंतोष इन क्षेत्र में वहां की सरकारी भाषा फारसी को लागू करने के कारण पैदा हुआ। यह भाषा लोगों के लिए अंग्रेजी की तरह ही मुश्किल थी। फारसी जुमलों का सरकारी दस्तावेजों में खूब प्रयोग किया जाता था जिससे वाक्य के वाक्य लोगों को सुनने पर भी अर्थहीन लगते थे। इसलिए इनके उसके प्रति असंतोष होना स्वाभाविक था।[36]

कर्नल हॉल और कर्नल डिक्सन की सफलता का कारण उनके द्वारा अपनाए गए विशेष प्रयास थे, जिनका सामान्यतया प्रशासन में अभाव पाया जाता है। इन दोनों ने प्रत्येक कार्य में जिले की आवश्यकता को प्राथमिकता दी थी। प्रशासन इनको नकेल नहीं सका था। ये दोनों पत्राचार की परिपाटी में भी ज्यादा नहीं उतरते थे तथा सरकारी कामकाज में स्थानीय भाषा का भी खूब प्रयोग करते थे। केन्द्रीय सरकार के कठोर नियन्त्रण के अभाव के कारण भी इनको काम करने की व्यापक छूट मिली हुई थी। इसलिए इनको सफलता मिलना स्वाभाविक था। अपनी पहल व उत्साह से इन दोनों अधिकारियों का प्रशासन लोकप्रिय सिद्ध हुआ। दोनों जिलों के छोटे होने से भी जनता को विशेष प्रशासनिक असुविधा नहीं होती थी।[37]

आगे चलकर जब अजमेर और झांसी जिलों के अधिकारियों का एक ही सूची में समावेश किया गया तो उसके बड़े ही खराब परिणाम निकले। अजमेर के रेलमार्गों तथा हिमालय के ठंडे स्थलों से बहुत दूर होने के कारण प्रशासनिक विभागों के अध्यक्षों के व्यक्तिगत निरीक्षण से यह बहुत कुछ अछूता रहा। इसके अति-रिक्त यह जगह झांसी की अपेक्षा इतनी अधिक खर्चीली थी कि अच्छे अधिकारी यहां

पर अपनी नियुक्ति या निरीक्षण को सदा टालने के प्रयत्न में रहते थे[३८]। यहाँ के अधिकारियों का अल्प वेतन भी इस क्षेत्र की उपेक्षा का एक कारण था। कर्नल डिक्सन, जिन्होंने जिले की व्यवस्था व यहाँ की आर्थिक स्थिति का विशेष अध्ययन किया था, दुर्भाग्य से प्रशासन सेवा में अल्प वेतन रखने के पक्ष में थे जबकि इसके विपरीत कैप्टिन ब्रुक्स की मान्यता थी कि इस क्षेत्र में जिला अधिकारियों के अधिक स्वतन्त्रता से काम करने में उनका अल्प वेतन बड़ा ही बाधक है।[३९] इस पूरे काल में सरकार ने विकास कार्यों के बजाय आर्थिक कटौती पर ज्यादा ध्यान दिया। जिन गाँवों के लोगों ने सरकारी अध्यापकों को वेतन भुगतान के लिए राशि देने में आनाकानी की, वहाँ स्कूल बन्द करने के आदेश दिए गए।[४०] इसके अलावा कमिश्नर के यहाँ स्थाई रूप से रहने के कारण प्रशासन में और भी शिथिलता आ गई थी। कमिश्नर इस जिले के डिस्ट्रिक्ट व सेशन कोर्ट के न्यायाधीश भी थे। उनके एक साथ अधिक समय तक अजमेर में नहीं रह पाने के कारण मृत्यु दंड के अपराधियों को फैसले के अभाव में लम्बे समय तक हवालाती कैदी बने रहना पड़ता था। उनको अपने निर्णय के लिए सेशन्स कोर्ट की बैठकों की प्रतीक्षा करनी पड़ती थी। जिले की सड़कें और यातायात अत्यन्त ही पिछड़ी हालत में था। क्षेत्र की समृद्धि के आधार बांध व जलाशय मरम्मत के अभाव में सदा ही ढहते रहते थे।[४१]

सरकार ने कर्नल डिक्सन को जब कमिश्नर नियुक्त किया था तब इसके पीछे केवल उनकी महत्वपूर्ण सेवाओं की सराहना का ही दृष्टिकोण नहीं था, अपितु प्रशासनिक आवश्यकता भी प्रमुख रही थी। कमिश्नर का पद ए०जी०जी० से अलग करने का उद्देश्य ए०जी०जी० को असैनिक प्रशासन के व्यस्त कार्यभार से, जिनमें उनका अधिकांश समय नष्ट हुआ करता था मुक्त करना था। कर्नल डिक्सन को कमिश्नर के पद पर नियुक्त कर उन्हें नागरिक प्रशासन के सम्पूर्ण काम सौंप दिए गए थे। असैनिक प्रशासनिक कार्यभार के कारण पहले ए जी जी का काफी समय तक अजमेर से निकलना ही नहीं हो पाता था। इस कारण राजपूताना की रियासतों से सम्बन्धित राजनीतिक कामकाज के लिए समय निकालना उनके लिए कठिन हो गया था। नई व्यवस्था के अनुसार जहाँ तक नागरिक प्रशासन का प्रश्न था, कर्नल डिक्सन का सीधा सम्बन्ध एवं पत्र व्यवहार उत्तर पश्चिमी सूबों के लेफ्टिनेंट से कायम कर दिया गया था।[४२] परन्तु कर्नल डिक्सन के देहावसान के बाद अजमेर और मेरवाड़ा का प्रशासनिक भार वहाँ एक डिप्टी कमिश्नर की नियुक्ति कर उसके हाथों में सौंप दिया गया था तथा ए जी जी को वापस अजमेर का कमिश्नर नियुक्त कर दिया गया था। इस प्रकार कर्नल डिक्सन के देहान्त के समय से लेकर सन् १८७१ तक अजमेर मेरवाड़ा ए० जी० जी० राजपूताना के अन्तर्गत एक डिप्टी कमिश्नर ही बना रहा। सन् १८५८ से १८७१ तक ए० जी० जी० उत्तर-पश्चिमी सूबा सरकार के अधीन थे। साल में छः महीने ए. जी जी का कार्यालय अजमेर

से २३० मील दूर आबू पर्वत पर रहता था। इन्हें अजमेर के राजस्व कमिश्नर, सेशन कोर्ट के न्यायाधीश, चीफ सिविल कोर्ट के न्यायाधीश पद पर कार्य करना होता था तथा वे सामान्य प्रशासनिक मामलों में उत्तर-पश्चिमी सूबों के विभिन्न विभागाध्यक्षों के प्रति उत्तरदायी थे। इस व्यवस्था के कारण ए जी जी वर्ष में केवल एक बार ही अजमेर में कचहरी कर पाते थे। इस कारण कई अभियुक्तों को बहुधा साल भर तक हवालात में बंद रहना पड़ता था।[४३]

ए जी जी अपने कमिश्नर के कार्य में ही इतने व्यस्त रहते थे कि उन्हें रियासतों से सम्बन्धित राजनीतिक कार्यों के लिए समय ही नहीं मिलता था। कर्नल कीटिंग की यह बहुत सही मान्यता थी कि कोई भी व्यक्ति राजपूताना में गवर्नर जनरल के एजेंट पद पर कार्य करते हुए कमिश्नर की हैसियत से अजमेर जिले के साथ न्याय नहीं कर सकता है।[४४]

ए०जी०जी० राजाओं में व्याप्त बुराईयों को समाप्त करने व उन पर नियन्त्रण रखने में भी असफल रहे। इसके लिए उन्हें दोषी इसलिए नहीं ठहराया जा सकता क्योंकि यदि उन्हें व्यस्त कार्यभार से मुक्त रखा जाता तो वे सम्भवतः अपने व्यक्तिगत प्रभाव का भी उपयोग करने में सफल हो सकते थे। यदि ए०जी०जी० को प्रशासनिक कार्यों से समय मिला होता तो वे विभिन्न रियासतों का दौरा कर वहाँ प्रशासन में फैली बुराईयों को रोकने की ओर ठोस कदम उठाते व इस बात का स्वयं निरीक्षण करते कि राजाओं ने सुधारों के जो आश्वासन दिए, वे पूरे हो रहे हैं या नहीं। इस तरह की देखरेख और निकटतम सम्पर्क के अभाव में अंग्रेजों और राजपूताने के रजवाड़ों के बीच अलगाव भी बढ़ता रहा। सेशन कोर्ट, सिविल अपीलों की सुनवाई तथा विभागाध्यक्षों के साथ सदर्भ जानकारी के पत्राचार में ही वे इस तरह व्यस्त रहते थे कि राजाओं व रियासतों सम्बन्धी मामलों की देखरेख का उनके पास समय ही नहीं था।[४५]

पूर्ववर्ती बीस वर्षों में ए०जी०जी० एक बार ही बीकानेर व बांसवाड़ा का दौरा कर सके इससे यह सहज अनुमान लगाया जा सकता है कि वे अपनी राजनीतिक जिम्मेदारियों को बिल्कुल नहीं निभा पा रहे थे। इस तरह के भारी कार्यभार का तथा एकतंत्र प्रणाली का कुप्रभाव यह हुआ कि अजमेर जिला घोर उपेक्षा का शिकार हुआ। राजस्व बोर्ड के एक वरिष्ठ सदस्य ने फरवरी १८६९ में अपने अजमेर प्रवास के बाद सरकार को प्रस्तुत रिपोर्ट में इस व्यवस्था की कड़ी टीका-टिप्पणी की। उन्होंने लिखा कि 'वर्तमान व्यवस्था के अन्तर्गत जिले की हालत में यद्यपि यह पड़ोसी रियासतों की तुलना में अवश्य कुछ अच्छी है तथापि अधिक सुधार की अपेक्षा नहीं की जा सकती।'[४६]

इस दुहरे प्रशासन के दोषों के अलावा उन्हें अन्य बहुत सी प्रशासनिक त्रुटियाँ

भी दृष्टिगोचर हुई। जिले मे बड़े सैनिक महत्व के काम चल रहे थे इसलिए नसीराबाद तथा जिले मे अन्यत्र नियुक्त सेना सम्बन्धी बहुत सी समस्याए सामने आने लगी। परन्तु नसीराबाद स्थित सेनाए बम्बई प्रेसीडेंसी के नियत्रण में थीं, क्योंकि यहाँ कि टुकड़ियाँ बम्बई सेना का अग मानी जाती थी। परिणामत एक ही जिले पर नियत्रण के चार पृथक् पृथक् स्रोत थे, भारत सरकार, ए०जी०जी०, उत्तर-पश्चिमी सूबो के लेफ्टिनेंट गवर्नर और बम्बई सरकार। वायसराय ने भी इन असुविधाओ तथा इनसे उत्पन्न निश्चित दोषो को स्वीकार किया था। जिले के लोगों की आर्थिक गिरावट की स्थिति यह थी कि उसमे हैसियत वाला (केवल एक अपवाद को छोड़कर) कोई भी जमीदार ऐसा नही था जो सर तक कर्ज मे डूबा हुआ न हो और जिसकी जमीदारी उसके वास्तविक मूल्य से अधिक राशि मे बधक न रखी हुई हो। अधिकारी एक ओर तो अपने न्यायिक अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत डिगरी करते थे और दूसरी तरफ प्रशासनिक अधिकारी के रूप मे उन पर रोक के आदेश जारी करते थे। वास्तव म स्थिति इस सीमा तक पहुँच गई थी कि निकट भविष्य मे ही अविलम्ब प्रभावशाली प्रशासनिक परिवर्तन आवश्यक हो गया था।[४७]

चौथा चरण : पुनर्गठन (१८७०–१६००) :

उत्तर-पश्चिमी सूबो के लफ्टिनेंट गवर्नर ने जिले के प्रशासन को विकसित करने व सर्वोच्च नियत्रण को नियमित बनाने के दृष्टिकोण से जिले के प्रशासन को पुनर्गठित करने की दिशा म कुछ सुझाव दिए थे। उनके अनुसार जिले म व्याप्त प्रशासनिक अनियमितताओ का एकमात्र हल प्रात को अजमेर तथा मेरवाड़ा के दो पृथक् पृथक् जिलो म विभाजित करना था। प्रत्येक जिले के लिए अलग-अलग सुपरिटेंडेंट, ए०जी०जी० की मातहती मे नियुक्त एक नये अधिकारी के अधीनस्थ हो।[४८] इस नई व्यवस्था को लागू करने पर प्रशासनिक व्ययभार मे ३५,८०८ रुपयो की वृद्धि होती थी और यदि इनमे नये सुपरिंटेंडेंट के कार्यालय के अधीनस्थ सेवाओ के व्ययभार तथा सुपरिंटेंडेंट के प्रतिवर्ष चार माह के दौरो का अनुमान से प्रतिदिन के सात या आठ रुपयो के हिसाब से होने वाला व्यय और जोड़ दिया जाता तो व्यय-भार प्रतिवर्ष ४५,००० रुपए तक पहुँचता था।[४६]

वायसराय महोदय ने जिले को दो पृथक् जिलो के रूप मे विभाजन के सुझाव को अनावश्यक समझा। उनके अनुसार न तो क्षेत्र ही इतना विस्तृत था और न राजस्व ही इतना पर्याप्त था कि उसके लिए दो पृथक् जिलाधिकारियो को औचित्य-पूर्ण ठहराया जा सके। उनके अनुसार सूबे के वर्तमान स्वरूप को कायम रखते हुए मेरवाड़ा के लिए एक सहायक अधिकारी की अलग से नियुक्ति करने पर उस समस्या का व्यावहारिक रूप से समाधान हो सकता था। वायसराय के अनुसार सबसे बड़ी आवश्यकता अजमेर जिले के लिए एक कमिश्नर के पद का निर्माण कर उस पर एक

ऐसे योग्य व्यक्ति की नियुक्ति की थी जो बुद्धिमान, अनुभवी एवं गैर नियमन प्रांतों के प्रशासन का अनुभव रखता हो तथा वह स्थाईतौर पर अजमेर रहे। कर्नल ब्रूक्स और इगलिस दोनों ही अधिकारियों ने अजमेर प्रवास के समय वायसराय को यह सुझाव दिया था कि सामान्य प्रशासन चाहे सर्वोच्च सरकार अथवा ए० जी० जी० या उत्तर-पश्चिमी सूबों के लेफ्टिनेंट गवर्नर के अधीन रहे परन्तु जिले में एक उच्च अधिकारी की जो निरन्तर अजमेर में रह सके अत्यधिक आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त दीवानी मामलों के निर्णय के लिए विशेष प्रावधान की भी आवश्यकता अनुभव की जाने लगी थी।[२०]

सन् १८७० में वायसराय ने इसलिए अजमेर के लिए निम्नांकित प्रशासनिक पदों की स्वीकृति प्रदान की —

१ कमिश्नर		
	दो हजार रुपया मासिक वेतन—वार्षिक वेतन-वृद्धि १०० रुपए, पद-श्रृंखला २५०० रुपए तक एवं औसतन स्थाई प्रवास भत्ता।	२५०० रुपए १५० रुपए
२ डिप्टी कमिश्नर		
	रु १०००, मासिक, वार्षिक वेतन-वृद्धि ५० रुपए-वेतन श्रृंखला १४०० तक।	१२०० रुपए
३. न्यायिक सहायक (भारतीय)		
	७०० रुपए, वार्षिक वेतन-वृद्धि ५० रुपए, वेतन श्रृंखला १००० रुपए तक।	८५० रुपए
४. सहायक कमिश्नर मेरवाड़ा		८०० रुपये
५. अतिरिक्त सहायक कमिश्नर मेरवाड़ा (भारतीय)		३०० रुपये
६ अतिरिक्त सहायक कमिश्नर अजमेर (भारतीय)		४०० रुपये
७ कमिश्नर कार्यालय		४०० रुपये
८ न्यायिक सहायक कार्यालय		३०० रुपये
	कुल	६,६५० रुपये

इस व्यवस्था के अन्तर्गत कुल ६,६५० रुपये मासिक खर्च था जो वर्तमान मासिक खर्च पर २७३४ रुपए, अर्थात् ३२८०८ रुपए का प्रतिवर्ष अतिरिक्त भार था।[२१]

इस प्रकार १८७१ में अजमेर-मेरवाड़ा के प्रशासन में बड़ा महत्वपूर्ण

परिवर्तन हुआ। अजमेर मेरवाडा उत्तर पश्चिमी सूबा सरकार के नियन्त्रण से हटाकर भारत सरकार के नियन्त्रण मे परराष्ट्र एव राजनीतिक विभाग के अधीन कर दिया गया। ए० जी० जी० को इस प्रान्त का चीफ कमिश्नर नियुक्त किया गया व प्रान्त के लिए एक अलग पद कमिश्नर का कायम किया गया। अजमेर और मेरवाडा मे एक एक सहायक कमिश्नर की नियुक्ति की गई। इस परिवर्तन के अन्तर्गत कमिश्नर को गैर नियमन् प्रान्त के गवर्नर के समकक्ष अधिकार प्रदान किए गए। इस प्रान्त का पुलिस सुपरिन्टेडेन्ट तथा मुख्य न्यायाधीश भी बनाया गया। डिप्टी कमिश्नर को दूसरे गैर नियमन् प्रान्त के डिप्टीकमिश्नर के समकक्ष अधिकार व स्तर प्रदान किया गया। सहायक कमिश्नर मेरवाडा के अधिकार जिले के उपखड अधिकारी जैसे रखे गए। इस नई व्यवस्था के अन्तर्गत कमिश्नर पर राजस्व सबधी किसी तरह का उत्तरदायित्व नही था। उसे प्रति तीन माह मे एक बार महिने भर के लिए मेरवाडा का दौरा करना होता था अथवा आवश्यकतानुसार उसे समय समय पर अपने उत्तरदायित्वों के अन्तर्गत तथा जिले के उपखड के मौलिक अथवा अपील सम्बन्धी फैसलो के लिए थोडे समय के लिए भी उक्त क्षेत्र का दौरा करना आवश्यक था।[४२]

लेफ्टिनेंट गवर्नर प्रान्त के शासन सम्बन्धी अधिकार ए०जी०जी० के हाथों मे तीन कारणो से दे देना आवश्यक समझते थे --

(१) ए०जी०जी० के अधिकार म पडोसी रियासतो पर भी देखरेख ज्यादा प्रभावशाली हो सकेगी।

(२) यह व्यवस्था क्षेत्र के इस्तमरारदारो के हक मे भी रहेगी क्योंकि इनकी भूमि-व्यवस्था भी पड़ोसी देशी रजवाडो जैसी ही थी।

(३) नियमित अग्रेजी प्रशासन की अपेक्षा इस गैर नियमन् क्षेत्र के लिए सीधे सादे व परिस्थितिवश नियन्त्रण की आवश्यकता थी।[४३]

परन्तु लेफ्टिनेंट गवर्नर के मतानुसार इसे उत्तर-पश्चिमी सूबे के नियन्त्रण में रखने के तर्क मे ज्यादा वजन था। उनके अनुसार उत्तर पश्चिमी सूबो के अन्तर्गत रखने से राजस्व, पुलिस, जेल तथा शिक्षा विभागो पर अनुभवी विभागाध्यक्षो की देखरेख सम्भव हो सकती थी। रेल मार्ग खुल जाने से निरीक्षण नियमित रूप से सम्भव था। हमेंशा ऐसे एक व्यक्ति का मिलना बडा मुश्किल होता जिसमे राजनीतिक निपुणता व प्रशासनिक योग्यता का समावेश हो। अतएव लेफ्टिनेंट गवर्नर ने अजमेर-मेरवाडा को उत्तर-पश्चिम सूबे के अधीन रखने का सुझाव दिया व साथ ही उनकी राय थी कि उन सभी प्रश्नो पर जो अजमेर व निकटवर्ती राज्यो के बीच खडे हों। ए०जी०जी० का कमिश्नर की हैसियत से सामान्य नियंत्रण रहे परन्तु राजस्व, पुलिस

और न्यायिक मामलों संबधी जिला अधिकारी, उत्तर-पश्चिमी सूबों की सरकार के अधीन रहे जिससे कि ए०जी०जी० को दिन प्रतिदिन के प्रशासनिक मामलो से मुक्त किया जा सके।[५४]

परन्तु वाईसराय ने ए जी जी, स्थानीय अधिकारीगण, सर डब्ल्यू मूरे तथा इंगलिश से विचार-विमर्श के पश्चात् यह मत प्रकट किया कि जबतक अजमेर का प्रान्तीय प्रशासन भारत सरकार को हस्तान्तरित नही कर दिया जाता है तबतक प्रशासन की वर्तमान दोषपूर्ण प्रक्रिया जारी रहेगी। ए०जी०जी अपने राजनीतिक उत्तरदायित्वो के लिए भारत सरकार के अधीन थे, सार्वजनिक निर्माण-विभाग के लिए ए०जी०जी० गवर्नर जनरल की कौंसिल के प्रति उत्तरदायी थे। अजमेर के कमिश्नर के रूप में वह उत्तर-पश्चिमी सूबो की सरकार के नियत्रण में थे। नसीराबाद सम्बन्धी सैनिक महत्त्व के कार्यों के लिए वे बम्बई प्रेसीडेंसी के मुखापेक्षी थे। इसलिए प्रशासन के हित मे था कि एक ही प्रान्त पर बहुविध नियत्रणो को समाप्त किया जाए। गवर्नर जनरल की कौंसिल ने इसलिए यह निर्णय लिया कि अजमेर के लिए एक चीफ कमिश्नर का नया पद कायम कर ए जी जी को अजमेर का चीफ कमिश्नर भी नियुक्त किया जाए। ए०जी०जी० को चीफ कमिश्नर की हैसियत से भारत सरकार के "परराष्ट्र विभाग" के अधीन रखा गया। चीफ कमिश्नर की हैसियत से वे अजमेर-मेरवाड़े के वित्त व जूडीशियल कमिश्नर होगे। जूडीशियल कमिश्नर का न्यायालय अजमेर-मेरवाड़ा का सर्वोच्च न्यायालय होगा इसमे कमिश्नर की अदालत के निर्णयों के विरुद्ध जो कि डिस्ट्रिक्ट एव सेशन के स्तर की थी—अपील की सुनवाई होगी।[५५]

अजमेर-मेरवाड़े के प्रशासन का नियत्रण गृह विभाग की अपेक्षा परराष्ट्र विभाग के अन्तर्गत रखने के दो विशेष उद्देश्य थे :—

(१) यह जिला रियासतो से घिरा हुआ था इसलिए उनसे सम्बन्धित प्रश्न सदा ही उठा करते थे।

(२) अन्य विकसित क्षेत्रो की अपेक्षा यहाँ औपचारिक जटिलता को भी कम करना जरूरी समझा गया था। यह भी निर्णय लिया गया कि उत्तर-पश्चिमी सूबों की सरकार के शिक्षा विभाग के निदेशक, सफाई कमिश्नर, जेल एव टीको सम्बन्धी निरीक्षक अजमेर का दौरा कर अपनी रिपोर्ट चीफ कमिश्नर के माध्यम से ठीक उसी तरह प्रस्तुत करेगें जैसा कि मध्य प्रान्त के सम्बधित अधिकारीगण बरार राज्य के बारे में अपनी रिपोर्ट हैदराबाद स्थित रेजीडेंट के माध्यम से प्रस्तुत करते थे।[५६]

१८७७ मे फिर भारत सरकार ने वित्तीय कारणो से इस जिले के प्रशासन मे कई महत्वपूर्ण परिवर्तन किए। डिप्टी कमिश्नर का पद समाप्त कर दिया गया। कमिश्नर के अधीन अजमेर और मेरवाड़ा उपखडो के लिए दो पृथक् असिसटेन्ट, प्रशासन मे मदद के लिए नियुक्त किए गए। प्रत्येक असिसटेन्ट कमिश्नर को भारतीय दड

संहिता के अन्तर्गत आने वाले अपराधों के निर्णय-हेतु जिला दण्डनायक के अधिकारों के अलावा राजस्व तथा चुंगी कलक्टर के अधिकार भी प्रदान किए गए, जिनके लिए उसे कमिश्नर की देखरेख व उसके आदेशों के अन्तर्गत काम करना था। केकड़ी में अतिरिक्त असि० कमिश्नर की जगह एक छोटा अधिकारी नियुक्त किया गया। १८७७ में प्रशासनिक सेवाओं को इस तरह घटाया गया—

१—कमिश्नर	रुपए	२०००—००
२—असिस्टेन्ट कमिश्नर, अजमेर	,,	१०००—००
३—असिस्टेन्ट कमश्निर, मेरवाड़ा	,	८००—००
४—छावनी दण्डनायक	,,	६००—००
५—न्यायिक सहायक	,,	५००—००
६—अतिरिक्त असि० कमिश्नर, अजमेर	,,	४००—००
७—डिप्टी मजिस्ट्रेट	,,	१५८—००

उपर्युक्त प्रशासनिक व्यवस्था १ मई, १८७७ से लागू की गई।[२७] इस तरह अजमेर-प्रशासन को सन् १८७७ में जब पुनर्गठित किया गया तो डिप्टी कमिश्नर का पद समाप्त कर दिया गया और यह अनुभव किया गया कि अजमेर का प्रशासन कमिश्नर सम्हाले तथा उसकी व्यक्तिगत सहायता के लिए एक असिस्टेन्ट कमिश्नर रहे। असिस्टेन्ट कमिश्नर के जिम्मे स्वतन्त्र रूप से कुछ न्याय विभाग के काम भी थे। कुछ समय बाद जब यह अनुभव किया जाने लगा कि कमिश्नर के पास बहुत अधिक काम है तब धीरे-धीरे असिस्टेन्ट कमिश्नर को अधिकाधिक काम सौंपे जाने लगे। सरकारी अनुज्ञापत्रों के अनुसार पूर्ववर्ती डिप्टी कमिश्नर को जो अधिकार प्राप्त थे वे उसे प्राप्त हो गए। असिस्टेन्ट कमिश्नर भूराजस्व और चुंगी का कलेक्टर, जिला दण्डनायक, उपन्यायाधीश प्रथम श्रेणी, कोर्ट ऑफ वार्ड्स का व्यवस्थापक, जिला बोर्ड का अध्यक्ष तथा उप वन संरक्षक अधिकारी के कार्य करने लगा। अतिरिक्त असिस्टेन्ट कमिश्नर कोषाध्यक्ष का काम सम्हालता था। इसके अतिरिक्त वह प्रथम श्रेणी दण्डनायक, प्रथम श्रेणी उप न्यायाधीश, जिला बोर्ड का सचिव होता था तथा चुंगी व अफीम संबंधी कुछ विभागीय काम भी देखता था।[२८]

निम्नांकित प्रकतालिका [२९] से यह स्पष्ट होता है कि कैसे घाटे का बजट पूर्ति के बजट में परिवर्तित हुआ—

वर्ष	राजस्व	व्यय	अन्तर
१८७८–७९	६६०६८३	५१०५६९	१५०११९
१८८९–९०	१०१३४९८	५२००९१	४९३४०७
१८८९–९०	११०७४११	५२३२३१	५८४१८८

प्रशासनिक पुनर्गठन के बाद पहले साल ही लगभग पचास हजार का घाटा, डेढ़ लाख के फायदे मे बदल दिया गया। आगामी दस वर्षों में आय मे ४,४६,७२८ रुपए अर्थात् ६७ प्रतिशत से अधिक की वृद्धि हुई और ४,२४,०६६ रुपए का लाभ अर्थात् २८६ प्रतिशत से अधिक रहा। इन्हीं वर्षों मे जबकि प्रशासन व्यय केवल दो प्रतिशत से कुछ ही अधिक बढ़ा था जबकि पुनर्गठन के पूर्ववर्ती तीन सालो मे प्रतिवर्ष प्रशासनिक व्यय आय से अधिक था व लगभग पचास हजार का प्रतिवर्ष घाटा रहता था।[५०] इस आर्थिक उपलब्धि का दुष्प्रभाव प्रशासनिक कार्य कुशलता पर पड़ना स्वाभाविक था। प्रशासनिक खर्चों मे कमी के औचित्य को सिद्ध करने के लिए अजमेर मे १८७४ का शिड्यूल्ड डिस्ट्रिक्ट्स एक्ट १५ लागू किया गया। अंग्रेजो ने अजमेर के साथ यह सबसे बड़ा अन्याय किया था। अजमेर के प्रशासन को आर्थिक दृष्टिकोण से देखना अनुचित था। अजमेर जैसे छोटे से व राजपूत रियासतो से घिरे एकाकी जिले का प्रशासनिक व्यय अधिक होना स्वाभाविक था। १८१८ मे अजमेर के अंग्रेजो के अधीन आने के पूर्व राजनीतिक परिस्थिति के कारण जिले का अधिकाश भाग बड़ी बड़ी जमींदारियों के रूप मे राजपूतो के अधिकार में चला गया था। इन जमींदारियो की आय एक हजार से लेकर एक लाख रुपए तक थी। इसका परिणाम यह हुआ कि लगभग दो तिहाई अजमेर से सरकार की आय नगण्य सी थी। ये इस्तमरारदार नाममात्र का नजराना अंग्रेज सरकार को देते थे।

सन् १८७७ के बाद जिले के प्रशासनिक कार्य मे कई कारणो से वृद्धि हो गई थी। पहला कारण, १८८७ का बन्दोबस्त था जो कि अपने पूर्ववर्ती बन्दोबस्त के मुकाबले कहीं अधिक जटिल था। उसमें भूराजस्व निर्धारण के विभिन्न सिद्धान्तो के कारण राजस्व सम्बन्धी काम बढ़ गया था। दूसरा कारण, १८८४ मे अजमेर मे सदर आबकारी व्यवस्था का लागू होना था। तीसरा कारण, आयकर कानून लागू किया जाना था। इसके अलावा अजमेर तक रेलमार्ग स्थापित हो जाने से भी वित्तीय कार्यभार बढ़ गया था। जिले मे स्वायत्त शासन संस्था नियम लागू करने के कारण पहले से ही कार्य के भार से दबे अजमेर के प्रशासन की स्थिति नये भार के कारण और भी बिगड़ गई।

सन् १८८० मे अजमेर के कमिश्नर को कुछ समय के लिए राजपूताना और पश्चिमी राजपूताना की रियासतो के उन भूभागो पर जहाँ रेलमार्ग का निर्माण हो गया था, सेशन्स न्यायाधीश का काम सौंपा गया था। उसे उन सभी अपराधों के बारे मे निर्णय करने होते थे जो अबतक अलवर के पोलिटिकल एजेंट, रेजीडेन्ट जयपुर और पश्चिमी रियासतो की एजेन्सी के अधिकार क्षेत्र मे थे।[५१]

प्रशासनिक पुनर्गठन के अन्तर्गत अजमेर-मेरवाड़ा में केवल तीन तहसीलदार और तीन नायब तहसीलदार रहे। सन् १८८३ मे घटाकर तीन तहसीलदार और दो नायब तहसीलदार ही रहने दिए। उत्तर-पश्चिमी सूबो में तहसीलदार राजस्व कार्य

के अलावा राजस्व तथा फौजदारी अपराधो की सुनवाई और निर्णय भी किया करता था। अजमेर मे तहसीलदार को इन उपरोक्त कामो के अलावा सामान्य नागरिक मामलो मे मुन्सिफ का काम भी करना होता था। उत्तरी पश्चिमी सूबो में नायब तहसीलदार के पास न्यायिक काम नही रहता था। अजमेर जिले मे ये लोग अपने अन्य राजस्व कार्यो के अतिरिक्त तृतीय श्रेणी दण्डनायक व मुन्सिफ का काम भी करते थे। अतएव अजमेर म तहसीलदार कर्मचारियो को जो काम करने पडते और जो जिम्मेदारियां वहन करनी पडती थीं वैसी उत्तर पश्चिमी सूबो में वहां के तहसील कर्मचारियो को नही करनी पडती थी। उत्तर पश्चिमी सूबों की तहसीलो की तुलना मे अजमेर तहसील अधिक बडी थी।[६२]

अजमेर और मेरवाडा के दोनो जिलो का राजस्व कार्य एक अधिकारी के जिम्मे था जो राजस्व अतिरिक्त सहायक आयुक्त (रेवेन्यू एक्स्ट्रा असि० कमिश्नर) कहलाता था तथा उसका सदर कार्यालय अजमेर मे स्थित था।[६३]

अजमेर और मेरवाडा जिन को तहसीलो म विभाजित किया गया था। प्रत्येक तहसील एक तहसीलदार के अधीन थी और उसकी सहायता के लिए नायब तहसीलदार होता था। सन् १८५८ के पूर्व मे तीन तहसीलें अजमेर, रामसर और राजगढ थी। राजगढ तहसील सन् १८५८ मे भग कर दी गई और रामसर तहसील सन् १८७१ मे जिले के पुनर्गठन के समय समाप्त कर दी गई थी। हॉल के कार्यकाल मे मेरवाडा तीन तहसीलो मे विभक्त था—ब्यावर, टाडगढ़ और सारोठ। कर्नल डिक्सन की मृत्यु के बाद सारोठ की तीसरी तहसील ब्यावर म मिला दी गई थी[६४]।

तहसीलदार के अधीन गिरदावर होते थे जिन्हे अपनी तहसीलो के अधिकार क्षेत्र मे राजस्व एव प्रशासनिक अधिकार प्राप्त होते थे। ये अपने हल्के के विभिन्न ग्राम अधिकारियो के कामो की देखरेख निगरानी और उनके द्वारा तैयार किए गए आकडो व सूचियो म सशोधन व परिवर्धन का काम करते थे। पटवारी गाँव के लेखालिपिक थे। प्रत्येक पटवारी के क्षेत्र म दो या अधिक गांव रहते थे तथा उसकी सहायता के लिए कई बार सहायक पटवारी भी होते थे। ये लोग गाँव के राजस्व का हिसाब रखत थे, रजिस्टर तैयार करत और अपने हल्के म सरकार के हितो का ध्यान रखते थे।[६५]

राजस्व वसूली का काम पटेल और लम्बरदार किया करते थे उनका प्रमुख काम राजस्व कर वसूल करके सरकार के खजाने म जमा करवाना होता था। पिछले बन्दोबस्त के समय उनकी सख्या निर्धारित करदी गई थी। लम्बरदारो द्वारा वसूल किए गए राजस्व पर सरकार उन्हे ५ प्रतिशत की राशि देती थी। पटेलो को उनकी जमीन पर राजस्व म २५ प्रतिशत की छूट तथा सिंचाई कर की वसूली पर २ या ३ प्रतिशत का भत्ता मिलता था[६६]। अजमर मेरवाडा के चीफ कमिश्नर को सन् १९०८ मे यह अधिकार प्रदान कर दिया गया कि वह भारत सरकार से बिना पूछे ही

अधीनस्थ सेवाओं की सभी श्रेणियों में नियुक्तियां और पदोन्नति स्थाई अथवा अस्थाई कर सकते थे।[६७] अजमेर-मेरवाड़ा के लिए पृथक् प्रान्तीय सेवा का गठन इसलिए नहीं किया गया क्योंकि कर्मचारियों की संख्या बहुत कम थी।[६८] सन् १८८६ में रेवेन्यू एक्स्ट्रा असिस्टेन्ट कमिश्नर और रजिस्ट्रार की नियुक्तियां भी की गईं। प्रथम अधिकारी केवल राजस्व सम्बन्धी मामलों को निपटाता था और द्वितीय अधिकारी बीस रुपयों तक के नालिशों की सुनवाई कर सकता था।[६९]

सन् १६११ में मिंटो मार्ले सुधार के कारण जबकि एक ओर सम्पूर्ण भारत के विभिन्न बड़े प्रान्तों में व्यापक प्रशासनिक परिवर्तन हुए, अजमेर में उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। सन् १६१४ में एक छोटा सा परिवर्तन यह हुआ कि मेरवाड़ा में असिस्टेन्ट कमिश्नर की जगह एक्स्ट्रा असिस्टेन्ट कमिश्नर की नियुक्ति की गई।[७०]

अजमेर-मेरवाड़ा का पिछड़ापन

यद्यपि अजमेर-मेरवाड़ा दूसरे प्रदेशों की अपेक्षा अंग्रेजों के प्रभुत्व में काफी पहले आ गया था तथापि इसका छोटा आकार, कम जनसंख्या तथा इसकी भौगोलिक स्थिति इसके एक स्वायत्त प्रान्त के रूप में विकसित होने में बुरी तरह से बाधक रही थी। इस छोटे से क्षेत्र के लिए अन्य विशाल प्रान्तों के समान प्रशासन-व्यवस्था की स्थापना करना सम्भव नहीं था। भारत सरकार ने यहां के लोगों के श्रम और शक्ति के स्रोतों को विकास के पर्याप्त अवसर प्रदान नहीं किए जिसके फलस्वरूप यहां के लोगों का विकास नहीं हो सका व आर्थिक, राजनीतिक तथा शिक्षा के क्षेत्र में अन्य प्रान्तों की तुलना में यह अत्यन्त पिछड़ा रहा। यही कारण था कि अजमेर को कृषि, मेडिकल व टेक्नीकल शिक्षा की दूसरे प्रान्तों के समान सुविधा उपलब्ध नहीं थी। यहां के युवकों को प्रशासनिक सेवाओं में भी अन्य प्रान्तों के युवकों को प्राप्त होने वाली सामान्य सुविधा उपलब्ध नहीं हो पाई। यहां तक कि इस क्षेत्र की न्याय व्यवस्था भी वह स्तर प्राप्त नहीं हो सका जो संयुक्त प्रान्त या बम्बई की न्याय व्यवस्था को उपलब्ध था। चार्टर्ड हाईकोर्ट की स्थापना तो दूर की बात रही, अजमेर में जुडीशियल कमिश्नर पद पर भी हाईकोर्ट के न्यायाधीश पद के समकक्ष योग्यता अनुभव तथा उच्च स्तर के व्यक्ति की नियुक्ति भी नहीं हुई[७१]। केवल यही नहीं अजमेर मेरवाड़ा को कभी ऐसा चीफ कमिश्नर का पद भी प्राप्त नहीं हुआ जो केवल इस प्रान्त के लिए हो। कम आय और छोटा क्षेत्र होने के कारण यहां अलग नियमित स्थाई सेवाओं का गठन नहीं हो सका और कम आय के कारण यह प्रान्त बाहर से आए अधिकारियों को अपनी समस्या और हित की ओर आकर्षित नहीं कर सका।[७२]

अंग्रेज शासित भारतीय प्रान्तों ने स्वायत्त शासन की दिशा में प्रगति प्रारम्भ कर दी थी परन्तु अजमेर-मेरवाड़ा के प्रशासन ने इस दिशा में कदाचित् ही कोई

विशेष प्रगति की। यह शिड्यूल्ड डिस्ट्रिक्ट ही बना रहा और वर्षों पुराने स्थानीय कानून बिना किसी संशोधन के यहाँ लागू होते रहे। यदि कभी किसी मामले मे नये नियम तैयार किए भी गए तो उन पर स्थानीय जनता की राय जानने का कोई प्रयत्न नही किया गया।[७३]

अजमेर सन् १८७१ में उत्तर-पश्चिमी सूबों से हटा कर भारत सरकार के अन्तर्गत एक छोटी सी प्रशासनिक इकाई बना दिया गया था। यह सिर्फ भारत सरकार की राजपूताना की रियासतों के प्रति नीति के दृष्टिकोण से किया गया था। इसलिए भारत सरकार ने अजमेर प्रशासन को गृह विभाग के अन्तर्गत रखना या अन्य नियमक प्रान्तों की तरह प्रशासित करना ठीक नही समझा। जबकि अजमेर इस तरह के दर्जे का पूरा अधिकारी था। सन् १८७० का एक्ट १ यहाँ लागू किया गया और इसे एक पिछड़े प्रदेश की सभी कठिनाईयां, अन्याय, अयोग्यताएं और असुविधाएं झेलनी पड़ी। सन् १८७७ मे यहाँ शिड्यूल्ड डिस्ट्रिक्ट एक्ट (१८७४) लागू किया गया। अंग्रेजो प्रशासन का अजमेर के साथ यह सबसे बड़ा अन्याय था। *पिछड़े हुए तथा भारतीय सीमा पर स्थित क्षेत्रों पर ही यह एक्ट लागू* किया जाता था। अजमेर के लोग न तो पिछड़े हुए थे और न यह भारतीय सीमा के कोने का क्षेत्र ही था। इन दो दुर्भाग्यपूर्ण कदमों का प्रतिफल यह हुआ कि अजमेर शेष अंग्रेजी भारत से अलग सा कर दिया गया और जिस तरह अन्य अंग्रेज शासित प्रान्तों को जो सुविधाएं, अधिकार, संरक्षण तथा लाभ प्राप्त होते रहे उनसे इसे वंचित रहना पड़ा। अजमेर में पिछड़ेपन का यह सबसे बड़ा कारण रहा है।[७४]

यह हो सकता है कि अंग्रेजो की इच्छा जानबूझकर इस क्षेत्र के विकास के अवरोध की न रही हो। अजमेर-मेरवाड़ा के अधिकांश यूरोपीय अधिकारी भारत सरकार के पोलिटिकल डिपार्टमेंट में से थे। चीफ कमिश्नर या उसके प्रथम असिस्टेंट को अजमेर मेरवाड़ा या किसी अन्य प्रान्त का प्रशासनिक अनुभव का होना जरूरी था। ये नियुक्तियां पोलिटिकल डिपार्टमेंट से होती थी। इस विभाग मे ज्यादातर अधिकारी ऐसे थे जिन्होंने इसके पूर्व म भारत मे कभी काम ही नही किया था। यही बात कमिश्नर पर भी लागू होती थी। कुछ कमिश्नरों को राजस्व विभाग का अनुभव था तो कुछ को न्याय विभाग का व कई तो दोनों ही मामलों मे अनुभवहीन थे। केवल एक ही अपवाद ऐसा है जिसमे इस पद पर नियुक्ति के पूर्व उक्त अधिकारी अजमेर-मेरवाड़ा जिले मे काम कर चुका था। कमिश्नर सेशंस एवं सिविल जज तथा जिला दंडनायक के अलावा शिक्षा विभाग का डायरेक्टर, जेल तथा वन विभागो का इंस्पेक्टर जनरल, चेयरमैन मेयो कालेज तथा व्यवस्था समिति, राजपूताना मे जन्म-मरण के अकेक्षण कार्य का रजिस्ट्रार जनरल भी था। वह चूंगी, आयकर, सहकारी समितियां तथा जिला बोर्ड, नगरपालिका एवं राजस्व विभाग पर सामान्य निरीक्षण का कार्य भार भी वहन किए हुए था। यद्यपि व्यावहारिक रूप मे वह इन

विशिष्ट मामलों में अन्तिम निर्णायक माना जाता था परन्तु सामान्यत शिक्षा वन, सहकारी समितियां, चुंगी तथा ऐसे ही विशिष्ट क्षेत्रों में उसको कोई अनुभव नहीं होता था। जिन मामलो में टेक्नीकल अनुभव की आवश्यकता होती थी उनमें उसकी सहज बुद्धि ही मात्र आधार था।[७५]

अंग्रेजी भारत में प्रशासन के विकास और जनता में अपनी स्थिति और अधिकारों के प्रति चेतना जागृत होने पर इस तरह व क्षेत्रीय विछड़ेपन की गंभीरता का अनुभव होने लगा। ये अधिकारीगण अजमेर मेरवाड़ा की हालत व परिस्थितियों से पूर्ण परिचित नहीं थे।[७६] अजमेर का यह दुर्भाग्य था कि वह सभी मामलों में अन्य प्रान्तों में बनाए गए नियमों व उपनियमों द्वारा प्रशासित होता था। जबकि वे नियम वहाँ की सरकारें अपनी स्थिति एवं आवश्यकता के अनुसार बनाती थी। वे सब बिना यह समझे कि वे इस प्रान्त के लिए लाभदायक होंगे या नहीं, थोप दिए जाते थे।[७७]

एक पृथक् इकाई बने रहने के कारण, अजमेर-मेरवाड़ा भारत के अन्य अंग्रेज शासित प्रान्तों में लागू किए जाने वाले सुधारों के लाभ से भी वंचित रहा। अन्य प्रांतों की तरह यहाँ न तो जिम्मेदार सरकार ही थी और न निर्वाचित संस्थाएं ही गठित हुईं। इसके प्रशासन में योजना का अभाव सदा ही बना रहा क्योंकि एक छोटा-सा जिला होने के कारण पूर्णरूपेण अपने लिए पृथक् कमिश्नर, आई०जी०पी०, वरिष्ठ चिकित्सा अधिकारी, सहकारी समिति का रजिस्ट्रार, आबकारी अधिकारी और दो वरिष्ठ राजस्व अधिकारियों की स्वतंत्र नियुक्ति का दावा नहीं कर सकता था। सन् १८७१ में इस जिले की प्रशासनिक पृथकता की घोषणा तथा १८७६ में शिड्यूल्ड डिस्ट्रिक्ट एक्ट १४ (१८७४) लागू करने के कारण यहाँ के प्रशासन को गंभीर क्षति पहुंची व साथ ही अन्य प्रान्तों के मुकाबले में इसकी प्रगति और भी पिछड़ गई। अजमेर जिला भारत सरकार द्वारा नियंत्रित पोलिटिकल डिपार्टमेंट के अन्तर्गत मामूली सी छोटी प्रशासनिक इकाई बना रहा। अजमेर-मेरवाड़ा की जनता भारत के अन्य शासित प्रान्तों की जनता की तरह अपने शासन में हाथ नहीं बंटा सकती थी। सन् १९०६ में मिंटो मार्ले सुधार तथा सन् १९१९ में मांटेग्यू चेम्सफोर्ड सुधारों से अजमेर-मेरवाड़ा पूर्णतया वंचित रहा।[७८]

इन सब बातों का अर्थ यह कदापि नहीं है कि सन् १८१८ में अंग्रेजों के आधिपत्य से लेकर अब तक अजमेर-मेरवाड़ा में कोई तरक्की नहीं हुई। १८वीं सदी में मुगलों के पतनकाल से लेकर अजमेर संघर्षशील शक्तियों के बीच शतरंज के मुहरों की तरह पिटता रहा और हर आक्राता ने इस पर अपने दांत गड़ाए। इस संघर्ष में यह जिला एक तरह से विनष्ट सा हो चला था और यहाँ की जनसंख्या कुल मिलाकर २१ हजार ही रह गई थी। जिले में अंग्रेजों के आधिपत्य के साथ

शांति और स्थाई प्रशासन का युग प्रारम्भ हुआ तथा जनसंख्या में भी वृद्धि होने लगी। ब्यावर जो अंग्रेजों के आगमन के समय एक छोटा-सा गाँव था, अंग्रेजी शासन-काल मे प्रमुख एवं महत्वपूर्ण व्यवसायिक केन्द्र बन गया था, जहाँ महत्वपूर्ण सूती उद्योग पनपा और उसके व्यापार में पंजाब के फजलका के बाद इसका स्थान बन गया था। मेरवाड़ा जिला जो उन दिनों ऐसे लोगों से भरा हुआ था जो हल के बजाय ढाल तलवार पसंद करते थे। वह एक कृषि प्रधान और औद्योगिक केन्द्र बनने लगा। अजमेर मेरवाड़ा का अंग्रेजी प्रशासन के अन्तर्गत कुछ हित अवश्य हुआ परन्तु अन्य प्रान्तों की तरह वह आगे नहीं बढ़ सका।

अध्याय तीन

१ मेरवाड़ा, अंग्रेजों, मारवाड़ और मेवाड़ के बीच असमान भागों मे विभक्त था। चूँकि मेवाड़ और मारवाड़ परने को हस्तांतरित गाँवों की व्यवस्था करने में असमर्थ थे अतएव इनमें से शांतिप्रिय गाँव इन रियासतों के ठाकुरों को दिए गए व शेष मेरवाड़ा के अन्तर्गत रहे। (डिक्सन, स्केच ऑफ मेरवाड़ा १८५० पृ० ६२)।

२ अजमेर के प्रथम सुपरिटेंडेंट वास्तव में कर्नल निक्सन थे जिन्होंने केवल ९ दिनों तक काम किया, ९ जुलाई से १८ जुलाई, १८१८ तक (सारदा, अजमेर हिस्टोरिकल एण्ड डिसक्रिपटिव–१९४१ पृ० २३८)।

३ लाट्स गजेटीयर्स ऑफ अजमेर मेरवाड़ा (१८७५), पृ. ९१।

४. एफ विल्डर द्वारा मेजर जनरल डेविड ऑक्टरलोनी को पत्र, दिनांक २७-८-१८१८ (रा रा पु मण्डल)।

५ एफ विल्डर द्वारा मेजर जनरल सर डेविड ऑक्टरलोनी को प्रेषित पत्र, दिनांक २१-९-१८१८ (रा रा पु मण्डल)।

६ डिक्सन, स्केच ऑफ मेरवाड़ा (१८५०) पृ ५।

७ सर डेविड ऑक्टरलोनी द्वारा भारत सरकार के सचिव एच. मैकेंजी को पत्र दिनांक ६ जनवरी, १८२५ (रा. रा पु मंडल)
लाट्स अजमेर मेरवाड़ा की बन्दोबस्त रिपोर्ट (१८७५) पृ. ७१,
सारदा-अजमेर हिस्टोरिकल एण्ड डिसक्रिपटिव (१९४१) पृ २०७।

८ इरेल पॉव, अजमेर मेरवाड़ा की मेडिको टोपोग्रफिकल रिपोर्ट (१९००) पृ ९१।

९ लाट्श सेटलमेंट रिपोर्ट अजमेर मेरवाड़ा १८७५ पृ. ६२।

१० सकट के दिनो मे जो लोग खेत छोड कर दूसरे प्रदेशों को चले जाते थे-वे 'फरार' और जो लोग खेती छोडकर आजीविका-हेतु शारीरिक मजदूरी करने चले जाते वे 'नादर' कहलाते थे।

११. सुपरिटेंडेंट अजमेर द्वारा कर्नल सदरलैंड कमिश्नर को प्रेषित रिपोर्ट दिनाक २० जनवरी, १८४१। (रा रा पु मडल)।

१२ कर्नल सदरलैंड द्वारा सचिव, भारत सरकार को प्रेषित रिपोर्ट, दिनाक ७ फरवरी, १८४१ (रा रा पु. मडल)।

१३ लाट्स-सेटलमेन्ट रिपोर्ट १८७४।

१४. लाट्स-सेटलमेंट रिपोर्ट, १८७४।

१५ सचिव भारत सरकार का ए जी जी को पत्र दिनाक ११-१२ १८४१ फाइल न० ६ (रा रा पु म.)।

१६ त्रिपाठी मगरा-मेरवाड़ा का इतिहास १६१४ पृ ६२ लाट्स सेटलमेंट रिपोर्ट अजमेर मेरवाड़ा १८७४ अनुच्छेद १२।

१७. कार्यवाहक सचिव भारत सरकार द्वारा डिक्सन को पत्र, सख्या ६२१ म दिनांक २८ १-१८५१ (रा रा पु म)।

१८. कमिश्नर (द्वारा उत्तर-पश्चिमी सूबा सरकार के सचिव को पत्र, सख्या ५२ दिनाक ५ मार्च १८५३।

१९. सी सी वाट्सन, राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटीयर्स, खड १—ए अजमेर-मेरवाड़ा (१६०४) पृ १६।

२० ए जी जी द्वारा सचिव उत्तर-पश्चिमी सूबा सरकार को पत्र सख्या ११४ दिनाक २५ फरवरी, १८६७ (रा रा पु. म.)।

२१ उपरोक्त।

२२ चीफ कमिश्नर कार्यालय फाइल क्रमांक ११७, पत्र व्यवहार दिनांक २६ जून १८६६ (रा रा पु मडल)।

२३ डिप्टी कमिश्नर द्वारा उत्तर-पश्चिमी सूबा सरकार को (कैप्टिन जे. सी ब्रुक्स) पत्र दिनांक २४ जुलाई, १८५८ (रा. रा पु मडल)।

२४. उपरोक्त।

२५ उपरोक्त डिप्टी कमिश्नर अजमेर मेरवाड़ा द्वारा सचिव उत्तर-पश्चिमी सूबा सरकार को पत्र सख्या ४८ दिनांक ६ फरवरी, १८६० ।

२६ कैप्टिन बी. लॉयर द्वारा सचिव उत्तर-पश्चिमी सूबा सरकार को पत्र दिनाक मई, १८६० को (रा रा. पु मडल)।

२७ मेजर बी पी लॉयड द्वारा जनरल लॉरेंस कमिश्नर अजमेर को पत्र क्रमाक १०४ । १८६४ दिनाक २५ अक्टूबर १८६४। (रा. रा पु. मडल)।

२८ आर. सिमसन सचिव उत्तर-पश्चिमी सूबा सरकार द्वारा सी. बेले सचिव गृह विभाग भारत सरकार को पत्र दिनाक २७-४-१८६६ क्रमाक ५५७। १८६६ (रा रा पु. मडल)।

२९ ब्रिगेडियर जनरल एस पी लॉरेंस कार्यवाहक कमिश्नर अजमेर द्वारा डब्ल्यू म्यूर. सचिव उत्तर-पश्चिमी सूबा सरकार को पत्र दिनाक १८ ८-५८ क्रमाक २३ । १८५८ (रा रा पु मडल)।

३०. पत्र क्रमाक ६४ दिनाक ८-४-१८५८। (रा. रा. पु मडल)।

३१ पत्र क्रमाक ४० दिनाक १८ ३-१८५८। (रा रा. पु मडल)।

३२ पत्र क्रमाक १० दिनाक २०-१-१८५८। (रा. रा पु मडल)।

३३ पत्र क्रमाक २३, १८५८ दिनाक १८ ६-१८५८। (रा. रा. पु म)।

३४ ब्रिगेडियर जनरल एस पी लॉरेंस कार्यवाहक कमिश्नर अजमेर द्वारा डब्ल्यू. म्यूर सचिव उत्तर-पश्चिमी सूबा सरकार को पत्र दिनाक १८-८-५८ क्रमाक २३ । १८५८ ।

३५ फाइल शीर्षक 'भारत सरकार के अन्तर्गत अजमेर मेरवाडा का पृथक् चीफ कमिश्नर के रूप मे गठन, विदेश विभाग' फाइल क्रमाक ११७। १८६७ १८७१ (रा. रा पु म)।

३६ लेफ्टि. कर्नल आर एच कटिंग्स, ए जी जी राजपूताना द्वारा श्री डब्ल्यू एस.सेटन सचिव परराष्ट्र विभाग भारत सरकार क्रमाक ११५ दिनाक २६-६-१८६६ (रा. रा पु म)।

३७ फाइल क्रमाक ११७। १८६७ १८७१ (रा रा पु म)।

३८ लेफ्टि गवर्नर की टिप्पणी २७ मार्च १८६८ (रा रा पु म.)।

३९ ब्रुक्स का पत्र क्रमाक ६४, अनुच्छेद १३, दिनाक ८-४-१८५८ (रा रा पु मडल)।

४०. सी ओ क्रमाक २३२, दिनाक ५-४-१८५८ (रा रा पु म.)।

४१ आर. सिमसन, सचिव उत्तर-पश्चिमी सूबा सरकार द्वारा सी, बेले सचिव

गृह विभाग भारत सरकार को पत्र दिनांक २७-४-१८६६ क्रमांक ६५७। १८६६। (रा. रा. पु. मडल)।

४२. एच एस. इलियट सचिव भारत सरकार द्वारा कमिश्नर अजमेर को पत्र दिनाक ११-१२-१८४८ (रा रा. पु. मडल)।

४३. कर्नल कीटिंग्स द्वारा सचिव भारत सरकार को पत्र दिनाक १६-४-१८६८ (रा. रा. पु मडल)।

४४. उपरोक्त।

४५. निम्न तथ्य इस पर प्रकाश डालते हैं.—

१. बीकानेर का दौरा—कर्नल जे. सदरलैंड		१८४८
२ ,, ,,	कर्नल एच. लॉरेंस	१८५६
३. डूंगरपुर ,,	,, ,,	१८५५
४. बांसवाड़ा ,,	,, ,,	१८५५
५–जैसलमेर का दौरा कर्नल सदरलैंड		१८४७
६–जैसलमेर का दौरा इडन		१८६५
७–करौली ,, ,,	,,	१८५६
८–करौली ,, ,,	एच० लारेंस	१८६१
९–धौलपुर ,, ,,	,,	१८६१
१०–धौलपुर ,, ,,	इडन	१८६६
११–प्रतापगढ ,, ,,	लारेंस	१८५४
१२–प्रतापगढ़ ,, ,,	इडन	१८६५

४६. कमिश्नर अजमेर द्वारा सचिव भारत को पत्र क्रमाक १९९ जी फाइल न० २२५ (रा० रा० पु० म०)।

४७. परराष्ट्र विभाग भारत सरकार प्रोसीडिंग्स क्रमाक १९९५ पी दिनाक २२–११–१८७०। (रा० रा० पु० म०)।

४८. उत्तर प्रदेश सूबा के लेफ्टि० गवर्नर के प्रस्ताव, प्रस्तुत पत्र क्रमाक ९५७, दिनांक २७–४–१८६९ (रा० रा० पु० म०)।

४९. कर्नल कीटिंग के अनुसार नई व्यवस्था के लिए निर्धारित राशि कम थी। उनके अनुसार निर्धारित राशि ४६,९०८ वार्षिक होनी चाहिए थी।

५०. अनुच्छेद ११ प्रोसीडिंग्स क्रमांक १९९५ पी० दिनाक २२–११–१८७० (रा० रा० पु० म०)।

५१ अनुच्छेद १२ उपरोक्त।

५२. अनुच्छेद १३ प्रोसीडिंग्स क्रमांक १९९५ पी० दिनांक २२-११-१८७० ।

५३. पत्र क्रमांक ६५७, दिनांक २७-४-१८६६ उत्तर-पश्चिमी सूबा सरकार ।

५४. उपरोक्त।

५५. नोटिफिकेशन क्रमाक १००७ दिनांक २६-५-१८७१ शिमला, परराष्ट्र विभाग, राजनीतिक (रा० रा० पु० म०) ।

५६. नोटिफिकेशन क्रमाक १००७ दिनाक २६-५-१८७१ शिमला, परराष्ट्र विभाग, राजनैतिक । (रा० रा० पु० म०) ।

५७. फाइल क्रमाक ७३, प्रस्ताव—फोर्ट विलियम दिनांक २७ मार्च १८७७ (रा० रा० पु० म०) ।

५८. कमिश्नर द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा को पत्र क्रमांक ३०८६० १८६० दिनांक २३-११-१८६० ।

५९. अजमेर बजट वर्ष ८८-८९ और १८८९-९० (रा० रा० पु० म०) ।

६०. उपरोक्त।

६१. कमिश्नर द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा को पत्र क्रमाक ३०८६० । १८६० दिनाक २२-नवम्बर १८६० ।

६२. उपरोक्त ।

६३. सी० सी० वाट्सन, राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स अजमेर, (१९०४) खड १-ए० ।

६४. अकाल प्रशासन नियमावली अजमेर-मेरवाडा (१९१५) पृष्ठ ३

६५. उपरोक्त पृष्ठ ४ ।

६६. उपरोक्त पृष्ठ ५ ।

६७ सचिव परराष्ट्र विभाग भारत सरकार द्वारा ई० जी केल्विन चीफ कमिश्नर अजमेर मेरवाड़ा को पत्र शिमला दिनांक ११ जून १९०८ पत्र क्रमांक २३९२१ ए० बी० फाइल क्रमाक ५७० ।

६८. फाइल क्रमाक ५७० पत्र सख्या ९९९१-२ (९) १९११ दिनाक २४ नवम्बर १९११ कमिश्नर द्वारा चीफ कमिश्नर को पत्र ।

६९. फाइल क्रमाक ७३ ए० ।

७०. सारदा, अजमेर हिस्टोरिकल एण्ड डिसक्रिप्टिव । (१९४१) पृष्ठ २२४ ।

७१. सारदा, स्पीचेज एण्ड राईटिंग्स पृष्ठ ३२०-३२१ भारत सरकार द्वारा

अजमेर-मेरवाडा मे प्रशासन एव न्याय व्यवस्था पर रिपोर्ट के लिए नियुक्त "एसवर्थ समिति" को प्रस्तुत ज्ञापन ।

७२. लेजिस्लेटिव असेम्बली दिल्ली मे हर विलास सारदा का भाषण दिनाक २६ फरवरी १९२५ ।

७३. हर विलास सारदा, स्पीचेज एव राईटिंग्स, पृष्ठ ३२९,३३०, ३३१ ।

७४. भारत सरकार की सलाहकार समिति को, समिति के सचिव श्री लतीफी के अनुरोध पर हरविलास सारदा द्वारा प्रस्तुत नोट दिनाक १२ मई १९३२ ।

७५. एसवर्थ कमेटी रिपोर्ट पृष्ठ २९ ।

७६. लेजिसलेटिव असेम्बली, नई दिल्ली में २४ फरवरी, १९२५ को हरविलास सारदा का भाषण ।

७७ एसवर्थ कमेटी रिपोर्ट, पृष्ठ १२ ।

७८. हर विलास सारदा द्वारा भारत सरकार की सलाहकार समिति को प्रस्तुत ज्ञापन, १२ मई, १९३२ ।

५१ अनुच्छेद १२ उपरोक्त।

५२. अनुच्छेद १३ प्रोसीडिंग्स क्रमाक १९९५ पी० दिनाक २२–११–१८७० ।

५३. पत्र क्रमाक ९५७, दिनाक २७–४–१८६६ उत्तर-पश्चिमी सूबा सरकार ।

५४ उपरोक्त।

५५. नोटिफिकेशन क्रमाक १००७ दिनांक २६–५–१८७१ शिमला, परराष्ट्र विभाग, राजनीतिक (रा० रा० पु० म०) ।

५६. नोटिफिकेशन क्रमाक १००७ दिनाक २६–५–१८७१ शिमला, परराष्ट्र विभाग, राजनैतिक । (रा० रा० पु० म०) ।

५७. फाइल क्रमाक ७३, प्रस्ताव—फोर्ट विलियम दिनांक २७ मार्च १८७७ (रा० रा० पु० म०) ।

५८. कमिश्नर द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाड़ा को पत्र क्रमाक ३०८६० १८६० दिनाक २३–११–१८९० ।

५९. अजमेर बजट वर्ष ८८–८९ और १८८९–९० (रा० रा० पु० मं०) ।

६०. उपरोक्त ।

६१. कमिश्नर द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा को पत्र क्रमाक ३०८६० । १८६० दिनाक २२–नवम्बर १८९० ।

६२. उपरोक्त ।

६३. सी० सी० वाट्सन, राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स अजमेर, (१९०४) खड १–ए० ।

६४. अकाल प्रशासन नियमावली अजमेर-मेरवाडा (१९१५) पृष्ठ ३

६५. उपरोक्त पृष्ठ ४ ।

६६. उपरोक्त पृष्ठ ५ ।

६७ सचिव परराष्ट्र विभाग भारत सरकार द्वारा ई० जी केल्विन चीफ कमिश्नर अजमेर मेरवाडा को पत्र शिमला दिनाक ११ जून १९०८ पत्र क्रमांक २३९२१ ए० बी० फाइल क्रमाक ५७० ।

६८. फाइल क्रमाक ५७० पत्र सख्या ९९९१–२ (ई) १९११ दिनाक २४ नवम्बर १९११ कमिश्नर द्वारा चीफ कमिश्नर को पत्र ।

६९. फाइल क्रमाक ७३ ए० ।

७०. सारदा, अजमेर हिस्टोरिकल एण्ड डिसक्रिप्टिव । (१९४१) पृष्ठ २२४ ।

७१. सारदा, स्पीचेज एण्ड राईटिंग्स पृष्ठ ३२०–३२१ भारत सरकार द्वारा

अजमेर-मेरवाडा में प्रशासन एव न्याय व्यवस्था पर रिपोर्ट के लिए नियुक्त "एसवर्थ समिति" को प्रस्तुत ज्ञापन ।

७२. लेजिस्लेटिव असेम्बली दिल्ली मे हर विलास सारदा का भाषण दिनाक २६ फरवरी १६२५ ।

७३. हर विलास सारदा, स्पीचेज एव राईटिंग्स, पृष्ठ ३२६,३३०, ३३१ ।

७४. भारत सरकार की सलाहकार समिति को, समिति के सचिव श्री लतीफी के अनुरोध पर हरविलास सारदा द्वारा प्रस्तुत नोट दिनाक १२ मई १६३२ ।

७५. एसवर्थ कमेटी रिपोर्ट पृष्ठ २६ ।

७६. लेजिसलेटिव असेम्बली, नई दिल्ली मे २४ फरवरी, १६२५ को हरविलास सारदा का भाषण ।

७७. एसवर्थ कमेटी रिपोर्ट, पृष्ठ १२ ।

७८. हर विलास सारदा द्वारा भारत सरकार की सलाहकार समिति को प्रस्तुत ज्ञापन, १२ मई, १६३२ ।

७

भू-भोग तथा भू-राजस्व खालसा-भूमि

अजमेर में राजस्व-प्रशासन अंग्रेज सरकार के लिए सबसे गंभीर समस्या थी। लगातार कई परीक्षणों के पश्चात् स्थाई प्रक्रिया स्थापित की जा सकी। अजमेर-मेरवाड़ा क्षेत्र मोटेतौर पर दो भागों में विभक्त था। खालसा या वह भूमि जिसका राजस्व सीधा सरकार को भुगतान किया जाता था, (और जिसका निजी वर्चस्व इंग्लैण्ड के सम्राट के हाथों में था।) और तालुकादारी जिस भूमि पर इस्तमरारी व्यवस्था लागू थी तथा जिसके लिए किसी भी तरह की सैनिक सेवाओं का बंधन नहीं था।

खालसा भूमि का सीधा सम्बन्ध और उसका नियन्त्रण अंग्रेज सम्राट के प्रशासन के अंतर्गत था। इस भूमि पर सरकार का वर्चस्व वास्तविक एवं मालिकाना *हक ठीक वैसे ही थे जैसे रियासती राजाओं या ठाकुरों के उनकी जमीनों पर खेती* करने वाले किसानों पर थे[1]। इस अधिकार के अन्तर्गत सरकार किसी भी धार्मिक संस्थान या किसी व्यक्ति की सेवाओं से प्रसन्न होकर उसे अथवा उसके वंशजों को भूमि बख्शीश या ईनाम के तौर पर भेंट कर सकती थी। ऐसी बख्शीश या भेंट यदि एक सम्पूर्ण गाँव या आधे गाँव की होती तो जागीर[2] कहलाती थी। सन् १९०४ में ऐसे ५१ गाँव जागीरों में दिए गए थे[3]।

खालसा भूमि का भोग

खालसा भूमि में बिस्वेदारी प्रथा अतीत काल से ही चली आ रही थी।

इसके अनुसार किसान विकास के लिए अपनी भूमि मे कुंआ, बाडी, मेड़बदी अथवा अन्य निर्माण कार्य करता था उस भूमि म उसका मालिकाना हक मान लिया जाता था। इन हको को बिस्वादारी हक कहा जाता है। जो मेवाड और मारवाडा मे प्रचलित 'बापोता' जैसे ही है तथा दक्षिण भारत मे ऐसे हक को 'मीराज' कहते हैं। 'बापोता और 'मीराज' वश परम्परागत भूमि अधिकार होते हैं। बिस्वादारी अधिकार प्राप्त किसान को उसकी भूमि से तबतक बेदखल नही किया जा सकता था, जबतक वह सरकार को राजस्व देता रहता था[४]। उसे साथ ही अपने द्वारा निर्मित या विकसित कुंओं तथा भवनो आदि को बेचने, बधक रखने या भेट करने का अधिकार था। केवल इतना ही नही, कुंओ इत्यादि के हस्तातरण के साथ विकसित भूमि का भी हस्तातरण माना जाता था। कालातर मे बिस्वेदारी अधिकारो का अर्थ स्थाईतौर पर विकसित भूमि मे किसान के मालिकाना हको के रूप मे माना जाने लगा[५]। सन् १८३० के पश्चात् सरकार ने विकसित भूमि मे केवल अपने मालिकाना हको का परित्याग कर बिस्वेदारो का मालिकाना दर्जा स्वीकार कर लिया था।

असिंचित और बजर भूमि

सरकार का बजर भूमि तथा असिंचित भूमि पर स्वामित्व था। इस क्षेत्र में अत्यन्त कम वर्षा के कारण असिंचित भूमि का कोई महत्व नही था[६]। किसान असिंचित भूमि पर एक दो फसल अवश्य पैदा कर लिया करते थे, परन्तु वे उस पर स्थाईतौर पर कृषि नही करत थे और बाद मे दूसरी ऐसी नई भूमि को जोत लिया करते थे, क्योंकि जिल मे ऐसी भूमि का बाहुल्य था। इन्ही कारणो से, सरकार ने इस भूमि पर नई ढाणिया (खेडे) बनाए और नए काश्तकारो को बसाने व उन काश्तकारो को जो इस जमीन को विकसित करना चाहते थे पट्टा प्रदान करते, व सभी किसानो स जिनम बिस्वदार भी शामिल थे इस भूमि पर उनके अपने मवेशियो की चराई के कर की वसूली के अधिकार का भी उपयोग किया।[७]

इस प्रश्न पर काफी विवाद था कि पडती भूमि पर सरकार का या ग्राम पचायतो का स्वामित्व है। परन्तु सन् १८३६ म एडमस्टन ने भूमि बन्दोबस्त के समय अजमर क प्रथम दो सुपरिन्टेडेंट की राय को कि सरकार ऐसी सभी भूमि की मालिक है, मानकर सरकार के स्वामित्व को मान्यता प्रदान की थी[८]। इन अधिकारो को पुराने बिस्वेदारो को भी स्वीकार करना पडा। जब कर्नल डिक्सन ने नये खेडे बसाने और उन नये किसानो को जो इस विकसित करने व कुंए खोदने को तैयार थे, रियायतीदर पर यह भूमि देने का निर्णय किया तब कर्नल डिक्सन की इस योजना का बिस्वेदारों ने कोई विरोध नहीं किया और न यह माग ही की नया किसान इस भूमि का लगान उन्ह दिया करे।[९]

सन् १८१६ के बाद भूधृति मे परिवर्तन :

सन् १८४९ मे पहली बार गाँवो की सीमाओं का निर्धारण किया गया और थामसन की देखरेख मे गाँव बन्दोबस्त किया गया। इस बन्दोबस्त से खालसा भूधृति मे महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ। रैयतवारी की जगह मौजावार की व्यवस्था लागू की गई[10]। रैयतवारी व्यवस्था मे प्रत्येक किसान के अपने द्वारा विकसित भूमि मे उसके कुछ विशेष हक स्वीकार किए गए थे परन्तु इसमे कृषक 'समाज' को हक नही थे वरन् यह अधिकार व्यक्तिगत किसान को ही था। मौजावार व्यवस्था के अन्तर्गत कृषक समाज को भाईचारा स्वामित्व सस्थान मे बदल दिया गया था 'मौजावार व्यवस्था का सार यह है कि एक निर्धारित भूमि का क्षेत्रफल जो उस गाँव का सीमा क्षेत्र होता था, उस गाँव के कृषक समाज की सपत्ति घोषित किया जाता था, और इस कृषक समाज को उस क्षेत्रफल की भूमि का मालिक समझा जाता था।[11] गाँव की सारी पड़ती भूमि गाँव तथा खेड़े की सम्मिलित भूमि सपत्ति (नमालात जमीन) मान ली जाती थी। ये खेडे कर्नल डिक्सन द्वारा नये बसाए गए थे और उन्होंने पृथक् से इनकी व्यवस्था की थी।

मेरवाडा मे मेरो की लूट-खसोट की वृत्ति, विरल जनसख्या और पथरीली भूमि होने के कारण निश्चित भूधृति की प्रक्रिया का प्रादुर्भाव नही हो सका था। परन्तु इस क्षेत्र मे भी जहाँ पहले राजपूत शासक शांति व्यवस्था स्थापित करने में असफल हुए थे वहाँ कर्नल हॉल और डिक्सन को सफलता मिली। उन्होंने यहाँ नए खेडे बसाए, तालाबो का निर्माण करवाया और किसानो को पट्टे जारी किए। सन् १८५१ के बंदोबस्त मे इन नए बसे हुए किसानो को भी सरकार ने पुराने किसानो के समकक्ष मान लिया और उनके कब्जे की भूमि मे उनका मालिकाना हक स्वीकार कर लिया था।[12]

विल्डर का प्रशासन

२८ जुलाई, १८१८ को अजमेर अग्रेजी राज्य मे मिला लिया गया था। इसके पूर्ववर्ती वर्ष मे, खालसा भूमि से वास्तविक भू-राजस्व मे मराठो को कुल १ १५,०६० रुपए प्राप्त हुए थे।

अजमेर के प्रथम सुपरिटेंडेंट विल्डर ने लगान की दरें 'समावित आधी फसल" निर्धारित की थी। विल्डर ने भारत सरकार को प्रचलित व्यवस्था को रद्द करने का सुझाव दिया क्योकि वे इसे अत्यन्त आपत्तिजनक एव असतोषप्रद मानते थे। उनका सुझाव था कि खालसा भूमि मे प्राचीन परम्परा के अनुसार फसल को कूतकर उसके मूल्य को बाट लेना चाहिए। एफ विल्डर ने दिनांक २७–९–१८१८ को सर डेविड ऑक्टरलोनी को लिखा 'यदि आप स्वीकार करें तो मैं यह प्रस्तावित करने की अनुमति चाहता हूँ कि इस वर्ष सम्पूर्ण खालसा भूमि में फसल का बराबर भाग

करके, इससे पूर्व प्रचलित अत्यन्त आपत्तिजनक और असंतोषजनक व्यवस्था को पूर्णत समाप्त कर दिया जाए। इस नई व्यवस्था के अन्तर्गत अधिक भूराजस्व प्राप्त हो सकेगा, जैसा कि मैं पहले ही बता चुका हूँ। इसके फलस्वरूप लोगो में जो संतोष और विश्वास उत्पन्न होगा उससे आगे चलकर लोगो मे और अधिक उद्यम एव विकास के प्रति परिश्रम की भावना को बल मिलेगा।" लोगो ने कूती गई फसल का आधा मूल्य लगान के रूप में देना सहर्ष स्वीकार कर लिया क्योंकि पहले की व्यवस्था मे भी आधी फसल राजस्व के रूप मे ली जाती थी और निकटवर्ती पडोसी रजवाडो मे भी इतना ही लगान लिया जाता था[13]। पहले वर्ष सरकार को भू-राजस्व से १ ५६,७४६ रुपए प्राप्त हुए।

फसल के विभाजन की इस दर को एफ. विल्डर अत्यन्त औचित्यपूर्ण मानते थे और इनकी यह भी मान्यता थी कि इससे निश्चय ही लोगो के मन मे "नई सरकार की उदारता और न्यायप्रियता के प्रति विश्वास पैदा होगा।" उनकी मान्यता तो यहाँ तक थी कि तीन सालों मे यह जमा दुगुनी हो जाएगी जो अंग्रेजो के पूर्व किसी भी सरकार द्वारा प्राप्त नही की जा सकी थी और यह भी लोगो पर बिना किसी नए भार को थोपे ही उपलब्ध हो सकेगी[14]। आगामी वर्षों मे जमा में वृद्धि के बारे मे वे इतने आश्वस्त थे कि उन्होने सरकार को सुझाव दिया कि तीन वर्ष का क्रमिक बन्दोबस्त लागू कर देना चाहिए जिसमें पहले वर्ष १,७६,४३७ की राशि, दूसरे वर्ष २,०१,६६१ रुपए तथा तीसरे वर्ष २,४६,४३०३ की राशि भूराजस्व में किसानों से वसूल की जाए।[15]

ऐसा प्रतीत होता है कि विल्डर को जिले के सीमित साधन व कृषि की गिरी हुई हालत का ज्ञान नहीं था। इसलिए उनके द्वारा निर्धारित राशि, अपूर्ण व अविश्वस्त आकडों व जानकारी पर आधारित थी।[16] "वास्तव मे वे इस क्षेत्र की वास्तविक परिस्थिति से अनभिज्ञ थे इसलिए उनके प्रशासनिक दृष्टिकोण मे तथा लाडूस व वॉइटवे मे एक गहरा अन्तर विशेषकर राजस्व प्रशासन के क्षेत्र मे परिलक्षित होता है। उनका केवल एक ही उद्देश्य था कि किसी तरह से सरकारी राजस्व मे वृद्धि की जाए और यह वृद्धि किन सिद्धान्तो के आधार पर सभव है, इसके विश्लेषण का उन्होंने कभी प्रयत्न नहीं किया। उन्होंने इस क्षेत्र मे इतने अव्यवस्थित ढग से काम किया कि न तो उन्होंने अपने द्वारा सुझाई गई पूर्ति के आधारो की जानकारी ही प्रदान की और न वे तथ्य ही प्रस्तुत किए जिनके आधार पर कथित कर व्यवस्था का निर्धारण किया गया था। सरकार ने भी बन्दोबस्त का यह सुझाव कुछ हिचकिचाहट के साथ यह जानते हुए भी कि सभावित विकास कार्यों पर आधारित बदोबस्त हानिकारक व अनिश्चित हो सकता है, स्वीकार कर लिया। इसके फलस्वरूप आगे चलकर कृषकों की भावनाए कुद हो चली और उनकी सपत्ति-संचय मे विकास कार्यों के प्रति भावना को भी ठेस पहुँची।[17]

विल्डर के अनुमानों को पहले वर्ष में ही धक्का लगा जबकि दोनों फसलें नष्ट हो जाने से बदोबस्त अस्त व्यस्त हो गया। तब उन्होंने यह निर्णय लिया कि सरकार एक निश्चित वार्षिक राशि १,६४,७०० रुपए लगान के रूप में वसूल करले तथा शेष रकम माफ कर दे। यह प्रस्ताव सरकार ने भी स्वीकार कर लिया और पाँचसाला बदोबस्त की स्वीकृति प्रदान कर दी। चतुर्थ वर्ष में यह अनुभव किया गया कि उपर्युक्त निर्धारित राशि भी भारी पड़ती है और लोगों को राजस्व चुकाने के लिए कर्ज लेना पड़ रहा है। यह स्थिति भी उन दिनों थी जबकि पूर्ववर्ती तीन वर्षों में फसलें अच्छी हुई थीं। पाँचवें वर्ष अकाल की स्थिति पैदा हो जाने से केवल ३१,६२० रुपए की रकम ही राजस्व के रूप में वसूल की जा सकी।[१८] उस वर्ष १० जून तक छुटपुट बरसात हुई, इसके बाद केवल दो बौछारें १२ और २० अगस्त को हुई। उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र में लू की लपटों से तालाब और कुंए सूख गए और खरीफ की फसल झुलस कर नष्ट हो गई। इसके कारण बहुत से मवेशी मर गए और शेष बचे हुए पशुधन को लोग चराई के लिए मालवा की ओर ले गए। अनाज रुपए का बीस सेर बिकने लगा था। मार्च में दो बार भारी हिमपात (पाला पड़ना) से पहले से ही कमजोर बचीखुची रबी की फसल भी नष्ट हो गई।

इस सूखे और अकालग्रस्त वर्ष अजमेर में बिताकर विल्डर महोदय दिसम्बर, १८२४ में स्थानांतरण पर अन्यत्र चले गए। उन्होंने कभी भूमि की स्थिति व लोगों की हालत की सही जानकारी प्राप्त करने का प्रयत्न ही नहीं किया। यह एकदम अविश्वसनीय एवं चौंका देने वाला तथ्य है कि जब अजमेर के पूरे राजस्व एवं पुलिस-प्रशासन का मासिक व्यय केवल १३७४ रुपए थे उनका अपना मासिक वेतन ही ३००० रुपए था। विल्डर का दृष्टिकोण तत्कालीन अंग्रेज सरकार की नीति की स्पष्ट झलक प्रस्तुत करता है।[१९]

पुनर्व्यवस्था काल (१८२४–४१)

विल्डर के स्थान पर नियुक्त हेनरी मिडलटन ने राजस्व अन्न के रूप में उगाहने की नीति को पुनर्जीवित किया। उनकी यह धारणा थी कि नगदी के रूप में लगान देने के बजाय यह व्यवस्था गरीब किसानों द्वारा अधिक पसंद की जाएगी।[२०] जिन्हें अकाल ने झकझोर दिया है और जो इतने गरीब हो गए हैं कि अपने कुंओं तक की मरम्मत कराने में असमर्थ हैं तथा सूदखोरों के चंगुल में फँसे पड़े हैं।' परन्तु पहले वर्ष (१८२५ २६) के अनुभवों से ही वे यह बात समझ गए कि यह व्यवस्था नहीं चल सकेगी। २६ नवम्बर, १८२६ तक उन्होंने नए खाते तैयार कराए तथा सरकारी आय के स्रोतों का आधार गत वर्षों के आकड़ों को रखा। राजस्व-कर उन्होंने १,४४,०७२ रुपए निश्चित किया और इसे पाँच साल के लिए मंजूर किया। शीघ्र ही यह बात भी सामने आ गई कि मिडलटन द्वारा आँका गया लगान

भी अधिक है। निर्धारित राशि पहले साल उनके द्वारा वसूल की गई, परन्तु यह बात पूर्णतया स्पष्ट हो गई कि आगामी वर्ष में इतनी राजस्व वसूली भी संभव नहीं हो सकेगी।[२१]

अक्टूबर, १८२७ में मिडलटन के स्थान पर केवेंडिश की नियुक्ति हुई। इन्हें सहारनपुर जिले मे राजस्व प्रशासन के कार्य का अच्छा अनुभव था। केवेंडिश उत्साही एवं योग्य अधिकारी थे उन्होने शीघ्र ही इस्तमरार, भोम और जागीर के बारे मे महत्वपूर्ण अन्वेषण किया। केवेंडिश ने कतिपय कारणो से मिडलटन द्वारा निर्धारित राजस्व को दुर्वह माना। उन्होंने लिखा कि कृषि योग्य भूमि उतनी ही रही है, जितनी मराठों के समय मे थी जिससे वे केवल ८७,६८६ रुपए का राजस्व उगाहते थे। यह भी जबकि कूते की दर आधे से अधिक फसल की थी। अजमेर की भूमि पथरीली होने से किसान को अधिक परिश्रम करना पड़ता है और इसलिए आधी फसल लगान के रूप मे देना उसकी क्षमता के बाहर है। कर-निर्धारण, भूमि की उपज के आधार पर नही होकर अनिर्धारित और मनमाने रूप मे वसूल किया जाता है, और पहले का लगान उन अच्छे वर्षों के आधार पर किया गया है, जबकि खाद्यान्नो के भाव ऊँचे थे।[२२] उन्होंने मिडलटन द्वारा निर्धारित क्षेत्र मे वे दरें लागू की जो उन्होंने पहले सहारनपुर मे लागू की थीं और यह लेखा प्रस्तुत किया कि राजस्व १,४४,०७२ रुपए के बजाय ८७,६४६ रुपए होना चाहिए। उनके अनुसार प्रारम्भ से ही जिले मे राजस्व तीन कारणो से अधिक कूता गया था। एक तो यह था कि मराठे अपनी ताकत के आधार पर बिना किसी नियमित आधार के किसानो से ज्यादा से ज्यादा कर वसूल करते थे। दूसरा कारण यह था कि सिंधिया ने जब अजमेर अंग्रेजो को हस्तांतरित किया तो उसने यहाँ की राजस्व राशि को बढा चढाकर बताया था फलस्वरूप विल्डर ने उस असभव स्तर की प्राप्ति के लिए भारी प्रयत्न किया। तीसरा कारण यह था कि सन् १८१८-१६ का वर्ष अजमेर के लिए खुशहाली का वर्ष था। जब कि पड़ोसी रियासतों मेवाड़, मारवाड़ मे पिंडारी सरदार अमीर खान की लूटपाट के कारण कृषि चौपट हो जाने से वहाँ अन्न की भारी कमी हो गई थी और इन रियासतों मे अनाज के निर्यात के कारण अजमेर मे भाव बहुत ऊँचे चढ़ गए थे। इस नव विजित क्षेत्र में अंग्रेज अधिकारियों द्वारा प्रथम कर निर्धारण चूंकि अनाज के गलत भावो पर आधारित था इसलिए उस राशि की प्राप्ति असम्भव थी। उन्होंने इस क्षेत्र मे अपने प्रवेश के समय प्रचलित भावो को आधार बना लिया था जो क्षेत्रीय अशांति के कारण काफी ऊँचे थे। वे यह अनुमान नही लगा सके कि शांति एवं व्यवस्था स्थापित होने व मार्ग खुले रहने से कृषि मे वृद्धि एवं भावो का नीचे गिरना स्वाभाविक है।[२३]

केवेंडिश ने नया बन्दोबस्त करने व अकाल तथा अभाव की स्थिति में किसानों

को लगान देने के लिए बाध्य करने के बारे में सरकार को उन्होंने व्यक्तिगत जोत के आधार पर कूंते का सुझाव दिया जबकि मिडलटन की बन्दोबस्त प्रक्रिया मे इसका ख्याल नही रखा गया था।[२४] इस बात पर उन्होने विशेष रूप से प्रकाश डाला कि अभाव के दिनो मे जो छूट, सहायता इत्यादि इकट्ठी प्रदान की जाती है वह वास्तविक किसानो तक नहीं पहुँच पाती है। तहसीलदार, कानूनगो पटवारी और पटेल इसे आपस में बाँट लेते हैं। इस बात का श्रेय केवेंडिश को है कि उन्होने पहली बार यहाँ पटवारी खातो की प्रथा चालू की। पटवारियो के हलके मे अधिक ग्राम रखे गए यहाँ तक कि अभी तक जिन ग्रामो के लिए कोई पटवारी नही था वहाँ भी पटवार व्यवस्था स्थापित की गई तथा प्रत्येक पटवारी को यह आदेश दिया गया कि वह जो भी रकम किसानो से वसूल करे उसकी लिखित रसीद प्रदान करे।[२५] सरकार ने केवेंडिश के प्रस्तावो को सामान्यत स्वीकार किया परन्तु जहाँ तक लगान के भारी होने का प्रश्न था, यह निर्णय लिया कि नए बन्दोबस्त से पहले प्रत्येक ग्राम की वास्तविकता का पता लगाने का गभीर प्रयत्न किया जाना चाहिए। २६ यह अजमेर का दुर्भाग्य ही था कि यहाँ का प्रथम बन्दोबस्त केवेंडिश जैसे कुशल अधिकारी की अपेक्षा मिडलटन जैसे व्यक्ति ने किया। अग्रेज अधिकारियों ने इस तथ्य को स्वीकार किया कि उस साल खाद्यान्न के ऊँचे भावो के कारण राजस्व अधिक निर्धारित किया गया था। परन्तु फिर भी सरकार ने अपने राजस्व मे सशोधन करना अस्वीकार कर दिया। सरकार ने केवेंडिश द्वारा प्रस्तावित कतिपय सुधारो एव सुझावो को अवश्य स्वीकार कर लिया जैसे, अकाल व अभाव के दिनो मे किसानों को छूट दी जाय इत्यादि। सत्य तो यह है कि जबतक अजमेर मे केवेंडिश रहे, किसानो को लगातार छूट मिलती रही और किसी भी वर्ष लगान की राशि मिडलटन द्वारा निर्धारित लगान की रकम तक नही पहुँच पाई।[२७]

केवेंडिश के उत्तराधिकारी मेजर स्पीयर्स ने नए बदोबस्त का कोई प्रयत्न नही किया परन्तु उसके साथ यह ध्यान रखते हुए कि निर्धारित लगान की रकम अत्यधिक भारी है, वे यथा सभव छूट प्रदान करते हैं। यह पूर्णतया स्पष्ट हो गया था कि मिडिलटन के बदोबस्त मे परिवर्तन आवश्यक है। एडमस्टन ने जिनकी नियुक्ति मेजर स्पीयर्स के स्थान पर हुई थी अगले साल ही अल्पावधि बन्दोबस्त लागू किया और लगान की राशि १,१६ ३०२ रुपए निर्धारित की तथा साथ ही यह प्रावधान भी रखा कि जो किसान बदोबस्त की नई दरों पर भुगतान न करना चाहे वे पुरानी खाम दरो पर फसल का आधा भाग कर के रूप में दे सकते हैं।[२८]

सन् १८३५-३६ मे एडमस्टन ने नियमित बदोबस्त का काम हाथ मे लिया जिसे आगामी दस वर्षों की अवधि के लिए निर्धारित होना था। अतएव इसे दशवार्षिक बदोबस्त की सज्ञा दी गई। एडमस्टन ने क्षेत्र की स्थिति के बारे में पूर्ववर्ती

भूराजस्व की प्रशासनिक भूलो का अतिरंजित चित्रण प्रस्तुत करते हुए यह निष्कर्ष निकाला गया कि जिले का विकास तो दूर रहा उसकी अवनति हुई है। जामा को अधिक निर्धारित कर उसकी वसूली मे जितनी कठिनाई हो उतनी अनियमित रूप से प्रतिवर्ष छूट देने की चली आ रही प्रथा को समाप्त करने का उन्होने प्रयत्न किया। एडमस्टन ने केवेंडिश की तरह अन्न के भावो का अन्दाजा नही लगाया बल्कि उन्होंने कर निर्धारण हेतु भावो का निर्णय करने के लिए एक प्रणाली निर्धारित की। ग्रामो की पैमाइश की गई जिसके अनुसार कृषि योग्य भूमि २६,२५७ एकड़ थी। उन्होने इस भूमि को तीन श्रेणियो मे विभक्त किया—चाही (सिंचित) ८,६८६ एकड, तालाबी २१८० एकड़ और बारानी (असिंचित) २५,०८८ एकड। इसके पश्चात् उन्होने नगदी फसलो वाली भूमि या दो फसली भूमि (मक्का और कपास) का लगान निश्चित किया जो खास तहसील मे उस समय प्रचलित मूल्यो के आधार पर था। इसके साथ ही उन्होंने प्रति बीघा अन्य फसलो की औसत उपज को आंका। पटेलो और महाजनो को छोड़कर लगान फसल का आधा भाग निर्धारित किया व उसको नगदी मे परिवर्तन करने के लिए उन्होने पूर्ववर्ती पांच वर्षों के प्रचलित मूल्यो के औसत मूल्य को निर्धारित किया। इस तरह से वे एक काम चलाऊ जमाबन्दी प्राप्त करने मे सफल रहे, जो १५७१५१ रुपयो के लगभग थी। उन्होने प्रत्येक ग्राम का दौरा किया और प्रत्येक जगह के बारे मे सरकारी लगान की मांग पिछली वित्तीय स्थिति, वर्तमान हालत और भावी सम्भावनाओ के संदर्भ मे निर्धारित की और किसी भी ग्राम को छोड़ा नहीं गया। दो छोटे गांवो को खाम में लिया गया क्योकि वे एडमस्टन के निर्धारित स्तर के सिद्ध नही हुए। शेष ग्रामो ने उनकी शर्तें स्वीकार कर ली थी। बन्दोबस्त की निर्धारित राशि १ २७ ५२५ रुपए और खाम ग्रामो को जोड़ने पर उक्त राशि १,२१,८७२ रुपए निश्चित् की गई।[२९]

एडमस्टन के मतानुसार अजमेर-निवासी अधिकतर लापरवाह, दरिद्र और कर्जदार थे। बोहरे ग्रामो के एक तरह से स्वामी बन गए थे। वे किसानो को सरकारी लगान जमा करवाने व मवेशी खरीदने के लिए रुपया कर्ज पर देते थे। वे ग्राम समाज के खर्च को संचालित किया करते थे। यहाँ तक कि किसान ब्याह शादी या अन्य त्यौहारो पर क्या खर्च करेंगे, वह भी इनसे संचालित होता था। महाजन किसानो को ऋण का हिसाब नही देते थे, और इनसे लिया गया ऋण एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक चलता ही रहता था। एडमस्टन ने प्रत्येक ग्राम से राजस्व कर निर्धारित करने के लिए सुविधा से सम्पर्क स्थापित किया क्योकि उनकी यह मान्यता थी कि वह ग्राम समाज की इच्छानुसार ही व्यवहार करता है।[३०]

दस वार्षिक बन्दोबस्त कृषि योग्य भूमि और व्यक्तिगत जानकारी के आधार पर किया गया था। प्रत्येक ग्राम का कर निर्धारण न्यायिक तथा औचित्यपूर्ण

ढग से किया गया था फिर भी यह कई माने मे अधूरा एवं असमान था क्योकि गांव का लगान प्रत्येक किसान पर समान रूप से बांट दिया गया था। अबतक किसान आधी फसल पटेलो को देते थे और न ये गांव की राशि मे जो कमी होती थी उसकी पूर्ती जो लोग खेती नही करते थे उनको करनी पड़ती थी। केवेंडिश ने कुछ अशो मे खेवट-प्रथा लागू की थी परन्तु सभी खेतदारो के सम्मिलित उत्तरदायित्व की भावना व्यावहारिक रूप से सम्पूर्ण जिले के लिए अजनबी चीज थी। इसे एडमस्टन ने पूरे जिले मे पहली बार लागू किया। एक किसान, जिसका कर उपज का आधा भाग निर्धारित किया गया था, उसे फसल अच्छी हो या बुरी हो, चुकाना ही पडता था। उसे इस प्रथा के अनुसार उन किसानो के कर की रकम भी चुकानी पड़ती जो किन्ही कठिनाईयो के कारण दूसरी जगह चले गए थे या जिन्होने साधन के अभाव म कृषि छोड कर मजदूरी पर निर्वाह करना प्रारम्भ कर दिया था।[31]

यद्यपि अजमेर मेरवाडा पर अग्रेजों के आधिपत्य के बाद यह प्रथम व्यवस्थित बदोबस्त होते हुए भी इसम कई गभीर दोष थे। लगान की दर जो फसल का आधा भाग थी, बहुत अधिक थी। वास्तव मे यह दर उत्तर पश्चिमी सूबो की प्रति एकड राजस्व भार से दुगनी थी।[32] अतएव, इसम कोई आश्चर्य नही कि किसान और अन्य लोग यह माग करने लगे थे कि वास्तविक उपज के आधार पर लगान वसूली की प्रथा पुन जारी की जाय। यद्यपि सरकार ने बदोबस्त म किसी तरह के आधारभूत परिवर्तनो की इजाजत नही दी थी तथापि ग्रामो को यह छूट दी गई कि वे चाहें तो सीधी व्यवस्था के अन्तर्गत आ सकते हैं। ८१ ग्रामो ने इसे स्वीकार कर राहत की सास ली। इससे यह स्पष्ट हो गया था कि एडमस्टन का बदोबस्त उन किसानों की स्थिति सुधारने मे असफल रहा जो अर्थाभाव के कारण अपने कुँओं की मरम्मत करने और अपनी जोतो को सुधारने म असमर्थ थे।[33]

कर्नल सदरलैंड जिन्होने एडमस्टन के जाने के कुछ ही दिनों बाद अजमेर के कमिश्नर का पद सभाला था कर निर्धारण की इस प्रथा की कडी आलोचना की। उन्होने इस प्रथा को अजमेर जिल के लिए पूर्णतया अनुपयुक्त ठहराया तथा एक अलग ही ढग की प्रक्रिया सुझाई जो कर्नल डिक्सन द्वारा मेरवाडा मे लागू की गई थी। सदरलैंड ने अनुभव किया कि यदि वैसी ही व्यवस्था अजमेर के लिए लागू की जाय तो वह पूर्णतया लोकप्रिय सिद्ध होगी। कर्नल सदरलैंड ने जनवरी, १८४१ मे अपनी रिपोर्ट मे यह सुझाव दिया कि कपास, मका, गन्ना और अफीम की फसल देने वाली जोतो पर नकद दर लागू की जाए और अन्य फसलों वाली जोतो की पैमाइश की जाकर लगान बदी की जाए तथा उपज का एक तिहाई भाग सरकारी राजस्व के रूप मे लिया जाए व निकटवर्ती प्रमुख मडियो मे प्रचलित बाजार भावो के वार्षिक

आधार पर उसे नगदी मे परिवर्तित किया जाय।[34] नई भूमि पर खेती करने के लिए किसानो को प्रोत्साहन स्वरूप यह सुझाव दिया कि इनसे भूराजस्व प्रथम वर्ष मे फसल का छठा भाग, दूसरे वर्ष मे पाचवां भाग, तीसरे वर्ष मे चौथा भाग और तत्पश्चात् तीसरा भाग लिया जाना चाहिए। उन किसानो को जो मेडबदी करें या नये कुँए खोदें उन्हे राजस्व मे कुछ छूट भी दी जाए जिससे अधिकाधिक पड़त भूमि मे खेती को प्रोत्साहन मिल सके।[35]

कर्नल डिक्सन का बन्दोबस्त (१८४२)

इन सुझावो के आधार पर सदरलैंड ने डिक्सन के बदोबस्त की भूमि का तैयार की जो अजमेर-मेरवाडा मे अग्रेजो के राजस्व प्रशासन के इतिहास मे एक मानक सिद्ध हुआ है। फरवरी, १८४२ मे अजमेर के सुपरिंटेंडेंट पद पर नियुक्त होने के पूर्व डिक्सन मेरवाडा के सुपरिंटेंडेंट थे और वहाँ उनका प्रशासन इतना सफल रहा कि भारत सरकार ने अजमेर जिले की कर-निर्धारण जैसी पेचीदी समस्या भी उनके हाथो मे सौंपने का निर्णय लिया।

डिक्सन के आगमन के साथ ही अजमेर जिले मे भौतिक विकास का नया चरण प्रारम्भ हुआ। आगामी छः वर्षो मे अकेले मेडबदी के निर्माण और मरम्मत पर ही ४,५२,७०७ रुपए सरकार ने व्यय किए। कृषि विकास के लिए किसानो को सरकार ने उधार ऋण प्रदान किए। लगान की सरकारी माग आधे से घटाकर ⅓ कर दी गई। इसके साथ ही किसानों को यह सुविधा भी प्रदान की गई कि जो इसे स्वीकार न करना चाहे वह पुरानी लाम व्यवस्था मजूर कर सकता है। जब कभी कोई नया तालाब बनाया जाता या मरम्मत की जाती तो लगान के साथ निर्माण व्यय का कुछ प्रतिशत अतिरिक्त जोड़ा जाता था।[36]

कर्नल डिक्सन ने अजमेर जिले मे कर निर्धारण के सबध मे भी मेरवाडा के ग्रामों में अपने द्वारा किए गए राजस्व एव प्रशासनिक कार्यों के अनुभवो का उपयोग किया। ये ग्राम उनकी सीधी व्यवस्था के अन्तर्गत थे। एडमस्टन द्वारा निर्धारित लगान से उन्होने प्रति गाँव पर आठ प्रतिशत रुपए तालाबों के निर्माण मे व्यय किए गए तथा व्यय की पूर्ति के लिए जोडे। जब कभी उन्हें यह अनुभव होता कि कोई ग्राम इस राशि का भार सहज वहन कर सकता है, तभी वे उन ग्राम पर यह भार लगाते थे। यदि उन्हें यह लगता कि कोई ग्राम इनसे अधिक राशि देने मे भी समर्थ है तो वे उनका लगान ऊंचा रखते व यदि कोई ग्राम सामान्य स्तर भी पूरा करने मे असमर्थ होता तो वे निर्धारित राशि कम कर देते थे। लगान निर्धारित होने के पश्चात् ही लगान की दरें निर्धारित की जाती थी। अलग-अलग गाँवों मे आपस में राजस्व भार की भिन्नता के कारणो को कभी समझने का प्रयास नही किया गया। जिले की पूर्ण जानकारी के बावजूद कर्नल डिक्सन अपने द्वारा निर्धारित लगान मे अनाज

असमानता को नहीं रोक सके[३७]।

लेफ्टिनेन्ट गवर्नर की राय मे १,५८,२७३ रुपयो की राशि उचित थी। इसके अनुसार वे एडमस्टन द्वारा निर्धारित लगान मे तालाबों के निर्माण पर किए गए खर्च का ६ प्रतिशत व्यय भार और जोड देना चाहते थे। सन् १८४७-४८ मे सरकार के लिए फसल की दो तिहाई वसूली सभव हो सकी तथा १,६७,२३७ रुपयो की राशि खजाने को उपलब्ध हुई। एडमस्टन की लगान व्यवस्था के मुकाबले मे किसानो को डिक्सन की व्यवस्था के अन्तर्गत कम भार लगा। इसका परिणाम यह हुआ कि असिंचित क्षेत्र मे कृषि का बहुत विकास हुआ[३८]।

कर्नल डिक्सन को अपने द्वारा की गई व्यवस्था की व्यावहारिकता पर पूर्ण विश्वास था। नई बन्दोबस्त प्रक्रिया को प्रस्तुत करते हुए उन्होंने कहा 'यदि मौसम अनुकूल रहा और तालाब भर गए तो लोग आसानी से हसी-खुशी लगान चुका सकेंगे। यदि सूखा पडता है तो हमने इतनी छूट की व्यवस्था कर ली है कि लगान भरने की पीडा लोगो को छू तक नही सकेगी। यह बात ध्यान में रखना जरूरी है कि हमनें लाभ जनता के लिए रखे हैं और अपने लिए घाटे का भार। अजमेर-मेरवाडा जैसे क्षेत्र मे जहाँ मौसम अत्यन्त ही अनिश्चित रहता है जमीदारो को बकाया लगान के लिए, जबकि फसल हुई ही नही हो परेशान करना, उन्हें हतोत्साहित करता है।"

कर्नल डिक्सन के नए बन्दोबस्त की मशा अकाल के वर्षों को छोडकर सालाना जमा वसूली की नही थी। उसने लगान की रकम इतनी ऊँची निर्धारित की कि जिसे डिक्सन के अनुसार अच्छे वर्षों मे वसूल किया जा सकता था। परन्तु उन्होने आवश्यकतानुसार छूट देने की व्यवस्था भी रखी थी। जनता ने इसे बडे अनमने ढग से स्वीकार किया था। कर्नल डिक्सन ने अपने बन्दोबस्त पर टिप्पणी करते हुए कहा "जनता को यह समझने मे कि इस व्यवस्था मे उनके हित और लाभ को मुख्य स्थान दिया गया है, हमारा प्रयास व्यर्थ रहा। "रामगढ परगने ने तत्काल नए लगान को स्वीकार कर लिया। रामसर के किसानों ने, जिन पर काफी भारी लगान लागू किया गया था कुछ हिचकिचाहट अवश्य दिखाई परन्तु डिक्सन के प्रभाव और उनके समझाने से नयी व्यवस्था स्वीकार कर ली।

लेफ्टिनेन्ट गवर्नर ने यद्यपि बन्दोबस्त को स्वीकृति प्रदान कर दी थी परन्तु उनके मन मे यह भय अवश्य था कि लगान इतना अधिक है कि सभवत यह जिला इतनी राशि आसानी से भुगतान नही कर सकेगा। परन्तु उन्हे कर्नल डिक्सन के स्थानीय अनुभव और क्षेत्र के बारे मे गहरी जानकारी के प्रति विश्वास के कारण इस पर आपत्ति प्रकट नही की। कोर्ट ऑफ डायरेक्टर्स को भी लेफ्टिनेन्ट गवर्नर जैसा ही अदेशा इस नई व्यवस्था के बारे मे था परन्तु अत मे कर्नल डिक्सन द्वारा

प्रस्तावित बन्दोबस्त उसी रूप में इक्कीस वर्षों के लिए स्वीकार कर लिया गया। बन्दोबस्त के अन्तर्गत निर्धारित कर नहीं देने पर यहां मसूख करने व खाम व्यवस्था लागू करने का प्रावधान था।

यह बन्दोबस्त केवल नाम के लिए ही मौजावार था। कर्नल डिक्सन ने वसूली की जो पद्धति अपनाई उससे यह व्यवहार में रैयतवारी बन गया था। कर्नल डिक्सन ने ग्रामों को हल्कों में विभाजित कर, प्रत्येक हल्के की वसूली के लिए एक चपरासी के अधीन रखा था। चपरासी—पटेल और पटवारी की सहायता से प्रत्येक जोतदार से पटवारी के रजिस्टर में उसके नाम के आगे चढी रकम वसूल करता था। यदि जोतदार किन्हीं कारणों से यह राशि नहीं चुकाता तो ग्राम के बनिए के माध्यम से जिसके यहाँ उसका खाता होता था, यह रकम वसूल कर ली जाती थी। यदि निर्धारित राजस्व वसूली के ये सभी तरीके निष्फल रहते तो कर्नल डिक्सन को यह निर्णय लेना होता था कि इसमें कितनी छूट दी जानी चाहिए और वे इस प्रस्तावित छूट की राशि की स्वीकृति के लिए सरकार को प्रार्थना करते थे। इस तरह की छूट के लिए मई, १८५४ में कर्नल डिक्सन ने १६,३२५ रुपए की राशि सरकार को प्रस्तावित की थी। यदि किसी ग्राम का लगान चुकाने में कोई बाधा उपस्थित होती तो डिप्टी कलेक्टर को वहाँ भेज कर लगान को नए सिरे से विभाजित करने की व्यवस्था की जाती थी। इस तरह की प्रशासनिक प्रक्रिया पुरानी मौजावार पद्धति से मौलिक रूप से ही भिन्न थी। इस व्यवस्था के लिए ऐसे कलेक्टरों की आवश्यकता थी जिन्हें ग्राम के साधन स्रोतों की पूरी पूरी जानकारी हो[३९]।

अजमेर का बन्दोबस्त सम्पन्न करने के बाद कर्नल डिक्सन ने मेरवाड़ा में लगान निर्धारण का काम हाथ में लिया। मेरवाड़ा के बारे में लेफ्टिनेन्ट गवर्नर ने किसी तरह का निर्देशन व नियम लागू नहीं किया। कर्नल डिक्सन को पूर्ण स्वतन्त्रता दी गई कि वे जो भी उचित समझें लागू कर सकते हैं। डिक्सन २७ सितम्बर, १८५० को मेरवाड़ा में भी बन्दोबस्त लागू करने में सफल हुए[४०]। नया बन्दोबस्त बीस साला था। बन्दोबस्त में वार्षिक राजस्व की राशि १,८८,७४२ रुपए निर्धारित की गई[४१]।

कर्नल डिक्सन ने इस बन्दोबस्त में न तो भूमि को विभिन्न श्रेणियों में विभाजित करने वाली विशद प्रक्रिया और न मूल्य-निर्धारण की ही प्रक्रिया अपनाई। किसी भी ग्राम के लिए एक मानक माँग को निर्धारित करते समय उन्होंने एडमस्टन द्वारा निर्धारित लगान को आधार माना और जलाशय या मेडबन्दी का ६ प्रतिशत निर्माण-व्यय और जोड दिया। कर्नल डिक्सन ने इस जिले के बारे में अपने गहन अनुभवों के आधार पर और भी कतिपय महत्वपूर्ण निर्णय लिए। ग्राम की पैमाइश होने के बाद लगान निर्धारित किया गया। इसके अन्तर्गत विभिन्न ग्रामों के राजस्व

का भार एक-सा नहीं था। कर्नल डिक्सन ने पहले ग्रामों की हालत का अध्ययन किया और जब उन्हे यह विश्वास हुआ कि अमुक गाँव उपज का आधा हिस्सा और अगर वहाँ तालाब का निर्माण हुआ है तो ६ प्रतिशत निर्माण कर देने की स्थिति मे है, तो उन्होने उतना उस गाँव का लगान निश्चित कर दिया। अगर उन्हें यह मालूम पडता कि किसान इससे अधिक दे सकते है या इतना नही दे सकते तो राशि को घटाया या बढ़ाया जा सकता था[४२]।

डिक्सन का बन्दोबस्त संतोषजनक ढग से काम करता रहा और सन् १८४७४८ मे सरकार को राजस्व से राशि १ ६७ २३७ रुपए प्राप्त हुए। अबतक प्राप्त राजस्व मे उपरोक्त राशि सर्वाधिक थी। यह राशि उनके द्वारा प्रस्तावित १,७५,७५६ की राशि के लगभग थी। उपरोक्त राशि उन्होने १ प्रतिशत सडक का कर घटाकर तथा १ प्रतिशत जलाशय-निर्माण कर के समावेश के आधार पर प्रस्तावित की थी।[४३]

सन् १८५७ मे कर्नल डिक्सन की मृत्यु से अजमेर जिले को उनकी सेवाओं से वंचित होना पडा। उनके निधन के साथ ही क्षेत्र मे भौतिक विकास एवं नवनिर्माण का युग समाप्त हो गया। निस्सदेह उनके प्रशासन-काल मे प्रकृति भी अनुकूल रही। उनके बाद राजस्व से प्राप्त राशि स्थिर रही। उनके बन्दोबस्त के सिद्धान्त को भुला दिया गया और यह भावना शनै शनै बल पकडती गई कि निर्धारित लगान सरकार की एक निश्चित वार्षिक माँग है जिसकी पूरी वसूली आवश्यक है।[४४]

कर्नल डिक्सन के बाद बन्दोबस्त एवं कर-निर्धारण की यह जटिल समस्या अजमेर के प्रथम डिप्टी चीफ कमिश्नर कैप्टिन जे० सी० ब्रुक्स ने अपने हाथ मे ली। उन्होने २४ जुलाई, १८५८ को भारत सरकार को अपनी रिपोर्ट मे लिखा कि शामलात की भूमि से प्राप्त लाभ का कोई लेखा नही रखा गया है और छूट की राशि सम्पूर्ण गाँव द्वारा उपभोग करने के कारण वास्तविक पीडितों तक पूरी नहीं पहुच पाती है। अपनी रिपोर्ट म उन्होने तालाब के पेटे की भूमि पर लगान को अधिक व अनुचित ठहराया। उन्होंने पटवारियों की वेतन वृद्धि कर उनकी आर्थिक स्थिति को सुधारा तथा उनके हल्को मे और छोटे-छोटे गाँव जोड दिए ताकि काम की कमी न रहे।[४५] ब्रुक्स ने यह अनुभव किया कि इस बन्दोबस्त मे किसानो पर कर का भार अधिक है क्योंकि गत तीन वर्षों में गेहूँ और जौ के बाजार भाव पूर्व स्तर से आधे रह गए थे।[४६] सन् १८६७ तक राजस्व की राशि पूरी वसूल की जाती रही। सन् १८६६ मे राजस्व प्रत्येक ग्राम के पटेल से वसूल करने के आदेश लागू किए गए।[४७]

लाटूस का बन्दोबस्त :

पुराने बन्दोबस्त की समाप्ति की अवधि समीप आ जाने से सन् १८७१ में लाटूस को नए बन्दोबस्त के लिए बन्दोबस्त अधिकारी नियुक्त किया गया। अजमेर के कमिश्नर सॉन्डर्स ने उन्हे इस सम्बन्ध मे विस्तार पूर्वक निर्देशन प्रदान किया। उनसे जहाँ तक सम्भव हो सके प्रत्येक पटवारी के हल्के में एक जरीब सक्रिय रखने की सलाह दी गई ताकि काम जल्दी पूरा हो सके तथा उन्हे यथासम्भव प्रत्येक ग्राम के जोतदार की विगतवार तफसील तैयार करने को कहा गया जिसमे उनके जोत की भूमि और उसकी श्रेणी का उल्लेख हो। पैमाइशो के दौरान क्षेत्रीय मानचित्र भी तैयार करवाने व पैमाइशो के सम्पन्न हो जाने के बाद प्रत्येक जोतदार को स्थानीय क्षेत्रीय मानचित्र की तथा बन्दोबस्त रेकॉर्ड मे उसकी प्रविष्टि की एक-एक प्रति प्रदान करने का आदेश भी दिया गया।[४८]

खतौनी और खसरा के बारे मे निम्नांकित प्रविष्टियां सुझाई गई—

१. क्रमांक

२. लम्बरदार का नाम

३. मालिक का नाम, जाति, पैतृक-हिस्से की राशि तथा हिस्से का भाग।

४. जोतदार का नाम, जाति, पैतृक, मौरूसी अथवा नहीं कुल जोत।

५. शुमारा सूची मे दर्ज खेतो की संख्या।

क्षेत्रफल—

६. उत्तर-दक्षिण मीन

७ पूर्व पश्चिम मीन

सर्वे का विस्तृत क्षेत्र—

८. पड़त

९. कृषियोग्य

१०. नव तोड़

भूमि की किस्म—

११. कुँओं से सिंचित

१२. अन्य स्रोतो से सिंचित

१३. असिंचित

१४. कुल रकबा

१५. फसलो की विगतें

लगान—

१६. दर

१७ राशि[४१]

डब्ल्यू जे. लाट्ठस की यह दृढ मान्यता थी कि मूल लगान अत्यधिक निर्धारित था।[४०] कृषियोग्य भूमि मे विशेष वृद्धि नही हुई थी यद्यपि कुंए काफी सख्या मे खोदे गए थे तथापि अधिकाश कुंए उन क्षेत्रों मे खोदे गए हैं जहाँ जलाशयो से सिंचाई होती थी। उनके अनुसार अकाल के बाद कृषि-सम्पत्ति मे उल्लेखनीय ह्रास हुआ था। अकाल के कारण पशुओ की सख्या बहुत कम हो गई थी। डब्ल्यू जे लाट्ठस का कहना था कि उन्हे राजस्व कर उपज का छठा भाग रखने का निर्देश दिया गया था जबकि कई गाँव ऐसे थे जिनसे एक चौथाई राजस्व प्राप्त किया जा सकता था।[४१]

लाट्ठस ने नए लगान का निर्धारण ग्रामो के आधार पर न करके खेडो के आधार पर किया। गवर्नर जनरल ने भी उनके इस कदम का स्वागत किया।[४२] यह अनुभव किया गया कि पहाडियो और घाटियो के कारण ग्राम एक दूसरे से अधिक पृथक् हैं और खेडो के लोगो के एक स्थान पर जमा रहने के कारण आपसी सद्भाव और भाईचारे की भावना विद्यमान है। इसलिए लगान उनके आधार पर निर्धारित किया जाना चाहिए। यह जानते हुए भी कि इस प्रकार के पृथक्करण से लोगो से सयुक्त उत्तरदायित्व की भावना शिथिल होगी, इसे व्यावहारिक रूप दिया गया।[४३] इस पद्धति का एक लाभ यह हुआ कि पहले ग्रामो पर एक सा ही राजस्व भार था उसके बजाय विभिन्न स्तर के ग्रामो मे राजस्व की विभिन्न दरें लागू की गईं। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए, उन्होने लगान निर्धारित करने के लिए ग्रामो को अलग अलग समूहो मे विभक्त किया और इन समूहो मे कुछ आदर्श ग्राम छाटे जो आसानी से राजस्व चुकाते रहे थे। इन आदर्श ग्रामो की आय की राशि के आधार पर उन्होंने विभिन्न किस्मो की मिट्टी वाले खेतो के लिए उपयुक्त दरें निर्धारित की।[४४] उन्होंने एक सामान्य अच्छे वर्ष मे एक एकड भूमि मे प्राप्त उपज को इन दरो के निर्धारण का आधार माना।[४५] लाट्ठस द्वारा प्रयुक्त भूमि की किस्मो पर आधारित दरो की प्रक्रिया को बाद मे अन्य ग्रामो मे भी लागू किया गया जहाँ पूर्ववर्ती वर्षों के आंकडों से यह ज्ञात हो सका कि ये ग्राम निर्धारित राशि का भुगतान आसानी से कर पाने मे समर्थ हैं।[४६] अकाल के वर्ष के बारे मे खुली तौर पर यह स्वीकार किया कि "प्रस्तावित भूराजस्व वसूल नही होगा।"[४७] लाट्ठस की राय मे डिक्सन का बन्दोबस्त मौसम के विपरीत तथा मूल लगान अत्यधिक ऊँचा होने के कारण असफल रहा था। सरकार ने भी राजस्व की दरो के बारे में अपने दृष्टिकोण मे परिवर्तन की

आवश्यकता को महसूस करते हुए लाटूस को इस पर विचार करने के लिए कहा।[५८]

सिंचाई कर की समस्या का भी लाटूस ने हल निकाला। उन्होंने सिंचाई कर को राजस्व से पृथक् करके निर्धारित किया। तालाबो का वर्गीकरण उनकी सिंचाई की क्षमता के आधार पर प्रत्येक तालाब से सिंचाई कर की आय की निश्चित राशि निर्धारित कर दी गई, जो कि उस तालाब से पानी लेने वाले किसान से वसूल की जाती थी। इससे आबपाशी मे कुछ सीमा तक स्थिरता आ सकी। सम्पूर्ण अजमेर-मेरवाड़ा की आबपाशी की राशि ५५,४३२ रुपए निर्धारित की गई। तालाब से सींची जाने वाली जमीन (तालाबी) की प्रति एकड़ अधिकतम न्यूनतम व औसत दरें क्रमश. ५–५ रुपए, ३–६ रुपए व ३–८ रुपए निर्धारित की गईं। तालाबो के सूखे जाने पर उनके पेटे की जमीन जो आबी कहलाती थी उसकी दरें क्रमश १–१४ रुपए और १–६ रुपए प्रति बीघा निर्धारित की गईं।[५९]

किसान अपना लगान ग्राम के किसी भी मुखिए के माध्यम से जमा करा सकते थे। इस पद्धति के अनुसार मुखिया ग्राम का "वास्तविक प्रतिनिधि" बन गया था और सयुक्त उत्तरदायित्व की असगतियां बहुत कुछ समाप्त हो गई थी। यद्यपि उन दिनो सयुक्त उत्तरदायित्व की प्रणाली को स्थाई रूप से समाप्त नहीं किया जा सका था।[६०]

राजस्व, जिसमे आबपाशी कर भी सम्मिलित था मेरवाड़ा मे १,१८,६६१ रुपए एव अजमेर मे १,४२,८९६ रुपए निर्धारित किया गया। इस तरह दोनो जिलो को मिलाकर कुल राजस्व राशि २,६१,५५७ रुपए निर्धारित हुई। लाटूस द्वारा अजमेर-मेरवाड़ा के लिए निर्धारित सरकारी देय राशि डिक्सन के बन्दोबस्त की निर्धारित राशि से १४ प्रतिशत कम थी। सरकारी आय मे से ५ प्रतिशत लम्बरदारो के वेतन व्यय तथा १ प्रतिशत हल्का मुखिया के वेतन के रूप मे काट लिया जाता था।[६१]

लाटूस के बन्दोबस्त को दस वर्षों से बन्दोबस्त के रूप मे स्वीकार किया गया। केवल सन् १८७७ और १८७८ के सूखे के वर्षों को छोड़कर शेष वर्ष सामान्य थे। सन् १८७७ मे भी लोगो ने निर्धारित लगान की पूरी राशि अदा की थी। वास्तव में सन् १८८० से १८८४ तक केवल ६५५ रुपयो की अजमेर मे तथा ५९१ रुपयो की मेरवाड़ा में छूट दी गई।[६२]

लाटूस द्वारा निर्धारित दसवर्षी बदोबस्त की अवधि सन् १८८४ मे समाप्त हो रही थी। सन् १८८२ मे भारत सरकार ने लगान मुल्तवी और छूट की समस्याओ की ओर ध्यान दिया और यह अनुभव किया गया कि इस दिशा मे नए सिरे से विचार की आवश्यकता है। नई प्रक्रिया इतनी परिवर्तनीय न हो कि समूची कराधान व्यवस्था ही पुन नए सिरे से करनी पड़े। विशेषत भारत सरकार इस बारे

मे उत्सुक थी कि सूखे एव अनिश्चित भू-भागो मे जारी परिवर्तनीय कराधान की पद्धति परीक्षण के तौर पर एक निश्चित भू भाग मे जारी रखकर उससे प्राप्त अनुभवो के आधार पर देश मे अन्यत्र भी ऐसे भू भागो मे लागू की जाय।"[६३] इस पद्धति के अन्तर्गत प्रशिक्षित पटवारी और कानूनगो की आवश्यकता अनुभव की गई जिससे मानचित्रो और रेकॉर्ड को समय-समय पर तैयार किया जा सके।[६४]

लाटूस के बदोबस्त के बाद चूँकि कृषि भूमि मे अधिक वृद्धि हो गई थी तथा सन् १८६८ का वर्ष जिसमे कि बन्दोबस्त की दरें लागू की गईं थी अकाल का वर्ष होने के कारण लगान की दरें निर्धारित हुईं थीं इसलिए नए बदोबस्त की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। सन् १८८२ मे सरकार ने नया बन्दोबस्त करवाने का फैसला किया। इस कार्य के लिए उत्तर पश्चिमी सूबे की सरकार से एक अनुभवी अधिकारी की माग की गई। लेफ्टिनेंट गवर्नर ने इस कार्य के लिए अपने प्रात के अनुभवी बन्दोबस्त अधिकारी वाईटवे की सेवाए अजमेर को प्रदान की।[६५]

वाईटवे द्वारा प्रस्तावित सुधार

वाईटवे ने लगान निश्चित करने के लिए ग्राम को इकाई माना। तालाब अथवा कुँओ से युक्त ग्रामो तथा कुँओ की खुदाई की सम्भावना से युक्त घाटियो को इस प्रकार का क्षेत्र निर्धारित किया जिसके लगान मे घट बढ नही हो सकती थी। मेरवाडा मे सभी क्षेत्रो को उपर्युक्त श्रेणी मे रखा गया जबकि अजमेर मे १३९ ग्रामो मे से ६१ ग्रामो को इस प्रकार की श्रेणी मे रखा गया जिनके लगान मे घट बढ़ हो सकती थी। जिसे हम परिवर्तनीय क्षेत्र कह सकते।[६६]

अपरिवर्तनीय लगान वाले क्षेत्रो के कर-निर्धारण के लिए असिंचित भूमि की तीन साल की औसत उपज को कर का आधार तथा इन तीन सालो मे दो अच्छे साल और एक सूखे का साल रखा गया। इस क्षेत्र मे से लाटूस द्वारा बदोबस्त किया हुआ क्षेत्र छोड दिया गया और शेष क्षेत्रों का राजस्व असिंचित भूमि की दर पर तय किया गया। असिंचित भूमि मे १२,२७० एकड की वृद्धि पाई गई जिससे वाईटवे की व्यवस्था के अन्तर्गत राजस्व मे २७ ००० की राशि की वृद्धि निर्धारित हुई।[६७]

परिवर्तनीय लगान वाले क्षेत्रो के कर-निर्धारण के लिए, ग्रामो को दो श्रेणियो मे विभक्त किया गया—वे ग्राम जिनके कर का निर्धारण स्थाई रूप से दिया जाय तथा वे ग्राम जिनमे समयानुसार परिवर्तनशील दरें लागू होती रहे। वाईटवे महोदय ने परीक्षण के तौर पर अजमेर और मेरवाडा के कुछ ग्रामो का चयन किया और उनमे परिवर्तनशील पद्धति लागू की। परिवर्तनशील पद्धति लागू करना कठिन था क्योंकि असिंचित भूमि पर राजस्व की दरें बहुत कम थीं। इसके अतिरिक्त परिवर्तनशील पद्धति किसी पहाडी ग्राम मे लागू भी नहीं की जा सकती थी क्योंकि उनमे कृषि

भूमि सदा उतनी ही बनी रहती थी और सामान्य वर्षों में भी अजमेर-मेरवाडा मे फसलों की उपज सतोषजनक ही होती थी। यहाँ खेतो की मेड बांध कर उनमे वर्षा का जल रोका जाता था। पुष्कर तहसील को भी परिवर्तनशील लगान-पद्धति मे से हटा देना पडा क्योकि मिट्टी के टीलो के खेतो मे बिखरने से जमीन के उपजाऊ-पन मे वृद्धि होकर अच्छी फसलें होती थी, विशेषत गन्ना और बाजरा। असिंचित भूमि अधिकांशतः अजमेर के भगवाना, राजगढ और रामसर चकलो मे थी। परिवर्तनशील पद्धति के परीक्षण के तौर पर, वाईटवे ने अजमेर मे २६ गाँव तथा ब्यावर के १७ गाँव छाटे।[६८] उनके द्वारा अपनाया गया सिद्धात यह था कि निर्धारित राशि और पिछले बदोबस्त के समय की लगान-दरो को अपरिवर्तित रहने दिया जाय इनमे कुँओ से युक्त वे भूखण्ड नहीं थे जिन्हें सरकार ने लोगो को प्रदान किए थे।[६९]

वाईटवे ने यह सिफारिश की कि वह सारी भूमि जो कि कुँओ व नाडी से सीची जाती है और जो लाटूम के बन्दोबस्त के समय थी उनसे आवपाशी पर लगान दर वसूल किया जाय। दो फसली भूमि के लिए उन्होने यह सुझाव दिया कि उन भूमि मे जो कुँओ से सिंचित होती है और जिससे दो फसलें ली जाती हैं उनसे प्रथम फसल पर पूरी दर वसूल की जानी चाहिए और दूसरी फसल पर एक चौथाई ज्यादा वसूल होनी चाहिए। जिस भूमि पर एक फसल वर्षा से होती है और दूसरी सिंचाई से वहाँ कर की वसूली दोनो दरो के अनुसार होनी चाहिए।[७०] असिंचित दो फसली भूमि के लिए उन्होने सुझाव दिया कि उससे दोनो फसलो पर एक ही लगान वसूल किया जाना चाहिए।[७१] भारत सरकार ने वाईटवे महोदय को यह सलाह दी थी कि जिले के ग्रामों को तीन श्रेणियो मे विभाजित किया जाना चाहिए—

१. निर्धारित स्थाई लगान वाले ग्राम।

२. परिवर्तनीय लगान वाले ग्राम।

३ वे ग्राम जिनमे अशत स्थाई और अशतः परिवर्तनीय लगान लागू हैं।[७२]

क्षेत्र की भौगोलिक बनावट एव वर्षा की अनिश्चितता के कारण किसी भी जोतदार के पास सम्पूर्ण जोत कदाचित् ही सिंचित जोत रही होगी। उसकी जोत मे असिंचित कृषि भूमि का समावेश था जिसकी उपज नाममात्र थी। वाईटवे ने किसी भी ग्राम को अशत. स्थाई और अशत. परिवर्तनीय लगान वाले क्षेत्र की श्रेणी मे नहीं विभाजित किया जबतक कि उस ग्राम की प्राकृतिक बनावट से ऐसे दो स्पष्ट भाग न झलकते हों।[७३]

वाईटवे ने अपनी रिपोर्ट में कहा "मैने जो व्यवस्था प्रस्तावित की है, इसके अनुसार ग्राम का लगान असिंचित भूमि वाली दरों से सम्बन्ध रखता है जो भविष्य

में मूल्यों मे वृद्धि होने पर बढाया जा सकता है ताकि सरकार को उचित लगान प्राप्त हो सके। साथ ही भविष्य मे कभी लगान मे परिवर्तन की आवश्यकता अनुभव किए जाने पर उसमे परिवर्तन किया जा सकता है। यह परिवर्तन केवल सामान्य कृषि भूमि मे वृद्धि पर ही निर्भर करेगा और इसके फलस्वरूप लगान मे भी स्वाभाविक वृद्धि हो सकेगी।" वाईटवे के अनुसार इस व्यवस्था की अच्छाई यह थी कि सरकार और किसान दोनो को अच्छी फसलो के लाभ प्राप्त होते थे और संकट के दिनों मे दोनो को ही हानि उठानी पडती थी।[७४]

भीषण अकाल या प्राकृतिक कोप के दिनो के लिए उन्होंने यह सुझाव दिया कि कमिश्नर को ऐसे अधिकार प्राप्त होने चाहिए जिनके अन्तर्गत वह असिंचित भूमि की औसत फसल को "शून्य", 'चौथाई' या "आधी उपज" के रूप मे घोषित कर सके। ऐसे मामलो मे सिंचित भूमि का लगान उतना ही रहना चाहिए, परन्तु यदि फसल "आधी" घोषित की जाती है तो चार एकड असिंचित भूमि को दो एकड के तुल्य और यदि फसल "एक चौथाई" घोषित होती है तो एक एकड को "शून्य" के बराबर मानकर लगान नही लिया जाना चाहिए।[७५]

परिवर्तनीय लगान की उनकी पद्धति निम्नांकित उदाहरणो से जो स्वय वाईटवे ने प्रस्तुत किए हैं, आसानी से समझी जा सकती है—

"अमुक ग्राम मे यह निश्चित किया गया है कि निम्नांकित भूमि सामान्यत जोत-भूमि मे है —

एकड		प्रति एकड़ रुपए मे	कराधान रुपए मे
असिंचित	१२४	–।१० आने	७७।८
आबी	४०	१।९	६२।८
तालाब	८	२।१३	२२।८
कुँए	५०	३।१२	१८७।८
	२२२		३५०–

इस क्षेत्र को असिंचित इकाई के बहुअंश में घटाने पर जिसकी कि आबी दरें असिंचित की अढाई गुणी, तालाबी साढे चार गुणी और कुँओ से सिंचित भूमि की लगान दरें ६ गुणी होती हैं। असिंचित क्षेत्र के रूप में लिए जाने पर उपरोक्त क्षेत्र इस प्रकार होगा —

	एकड़	
अंसिंचित	१२४	१=१२४
चाही	४०	२½=१००
तालाबी	८	४½=३६
कुँओं वाली	५०.	६ =३००
		५६०

उन्होंने यह भी विश्लेषण किया कि यह उपर्युक्त ५६० एकड़ "अंसिंचित क्षेत्र" कहलाएगा और दस आना प्रति एकड़ के हिसाब से अंसिंचित दर द्वारा गुणित किए जाने पर इससे ३५० रुपए का राजस्व प्राप्त होगा।[७६]

अंसिंचित क्षेत्र में प्रतिवर्ष हेरफेर होता था अतएव भूराजस्व भी प्रतिवर्ष घटता-बढ़ता रहता था। वाईटवे के अनुसार यह स्थिति टल सकती थी यदि अंसिंचित दरें एक विशेष सीमा तक ही परिवर्तित की जाए। वाईटवे का कहना था कि हम यह मान सकते हैं कि अमुक ग्राम के मामले में उपरोक्त सीमा पौने नौ आने तक की है और सवा ग्यारह आने तक अच्छी फसल के दिनों की दरें हैं तो उपरोक्त दर पूर्व दर तक बढ़ सकती है और अकाल के दिनों में बाद की दर तक घटाई जा सकती है। इससे वह लगान भी प्रभावित नहीं होगा जिसके बारे में हम मानते हैं कि अंसिंचित भूमि इकाई की मानक दर दस आना है।[७७]

उपरोक्त बन्दोबस्त बीस वर्षों के लिए निर्धारित किया गया था, तथापि इसकी अवधि समाप्त होने के दिनों में सरकार ने इसमें कुछ विशेष संशोधन किए। ये संशोधन मुख्यतः परिवर्तनशील लगान वाले ग्रामों के बारे में थे। परिवर्तनशील लगान की प्रक्रिया लोकप्रिय नहीं हुई और सरकार ने समय-समय पर परिवर्तनशील लगान के स्थान पर निश्चित लगान लागू किया। सन् १८६५ में, राजस्व के विलम्बन और छूट के बारे में विशेष नियम निर्धारित किए गए। इन नियमों के अन्तर्गत जो व्यवस्था लागू की गई वह इतनी लाभप्रद रही कि अकाल एवं प्राकृतिक संकट के समय, छूट के मामले में अविलम्ब कार्यवाही की जा सकी थी।[७८]

अजमेर मेरवाड़ा में किसानों को राहत पहुँचाने की परम्परा सी चली आ रही थी। जो भी किसान अपनी जमीन पर कुँए आदि खुदवाकर विकास करता था, उस पर उस बन्दोबस्त तथा आगामी बन्दोबस्त के दौरान बढ़ी हुई दरें लागू नहीं की जाती थी। यही प्रक्रिया तकावी ऋण और अन्य निजी कर्जों द्वारा विकास कार्यों पर भी लागू होती थीं। इस्तमरारदारी जमींदारियों में बढ़ी दरों का भार तत्काल लागू कर दिया जाता था और वहाँ इन पर कर निर्धारण से छूट की अवधि किसी भी सूरत में आठ साल से अधिक नहीं होती थी। कुछ भार तो

धिकार के पहले वर्ष ही लागू कर दिया जाता था। इतने कड़े नियमों के बावजूद भी इस्तमरारदारी किसान खालसा क्षेत्र के किसानों की तुलना में अधिक समृद्ध थे जबकि खालसा भूमि के किसान उन दिनों भारी कर्ज में डूबे हुए थे। ऋण-प्राप्ति कानून की पेचीदगी और जमानत सम्बन्धी बड़े कड़े नियमों के कारण खालसा भूमि के किसान सन् १८८३ के एक्ट १९ के अन्तर्गत ऋण के लिए प्रार्थनापत्र देना बहुधा पसंद नहीं करते थे।[७४]

यद्यपि खालसा-भूमि में भूप्राप्ति निर्धारित करने का काम कम समय में संतोषजनक ढंग से पूरा हो गया था तथापि राजस्व को स्थाई आधार प्रदान करने की समस्या वैसी ही बनी रही। मराठों ने यहाँ नाममात्र का भी बन्दोबस्त नहीं किया था। विल्डर (१८१८-२४) व मिडलटन (१८२४-२७) ने, जो कि यहाँ अंग्रेजी शासन के प्रारम्भ में अधिकारी नियुक्त हुए थे इस क्षेत्र की गरीबी का सही ज्ञान न होने के कारण कुछ समृद्ध वर्षों के आंकडों व मराठों द्वारा उगाई गई रकम पर विश्वास करने के कारण राजस्व की राशि बहुत ऊँची निर्धारित की थी। केवेंडिश के सुधारों ने राजस्व प्रशासन को कुछ व्यवस्थित रूप दिया था। एडमस्टन दस वार्षिक बन्दोबस्त जो अजमेर-मेरवाडा के अंग्रेजी शासन के अन्तर्गत आने के बाद प्रथम व्यवस्थित बन्दोबस्त था लोकप्रिय नहीं हुआ, क्योंकि उसमें निर्धारित संयुक्त उत्तरदायित्व की प्रणाली के प्रति किसानों में उत्साह का अभाव था।

कर्नल डिक्सन कलाट्स का बन्दोबस्त दस वर्षों के लिए लागू किया गया था। बन्दोबस्त सम्बन्धी कतिपय समस्याओं को गम्भीरता से नहीं लेने के कारण अधिक सफल नहीं रहा। व्हाईटवे महोदय ने भी इस दिशा में सुधार लाने में महत्व-पूर्ण योगदान दिया, परन्तु बार-बार अकाल का होना, कम उपजाऊ भूमि और वर्षा की अनिश्चितता के कारण अजमेर-मेरवाडा में लगान की निर्धारित वार्षिक राशि की वसूली अच्छे और बुरे दोनों ही मौसम में सन्तोषप्रद नहीं हो सकी।

अध्याय ३

१ जे डी लाटूस—'सेटलमेंट रिपोर्ट अजमेर-मेरवाडा' पृ २६ (१८७४)
२ उपरोक्त।
३ असिस्टेंट कमिश्नर द्वारा कमिश्नर अजमेर को पत्र, संख्या २९८१ दिनांक ६ अगस्त, १९०६।
४ जे डी लाटूस— 'सेटलमेंट रिपोर्ट अजमेर मेरवाडा" पृ २७ (१८७४)

५. उपरोक्त पृ. २७ (१८७४)

६. सुपरि. एफ. विल्डर द्वारा मेजर जनरल सर डेविड ऑक्टरलोनी को पत्र, दी अजमेर, राजस्व कार्यालय, २७ सितम्बर, १८१८ (रा रा पु मण्डल)।

७. जे डी लाटूस—"सेटलमेंट रिपोर्ट अजमेर-मेरवाड़ा" पृ २७ (१८७४)।

८. उपरोक्त।

९. उपरोक्त।

१०. बी एच. बॉडन पावेल "ए मेन्यूअल ऑफ दी लैंड रेवेन्यू सिस्टम एण्ड लेण्ड टेन्योर्स ऑफ ब्रिटिश इण्डिया" पृ ५२६-३८।

११. जे. डी. लाटूस—"सेटलमेंट रिपोर्ट अजमेर-मेरवाड़ा" पृ २७ (१८७४)

१२. उपरोक्त।

१३. श्री एफ विल्डर द्वारा मेजर जनरल सर डेविड ऑक्टरलोनी को पत्र दिनाक २७-९-१८१८ (रा. रा पु. म)

१४ श्री विल्डर सुपरि. अजमेर द्वारा मेजर जनरल सर डेविड ऑक्टरलोनी रेजीडेंट दिल्ली को पत्र दिनाक २७-९-१८१८ "सरकारी भूमि का प्रस्तावित राजस्व इस वर्ष लगभग १,४४,००० शेरशाही रुपए होगा। यह रकम उससे कही अधिक होगी जो बापू सिंधिया को प्राप्त हुआ करती थी और साथ ही हम इस व्यवस्था मे अपने भावी बन्दोबस्त को लागू करने मे सर्वोत्तम आधार लागू कर सकेंगे और बिना लोगो को असतुष्ट किए दिनोदिन अधिक राजस्व प्राप्त हो सकेगा। मुझे जो विभिन्न किसानो की सख्या उनके हल, कुंए बैलो के विभिन्न लेखे प्राप्त हुए हैं उनके अनुसार भावी राजस्व आज के उदार आकडो की तुलना में कही अधिक प्राप्त होगा। मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह राशि तीन या चार सालो मे आसानी से दुगुनी हो जाएगी और इस्तमरार परगने भी हमारी व्यवस्था में सौंपे जाए तो मुझे विश्वास है कि जो राशि अभी कूती गई है अर्थात् २,६७,७६२ रुपए इसी तरह बढ़ कर हमारे राजस्व मे जुड़ सकेंगे।"

१५ श्री विल्डर सुपरि अजमेर द्वारा मेजर जनरल सर डेविड ऑक्टरलोनी, रेजीडेन्ट दिल्ली को पत्र दिनाक १८ फरवरी, १८२०।

१६. श्री एफ विल्डर, सुपरि. अजमेर ने सर डेविड ऑक्टरलोनी रेजीडेन्ट दिल्ली को पत्र (दिनाक २७-९-१८१८) लिखा कि भूमि की बनावट किस्म (इस सूबे की) के बारे मे यह कहा जा सकता है कि वह रेतीली होने के बावजूद अच्छी और अत्यधिक उपजाऊ है और दो फसलें पैदा की जा सकती

हैं तथा ऐसा शायद ही कोई ग्राम होगा जिसमे कुँए नहीं हो और उनमें पानी २० या ३० फीट से अधिक गहरा हो। यहाँ की जमीन चना और जौ की फसलो के लिए अधिक उपयुक्त है।

१७. जे. डी लाटूस "सैटलमेट रिपोर्ट अजमेर-मेरवाडा" पृ. २०।

१८ श्री फासिस हाक्जिन्स रेजिडेन्ट मालवा व राजपूताना द्वारा पत्र क्रमाक ५३, दिनाक १२-२-१८२३ रा (रा पु मण्डल) लाटूस—गजेटियर्स अजमेर-मेरवाडा (१८७५) पृ. ६३।

१६. सर डेविड ऑक्टरलोनी द्वारा एच मैकेंजी, सचिव भारत सरकार को पत्र दिनाक ६-१-१८२५ (रा रा पु. म)।

२०. लाटूस-सेटलमेन्ट रिपोर्ट अजमेर-मेरवाडा, पृ ७१ (१८७४)।

२१. उपरोक्त, पृ ७१ और ७२।

२२ केवेंडिश का पत्र दिनाक १० मई, १८२३ (रा रा. पु म)।

२३ श्री केवेंडिश द्वारा रेजीडेन्ट को पत्र दिनाक २६ अप्रेल, १८२६।

२४. व्यक्तिगत जोत को कूतने की व्यवस्था। खेवटदारी व्यवस्था के नाम से जानी जाती थी।

२५ श्री केवेंडिश सुपरि अजमेर द्वारा केलबुक रेजीडेन्ट मालवा व राजपूताना को पत्र दिनाक १० व १२ जुलाई, १६२६ (रा. रा पु. म)।

२६. सचिव भारत सरकार का फासिस हाकिंस रेजीडेन्ट मालवा व राजपूताना को पत्र, क्रमाक ७४ दिनाक ६-२-१८३० (रा रा पु. म)।

२७ जे. डी. लाटूस "सेटलमेट रिपोर्ट अजमेर-मेरवाडा" (१८७४) पृ ७२-७३।

२८ उपरोक्त, पृ ७४।

२६ एडमस्टन-सेटलमेट रिपोर्ट, दिनाक २६ मई, १८३६ (रा रा. पु म)।

३० उपरोक्त।

३१ अकाल के दिनो मे अन्य प्रदेशो को भाग जाने वाले 'फरार' व खेती छोड कर शारीरिक श्रम से मजदूरी कमाने वाले 'नादर' कहलाते थे।

३२. लाटूस—'सेटलमेट रिपोर्ट अजमेर मेरवाडा" (१८७४), पृ. ७५।

३३. सी सी वाट्सन राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटीयर्स, अजमेर-मेरवाडा, १-ए (१६०४), पृ १२।

३४. उपरोक्त पृ. १३।

३५ उपरोक्त पृ. १३।

३६ कर्नल डिक्सन द्वारा डब्ल्यू म्यूर सचिव उ प्र सरकार, आगरा, क्रमांक २६५ (१८५६) रा रा पु म।

३७ फाइल क्रमांक १८३, कमिश्नर कार्यालय, भूमि प्रशासन, राजस्व बन्दोबस्त और सर्वे बन्दोबस्त रेकॉर्ड, प्राचीन क्रम 'बी' १८५०-१८५२, (रा. रा पु म)।

३८ उपरोक्त।

३९ फाइल क्रमांक 'बी' ३। ५ प्रा १८५० से १८५२ अजमेर सेटलमेंट रिपोर्ट, कर्नल डिक्सन (रा रा पु म)।

४०. कर्नल डिक्सन द्वारा जे थार्टन सचिव उ प्र सू. सरकार को पत्रसंख्या २७८, १८५० दिनांक २७ ९ १८५०।

४१ लाट्स-सेटलमेंट रिपोर्ट अजमेर मेरवाड़ा (१८७४) पृ १०४।

४२ पत्र संख्या १५८, १८५२। कर्नल डिक्सन द्वारा डब्ल्यू म्यूर उ प्र. सूबा सरकार को पत्र संख्या १५८, १८५१ (रा रा पु म)।

४३ जे डी लाट्स 'सेटलमेंट रिपोर्ट अजमेर मेरवाड़ा" (१८७४) पृ ७८।

४४ जे सी ब्रुक्स द्वारा पत्र दिनांक २४ जुलाई, १८५८।

४५ डेविड्सन द्वारा मेजर ईडन कार्यवाहक कमिश्नर अजमेर को पत्र संख्या १४६ फाइल क्रमांक १४४५ (रा रा पु म)।

४६ उपरोक्त।

४७ लायड डिप्टी कमिश्नर अजमेर द्वारा मेजर ईडन कार्यवाहक कमिश्नर को पत्र दिनांक ७-१२-१८५६ (रा रा पु म)।

४८ सॉडर्स कमिश्नर अजमेर द्वारा ब्रुक्स चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाड़ा को पत्र दिनांक ८-११-१८७१ (रा रा पु म)।

४९ एचिसन सचिव भारत सरकार, परराष्ट्र विभाग द्वारा कार्यवाहक चीफ कमिश्नर अजमेर को पत्र, दिनांक २८ अक्टूबर, १८७१ (रा रा पु म)।

५० उपरोक्त।

५१ लाट्स द्वारा सॉण्डर्स कमिश्नर अजमेर को पत्र दिनांक १६-४-१८७२ फाइल क्रमांक १६३, पृ ८।

५२ ब्रुक्स-कार्यवाहक चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाड़ा द्वारा एचिसन सचिव भारत सरकार परराष्ट्र विभाग को पत्र दिनांक १३-२-१८७२ व परराष्ट्र

हैं तथा ऐसा शायद ही कोई ग्राम होगा जिसमें कुँए नहीं हो और उनमें पानी २० या ३० फीट से अधिक गहरा हो। यहाँ की जमीन चना और जौ की फसलो के लिए अधिक उपयुक्त है।

१७ जे. डी लाटूस 'सैटलमेट रिपोर्ट अजमेर-मेरवाडा" पृ. २०।

१८ श्री फासिस हाकिन्स रेजीडेन्ट मालवा व राजपूताना द्वारा पत्र क्रमाक ५३, दिनाक १२-२-१८२३ रा (रा पु मण्डल) लाटूस–गजेटिर्स अजमेर-मेरवाडा (१८७५) पृ. ६३।

१९. सर डेविड ऑक्टरलोनी द्वारा एच मेकेंजी, सचिव भारत सरकार को पत्र दिनाक ६-१-१८२५ (रा रा पु. म)।

२०. *लाटूस-सेटलमेन्ट रिपोर्ट अजमेर-मेरवाडा, पृ ७१ (१८७४)।*

२१ उपरोक्त, पृ ७१ और ७२।

२२ केवेंडिश का पत्र दिनाक १० मई, १८२३ (रा रा. पु म)।

२३ *श्री केवेंडिश द्वारा रेजीडेन्ट को पत्र दिनाक २९ अप्रेल, १८२९।*

२४ व्यक्तिगत जोत को कूतने की व्यवस्था। खेवटदारी व्यवस्था के नाम से जानी जाती थी।

२५ श्री केवेंडिश सुपरि अजमेर द्वारा केलबुक रेजीडेन्ट मालवा व राजपूताना को पत्र दिनाक १० व १२ जुलाई, १८२६ (रा रा पु. म)।

२६. सचिव भारत सरकार का फासिस हाकिंस रेजीडेन्ट मालवा व राजपूताना को पत्र, क्रमाक ७४ दिनाक ६-२-१८३० (रा रा पु. म)।

२७ जे. डी. लाटूस "सेटलमेट रिपोर्ट अजमेर-मेरवाडा" (१८७४) पृ. ७२ ७३।

२८ उपरोक्त, पृ ७४।

२९ *एडमस्टन-सेटलमेट रिपोर्ट, दिनाक २६ मई, १८३६ (रा रा. पु म)।*

३० उपरोक्त।

३१ अकाल के दिनों मे अन्य प्रदेशो को भाग जाने वाले 'फरार' व खेती छोड कर शारीरिक श्रम से मजदूरी कमान वाले 'नादर' कहलाते थे।

३२ लाटूस—'सेटलमेट रिपोर्ट अजमेर मेरवाडा" (१८७४), पृ ७५।

३३. सी सी वाट्सन राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटीयर्स, अजमेर-मेरवाडा, १-ए (१९०४), पृ १२।

३४ उपरोक्त पृ. १३।

३५ उपरोक्त पृ. १३ ।

३६. कर्नल डिक्सन द्वारा डब्ल्यू म्यूर सचिव उ प्र सरकार, आगरा, क्रमांक २६५ (१८५६) रा रा पु. म ।

३७ फाइल क्रमांक १८३, कमिश्नर कार्यालय, भूमि प्रशासन, राजस्व बन्दोबस्त और सर्वे बन्दोबस्त रेकॉर्ड, प्राचीन क्रम 'बी' १८५०-१८५२, (रा. रा पु म)।

३८ उपरोक्त ।

३९ फाइल क्रमांक 'बी' ३ । ५ प्रा १८५० से १८५२-अजमेर सेटलमेंट रिपोर्ट, कर्नल डिक्सन (रा रा पु म) ।

४०. कर्नल डिक्सन द्वारा जे थार्टन सचिव उ प्र सू. सरकार को पत्रसंख्या २७८, १८५० दिनांक २७ ६-१८५० ।

४१ लाटूस-सेटलमेंट रिपोर्ट अजमेर मेरवाड़ा (१८७४) पृ १०४ ।

४२ पत्र संख्या १५८, १८५२ । कर्नल डिक्सन द्वारा डब्ल्यू म्यूर उ प्र. सूबा सरकार को पत्र संख्या १५८, १८५१ (रा रा पु म) ।

४३ जे. डी. लाटूस 'सेटलमेंट रिपोर्ट अजमेर मेरवाड़ा" (१८७४) पृ ७८ ।

४४ जे सी ब्रुक्स द्वारा पत्र दिनांक २४ जुलाई, १८५८ ।

४५ डेविड्सन द्वारा मेजर ईडन कार्यवाहक कमिश्नर अजमेर को पत्र संख्या १४६ फाइल क्रमांक १४४५ (रा रा पु म) ।

४६ उपरोक्त ।

४७ लायड डिप्टी कमिश्नर अजमेर द्वारा मेजर ईडन कार्यवाहक कमिश्नर को पत्र दिनांक ७-१२-१८६९ (रा. रा पु म) ।

४८ सॉडर्स कमिश्नर अजमेर द्वारा ब्रुक्स चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाड़ा को पत्र दिनांक ८-११-१८७१ (रा रा पु म) ।

४९ एचिसन सचिव भारत सरकार, परराष्ट्र विभाग द्वारा कार्यवाहक चीफ कमिश्नर अजमेर को पत्र, दिनांक २८ अक्टूबर, १८७१ (रा रा पु म) ।

५० उपरोक्त ।

५१. लाटूस द्वारा सॉन्डर्स कमिश्नर अजमेर को पत्र दिनांक १६-४-१८७२ फाइल क्रमांक १९३, पृ ८ ।

५२ ब्रुक्स-कार्यवाहक चीफ कमिश्नर अजमेर मेरवाड़ा द्वारा एचिसन सचिव भारत सरकार परराष्ट्र विभाग को पत्र दिनांक १३-२-१८७२ व परराष्ट्र

विभाग का पत्र क्रमांक ३७७ दिनांक २८ अक्टूबर, १८७१, अनुच्छेद ३ ।

५३ सान्डर्स कमिश्नर द्वारा ब्रुक्स चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाड़ा को पत्र दि. २३ अप्रेल, १८७२ (रा रा पु म) ।

५४ सेटलमेंट रिपोर्ट १८७४ ।

५५ लाट्रूस द्वारा सान्डर्स कमिश्नर अजमेर मेरवाड़ा को १६ अप्रेल, १८७२ (रा रा पु म) ।

५६. उपरोक्त ।

५७ सेटलमेंट रिपोर्ट १८७५ ।

५८ लाट्रूस द्वारा सॉन्डर्स कमिश्नर अजमेर-मेरवाड़ा को पत्र दिनांक १६ अप्रेल, १८७२ (रा० रा० पु० म०) ।

५६ सी० सी० वाट्सन, राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटीयर्स, खण्ड १–ए (१६०४) अजमेर–मेरवाड़ा, पृष्ठ ५४० ।

६०. बाडेन पावेल—' ए मेन्यूअल आफ दी लेन्ड रेवेन्यू सिस्टम एण्ड लेंड टेन्योरस ऑफ इंडिया" पृष्ठ ५४० ।

६१. सी० सी० वाट्सन, राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटीयर्स, खण्ड १–ए, (१६०४) अजमेर–मेरवाड़ा, पृष्ठ २२ ।

६२ उपरोक्त, पृष्ठ २३ व ब्रुक्स कार्यवाहक चीफ कमिश्नर द्वारा एचिसन सचिव भारत सरकार परराष्ट्र को पत्र, दिनांक १२ जून, १८७२ ।

६३ सचिव, भारत सरकार का चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाड़ा को पत्र दि० ६ अक्टूबर, १८८७ (रा० रा० पु० म०) ।

६४. उपरोक्त (रा० रा० पु० म०) ।

६५. सी० सी० वाट्सन, राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटीयर्स, खण्ड १–ए (१६०४) पृष्ठ २३–२४ ।

६६ उपरोक्त ।

६७ उपरोक्त ।

६८ आर० एस० व्हाईटवे द्वारा एल० एस० सॉन्डर्स कमिश्नर अजमेर–मेरवाड़ा को पत्र दिनाक ११ जुलाई १८८४ (रा० रा० पु० म०) ।

६६. एच० एम० ड्यूरोंड सचिव, भारत सरकार द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाड़ा को पत्र दिनांक १८८०, फाइल क्रमांक २२ ।

७०. वाईटवे, बन्दोबस्त अधिकारी अजमेर-मेरवाड़ा द्वारा सॉडर्स कमिश्नर अजमेर-मेरवाड़ा को पत्र दिनांक १६ जून, १८८५ (रा० रा० पु० म०)।

७१. उपरोक्त ।

७२ उपरोक्त ।

७३ वाईटवे, बन्दोबस्त अधिकारी अजमेर-मेरवाड़ा द्वारा कमिश्नर अजमेर को पत्र, दिनांक १६ जनवरी, १८८६ (रा० रा० पु० म०)।

७४. उपरोक्त ।

७५. उपरोक्त ।

७६. उपरोक्त ।

७७. उपरोक्त ।

७८. सी० सी० वाट्सन राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटीयर्स, खण्ड १–ए (१६०४) अजमेर-मेरवाड़ा, पृष्ठ २६–२७ ।

७९. कमिश्नर, अजमेर-मेरवाड़ा द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाड़ा को पत्र, दिनांक २७ फरवरी, १८६१ (रा० रा० पु० म०)।

५

इस्तमरारदारी व्यवस्था

अजमेर-मेरवाड़ा मे भूमि की व्यवस्था पड़ोसी राजपूत रियासतो जैसी ही थी। भूमि सामान्यत दो भागो मे विभक्त थी—तालुकेदारी और खालसा। तालुकेदारी भूमि वह थी जो अधिकांशत जागीरदारो के पास ठिकानो के रूप मे थी। इन ठिकानो के अधिपति यद्यपि आरम्भ मे अपने राजाओ व सरदारो की सैनिक सेवा के लिए बाध्य थे तथापि कालांतर म इस प्रथा का स्थान इस्तमरारदारी प्रथा ने ले लिया था। राजस्थान मे राज्य का अनादिकाल से भूमि पर वास्तविक स्वामित्व चला आ रहा था। राज्य ने जिन सामतो को ठिकाने प्रदान किए वे भी अपनी प्रजा पर राज्य जैसे अधिकारों का प्रयोग किया करते थे।[1]

कर्नल टॉड ने राजस्थान की सामत-व्यवस्था की व्याख्या एक ऐसी व्यवस्था के रूप मे की है जो समाज के सभी तत्वो पर छाई हुई रहती है। उन्होने इसकी यूरोप की मध्यकालीन सामत-प्रथा से तुलना की है।[2] यह हो सकता है कि यूरोप मे इन मध्यकालीन राज्यो और राजस्थान में सामन्तो के मध्य परम्पराओ एव प्रथाओ की कुछ समानता हो, परन्तु इस आधार पर दोनो को एक मान लेना अथवा उनमें से एक को दूसरे की अनुकृति कहना अनुचित है। यह हो सकता है कि दोनो के स्वरूप में कुछ समानता हो, परन्तु यह समानता केवल ऊपरी ही है।[3]

ये अपने स्वामित्व के आधार एव प्राप्ति की प्रक्रिया मे एक दूसरे से भिन्न थे। फलस्वरूप इन ठिकानो मे विभिन्न प्रथाए और परम्परागत अधिकार प्रचलित

ये जो ठिकाने की सेवाओं और सहयोग के आधार पर प्रदान किए गए थे। इन ठिकानेदारों का यह कर्तव्य था कि वह अपने स्वामी की सेवा करेंगे और स्वामी का यह कर्तव्य होता था कि उन्हें सुरक्षा प्रदान करेंगे। यदि इनमें से कोई भी ठिकानेदार इन नियमों का उल्लघन करता तो उसका ठिकाना जब्त कर लिया जाता था। आपसी सहयोग ही एकमात्र ऐसी आधारशिला प्रतीत होती है, जिस पर सामंत-व्यवस्था टिकी हुई थी।[४]

अजमेर के ठिकानेदार

अजमेर के ठिकानेदारों को भी राजपूताना की रियासतों के जागीरदारों के समान विशेष अधिकार प्राप्त थे।[५] ये ठिकाने भी प्रारम्भ में सेवाओं के आधार पर प्रदान किए गए थे तथा कई सामंत व्यवस्थाओं से प्रतिबंधित थे। कर्नल टॉड के अनुसार ये ठिकाने सीधे उत्तराधिकारी को वंश परम्परागत भोग के लिए जीवनपर्यन्त प्राप्त हुआ करते थे और सीधे उत्तराधिकारी के अभाव में राजा द्वारा स्वीकृत गोद लिए व्यक्ति को विरासत में मिला करते थे। किसी भी अपराध या अयोग्यता की स्थिति में सरकार इन ठिकानों को छीन सकती थी। नए उत्तराधिकारी से नजराना प्राप्त करने के पश्चात् ही राजा उसे जागीर ग्रहण करने देता था। सभी तथ्य इस बात पर प्रकाश डालते हैं कि इन ठिकानों को राज्य जब चाहे तब पुनः ग्रहण (जब्त) करने में समर्थ था।[६] अजमेर के अधिकांश ठिकानों के भोग की स्थिति वही थी जो कर्नल टॉड द्वारा वर्णित है। यद्यपि ये ठिकाने ठिकानेदार को उसके जीवनकाल के लिए प्रदान किए जाते थे व मृत्यु के पश्चात् इनके खालसा किए जाने की व्यवस्था थी परन्तु कालान्तर में ये वंशपरम्परागत बन गए थे।[७]

अजमेर में अंग्रेजों के आगमन के समय इस सामन्त व्यवस्था के अन्तर्गत ७० ठिकानेदार तथा चार छोटे ठिकानेदार थे जो "इस्तमरारदार" कहलाते थे। इनमें से ६४ ठिकाने राठौडों के, १ सिसोदियों का, १ गौड राजपूत और ४ चीतों के पास थे। इन ठिकानों में से १९८ गाँवों से फौज खर्च वसूल किया जाता रहा था और ७१ गाँवों पर यह कर लागू नहीं था। ये ठिकाने प्रारम्भ में जागीरें थीं, जो कि सैनिक सेवाओं के उपलक्ष में प्रदान की गई थीं। ठिकानेदार, जिसे कि ये प्रदान की गई थीं उसकी मृत्यु पर ये राज्य (जिसने प्रदान किए थे) द्वारा अपने हाथ में लिए जा सकते थे परन्तु दूसरी जागीरों के समान बाद में ये भी वंशपरम्परागत हो गई थीं। अजमेर के ये ठिकाने, सम्पूर्ण मुगलकाल, अल्पकालीन अर्थ स्पष्ट नहीं है। जोधपुर रियासत के राज्य-काल में व मराठों के शासन-काल में मौजूद थे।[८]

अजमेर के अधिकांश ठिकानों की 'बख्शीश' के मूल कारणों का ज्ञात करना अत्यन्त कठिन है क्योंकि कई मामलों में मूल बख्शीशदाता व मूल प्राप्तकर्ता के नाम और जिन आधारों पर ये ठिकाने दिए गए थे उनका प्रमाण उपलब्ध नहीं होता

है। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रारम्भ मे इनमे से कुछ जागीरें गुहिलो, चौहानो तथा राठोडो के द्वारा दी गई थी। मुगलो द्वारा मनसबदारी प्रथा[९] के अन्तर्गत सैनिक सेवाओ के उपलक्ष मे भी कुछ जागीरें प्रदान की गई थी। भिनाय,[१०] सावर,[११] जूनिय,[१२] मसूदा[१३] पीसागन[१४] के ठिकानेदार मुगलो के मनसबदार थे। इनमे से भिनाय ठिकाना सबसे पुराना था। जहाँ तक पद और प्रतिष्ठा का प्रश्न है, भिनाय के बाद द्वितीय स्थान मसूदा ठिकाने का है। राठोडो के पास जो ठिकाने थे उनमे अधिकाश औरगजेब द्वारा तत्कालीन जोधपुर महाराजा जसवतसिंह के कारण उनके सबधियो और मित्रो को प्रदान किए गए थे।[१५]

मुगल काल मे ये ठिकाने मनसबदारी प्रथा के अन्तर्गत दिए जाते थे तथा ठिकानेदारों को सम्राट की फौज के लिए एक निश्चित सख्या मे घुडसवार प्रदान करने पडते थे। मुगल शासको ने मनसबदारो को निरन्तर बदलते रहने की परम्परा रखी थी ताकि ये लोग अधिक शक्तिशाली न बन सकें। उनकी (जागीरदार की) मृत्यु के साथ ही जागीर और मनसब स्वतः सम्राट की हो जाती थी। यदि मुगल साम्राज्य एक ताकत के रूप में कायम रहता तो वर्तमान ठिकानेदारो के पूर्वज कभी के इन ठिकानो से हटा दिए गए होते।[१६] मुगल काल मे अजमेर के ये ठिकाने बराबर बने रहे। मुगल साम्राज्य के पतन के बाद अजमेर का सूबा जोधपुर महाराजा के आधिपत्य मे चला गया था। इस काल मे अधिकाश ठिकाने दूसरे लोगो से बलपूर्वक छीन कर राठोडो को दे दिए गए थे।[१७] इन ठिकानेदारो का प्रारम्भ आज सही तौर पर बतलाना कठिन है। सभवत इनमे से अधिकाश के पूर्वज इस क्षेत्र के

मराठों को इन जागीरदारो की सैनिक सेवाओ की आवश्यकता नही थी । उन्हे हमेशा धन की बहुत आवश्यकता रहती थी । फलस्वरूप उन्होने इन जागीरो पर निर्धारित घुडसवारो की सख्या के आधार पर नगद राशि सैनिक सेवा समाप्त कर थोप दी थी । मराठो की नीति विभिन्न मदो के अन्तर्गत अपने राजस्व मे वृद्धि करने की रही थी । उनके समय मे लगान एव भूधृति के कोई निश्चित प्रक्रिया एव सिद्धान्त नही थे । फलस्वरूप छोटे-छोटे ठिकानेदारो और जागीरदारो पर बडे ठिकानो की तुलना मे यह भार अधिक था क्योकि बडे ठिकानेदारो की शक्ति को देखते हुए उनसे विरोध मोल लेने व इन पर हाथ डालने का मराठो का भी साहस नही होता था ।[१९]

मराठा शासन-काल मे परिवर्तन

मराठों की एक नीति थी 'जितना लिया जा सके ले लो' इन ठिकानेदारो मे जो शक्तिशाली थे, उनके प्रति मराठो का दूसरो की अपेक्षा थोडा बहुत पक्षपात भरा दृष्टिकोण रहता था । ये लोग अपना वार्षिक कर इच्छानुसार घटा बढा लेते थे । इन पर लगाए जाने वाले उपकर भी निश्चित नही थे तथा हैसियत के अनुसार बदलते रहते थे । इन करो की वसूली व निर्धारण का मापदण्ड मौसम की अनुकूलता, ठिकानेदार की परिस्थिति, उसकी शक्ति उसका अपने सम्बन्धियो पर प्रभाव व साथ ही सूबेदार से उसकी मित्रता पर अधिक निर्भर करता था । इन दो मुख्य करो को छोडकर ये 'अमल जामा' और 'फौज खर्च' कहलाते थे, मराठों ने अन्य कई उपकर लागू कर रखे थे तथा इनकी सख्या घटने के बजाय बढती ही रहती थी । मराठों ने ठिकानेदारी मे एकदम कोई आधारभूत परिवर्तन नही किया था । उन्होने केवल विभिन्न मदो के अन्तर्गत राजस्व मे वृद्धि की नीति अपनाई थी । मुगलो की अपेक्षा मराठो की व्यवस्था इन ठिकानेदारो के अधिक हित मे थी क्योकि मुगलो के शासन में ठिकाने छिनने का यह भय सदा बना रहता था परन्तु मराठाकाल मे यह भय नही था ।[२०]

मराठो ने अजमेर के ठिकानो के स्वरूप मे सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तन यह किया कि उन्होने उनके द्वारा प्रदत्त सैनिक सेवाओ के उपलक्ष मे नगद भुगतान का आधार स्थापित किया । उपर्युक्त प्रथा के अन्त के साथ ही वह सामन्ती प्रक्रिया भी समाप्त हो चली जिसके अन्तर्गत ठिकानेदार और ठिकानो के वास्तविक स्वामी एक दूसरे से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित होते थे । इसम ठिकानो पर राज्य के नियन्त्रण की प्रक्रिया निर्जीव हो चली थी ।[२१] मुगलो के काल म इन ठिकानो की बख्शीश की प्रथा का आधार सैनिक सेवा था और सम्भवत यह व्यवस्था जोधपुर नरेश महाराजा अजीतसिंह के शासनकाल मे भी प्रचलित थी । सन् १७५४ मे मराठों ने इस व्यवस्था से छुटकारा पा लिया और इसके विकल्प म उन्होने वार्षिक कर को आधार बनाया । यह राजस्व समय समय पर स्थानीय अधिकारियो की इच्छानुसार घट बढ

कर आंका जाता रहा, परन्तु सन् १८०८ या १८०९ के लगभग मराठो ने "असल जामा" को कम दर पर स्थाई करने का प्रयास किया था। उन्होने यह भी निर्णय लिया था कि भविष्य मे इसके अतिरिक्त राजस्व वृद्धि अन्य करो या उपकरों के रूप मे अलग से वसूल की जानी चाहिए। मराठो द्वारा लिए गए इस निर्णय का कारण कदाचित् यह रहा होगा कि कालातर मे कभी इस सूबे को जोधपुर रियासत को लौटाना पड सकता था या अन्य किसी परिवर्तन की स्थिति मे इन करो व उपकरो को आसानी से माफ किया जा सकता था, जबकि इन्हें असली "जामा सम्मिलित करने पर यह सभव नही हो सकता था। सन् १८०८ से लेकर १८१८ तक अजमेर से तातिया और बापू सिंधिया ने ३,४५,७४० रुपए की राशि वसूल की जिसमे से २,१०,२८० रुपए की राशि असल जमा के तौर पर थी और शेष विभिन्न करो एव उपकरो से प्राप्त हुई थी। मराठा शासनकाल मे अजमेर मे इस प्रकार के लगभग ४० कर एव उपकर प्रचलित थे।[२२]

अंग्रेज और इस्तमरारदार

मराठो ने कभी भी अपने अधीन ठिकानों के आतरिक मामलो मे हस्तक्षेप नहीं किया। उनकी मुख्य इच्छा धन बटोरने की थी। उन्होने जागीरदारो को भूमि का स्वामी माना और किसानो को पूर्णतया उनकी दया पर छोड दिया। प्रजा के अधिकार, परम्पराओ और उनके हितो की मराठो ने अवहेलना की जिसके फलस्वरूप ठिकानेदारो का अपने ठिकाने मे रहने वाली जनता पर स्वामित्व व असीमित अधिकार स्थापित हो गए थे। केवल इतना ही नही इन लोगो ने ठिकानो की प्रजा पर अनेक अनुचित कर एव उपकर थोप दिए थे जिन्हे स्थानीय बोली मे 'लाग बाग' कहा जाता था।[२३]

अंग्रेजो ने इसमे परिवर्तन नही किया। सन् १८४१ तक ठिकानेदार अतिरिक्त कर वसूल करते रहे क्योकि वे इसे असली 'जामा' का अग समझते थे। यद्यपि उनकी वसूली अलग से पृथक् मुद्दे के अन्तर्गत की जाती थी। अंग्रेज सरकार भी कई वर्षों तक इन ठिकानो से वह सारी राशि वसूल करती रही, जो इनसे मराठे वसूल करते थे, क्योकि अतिरिक्त करो से प्राप्त राशि सम्पूर्ण जिले के राजस्व की तीन चौथाई थी और इसके छोड देने से अत्यधिक आर्थिक हानि होती थी। अंग्रेजों ने इस्तमरारदारों को भूमिपति के रूप मे स्वीकार नहीं किया था। सरकार ने इन्हें तालुकेदार माना जो सरकार के साथ आधे राजस्व के उपयोग के अधिकारी थे। यह विशेषाधिकार वशपरम्परागत था, परन्तु इसे किसी को बेचा नही जा सकता था और न किसी को भेंट या बख्शीश मे प्रदान किया जा सकता था।[२४]

अंग्रेजों ने ठिकानो के स्वरूप की सामान्य जानकारी प्राप्त किए बिना ही अजमेर के ठिकानेदारो को इस्तमरारदार मान लिया था। अजमेर के ठिकानेदार

इसके पूर्व कभी भी निश्चित त्याग कर के अधिकारी नही रहे थे, जबकि इस्तमरारदार शब्द के सकीर्ण अर्थ में यह अधिकार अतर्निहित होता है। अंग्रेजो ने इनके आय के भाग को निश्चित कर इनका नवीन नामकरण किया जिन्हे इस्तमरारदार कहते हैं। ये ठिकाने जिन भोग व्यवस्थाओं के आधार पर आरम्भ मे प्रदान किए गए थे, उनके बारे मे कुछ भी निश्चित नहीं किया जा सका क्योकि सरकार को प्राप्त अधिकाश सनदें जाली थीं। थोडी बहुत जो सच्ची सनदें सामने भी आईं, उनसे यह स्पष्ट ज्ञात होता था कि अजमेर इस्तमरारदारों द्वारा भोगी जाने वाली भूमि या तो जागीरी की थी या जीवनपर्यन्त भोग के आधार पर प्रदान किए गए ठिकाने थे। उनके आधार पर इन्हें इस्तमरारदार नहीं ठहराया जा सकता था।[२६]

अंग्रेज अपने शासन के प्रारम्भिक दिनो मे अजमेर में प्रचलित विभिन्न भूधृति प्रक्रियाओ को ठीक तरह से समझ नही सके थे। यदि वे इसका सम्पूर्ण अध्ययन करके निर्णय लेते तो वे भी ठीक मराठो की तरह प्रतिवर्ष या पाच व दस साल में लगान वृद्धि के हिस्से का अश इन ठिकानो से लेने की व्यवस्था लागू करते। अंग्रेजो ने अपने प्रारम्भिक काल से ही इन ठिकानेदारो को इस्तमरारदार स्वीकार कर लिया था। जिसकी वजह से बाद मे इसमे किसी तरह का सशोधन अत्यन्त कठिन हो गया था। बाद मे किसी भी सशोधन या परिवर्तन से इन ठिकानेदारो मे स्थानीय अधिकारियो के प्रति ही नही बल्कि अंग्रेजो के प्रति भी असतोष की भावना उत्पन्न हो सकती थी। किसी भी परिवर्तन को लागू करना नितान्त आवश्यक होने पर भी इस बात की सतर्कता रखी जाती थी कि परिवर्तन धीरे धीरे एव सामान्य रूप से लागू किया जाए। किसी भी इस्तमरारदार के निधन पर उसके पुत्र को उत्तराधिकारी स्वीकार करते समय बहुधा उससे सशोधन स्वीकार करने को कहा जाता था। इस दिशा मे अंग्रेजो के समक्ष केवल दो ही विकल्प थे एक तो स्थिति को यथावत् जारी रखना, अथवा पुरानी प्रक्रिया मे सशोधन करने पर अपने प्रति इन ठिकानेदारो के तीव्र असतोष का सामना करना। अंग्रेज शासन के आरम्भिक दिनो मे यह सकट झेलने को तैयार नहीं थे। अतएव उन्होने स्थिति को यथावत् बनाए रखना एव यथा समय सुझाव के रूप मे परिवर्तन लाने का मार्ग ही ग्रहण किया।[२७]

अजमेर के इस्तमरारदारों ने अपने अधिकारों को भूमिपतियो के रूप मे अन्य लोगों की अपेक्षा सबसे अधिक दृढता से प्रस्तुत किए, जबकि उन्हें भूमिपति के वास्तविक अधिकार कभी भी प्राप्त नही हुए थे। केवेन्डिश की यह मान्यता थी कि जबतक किसी न्यायालय द्वारा इस सम्बन्ध मे उचित निर्णय प्राप्त नही हो जाता है, तबतक के लिए अजमेर के ठिकानेदारो को भविष्य मे सिर्फ जमीदार ही माना जाए।[२८]

इन इस्तमरारदारो की वैधानिक स्थिति अंग्रेजों की नजरो मे सदैव सदेहास्पद रही थी। विल्डर के अनुसार एक भी इस्तमरारदार अपने दावे के प्रमाणस्वरूप

विश्वसनीय सनद प्रस्तुत करने में सफल नहीं हुआ था। विल्डर को तो यह संदेह था कि इनके पास शायद ही ऐसी कोई सनद रही होगी क्योंकि सभी ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि अराजकता के दौरान उनकी सनदें नष्ट हो गई अथवा खो गई थी।[२६]

अजमेर में इस्तमरारदारी प्रथा का स्वरूप वर्षों के लम्बे पत्र व्यवहार के पश्चात् कहीं जाकर निश्चित हो सका था। अजमेर के लगभग सभी अंग्रेज अधिकारियों ने इस संदर्भ में गवर्नर जनरल को अपने अपने दृष्टिकोण प्रस्तुत किए थे क्योंकि सरकार पूरी जानकारी के बाद ही किसी अंतिम निर्णय पर पहुँचना चाहती थी। स्थानीय अंग्रेज अधिकारियों के विभिन्न प्रयासों के बावजूद भी यहाँ इस्तमरारदारी व्यवस्था का कोई निश्चित एवं वैधानिक स्वरूप सही ढंग से निर्धारित करने में सफलता नहीं मिल सकी। अंग्रेजों को भी यही नीति अपनानी पड़ी कि इन तालुकेदारों का अस्तित्व किसी न्यायसंगत आधार की अपेक्षा वर्तमान स्वरूप के आधार पर ही स्वीकार कर लिया जाए।[३०]

इन इस्तमरारदारों की पुश्तैनी एवं वैधानिक स्थिति के संबंध में सबसे पहली रिपोर्ट अजमेर के प्रथम सुपरिटेंडेंट विल्डर ने प्रस्तुत की थी। उनके अनुसार ये ठिकाने इस्तमरारदारी या निश्चित राजस्व के आधार पर शताब्दियों से इनको प्राप्त थे। इस तथ्य के बावजूद उनका सुझाव था कि अंग्रेज सरकार को इन्हें इनसे ले लेना चाहिए ताकि अंग्रेज प्रशासन का लाभ सामान्य जनता को सुलभ हो सके। विल्डर के मतानुसार इन जागीरदारों का अपने अधीनस्थ भूमि पर स्वामित्व का दावा अस्पष्ट था क्योंकि इनमें से एक भी इस संदर्भ में विश्वसनीय सनद या प्रमाण प्रस्तुत करने में असमर्थ रहा था। इनका दीर्घकालीन अधिकार ही एकमात्र उनके दावे का आधार था। विल्डर इन ठिकानेदारों का राजस्व के इतने बड़े भाग पर स्वामित्व स्वीकार करने के पक्ष में नहीं थे। इसलिए उन्होंने यह सुझाव दिया था कि यदि ये ठिकानेदार अपने ठिकाना की व्यवस्था अंग्रेजों के हाथ सौंपने को तैयार नहीं हैं तो इनसे प्राप्त भू राजस्व में वृद्धि की जानी चाहिए अन्यथा जिले से प्राप्त राजस्व धीरे-धीरे घटकर नाममात्र का रह जाएगा।[३१]

सर डेविड ऑक्टरलोनी ने भी इन इस्तमरारदारों के दावों पर विचार करते समय यह अनुभव किया था कि इन दावों के साथ सरकार के हितों का मेल बैठाने के लिए किसी प्रकार की व्यवस्था स्थापित करना आवश्यक है। फलस्वरूप, उन्होंने इन इस्तमरारदारों की गत दस वर्षीय आय के आँकड़ों का अध्ययन इस दृष्टिकोण से किया कि यदि इन ठिकानों की व्यवस्था अंग्रेजी प्रशासन अपने हाथ में ले तो उचित मुआवजा कितना देना चाहिए। उनकी यह मान्यता थी कि यदि ये लोग अपने अधिकार के प्रमाण स्वरूप सनदें अथवा अन्य तथ्य प्रस्तुत करने में असमर्थ हैं तो

इनकी भूमि को लिया जा सकता है। ऑक्टरलोनी तत्कालीन व्यवस्था मे परिवर्तन के प्रबल इच्छुक थे और इन ठिकानेदारो द्वारा किसी भी तरह के परिवर्तन के विरोध को अनुचित समझते थे। उनका यह भी मत था कि ऐसे मामलो में कोई भी सरकार अन्य सरकारो द्वारा प्रदत्त अधिकारो को मानने या उन्हे यथावत् जारी रखने के लिए बाध्य नही होती है।[32]

परन्तु अंग्रेजी शासनकाल के प्रारम्भिक दिनो मे सरकार का दृष्टिकोण यह था कि सरकार को भूमिधारको को प्रमाणस्वरूप सनदें प्रस्तुत करने मे असमर्थ होने पर भी इस्तमरारदार मान लेना चाहिए क्योंकि सदियो से ठिकाने पर इनका अधिकार चला आ रहा था। तत्कालीन भारत सरकार इन ठिकानो से प्राप्त राजस्व की राशि उनके द्वारा अर्जित लाभ के अनुपात में प्राप्त करना चाहती थी। सरकार का यह भी दृष्टिकोण था कि इन ठिकानो के कर-निर्धारण मे वृद्धि की जा सकती है। सरकार ने भावी राजस्व के निर्धारण के लिए नए आधार प्रस्तुत करना इसलिए भी अत्यन्त आवश्यक समझा क्योंकि वर्तमान निर्धारित राशि से सरकार को भारी आर्थिक हानि उठानी पडती थी। यदि इन्हे ठिकानो का वास्तविक स्वामी स्वीकार कर लिया जाता तो सरकार इनके दस वर्ष के लाभ के औसत को अपनी भावी मांग का आधार मान सकती थी। वर्तमान लाभ के आधार पर सरकार का विचार इन्हें सम्पूर्ण लाभ से वंचित करने का नही था। यदि इन्हे भूस्वामी स्वीकार नही किया जाता तो इन्हे अपनी भूमि की व्यवस्था से मुक्त करना अत्यन्त कष्टदायक काम था। इन्हे अपनी भूमि से वंचित करने के लिए भी मुआवजे का आधार निश्चित करने का प्रश्न था। मुआवजे के आधार के लिए भी गत दस वर्षों के विकास कार्यों व कृषि-भूमि मे वृद्धि से प्राप्त लाभ को दृष्टिगत रखकर ही निर्णय लिया जा सकता था। सरकार ने यह भी मत प्रकट किया था कि यदि इस्तमरारदारो को रखा जाता है तो जनता के संरक्षण के लिए भी सरकार को कदम उठाना आवश्यक होगा ऐसा करने मे चाहे राजस्व के कुछ अंशो से वंचित ही क्यों न होना पडे। सरकार एक तरफ जनता के व्यक्तिगत अधिकारो को सुरक्षित रखना चाहती थी और दूसरी तरफ इन पूर्ववर्ती सरकारो द्वारा प्रदान किए गए इन ठिकानो को भी।[33]

इस संदर्भ मे विल्डर के पत्र व्यवहार से यह ज्ञात होता है कि ये ठिकानेदार उनके राजस्व मे किसी भी तरह की जांच के विरोध मे थे। स्पष्टत उनके इस दृष्टिकोण के फलस्वरूप अंग्रेज सरकार केवल इतना ही ज्ञात कर सकी कि ये ठिकानेदार जो अभी इन ठिकानो पर अधिकार किए हुए हैं प्राचीनकाल से वंशपरम्परागत रूप मे उपभोग कर रहे थे।[34] विल्डर के पत्र इस आशय पर कुछ प्रकाश डालते हैं कि इन भूस्वामियों के पास कितनी जमीन थी और वे सरकार को उसकी उपज का कितना भाग दिया करते थे और पुनर्ग्रहण व अन्य करों द्वारा इसमे कितनी वृद्धि

संभव थी।[३५] विल्डर का यह मत था कि इस मामले मे पैमाइश ही सही निर्णायक सिद्ध हो सकती है यद्यपि यह तथाकथित विशेषाधिकारो का उल्लंघन था। इस्तमरारदारो ने आरम्भ में इसका कड़ा विरोध भी किया परन्तु बाद मे उन्हें इसकी स्वीकृति देनी पड़ी।[३६]

यद्यपि विल्डर इन ठिकानेदारो की आय के आकड़े प्राप्त करने म सफल नहीं हुए तथापि वे बिना किसी भारी अड़चन के इन ठिकानो की भूमि की पैमाइश का काम पूरा कर सके थे। वे इस निर्णय पर पहुचे कि आरम म इन ठिकानेदारों की जितनी आय अनुमानित थी, उमस कहीं अधिक वे प्राप्त करते है। विल्डर की यह मान्यता थी कि इन ठिकानो को यथास्थिति में बनाए रख कर भी सरकार के राजस्व मे भारी वृद्धि की सभावना है।[३७]

विल्डर के स्थानातरण के पश्चात् उनके स्थान पर नियुक्त मिडलटन को इन इस्तमरारदारो से, जो सामान्यत कर्ज में डूबे हुए थे, सरकारी राजस्व वसूल करने में बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ा था। उन्होंने भी यह मान्यता प्रकट की थी कि इन ठिकानेदारो के अधिकारा की वैधानिकता मे सदेह इसलिए नहीं किया जा सकता क्योकि अग्रेजो की पूर्ववर्ती सरकारो ने भी इन्हे यथास्थिति मे रहने दिया था और इन ठिकानेदारो को अपने अधिकारो से वचित नही किया था।[३८] केवेंडिश को उनकी भूमि-व्यवस्था, सम्पत्तिया, उनके अधिकार, विशेषाधिकार तथा उनके कर्तव्य के बारे म विस्तृत विवेचन सरकार को प्रस्तुत करने का कार्य सौंपा गया था।[३६] कई घरानो के इतिहास की छानबीन के बाद केवेंडिश इस निष्कर्ष पर पहुचे कि मराठों ने सनद और पट्टो की कभी परवाह नही की और उन्होने प्रत्येक ठाकुर की हैसियत के अनुसार उससे धन राशि वसूल की थी। उन्होने अपनी रिपोर्ट मे भी इस बात का उल्लेख किया है कि अग्रेज सरकार को भी अपने पूर्ववर्ती शासको द्वारा उदाहरण का पालन करना चाहिए।[४०]

केवेंडिश ज्यो ज्यो इस सदर्भ मे गहरे उतरते गए उन्ह पूर्ण विश्वास होता गया कि अग्रेजों को यह अधिकार है कि वे अपनी इच्छानुसार इन पर नया राजस्व लागू कर सकते हैं। यद्यपि उन्होने यह अवश्य प्रकट किया कि कृषि के विस्तार एव विकास के प्रोत्साहन स्वरूप यह आवश्यक होगा कि एक नियमित व व्यवस्थित प्रभार लागू किया जाए। उन्होने सुझाया कि इस दिशा मे सबसे अधिक लाभप्रद व्यवस्था यह होगी कि ठिकानेदार की अर्जित आय की राशि मे से आठ आना हिस्सा सरकार का हो। इस दिशा मे वे यह चाहते थे कि सरकार अपना स्तर मराठा शासन के अंतिम वर्ष को निर्धारित करे। केवेंडिश महोदय का यह दृष्टिकोण था कि यदि सरकार आरम्भ से ही इस्तमरारदारियो की व्यवस्था को सही अर्थो मे ग्रहण करती तो उसे राठो की तरह प्रति पाच या दस वर्षो मे अपने प्रभारो मे ठिकानेदार की अर्जित आय

हित में है। उन्होंने इसी उद्देश्य से वर्तमान व्यवस्था को ठिकानेदारो के जीवनपर्यंत यथावत् लागू रखने का सुझाव दिया। वर्तमान ठिकानेदार के निधन के पश्चात् नये उत्तराधिकार के समय इस व्यवस्था मे परिवर्तन लाया जाए। उन्होंने न्यूनतम प्रहितकारी कदम को ही चुना जो तत्कालीन प्रथा के जारी रखने के पक्ष मे था।[४२]

केवेंडिश की राय म इस्तमरारदारो का अपने अधीनस्थ ठिकानो पर न तो कोई दावा और न कोई अधिकार ही सिद्ध हो सकता था। क्योकि वे यहा के मूल निवासी नहीं थे और न ही इस भूमि पर प्रारम्भ से ही उनका अधिकार था। यद्यपि इन लोगो में से अधिकाश का अधिकार दो सौ वर्षों से अधिक प्राचीन नही था तो भी मराठो ने उनके भू स्वामी मानकर उनके आतरिक मामलो मे कभी हस्तक्षेप नही किया। उन्होंने अपनी रिपोर्ट म इस बात का भी उल्लेख किया है कि इस्तमरारदारों द्वारा अपनी प्रजा से जो फौज खर्च वसूल किया जाता था, उसे बद करने पर प्रजा को जितना लाभ नही पहुचेगा उससे कही अधिक इस्तमरारदारो मे असतोष फैलेगा। केवेंडिश के मतानुसार मराठो ने प्रमुख ठिकानेदारों को ही राजस्व के लिए जिम्मेदार ठहराया था।[४३]

केवेंडिश की जाच रिपोर्ट पर भारत सरकार के अधिकारियो ने गभीर विचार-विमर्श किया। भारत सरकार के लिए यह सतोष का विषय था कि इस जाच रिपोर्ट के आधार पर वे इन ठिकानो से राजस्व वसूली मे अभिवृद्धि करने के लिए वैधानिक रूप से समर्थ थे। सरकार ने इस बात को स्वीकार कर लिया कि ठिकानो की अर्जित आय मे सरकार का हिस्सा राजस्व का आधा भाग होगा परन्तु कही भी यह आश्वासन नही दिया गया कि सरकार ठिकानेदारो को स्वामित्व के अधिकार प्रदान करने के पक्ष मे है।[४४] सरकार केवल इनके वशपरम्परागत राजस्व वसूली के अधिकार स्वीकार करने को तत्पर थी। सरकार की यह मान्यता थी कि उन्हे ठिकानो को बेचने का अधिकार नही है।[४५] भारत सरकार ने इन ठिकानो मे अपना राजस्व आधा निर्धारित किया।[४६] छोटे और बडे ठिकानदारों के बीच राजस्व के सबध मे कोई भेदभाव नही रखा।[४७] सरकार ने यह भी निर्णय किया कि यह ठिकानों के आंतरिक शासन म हस्तक्षेप नही करेगी।[४८] सरकार की यह मान्यता थी कि ठिकानेदारो को किसानों को उनकी जमीन से बेदखल करन का अधिकार नही है तथा किसानों का उनकी जमीन व मकान पर पैतृक हक होना चाहिए।[४९]

इस्तमरारदार सरकार द्वारा उनकी आय सबधी जाच के विरोध मे थे। ठिकानेदार अबतक अपने ठिकानों की व्यवस्था बिना किसी हस्तक्षेप के किया करते थे

कर्नल सदरलैंड ने अपनी रिपोर्ट मे यह स्पष्ट रूप से कहा कि ये अतिरिक्त कर उन किसानो पर विशेप आर्थिक भार डाल रहे हैं जिनके अधिकारो एव हितो की अग्रेज सरकार सरक्षक बनी हुई है। यह राशि जनता को ही देनी पडती है।[५७] इन अतिरिक्त करो का भार किसान पर निर्धारित 'हासिल' से अधिक होता है जो कि किसान के सामर्थ्य के बाहर है। इन करो को वसूल करने के लिए ठिकानेदार द्वारा प्रत्येक घर पर अतिरिक्त कर लागू किए जाते थे और उनके न देने पर जुर्माना व जब्ती की व्यवस्था थी। प्रत्येक ठिकानेदार ने फौज खर्च को चुकाने के लिए कई तरह के कर अपने ठिकानो मे लागू कर रखे थे। इस परिस्थिति के लिए अग्रेज सरकार ही जिम्मेदार थी क्योकि जनता पर यह सब भार ठिकानेदार सरकार के अतिरिक्त करो के कारण डालते थे। सदरलैंड का कहना था कि इन करो की वजह से किसान को इस बात का कभी ज्ञान ही नही हो पाता था कि उसे राजस्व कर क्या देना है? उनके अनुसार इन करो की वसूली के कारण एक ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई थी जिसमे शक्तिशाली निर्बल को आसानी से कुचल सकता था और इन जागीरो व इस्तमरारियो मे किसान को न्याय मिलना सभव नही था, क्योकि इस मामले मे सरकारी अधिकारी भी किसी तरह की किसानो को सहूलियत पहुचाने मे असमर्थ थे क्योकि यह रकम सरकार के करो के कारण ही ठिकानेदार किसानो से वसूल करते थे। खालसा क्षेत्र म यह प्रथा बहुत पहले ही समाप्त कर दी गई थी।[५८]

सदरलैंड की यह मान्यता थी कि मराठो के द्वारा थोपे गए इन अतिरिक्त करो को समाप्त करना इस्तमरारदार और किसान दोनो को एक बहुत बडी राहत पहुचाना होगा। इन करो को कायम रखना वे अग्रेज सरकार के लिए अशोभनीय मानते थे। उनका कहना था कि जिस दिन ये समाप्त कर दिए जाए उस दिन जनता मे खुशी की लहर दौड जाएगी।[५९]

सदरलैंड के अनुसार भारत के अन्य किसी भी प्रदेश म अग्रेजो का सम्पर्क राजपूताना जैसे जागीरदारो से नही हुआ था। जोधपुर रियासत में सैनिक सेवा के उपलक्ष मे जागीरदारो के पास चालीस लाख प्रतिवर्ष की आय की जागीरें थी जबकि राज्य उसमे से केवल बीस लाख की राशि उनसे वसूल करते थे। उदयपुर रियासत मे राज्य इन जागीरदारो से फसल का छठा भाग ही ग्रहण करता था। सदरलैंड का कहना था कि अजमेर की जनता एव इस्तमरारदारो से बीस वर्षों तक मराठो ने फौज खर्च हमेशा जबरदस्ती वसूल किया था। इस सम्पूर्ण काल मे इस अनुचित कर का निरतर विरोध होता रहा था। इसकी वसूली भी बडी कठिनाई से हो पाती थी। इस कर ने समाज के सभी वर्गों को गरीबी और आर्थिक सकट मे डाल दिया था। सरकार यदि अपनी माँग केवल 'मामला' तक सीमित करदे तथा ठिकानेदारो की सहमति से अतिरिक्त कर की व्यवस्था करे तो व सरकार को हर कठिन समय मे इस अतिरिक्त भुगतान द्वारा मदद करते रहेगे। इससे अजमेर का सामत वर्ग पनप भी

सकेगा। इस व्यवस्था से निश्चित वसूली सम्भव हो सकेगी तथा समय-समय पर बढ़ाया जाती या कर लगाने का प्रश्न ही नहीं उठेगा।[१०]

सदरलैंड के मत से जेम्स थाम्पसन, सचिव भारत सरकार, सहमत नहीं थे। उन्होंने इस बात को स्वीकार नहीं किया कि इस्तमरारदार सामान्य रूप से परेशानी एवं विशेष संकट में से गुजर रहे हैं।[११] थाम्पसन की मान्यता थी कि फौज खर्च न तो अनुचित ही है और न इसके भार से किसी की विशेष स्थिति पर कोई बुरा प्रभाव पड़ा है। उनके अनुसार इस्तमरारदार वे हर किसी अधिकृत दस्तावेज पर आधारित नहीं थे। उनके अधिकारों के समर्थन में वे कोई दस्तावेज पेश नहीं कर पाए और न कभी ऐसे अधिकार अस्तित्व में ही थे। उन पर सरकारी लगान की राशि सदा ही एक पक्षीय एवं परिवर्तनशील व स्वेच्छाचारी सरकार की मर्जी पर आधारित रही थी। मराठा सरकार की सामान्य नीति निश्चित कर-निर्धारण की नहीं थी, वे मनचाही रकम स्थिति के अनुसार वसूल करते रहते थे। थाम्पसन के अनुसार अंग्रेजों ने मराठों से सत्ता प्राप्त करने के बाद जहां तक सम्भव हो सका इन सभी करों को एक निर्धारित व निश्चित रूप देने का प्रयास किया था। उनका कहना था कि यहां कोई ऐसी परम्परा नहीं जिसकी जिसके आधार पर अर्थात् सम्पूर्ण अतिरिक्त करों को माफ कर अपनी मांग 'जमा' तक सीमित करदें।[१२] उन्होंने यह बहुत स्पष्ट कहा कि मराठों द्वारा वसूल किए जाने वाले विभिन्न करों एवं चुंगी की राशि अंग्रेजों की कुल मांग से कहीं अधिक थी। थाम्पसन ने इस बात की ओर भी ध्यान आकर्षित किया कि अंग्रेजों ने फौज खर्च के अतिरिक्त मराठों द्वारा आरोपित सभी करों को समाप्त कर दिए थे। फौज खर्च की राशि भी निश्चित कर दी गई थी जिसमें पिछले तेईस वर्षों में किसी तरह की वृद्धि नहीं की गई व यह रकम मराठों द्वारा वसूल किए जाने वाली वार्षिक राशि के अनुपात में बहुत कम थी।[१३] इन आधारों पर लेफ्टिनेंट गवर्नर ने सरकार की १८३० में निर्धारित नीति में किसी तरह का संशोधन अस्वीकार कर दिया। थाम्पसन के अनुसार सरकार को अजमेर के तालुकेदारों से वृद्धिगत लगान को वसूल करने का अधिकार था और यह सन् १८३६ में गवर्नर जनरल द्वारा स्वीकार कर लिए जाने के कारण वे इस पर पुनर्विचार की आवश्यकता अनुभव नहीं करते थे।[१४]

सन् १८४१ में कई तालुकेदारों ने फौजखर्च के अत्यधिक भार के प्रति शिकायत की व अपने प्रार्थना पत्र में उन्होंने लिखा कि वे इससे अत्यधिक पीड़ित हैं क्योंकि यह फौजखर्च 'मामला' राशि के अनुपात में भी कहीं ज्यादा है।[१५] इस पर लेफ्टिनेंट गवर्नर का यह मत था कि 'मामला' के अनुपात में फौजखर्च की राशि लागू नहीं थी व औसतन फौजखर्च 'मामला' राशि के पचास प्रतिशत से कुछ ही अधिक था। जेम्स थाम्पसन ठिकानेदारों की दुर्दशा का कारण फौजखर्च को नहीं मानते

थे। उनका कहना था कि अगर अधिक लगान ठिकानेदारों की परेशानी के कारण है तो फौजखर्च समाप्त कर देने से वह कैसे दूर हो सकेगी। ठिकानेदार चूँकि सरकारी लगान की राशि गत २३ वर्षों मे नियमित रूप से देते रहे थे इसलिए वे इसे भी अधिक नहीं मानते थे।[६६] थाम्पसन ठिकानेदारों की गिरी हुई आर्थिक स्थिति का मूल कारण उनकी फिजूल खर्ची की आदत को मानते थे।[६७]

इस तरह अंग्रेजों की 'प्रशासनिक सेवा' के तीन प्रमुख अधिकारियों ने अंग्रेजों द्वारा फौजखर्च असूल करने की नीति की कड़ी निंदा की थी। इन में से दो विल्डर और केवेंडिश का मत था कि राजस्व निश्चित नियमों के आधार पर ही वसूल किया जाना चाहिए।[६८]

सन् १८३४ के पश्चात् सरकार को इस प्रश्न पर जो रिपोर्ट प्रस्तुत की गई उसमे एक नया मोड़ आया। एडमस्टन ने भी जनता के कष्टों का कारण फौजखर्च को ठहराया। उनके मतानुसार समूची प्रजा को लगान के भार से लाद दिया गया था और सभी फौजखर्च को उनके 'जामा' मे समाहित कर देने से असतुष्ट थे। मराठा-काल मे फौज खर्च स्थाई-कर नहीं था। यह अतिरिक्त कर यदाकदा आवश्यकता पड़ने पर सरकार सकटकाल में लोगों पर लागू करती थी और उसका ठिकाने की हैसियत से कोई सबध नहीं था। अंग्रेजों ने इसे 'जामा' मे समाहित कर सदा के लिए स्थाई कर का स्वरूप दे दिया था। इसलिए ठिकानों की आर्थिक स्थिति के ह्रास का यह एक मूल कारण माना जाने लगा। अतएव इसकी समाप्ति पर जोर दिया जाने लगा। सुपरिटेंडेंट लेफ्टिनेंट मावनाटन अपने दृष्टिकोण मे पूर्ववर्ती अधिकारियों की अपेक्षा कहीं अधिक स्पष्ट थे। उन्होने ठिकानेदारों की गिरी हुई हालत के लिए सरकार की फौजखर्च से सबधित नीति को ठहराते हुए कहा कि ऐसा लगता है कि व्यवस्था मे कहीं कोई गभीर भूल रह गई थी। कर्नल आल्विस ने भी सन् १८३५ से लेकर १८३९ तक अपने द्वारा लिखे गए सभी पत्रों म "फौजखर्च" को ही आर्थिक कठिनाईयों का कारण माना।[६९]

कर्नल आल्विस की यह स्पष्ट राय थी कि मराठों द्वारा थोपे गए ये अतिरिक्त कर अनुचित थे और अजमेर के लिए अभिशाप साबित हुए थे।[७०] उनके अनुसार अधिकाश अधिकारीगण इनको समाप्त करने के पक्ष म थे।[७१]

लेफ्टिनेन्ट गवर्नर की यह स्पष्ट राय थी कि अंग्रेज सरकार ने प्रारम्भ से ही दुहरी एव उलझन भरी कर-नीति अपनाई।[७२] विल्डर ने इस्तमरारदारियों की भूमि के पुनर्ग्रहण का सुझाव दिया था। यदि प्रारम्भ से ही इस नीति को अगीकार कर लिया जाता तो इस स्थिति को आसानी से सुलझाया जा सकता था। एक तरफ तालुकेदारों को स्वतत्र रूप मे ठिकाने का स्वामी मानने और दूसरी तरफ उन पर करों के भार को लादने की नीति मे विरोधाभास था। उनकी राय से सरकार का इस प्रश्न

पर सन् १८३० का आदेश असंगत था। इन आदेशों ने तालुकादारों को एक ओर तो मालगुजारों की सी स्थिति प्रदान की और दूसरी तरफ उनके ठिकानों में साधारण हस्तक्षेप भी स्वीकार नहीं किया था।[७३] लेफ्टिनेंट गवर्नर के अनुसार अंग्रेजों का अजमेर में उद्देश्य पड़ोसी रियासतों के सम्मुख एक आदर्श प्रशासन प्रस्तुत करना था परन्तु जो नीति अंग्रेजों ने अपनाई उसके कारण वे अपने उद्देश्य की प्राप्ति में असफल रहे थे।[७४]

लेफ्टिनेंट गवर्नर को बाध्य होकर यह स्वीकार करना पड़ा कि कर्नल सदरलैंड का मत राजनीतिक एवं आर्थिक दृष्टिकोण से उपयुक्त था। यद्यपि इस प्रस्तावित कदम से सरकार को राजस्व में कुछ नुकसान उठाना पड़ा। उन्होंने इस बात का भी विशेष उल्लेख किया कि नसीराबाद स्थित सैनिकों में प्रस्तावित कमी की जाने पर जो बचत होगी उससे राजस्व की उपरोक्त कमी की पूर्ति की जा सकेगी।[७५]

अंग्रेजों ने वे सब अतिरिक्त कर सन् १८४१ में समाप्त कर दिए जिन्हें अबतक वसूल करते रहे थे। अजमेर में जागीरदार इस प्रकार अंग्रेज सरकार द्वारा इस्तमरारदार के रूप में स्वीकार कर लिए गए। सरकारी राजस्व एक सदी पूर्व मराठों द्वारा निर्धारित लगान के बराबर निश्चित कर दिया गया।[७६]

इस्तमरारदारों पर अतिरिक्त कर समाप्त करने के आदेश १७ जून, सन् १८७३ को सरकार ने घोषित किए, जिनके अनुसार इस्तमरारदारों के वर्तमान लगान को स्थाई एवं वंशपरम्परागत कर दिया। इसके साथ ही प्रत्येक ठिकानेदार को एक सनद प्रदान की गई जिसमें उन सब शर्तों का उल्लेख था जिन पर ये ठिकाने उन्हें इस्तमरारदार के रूप में प्रदान किए गए थे।[७७]

सन् १८७७ के भूराजस्व विनिमय के अन्तर्गत ये शर्तें समाहित करली गई थी। शर्तों में उल्लिखित नजराना न तो कभी लागू ही किया गया और न वसूल ही किया गया बल्कि सन् १६२२ में सरकार ने इसे भी समाप्त कर दिया।[७८]

इस्तमरारदारों की स्थिति

अजमेर के इस्तमरारदारों को जोधपुर नरेश ने निजीतौर पर दरबार में तीन श्रेणी की ताजीमें प्रदान कर रखी थीं। जब कभी किसी ठिकाने की श्रेणी के बारे में कोई विवाद उठ खड़ा होता तो अजमेर सरकार तत्सबंधी ठिकानों की श्रेणी के निर्धारण का मामला जोधपुर दरबार को निर्णय के लिए भेजा करती थी, क्योंकि वहां अजमेर के सभी ठिकानेदारों के नाम व उनकी निर्धारित श्रेणी लेखबद्ध थी।[७६] अंग्रेजी शासनकाल में जब कभी इस्तमरारदार दरबार में भाग लेते तो चीफ कमिश्नर को अपने हाथों से इन ताजिमी सरदारों को पान और इत्र से सम्मानित करना होता था और अन्य ठाकुर और जागीरदार फर्स्ट असिस्टेन्ट के हाथों यह सम्मान

ग्रहण करते थे। द्वितीय श्रेणी वाले जागीरदारो को जूडीशियल असिस्टेंट पान इत्र प्रदान करते थे। अंग्रेज शासनकाल मे पूर्वप्रथा के अनुसार इन जागीरो को तीन श्रेणियो मे विभक्त किया गया था प्रथम श्रेणी में वे ताजिमी ठिकाने थे जिनके इस्तमरारदार और ठाकुर प्रथम श्रेणी के सरदार रहे थे। द्वितीय श्रेणी के ठिकाने सरकार से सनद प्राप्त गैर ताजिमी सरदारों के थे। दरबार मे इनका स्थान प्रथम श्रेणी के ताजिमी सरदारो के ठीक पीछे था। जिन ठिकानो को सरकार से सनदें प्राप्त नही थी वे तीसरी श्रेणी मे माने जाते थे।[८०]

इस्तमरारदार यद्यपि राजाओ की श्रेणी मे नही आते थे तथापि वे एक माने मे विशेषाधिकार प्राप्त ठिकानेदार थे। सरकार के साथ उनके सबध सनद मे लिखी शर्तों से बधे थे।[८१]

अजमेर के इस्तमरारदारो को निम्न विशेषाधिकार प्राप्त थे—

१—इनकी भूसपत्ति का स्थाई लगान होता था तथा सपत्ति अदालती कार्यवाही जाँच तथा बदोबस्त सबधी अन्य अनिवार्यताओ से मुक्त थी।

२—केवल कुछ विशेष दमनकारी परिस्थितियों को छोडकर इनके जमींदारों एव प्रजा के मामले मे शासन किसी तरह का हस्तक्षेप नहीं करता था।

३—इनकी भूसपत्ति वशपरम्परागत अधिकार के रूप मे सुरक्षित थी, साथ ही एक प्रतिबध यह था कि वह अपने जीवनकाल से अधिक तक के लिए इन्हें अलग नहीं कर सकते थे।

४—इस्तमरारदार के विरुद्ध किसी भी तरह के फौजदारी कानून के अतर्गत अदालती कार्यवाही, जिलान्यायाधीश या सेशन्स न्यायालय से निम्न न्यायालयो मे नहीं की जा सकती थी। इसके लिए भी चीफ कमिश्नर की पूर्व स्वीकृति आवश्यक थी।

५—यद्यपि किसी इस्तमरारदार के विरुद्ध अदालती कार्यवाही के लिए चीफ कमिश्नर की स्वीकृति प्राप्त हो जाने पर भी उसके लिए यह आवश्यक नहीं था कि वह न्यायालय मे उपस्थित हो। कुछ उदाहरण ऐसे भी थे जो जहाँ इस्तमरारदारों को कठोर दण्ड की अपेक्षा हल्का दड ही दिया गया था और उन्हे जेल न भेजकर कारावास की सजा भोगने के लिए एक विशेष भवन मे रखने की व्यवस्था चीफ कमिश्नर द्वारा की गई थी।[८२]

उत्तराधिकारी के रूप मे इस्तमरारदारी प्राप्त करने के लिए सरकार को नजराना प्रदान करने के निम्नाकित नियम थे—

(क) सीधे वशगत पिता से पुत्र, पौत्र के रूप मे प्राप्त करने वालो से नजराना नही लिया जाता था और न यह समपार्श्व (Collateral)

उत्तराधिकारियो से जैसे भाई अथवा भाई के पुत्र उत्तराधिकार ग्रहण करने पर वसूल किया जाता था।

(ख) जब कभी चाचा या ताऊ उत्तराधिकार ग्रहण करते तो नजराने मे वार्षिक राजस्व की आधी राशि ली जाती थी।

(ग) इसके अतिरिक्त अन्य सभी मामलो मे अपवाद स्वरूप जबतक दत्तक उत्तराधिकारी गोद लेने वाला व्यक्ति का भतीजा हो तब पूरे वार्षिक राजस्व की राशि नजराने मे सरकार को देनी होती थी।

(घ) नजराना राशि का भुगतान उत्तराधिकारी ग्रहण करने के चार वर्षों के अतर्गत किस्तों मे किया जाता जिसका निर्धारण चीफ कमिश्नर या प्रमुख अधिकारी द्वारा होता था। नज़राना भुगतान की अवधि चार वर्षों से अधिक नहीं बढाई जा सकती थी।

(च) उपर्युक्त नियमों के अतिरिक्त यदि उत्तराधिकार ग्रहण करने के एक वर्ष के अतर्गत जबकि नजराने की किश्त दे दी गई हो पुन अन्य उत्तराधिकारी की नियुक्ति हो तो उससे नजराने की नई राशि वसूल नही की जाती थी।

(छ) यदि उत्तराधिकार के कुछ वर्षो बाद जिस पर नजराना ग्रहण किया जाने को है नवीन उत्तराधिकार ग्रहण किया जाता है तो नजराना अजमेर के चीफ कमिश्नर या अन्य प्रमुख प्रशासनिक अधिकारी के आदेशानुसार तीन चौथाई राशि से अधिक नही वसूल किया जाता था।[८३]

इस्तमरारदार के गोद लेन का अधिकार सन् १८४२ मे स्वीकार कर लिया गया था।[८४]

प्रशासन में भागीदारी

सन् १८५७ के सैनिक विद्रोह के बाद के दिनो में भारतीय सामतो का विश्वास प्राप्त करने के लिए अग्रेजो न एक महत्वपूर्ण कदम उठाया था। सन् १८६० में अवध और पजाब के कुछ गिने चुने सामतो को सरकार ने प्रशासन मे भाग लेने के लिए चुना था। उन्हें औपचारिक रूप से कुछ विशेष न्यायिक एव राजस्व-प्रशासन के कार्य सौंपे गए जिन्हें वे जिला अधिकारी के सीधे नियत्रण एव निगरानी मे किया करते थे। इन दोनो मे ही यह प्रशासनिक प्रक्रिया सफल रही थी।[८५] अवध व पजाब में इससे सामत वर्ग का विश्वास प्राप्त करन में जो सफलता मिली उसके कारण लेफ्टिनेन्ट गवर्नर इसे उत्तर-पश्चिमी सूबे में भी लागू करने के पक्ष में थे।[८६]

लेफ्टिनेन्ट गवर्नर का मत था कि अब वह समय आ चुका है जबकि सरकार को

और भी उदार नीति ग्रहण करनी चाहिए और समाज के इन अगुवाओं के व्यक्तिगत एवं सामाजिक प्रभाव का सरकार के लिए उपयोग करना चाहिए। इससे इनमें अंग्रेजों के प्रति स्वामिभक्ति की भावना बढ़ेगी।[८७] लेफ्टिनेन्ट गवर्नर का यह मत था कि उसके कुछ काम इनको प्रदान करने से एक तरफ तहसीलदार के भार को कम किया जा सकेगा और दूसरी ओर इस वर्ग की अंग्रेज सरकार के प्रति वफादारी प्राप्त की जा सकेगी।[८८] इस नीति के अन्तर्गत अजमेर के इस्तमरारदार सम्मानित पुलिस अधिकारी व न्यायाधीश नियुक्त किए गए।

पुलिस अधिकारी के रूप में उनका उत्तरदायित्व

अजमेर के इस्तमरारदार अपने ठिकाने की सीमा क्षेत्रों में तथा हल्कों में होने वाले अपराधों की जाँच पड़ताल एवं निरीक्षण करते थे। इनके हल्के चीफ कमिश्नर द्वारा समय-समय पर निर्धारित होते रहते थे। इनके सीमा-क्षेत्र के गाँवों या हल्कों के चौकीदार किसी भी दुर्घटना की सूचना थानेदार को न करके इस्तमरारदार को देते थे। केवल कुछ मामलों की रिपोर्ट निकटतम सरकारी पुलिस थानों में करने के साथ-साथ ही इस्तमरारदार के पास भी की जाती थी।[८९]

इस्तमरारदार अपने क्षेत्र या हल्के में घटित किसी अपराध की रिपोर्ट या शिकायत मिलने पर निकटतम थानेदार या अन्य सरकारी पुलिस अधिकारी को मामले की जाँच के लिए निर्देश देते थे और इस अधिकारी को वे आदेश मान्य होते थे। वह मामले की छानबीन के बाद पूरी रिपोर्ट इस्तमरारदार को प्रस्तुत करता था जो इन पर जिला पुलिस अधीक्षक की भाँति ही कार्यवाही के लिए आदेश एवं निर्देशन प्रदान करता था।[९०]

पुलिस केस को तैयार कर पहले इस्तमरारदार को दण्डनायक के रूप में भेजती थी और अगर केस उनके अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत आता तो वह उस पर कार्यवाही करते थे। यदि केस उनके अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत नहीं आता तो इस्तमरारदार संक्षेप में अपराध की सुनवाई कर और उसकी रिपोर्ट पुलिस अधिकारी को भेज देते थे और यदि पुलिस को प्रतीत होता कि उक्त मामले में अभियुक्त अपराधी प्रतीत होता है तो वे दोषी व्यक्ति को मय सबूतों एवं गवाहों के जिला दण्डनायक को अथवा निकटतम दण्डनायक को, जिसे उस अपराध में कार्यवाही के अधिकार प्राप्त होते थे, भेज देते थे। जिस मामले में पर्याप्त साक्षियों अथवा अभियुक्त को जिला दण्डनायक को हस्तान्तरित करने के बारे में पर्याप्त आधार उपलब्ध न होते उसमें इस्तमरारदार अभियुक्त को जमानत पर रिहा कर देते या अपनी जिम्मेदारी पर कि जब भी आवश्यक होगा वे अभियुक्त को अदालत में पेश कर देंगे, उसे जमानत पर छोड़ देते थे। भयंकर अपराध अथवा हिंसक घटना की स्थिति में इस्तमरारदार स्वयं घटनास्थल पर पहुँच कर जाँच की कार्यवाही आरंभ कर सकते थे।[९१]

दण्डनायक के रूप मे उत्तरदायित्व

फौजदारी मामलों मे इस्तमरारदारों के अधिकार उनके क्षेत्र मे घटने वाली घटनाओ तक ही सीमित थे। इस्तमरारदार उन मामलो की सुनवाई या जाँच नहीं कर सकते थे जिसमे उनका सबधी या सेवक अभियोगी होता था। इस तरह के मामलों मे इस्तमरारदार *शिकायतो को सीधे जिला दडनायक अथवा अन्य* दण्डनायक के पास जाँच के लिए प्रेषित कर दिया करते थे। इस्तमरारदार को पृथक्-पृथक् श्रेणी के न्यायिक अधिकार प्राप्त थे और वे उन्हीं मामलो की सुनवाई व जांच मे सक्षम थे जो इनके अधिकार-क्षेत्रो के अतर्गत आते थे। आरम्भ मे इन्हें अधिकाशत वे मामले सौंपे गए जो निम्न श्रेणी के न्यायालय के अधिकार-क्षेत्र के थे, तत्पश्चात् जैसे-जैसे इस्तमरारदार का न्यायिक मामलो मे अनुभव बढता जाता था वैसे-वैसे उनके अधिकार-क्षेत्र मे भी पदोन्नति होती रहती थी।[६२]

इन इस्तमरारदारों मे जिन्हे प्रथम श्रेणी के दडनायक के न्यायिक अधिकार प्राप्त थे वे जाब्ता फौजदारी के अनुच्छेद सात के अतर्गत उल्लिखित सभी अपराधों की सुनवाई मे सक्षम होते थे। ये वे अपराध थे जिन्हे सेशन्स न्यायालय मे निर्णीत किए जाते हैं। इस्तमरारदार ऐसे मामले की सुनवाई के पश्चात् अभियोग निर्धारित कर अभियुक्त को सेशन्स कोर्ट के सुपुर्द कर देते थे।[६३] इसी प्रकार उन इस्तमरारदारों के भी जिन्हे द्वितीय व तृतीय श्रेणी के दडनायक के अधिकार थे, उनके भी अधिकार-क्षेत्र स्पष्ट कर दिए गए थे।[६४]

प्रथम श्रेणी दंडनायक के अधिकार प्राप्त इस्तमरारदार

इस श्रेणी के इस्तमरारदार को भारतीय दड-सहिता के अतर्गत दो साल की कैद तथा काल कोठरी की सजा, कोडो एव सामान्य कारावास (अथवा दोनो ही) तथा दो हजार की राशि तक आर्थिक दड या अर्थ-दड और कारावास दोनो ही प्रदान करने के अधिकार थे।[६५]

सिविल जज के रूप मे दीवानी मुकदमो मे अधिकार

इस श्रेणी के इस्तमरारदारो को यह अधिकार था कि वे अपने क्षेत्र अथवा हल्के के अतर्गत उन सभी दीवानी मामलों की सुनवाई कर सकते थे जिनमें विवाद की राशि सौ रुपए से अधिक की नहीं होती थी। इन इस्तमरारदारो को चीफ कमिश्नर समय-समय पर वे विवाद भी निर्णय के लिए भेज सकते थे जिनकी राशि दस हजार रुपए से अधिक नही होती थी अथवा ऐसी अल्प राशि वाले मामले जिन्हें चीफ कमिश्नर उचित समझते थे। परन्तु इस्तमरारदार उन मुकदमों मे निर्णायक नहीं हो सकता था जिनमे वह स्वय या उसका सेवक अथवा स्वय उसमें परोक्ष रूप से भी सबधित रहा हो। ऐसे सभी मामले निर्णय के लिए इस्तमरारदार को डिप्टी

कमिश्नर को प्रेषित करने होते थे। इस्तमरारदार के फैसले के विरुद्ध अपील कमिश्नर को भी जाती थी। आवश्यकता महसूस होने पर इस्तमरारदार डिप्टी चीफ कमिश्नर से सम्पत्ति, राय और निर्देशन प्राप्त कर सकते थे।[८६]

द्वितीय श्रेणी दंडनायक के अधिकार प्राप्त इस्तमरारदार

इस श्रेणी के इस्तमरारदारों को छः माह तक कारावास, दो सौ रुपयों तक जुर्माना, कोड़ों की सजा, कारावास और जुर्माना दोनों ही, जो भारतीय दंड संहिता के अतर्गत एवं उनके न्यायिक अधिकार-क्षेत्र में हो, देने का अधिकार था।[८७]

तृतीय श्रेणी दंडनायक के अधिकार प्राप्त इस्तमरारदार

इस श्रेणी के इस्तमरारदारों को एक माह (सामान्य एवं कठोर) तक का कारावास अथवा पचास रुपयों तक जुर्माना या भारतीय दंड-संहिता के अतर्गत दोनों ही सजा देने के अधिकार प्राप्त थे। परन्तु उन्हें कालकोठरी और कोड़े की सजा देने के अधिकार नहीं थे।[८८]

इस्तमरारदारियों की आंतरिक व्यवस्था

केवेन्डिश ने ७० ठिकानों के २१८ असली (मूलग्राम) व ७८ देवली गाँवों की जाँच के आधार पर जो रिपोर्ट प्रस्तुत की उसके अनुसार १५८ गाँवों में इस्तमरारदार ने स्वीकार किया कि सिंचित और विकसित भूमि जिसमें स्वयं किसान ने अपने श्रम या धन से सिंचाई के साधन का निर्माण किया है उसमें किसान को बेदखल नहीं किया जा सकता था। ऐसी भूमि के बारे में यह धारणा थी कि इस भूमि को बेचने या बंधक रखने का अधिकार किसान को नहीं था परन्तु इस्तमरारदारों ने किसानों को यह अधिकार प्रदान कर रखा था कि वे यदि उचित अवधि में अपने गाँव को पुनः लौट आते थे तो वापस वे इस भूमि पर अधिकार प्राप्त कर सकते थे। १६१ गाँवों में ऐसे किसान थे जो वंशपरम्परागत एक ही भूमि पर कृषि करते आए थे, इनके अधिकार भी उन किसानों जैसे थे जो कुँओं इत्यादि के मालिक थे। असिंचित एवं एक फसली भूमि के बारे में यह सामान्य सिद्धांत लागू था कि इनमें किसान इस्तमरारदार की इच्छा पर निर्भर रहता था।[८९]

रिपोर्ट के अनुसार १५ गाँव ऐसे थे जहाँ कुँओं के मालिक अपने कुँए और भूमि का विक्रय कर सकते थे और १३ गाँव ऐसे भी थे जहाँ पुश्तैनी रूप से अधिकारी किसान अपनी भूमि को बंधक रख सकते थे या विक्रय कर सकते थे। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि उस जाँच के दौरान अधिकारों का प्रश्न किसानों द्वारा उठाया गया होगा और इस्तमरारदार ने उसे स्वीकार कर लिया होगा।[१००]

आवास भूमि के बारे में रिपोर्ट का कहना है कि ३१ गाँवों में गैर काश्तकारों को अपने घर व दुकानों के विक्रय का अधिकार था। तीन गाँवों में यह

अधिकार बधक रखने तक ही सीमित था। जबकि २३७ गाँवों में आवासों को वेदखल तो नही किया जा सकता था परतु उन्हे अपनी सम्पत्ति को वेचने, बधक रखने व हस्तांतरित करने के अधिकार नही थे। इस्तमरारदारो ने लोगों को अपने मकानो को वेचने के अधिकार प्रदान नहीं कर रखे थे। केवल वे ही जिनके परिवार उस ठिकाने में इस्तमरारदार के आगमन से पहले के बसे हुए थे, या जिन्होने जमीन इस्तमरारदार से खरीदी थी, अपने मकान बेच सकते थे।[101] अंग्रेज सरकार की साधारणतया उनके मामलों में हस्तक्षेप नहीं करने की नीति थी परतु सार्वभौम सत्ता होने के नाते जहां नागरिक अधिकारो का प्रश्न सन्निविष्ट होता हो या ऐसे गम्भीर प्रश्नो पर जिनका जनता पर व्यापक प्रभाव पडता हो हस्तक्षेप करना अपना कर्त्तव्य समझती थी।[102]

सरकार किसानो के अधिकार की रक्षा करने के पक्ष मे थी। उसकी यह मान्यता थी कि कृषि के विकास के लिए किसान की सुरक्षा एव सरक्षण आवश्यक है। किसान को अपनी भूमि एव आवासगृह पर स्थाई अधिकार होना चाहिए। किसान को अतिरिक्त करों से मुक्ति प्राप्त होनी चाहिए। परतु यह नीति आने वाले वर्षों में पूर्णत विस्मृत हो गई थी और सन् १८७३ तक ऐसी स्थिति हो गई थी कि स्वय डिप्टी कमिश्नर को भी यह कहना पड़ा कि इस्तमरारी ठिकानो मे भूमि पर ऐसे कोई अधिकार किसान के पास नही रहे हैं जिनके अतर्गत किसान ठिकानेदार के अप्रसन्न होने पर उस ठिकाने मे रह सके। जेम्स लाटम ने अपने एक पत्र मे आलोचना करते हुए लिखा था कि विकृत अंग्रेजी भूधृति व्यवस्था किसानों पर थोप दी गई। इसी व्यवस्था को सन् १८७७ के भूमि एव राजस्व विनिमय की धारा २१ के अतर्गत कानूनी रूप प्रदान कर दिया गया था। जिसके अनुसार इस्तमरारी ठिकानों में किसान का इस्तमरारदार की भूमि पर किराएदार का स्थान दिया गया था।[103] इस प्रकार ठिकानदार को किसान को बेदखल करने का कानूनी अधिकार प्रदान कर दिया गया था। इस कारण ठिकानेदार जिससे भी नाराज हो जाते उसको ठिकाने से बाहर निकल जाने के लिए बाध्य करने लगे थे। यहाँ तक कि करो की वसूली मे गैर कानूनी अविबध लगाए जाने लगे। अपने इन विशेष अधिकारो के समर्थन में उनका कहना था कि निकटवर्ती राजघरानों के वशज होने के नाते पडोसी रियासतों के जागीरदारो की तुलना मे उनका स्थान ऊँचा है। जबकि उनके सबसे बड़े समर्थक कर्नल सदरलैण्ड का यह मत था कि अंग्रेज सरकार की दृष्टि में उनका वही स्थान था जो उदयपुर रियासत मे वहाँ के जागीरदारों का था। छोटे से छोटा इस्तमरारदार जिसके पास कुल एक गाँव था वह भी अपनी जागीर को 'राज' और अपने आपको 'दरबार' कहलवाता था। इन इस्तमरारदारो की सामान्य प्रवृति अपने आपको एक छोटा-मोटा नरेश मानने की बन गई थी। इन ठिकानों के सामान्य लोग अपने ठाकुर के प्रति गहरे आदर की भावना रखते थे। परंतु यह आदर भय

पर आधारित था, प्रेम और सद्भाव पर नहीं।[104]

किसानों की सामान्य स्थिति

ठिकानों में किसानों की स्थिति अत्यधिक असुरक्षित थी। यदि किसान ठाकुर की किसी भी लगान संबंधी मांग की पूर्ति करने में असमर्थ रहता तो उसे अपनी आजीविका के साधन खो बैठने का भय बना रहता था।[105] स्थिति का सही विवरण वैष्णव पाँवले ने इन शब्दों में किया है "पुश्तैनी होने के कारण पुराने किसानों का अपने खेतों से एक रिश्ता-सा बन चला है; वह इनको छोड़ने के बजाय भारी से भारी लगान एवं लागें तक चुकाने में रातदिन एक कर देते हैं।[106] दुर्भाग्य से किसान एक वर्ग के रूप में सदा ही गुलामी में जकड़ा हुआ रहा, उसके लिए अपनी आवश्यकता की पूर्ति करना भी दूभर था। जब कभी कोई सरकारी अधिकारी इन गाँवों के दौरे पर जाता भी, तो किसान इस्तमरारदार के आतंक के कारण अपना मुँह नहीं खोल पाते थे क्योंकि उन्हें यह भय रहता था कि यदि ठाकुर को यह पता लग गया कि उन्होंने शिकायत की है तो वह उन्हे गोली से उड़ा देगा। लगभग सभी गाँवो में किसान की स्थिति दरिद्रतापूर्ण थी। उनके रहने के मकान घोंसले जैसे थे। लोगो मे पोषण की कमी प्रतीत होती थी। किसान भारी ऋणग्रस्त थे। कड़े कर और जमीन की असुरक्षा दोनों के कारण अत्यंत दयनीय स्थिति पैदा हो गई थी। जिसके फलस्वरूप प्रति दस किसानो मे से नौ किसान कर्जदार थे और यह कर्जा भी उस सीमा तक था कि वे "दिवालिया" बनकर ही उससे मुक्ति पा सकते थे।[107]

अधिकांश गाँवो में लगान उसी भूमि पर वसूल किया जाता था जिसमें फसल ली गई हो। प्रत्येक कटाई के अवसर पर इसे ठिकानेदार अपने नाप के अनुसार नापा करते थे। उन खेतो को छोड़ दिया जाता था जिनका क्षेत्रफल निश्चित होता अथवा लगान फसल के रूप में वसूल किया जाता, अर्थात् जिसमें लटाई-प्रथा प्रचलित थी। सिंचित भूमि में सामान्य खरीफ की फसल पर प्रति बीघा नगद लगान लिया जाता था, जो 'बीघोड़ी' कहलाता था। इसकी दरें सामान्यतः दीर्घकाल से एक सी चली आ रही थीं और उन दिनों निर्धारित हुई थी जबकि खाद्यान्न सस्ता था अतएव वे तुलनात्मक रूप से अधिक उदार थी। परंतु खरीफ पर लगान-प्रथा प्रत्येक ठिकाने की पृथक् पृथक् थी, यहाँ तक कि एक ही ठिकाने के गाँवो में अलग-अलग थीं। रबी की फसल पर सामान्यतः उपज के आधार पर लगान लिया जाता था, परंतु बागों की उपज पर बीघोड़ी की दरें नगदी में थी और काफी ऊँची थीं। बारानी खेती आमतौर पर परिवर्तनशील थी। असिंचित बिना खाद डाले वर्षा ऋतु में पड़त पड़ी भूमि में हल चलाकर यह फसल ली जाती थी। किसान ठिकानेदार और गाँव वालों की इजाजत से साल भर में एक बार इन खेतो को जोता करता था। इनकी सीमा

निर्धारित नही होती थी तथा इसका लगान आपसी समझौते पर निर्भर करता था। यद्यपि सामान्यत उसको यह अधिकार प्राप्त था कि वह लगातार दो वर्ष तक उस भूमि से फसल ग्रहण कर सकता था। तीसरे साल उसे अपने खेत पडत छोडने पडते थे। बारानी जमीन की बीघोडी सबसे कम थी परन्तु यदाकदा बांटा या फसल का अश लगान के रूप मे लिया जाता था। यदि खेत मे वर्षा की कमी के कारण फसलो से अनाज पैदा नही होता या केवल मवेशियो के लिए घास चारा पैदा होता तो लगान नगदी मे वसूल किया जाता था। यह व्यवस्था ज्वार की फसल पर लागू होती थी जो वर्षा के अभाव म चारे के रूप में काम आती थी।[१०८] कुछ गांवो मे फसल होने पर भी नगदी मे लगान लेने की व्यवस्था थी। कुछ क्षेत्रो मे, विशेषकर केकडी सब डिवीजन मे, खेतो मे असिंचित व खादहीन भूमि मे रबी की फसल ली जाती थी, जिसे 'माल' कहा जाता था। इसका कराधान "बांटा" के आधार पर होता था। खडी फसल को कूत कर (कूता) ठिकानेदार का अश निर्धारित किया जाता था। कभी कभी यह प्रक्रिया ठिकानेदार के प्रतिनिधियो के हाथो होती थी परन्तु बहुधा पचायत द्वारा निर्धारित होती थी जिसम पटेल, ग्रामप्रमुख व ठिकाने के प्रतिनिधि एव किसान होते थे।[१०६] ये लोग प्रति बीघा लगान की दर से फसल का लगान निर्धारित करते थे। इस तरह जो भाग ठिकाने का होता, वह जिन्सो मे लिया जाता था परन्तु बडे ठिकानो म अधिकांशत इस अश का नगदी मे मूल्याकन कर लिया जाता था। यह लगान दर 'निरख प्रथा' के अनुसार तत्कालीन निकटवर्ती बाजार के भावो अथवा गाँव के बनियो द्वारा प्रस्तावित मूल्य के अनुरूप निर्धारित की जाती थी।[११०]

इस तरह निर्धारित लगान के साथ "लागें" और नेग अलग से जुडे हुए थे। यह उपकर नगदी या फसल के रूप में वसूल किया जाता था। कई बार जहाँ लगान नगदी में लिया जाता था वहाँ प्रति रुपया कई आने इन उपकरो के रूप मे जोडे जाते थे। मूल लगान के साथ जुडी हुई माँगें प्रति चालीस सेर मे दो से लेकर पन्द्रह सेर तक हो जाती थी।[१११] इस तरह लगान मे ही बहुत कुछ वृद्धि हो जाती थी और कम उपज वाले प्रदेश के ठिकानेदारो के सतुष्ट होने के लिए यह राशि पर्याप्त थी। नकद रूप मे लिए जाने वाले उपकर अलग से वसूल किए जाते थे। नगदी उपकर कृषि लगान से कदाचित् ही पाँच प्रतिशत से अधिक पहुँच पाता था। इसके अन्तर्गत गृह कर 'नेवता' या विवाह शादी के अवसर पर लगाए गए उपकर सम्मिलित नहीं थे। जिन्सो मे वसूल किए जाने वाले उपकर या नेग का भार किसान पर औसतन कुल उपज का सात या आठ प्रतिशत होता था। कुछ क्षेत्रो मे ये नेग दस प्रतिशत तक वसूल किए जाते थे। बहुधा आधा लाटा (फसल का आधा हिस्सा) जहाँ वसूल किया जाता था वहाँ इन उपकरो को छोड भी दिया जाता था परन्तु एक दो जगह ऐसी भी थी जहाँ आधा लाटा के साथ-साथ "नेग" भी वसूल किए जाते

थे और इन दोनों को मिलाकर किसान को अपनी उपज का साठ प्रतिशत ठिकानेदार को सौंपना पड़ता था।[११२]

"चाही" अथवा कुँओं से सिंचित अच्छी भूमि पर प्रति बीघा लगान की दर सात रुपए से लेकर दस रुपए तक थी तथा इनके साथ कुछ ऊँची दरों के उपकर भी जुड़े हुए थे। इससे कुँआ से सिंचित मध्यम श्रेणी की भूमि पर लगान की दर कुछ कम थी। इस भूमि म सामान्यत दो फसलें अथवा एक अच्छी फसल ली जा सकती थी। इसकी लगान दर औसतन प्रति बीघा साढे पाँच रुपए से लेकर सात रुपए तक की थी। तीसरी श्रेणी की अथवा घटिया किस्म की भूमि जो कुओं से सिंचित होती थी उसकी लगान दर तीन रुपये से लेकर पाँच रुपए प्रति बीघा थी। खरवा ठिकानों में प्रति बीघा साढे सात रुपए की लगान दर तथा अतिरिक्त उपकरो व अन्य शुल्कों को मिलाकर ६ रुपए प्रति बीघा अंकित होती थी। तालाबी भूमि में कृषि करने वाले को जल शुल्क के सहित भी काफी कम दर चुकानी होती थी। आबी जमीन का लगान बारानी कूते के आधार पर फसल के अनुसार चुकाया जाता था। जहाँ बीघोडी निर्धारित थी वहाँ किसान को ६ आने से लेकर ढाई रुपए प्रतिबीघा चुकाना होता था जबकि सामान्य दर एक रुपए के लगभग थी। बगीचों की रबी की फसल पर लगान औसतन पाँच रुपए बीघा लगाया जाता था।[११३] इससे यह स्पष्ट है कि खालसा-भूमि की अपेक्षा इस्तमरारदारी ठिकानों में बहुत ही भारी लगान था।

अजमेर जैसे क्षेत्र के लिए, जहाँ पाँच फसलों में से तीन सूखे की चपेट में आती रहती थी, यह आवश्यक हो गया था कि लगान फसलों के अ शदान के रूप में वसूल किया जाए। इसमें यह फायदा था कि फसल नष्ट होने की स्थिति में किसान कर भार से बच सकता था और उसे स्वाभाविक रूप से ही राहत प्राप्त हो जाती थी।

अधिकांश ठिकानों में पुश्तैनी किसानों को परेशान करने के मामले बहुत ही कम घटते थे। कई ठिकानों में बीघोडी में परिवर्तन कर लगान बढा दिया गया था, उदाहरणार्थ, मूल रूप से जो लगान "चित्तोडी" रुपए में भुगतान किया जाना था, उसके स्थान पर "कल्दार" रुपए में वसूल किया जाने लगा, इससे किसान को २१ प्रतिशत का भार अधिक उठाना पड़ा। कहीं बीघोडी के स्थान पर बाँटा लागू करके (उदाहरणत- कपास की फसल) लगान में वृद्धि कर दी गई थी।[११४] इन ठिकानों में किसानों के अधिकारों के बारे में एकमात्र कानूनी प्रावधान अजमेर-भूमि एव राजस्व विनिमय की धारा २१ थी। जिसके अनुसार इस्तमरारदारियों में किसान की स्थिति भूमि पर इस्तमरारदार की इच्छा पर निर्भर एक किराएदार की थी।[११५]

किसानों का उनके खेतों पर किसी तरह का कोई अधिकार नहीं था,

सामान्यत एक लम्बे समय से चले आ रहे मौरूसी एव वशपरम्परागत किसान को भूमि से बेदखल करने की प्रथा ही उनकी सुरक्षा का आधार था। परतु किसी भी किसान को जमीदार अपनी इच्छानुसार बेदखल कर सकता था और इसके लिए उसे कारण बताना आवश्यक नही था। यद्यपि अजमेर भूमि एव राजस्व विनिमय मे किसान को बेदखल करने के लिए कृषि वर्ष के प्रारम्भ होने से पूर्व सूचना देना और किसान द्वारा निर्मित विकास कार्यों का उसे मुआवजा चुकाने की व्यवस्था थी।

सामान्यत कानून के अतर्गत एक निश्चित अवधि तक भूमि पर काश्त करने वाले किसान को उस भूमि पर कुछ विशिष्ट अधिकार प्राप्त हो जाते थे और वह कानून के अतर्गत अपनी पूर्ण सुरक्षा का दावा कर सकता था। अवध मे यह कानूनी मियाद १२ साल की होती थी। बगाल भूमि कानून (सन् १८८५) के अतर्गत जिस किसान ने लगातार बारह वर्षों तक अपने कब्जे की भूमि को जोता था उसे बेदखली से सरक्षण प्राप्त था। इस्तमरारदार ठिकानों के किसानो के लिए इस तरह की व्यवस्था अजमेर के भूमि एव राजस्व विनिमय मे नही थी। अजमेर-मरवाडा क इस्तमरारदारी ठिकानो म किसान को उनकी बेदखलियो के विरुद्ध कानूनी एव औप चारिक किसी भी तरह के अधिकार प्राप्त नही थे।[११]

इन ठिकानो मे किसानो का सीधा वशानुगत उत्तराधिकार सामान्यत स्वी कार कर लिया जाता था। परतु निकट रिश्तेदारो मे गोद लेने पर इस्तमरारदार को नजराना देना पडता था। उक्त नजराने की राशि भेंट करने पर भी उत्तरा धिकारी को सामान्य सहज नियम के तौर पर भी भूमि के हस्तातरण के अधिकार प्राप्त नहीं होते थे। कुछ परिस्थितियो मे किसानो को अपने खेतो को बधक रखन के अधिकार प्राप्त हो गए थे और इस कारण महाजनों ने कुछ भूमि भी अपने अधिकार मे कर ली थी। इन ठिकानो के ८५ प्रतिशत से ९० प्रतिशत तक किसान इन महाजनो या "बोहरो" से कर्ज लिया करता था। यह राशि बहुधा लगान के रूप मे विशेषकर उन क्षेत्रो मे जहां लगान फसल उठाने से पूर्व अग्रिम (अगोतरी) वसूल की जाती थी। पारिवारिक अवसरो, त्योहारो विवाह मृत्यु-सस्कार आदि पर कभी कभी फसल नष्ट होने पर आसामी को उसके खुद के व परिवार के भरण-पोषण के लिए आवश्यक खाद्यान्न इत्यादि की खरीद के लिए महाजन ऋण दिया करता था। ऋण पर भारी ब्याज लिया जाता था, कई बार तो यह कर्जा ली गई मूलराशि से भी अधिक बढ़ा चढा कर लिखी जाती थी। बहुधा महाजन ही आढतियों का काम भी करता था, जिसके माध्यम से किसान अपनी फसल बचता था। फलस्वरूप महा- जन कर्ज के पेटे फसल भर लेता, लगान चुका देता और किसान को इतना कम प्रदान करता था कि जिससे वह अपना गुजारा मात्र कर सके। यह निर्विवाद सत्य है कि मौसम की फसल भी ब्याज के चुकारे के नाम पर महाजन की वहियों मे दर्ज

कर ली जाती थी और मूलधन वैसा का वैसा ही बना रहता था। किसान का नाम कदाचित् ही बनिए के बही खातों में से कट पाता और वह दिनो दिन अधिक कर्ज के भार से लदता चला जाता था।[117]

अधिकांश ठिकानो मे किसानो के फसल उठाने से पहले ही बकाया राशि लेने पर बल दिया जाता था। जबतक वह यह प्रदान नही करता उसे फसल नहीं उठाने दी जाती थी। यदि किसी मे कोई पुरानी राशि बकाया नहीं होती तो उसे भावी भुगतान के लिए जमानत (साई) की व्यवस्था करने को मजबूर किया जाता था।[118] इन दोनो रकमो की व्यवस्था किसानो के लिए महाजन या बोहरों द्वारा की जाती थी। यद्यपि पीसांगन मे ठिकाने और महाजनो के बीच आपसी तनाव की स्थिति थी, अतएव वहाँ किसानो द्वारा आपस मे इसकी व्यवस्था की जाती थी। महाजन जिस रोज जमानत या भुगतान की राशि देते उसी दिन से बही मे दर्ज कर उस पर ब्याज चालू कर देते। बहुधा वे इस पर रुपए में एक आना 'काटा' के नाम पर अतिरिक्त वसूल किया करते थे, परन्तु बोहरे यह राशि ठिकाने को तबतक भुगतान नही करते थे जबतक कि वे किसानो का जमा अनाज बेच नही लेते थे। इस पर भी किसान के नाम लगान की जो राशि जमा की जाती उसमे वे अपनी निश्चित आढ़त की रकम पहले काट लेते थे। यह व्यवस्था किसानों के लिए अभिशाप थी। यद्यपि अन्य प्रान्तो के कुछ ठिकानो मे 'साई' या अग्रिम राशि लगान-निर्धारण के लिए फसल के कूते के समय वसूल की जाती थी। जबतक इन दोनो राशियो मे से एक राशि ठिकाना प्राप्त नही कर लेता, किसान का कूता रोक दिया जाता अथवा उसे कटी फसल मे से अन्न निकालने या फसल अन्यत्र ले जाने से रोक दिया जाता। उन ठिकानो को यदि अग्रिम राशि या साई नही मिलती अथवा जहाँ इनकी प्राप्ति की सभावना क्षीण थी वहां यदि ठिकानेदार यह अनुभव करते कि अग्रिम-राशि या साई की राशि मिलने की सभावनाए क्षीण हैं तो वे फसल को अपने कब्जे मे लेकर उसे महाजन को सौंप देता और इससे किसान की बकाया राशि ले लेता था।[119] यदि फसल खेत मे से नही हटाई जाती तो एक 'सहना' या चौकीदार फसल की निगरानी के लिए छोड दिया जाता था और कई बार किसान के घर पर भी ठिकाने का कोई भी व्यक्ति जिसे "तलबिया" कहा जाता था, बकाया राशि वसूल करने के लिए जाता था। किसान उसे अपने घर ठहराता और अच्छी तरह से खातिर करता, यदि उस समय उसके पास कुछ उपलब्ध होता तो उसकी भेंट-पूजा की व्यवस्था भी करता [120] यदि ये सभी प्रयास धन प्राप्ति मे किन्ही कारणो से असफल सिद्ध होते तो किसान को अन्य तरीको से तग किया जाता था। उसे हल जोतने, भूमि मे खाद डालने, सिंचाई करने, पशुओ को चराने, घास काटने से रोका जाता अथवा उसे ठाकुर के गढ या किले मे बुलाकर वहां बद कर दिया जाता या उससे लिखित मे भुगतान का वचन लिया जाता था। इनके अतिरिक्त कुछ मामलो मे उसके मवेशी

मकान पर स्थाई अधिकार होना चाहिए।[१२६] परन्तु उत्तरपश्चिमी सूबों के लेफ्टिनेंट गवर्नर इस प्रश्न पर किसी तरह के हस्तक्षेप के पक्ष में नहीं थे। उल्टे कम्पनी के डाइरेक्टर्स ने भी इस प्रश्न पर लेफ्टिनेन्ट गवर्नर के मत को 'न्यायपूर्ण' एवं उचित ठहराया। उनके अनुसार ठिकानों में लोगों को उनके मकान पर स्वामित्व के हक प्रदान करना न्यायसंगत नहीं होगा।" इस प्रश्न पर किसानों को अंग्रेज सरकार से कभी न्याय प्राप्त नहीं हो सका।[१२७]

अध्याय ५

१ जे० डी० लाटूश—गजेटीयर्स ऑफ अजमेर-मेरवाडा (सन् १८७४ के भू-बंदोबस्त पर आधारित) पृ० २३ (स)।

२. टॉड एनल्स एण्ड एन्टिक्विटीज ऑफ राजस्थान पृ० ४१।

३ पी० सरन—स्टडीज इन मिडेविल इंडियन हिस्ट्री पृष्ठ १ से २२।

४ फ्यूडेटेरीज एण्ड जमींदार्स ऑफ इंडिया पृ० २३।

५ टॉड एनल्स एण्ड एन्टिक्विटीज ऑफ राजस्थान खंड १, पृ० १६७ "सामंती नजराने का दस्तूर सिद्धान्ततः पूर्व में भी पश्चिमी देशों जैसा ही था। मेवाड़ में नजराने का दस्तूर दे देने पर राज्य ठिकाने के उत्तराधिकारी को स्वीकृति प्रदान करता था।" यह व्यवस्था एक तरह से राज्य द्वारा जागीर पुनर्ग्रहण करने के अधिकार को इंगित करती थी। टॉड ने भी स्वीकार किया है कि (खंड १-पृ० १८६), यह एक औपचारिक विशेषाधिकार था, जिसका कदाचित् ही उपयोग हो पाया था (खंड १, पृ० १६१)।

६ जे० डी० लाटूश—गजेटीयर्स ऑफ अजमेर-मेरवाडा पृ० २६ (अ)।

७ केवेंडिश का पत्र दिनांक ११ जुलाई, १८२९ 'यहाँ कुल ६ परगने हैं सरवा, मसूदा, पीसागन, गोविन्दगढ़, सावर, भिनाय, केकड़ी, देवगढ़, शाहपुरा तथा १२ गाँव अजमेर परगने में हैं। २१८ असली और ७८ दखली गाँव कुल मिलाकर २९६ हैं। सरवा और मसूदा के चार तालुका हैं, पीसागन, गोविन्दगढ़, भिनाय और सावर के ३० उप तालुके हैं। केकड़ी उपनाम जूनीया के १४ उप तालुके हैं। देवगढ़ और बघेरा के ३ उप तालुके हैं और अजमेर परगने के ११ उप तालुके हैं"।

८ विल्डर का पत्र दिनांक २७ सितम्बर, १८१८।

९ भिनाय के इस्तमरारदार राजा जोधा के वंशज थे। मारवाड के चद्रसेन (१५६३) के पौत्र रायसेन को इस क्षेत्र में भील उपद्रवियों को समाप्त करने के इस सेवा उपलक्ष में सम्राट अकबर ने भिनाय और सात परगने जागीर में दिए थे। आरम्भ में इस जागीर में कुल ८४ गाँव थे जो बाद में चौथी पीढ़ी मे उदयभान (४६ गाँव) तथा अखैराज (३८ गाँव) में बँट गए। उदयभान ने भिनाय तथा अखैराज ने देवलिया को मुख्य ठिकाना स्थापित किया। भिनाय ठिकाना सरकार को ७,७१७ रुपए की वार्षिक खिराज देता था और जोधपुर नरेश ने उन्हें राजा का खिताब उनकी सैनिक सेवाओं के उपलक्ष मे प्रदान कर रखा था। (रूलिंग प्रिन्सेज, चीफ्स एंड लीडिंग पर्सोनेजेस ऑफ राजपूताना एंड अजमेर (१९३८) सातवाँ संस्करण पृ० १८७ और १८८)।

१० सावर ठाकुर शिसोदिया वंशी सक्तावत राजपूत थे। इस ठिकाने में ३३ गाँव थे जिनकी वार्षिक आय साठ हजार थी। यह ठिकाना सरकार को ७२१५ रुपए वार्षिक राजस्व प्रदान करता था। यह ठिकाना सम्राट जहांगीर द्वारा गोकुलदास को दी गई जागीर का अंग था। (रूलिंग प्रिन्सेज, चीफ्स एंड लीडिंग पर्सोनेजेस ऑफ राजपूताना एण्ड अजमेर पृ० १९३)।

११ जूनिया के ठाकुर राठौर वंशी थे। इस ठिकाने मे १६ गाँव थे तथा इसकी वार्षिक आय ५०,००० रुपए थी। सरकार को यह ठिकाना ५०२३ रुपए सालाना राजस्व देता था। जूनिया के ठाकुर केकड़ी के परपरागत भोमिया थे अतएव उन्हें आवश्यकता पड़ने पर सवार प्रदान करने पड़ते थे (रूलिंग प्रिन्सेज, चीफ्स एण्ड लीडिंग पर्सोनेजेस ऑफ राजपूताना एण्ड अजमेर पृ० १९३)।

१२ मसूदा के ठिकानेदार मेड़तियावंशी राठौड़ थे, उनके पास जिले में सबसे बड़ा और सबसे धनी ठिकाना था, जिसमे २६ गाँव थे तथा वार्षिक आय १ लाख रुपए के लगभग थी, सरकार को यह ठिकाना ८,५५५ का खाँगियाना चुकाता था।

१३. पीसागन के इस्तमरारदार जोधावत वंशी राठौड़ राजपूत थे, तथा इनके ठिकाने में ११ गाँव थे जिनकी वार्षिक आय २३००० रुपए थी और ये सरकार को ४,२६३ रुपए वार्षिक चुकाते थे।

१४ केवेंडिश का पत्र, दिनांक १० जुलाई, १८२९।

१५ केवेंडिश का पत्र, दिनांक १० जुलाई, १८२९।

१६ जे० डी० लाट्रश-गजेटीयर्स ऑफ अजमेर-मेरवाड़ा पृ० २६।

१७. भारत सरकार के कार्यवाहक सचिव जेम्स थामसन को लेफ्टि० कर्नल सदरलैंड द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट, दिनाक ७-२-१८४१।

१८. जे० डी० लाटूश गजेटीयर्स ऑफ अजमेर-मेरवाडा पृष्ठ २०।

१९ सुपरिटेंडेंट व पोलिटिकल एजेन्ट अजमेर द्वारा रेजीडेंट राजपूताना व दिल्ली को पत्र, दिनाक १० जुलाई, १८२८। फाइल क्रमाक १५ (अजमेर रेकॉर्ड रा० रा० पु० म०)।

२०. दी रूलिंग प्रिन्सेस चीफ्स एण्ड लीडिंग पर्सोनेलिस इन राजपूताना एण्ड अजमेर (१९३१) पृ० १–१०।

२१. एफ० विल्डर सुपरिटेंडेंट अजमेर का मेजर जनरल सर डेविड ऑक्टर-लोनी को पत्र, दिनाक २४ सितम्बर, १८१८।

२२ आर० केवेंडिश–सुपरिटेंडेंट व पोलिटिकल एजेन्ट अजमेर का रेजीडेंट राजपूताना व दिल्ली सर एडवर्ड कोलब्रुक बार्ट को पत्र, दिनाक ११ जुलाई, १८२९।

२३ भारत सरकार के सचिव जेम्स थामसन (आगरा) का कर्नल जे० सदरलैण्ड कमिश्नर अजमेर को पत्र मई, १८४१।

२४. आर० केवेंडिश द्वारा रेजीडेन्ट राजपूताना दिल्ली, कोलब्रुक को पत्र, दिनाक १० जुलाई, १८२८ (अजमेर रेकॉर्ड, रा० रा० पु० म०)।

२५. उपरोक्त।

२६ उपरोक्त।

२७ आर० केवेंडिश का सदर एडवर्ड कोलब्रुक को पत्र, दिनांक ११ जुलाई, १८२९।

२८ एफ० विल्डर द्वारा सर डेविड ऑक्टरलोनी को पत्र, दिनाक २७ सितम्बर, १८१८।

२९ भारत सरकार के विदेश एव राजनीतिक विभाग का पत्र, दि० ५ मई, १९०० (फाइल क्रमाक ७२, रा० रा० पु० म०)।

३०. एफ० विल्डर द्वारा मेजर जनरल सर ऑक्टरलोनी को पत्र, दिनाक २७ सितम्बर, १८१८।

३१. सर डेविड ऑक्टरलोनी द्वारा एफ० विल्डर को पत्र, दिनाक २३ अक्टूबर, १८१८।

३२. २७ सितम्बर, १८१८ के एफ० विल्डर के पत्र पर सरकार एव कोर्ट ऑफ डाइरेक्टर के निर्देश। (अजमेर रेकॉर्ड, रा० रा० पु० म०)।

३३ एफ० विल्डर द्वारा मेजर जनरल डेविड ऑक्टरलोनी को पत्र, दि० ७ अक्टूबर, १८१८।

३४. एफ० विल्डर द्वारा मेजर ऑक्टरलोनी को पत्र, दिनाक १२ अक्टूबर, १८१८।

३५. एफ० विल्डर का मेजर ऑक्टरलोनी को पत्र, दिनाक २० अक्टूबर, १८१८।

३६ एफ० विल्डर द्वारा मेजर ऑक्टरलोनी को पत्र, दिनाक १७ जून, १८१९।

३७ मिडलटन सुपरिंटेंडेंट अजमेर द्वारा पत्र, दिनाक ६ अगस्त, १८२६ (रा० रा० पु० म०)।

३८ केवेंडिश सुपरिंटेंडेंट अजमेर द्वारा पत्र, दिनाक ८ मई, १८२८ (रा० रा० पु० म०)।

३९ केवेंडिश द्वारा पत्र, दिनाक १० जुलाई, १८२९ (रा० रा० पु० म०)।

४० केवेंडिश द्वारा पत्र, दिनाक १० जुलाई, १८२९ "मराठा शासन के अंतिम वर्ष विक्रम सवत् १८७४ के राजस्व को आधार मानकर जमीदार को प्राप्त राजस्व को आधा भाग लेना उचित है। इस प्रक्रिया के लिए अपने शासन के पाँच या दस वर्ष पूर्व की कुल आय तथा बाद के पाँच या दस वर्षों की आय को नियमानुसार प्रति दस वर्ष मे आधा भाग ग्रहण किया जाकर इस तरह का निर्धारण किया जा सकता है।"

४१ केवेंडिश द्वारा पत्र, दि० १० जुलाई, १८२९।

४२ केवेंडिश द्वारा पत्र, दि० ११ जुलाई, १८२९।

४३ सचिव भारत सरकार द्वारा कार्यवाहक चीफ कमिश्नर अजमेर को पत्र, दि० ९ फरवरी १८३० पत्र सख्या ७, अनुच्छेद ३–४।

४४. उपरोक्त पत्र अनुच्छेद ५।

४५ उपरोक्त पत्र अनुच्छेद ६।

४६ उपरोक्त पत्र अनुच्छेद १४ व १५।

४७ उपरोक्त पत्र अनुच्छेद १७।

४८ उपरोक्त पत्र अनुच्छेद १९।

४९ कर्नल ऑल्वीस, कमिश्नर अजमेर मेरवाडा द्वारा पत्र, दिनाक ३० अप्रेल, १८३५ व जून, १८३७।

५० कर्नल सदरलैंड ए० जी० जी० राजपूताना द्वारा सचिव भारत सरकार पत्र, दि० ■ फरवरी, १८४१ ।

५१ उपरोक्त ।

५२ उपरोक्त ।

५३ उपरोक्त ।

५४ उपरोक्त ।

५५ उपरोक्त ।

५६ उपरोक्त ।

५७ उपरोक्त अनुच्छेद १४ ।

५८ उपरोक्त अनुच्छेद १५ ।

५९ उपरोक्त पत्र अनुच्छेद १० व ४० ।

६० पत्र मई, १८४१ सचिव भारत सरकार द्वारा कमिश्नर अजमेर को पत्र मई १८४१ ।

६१ उपरोक्त पत्र अनुच्छेद ३ और ४ ।

६२ उपरोक्त पत्र अनु० ६ ।

६३ उपरोक्त पत्र अनु० ७ व ८ ।

६४ उपरोक्त पत्र अनु० ९ ।

६५ उपरोक्त पत्र अनु० ९ व १० ।

६६ उपरोक्त पत्र, अनुच्छेद ११, १२, १३, १४ व १५ ।

६७ लेफ्टिनेन्ट गवर्नर आगरा द्वारा पत्र, सचिव भारत सरकार ।

६८ उपरोक्त पत्र अनुच्छेद ।

६९ उपरोक्त पत्र ९–१०–११ अनुच्छेद ।

७० उपरोक्त अनुच्छेद १३ व १४ ।

७१ उपरोक्त पत्र अनुच्छेद १५ ।

७२. उपरोक्त अनुच्छेद १६ ।

७३ उपरोक्त अनुच्छेद १७ ।

७४. उपरोक्त अनुच्छेद १८ ।

७५ उपरोक्त अनुच्छेद १९, २०, २१, २२ ।

७६ राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटीयर्स खंड १-ए अजमेर-मेरवाडा (१९०४) पृ० ६० व जे० डी० लाटूस गजेटीयर्स ऑफ अजमेर-मेरवाडा (१८४५)।

७७ प्रथम डिप्टी सेक्रेट्री परराष्ट्र एव राजनीति विभाग भारत सरकार द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा को पत्र, संख्या ११०७-१ ए शिमला दि० २१ अप्रेल, १९२०।

७८ पत्र क्रमाक ९२१ जी०-सन् १८८२ अजमेर-दिनांक ३० सितम्बर १८८५ टी० सी० प्रोल्डन कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा द्वारा प्रथम असिस्टेंट ए० जी० जी० राजपूताना, चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा को।

७९. फाइल क्रमाक ९५ पृ० ३ (रा० रा० पु० मण्डल)।

८० असिस्टेन्ट सेक्रेट्री परराष्ट्र विभाग द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाड़ा को पत्र क्रमांक २४७-१-ए दिनाक फोर्ट विलियम १७ जनवरी, १९०१।

८१ कमिश्नर अजमेर द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर को पत्र, दि० १३ फरवरी, १९१९।

८२. क्रमाक ५७८, भारत सरकार कार्यवाही रिपोर्ट, परराष्ट्र विभाग दिनाक ५ जून, १८९८ (फाइल क्रमाक ७१)।

८३ डिप्टी कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा द्वारा कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा को पत्र, दिनाक १६ नवम्बर, १८९८।

८४ गश्ती पत्र क्रमाक १०६ ए दिनाक १९ जनवरी सन् १८९१, सचिव उत्तर-पश्चिमी सूबा सरकार द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा को प्रेषित।

८५. उपरोक्त।

८६ उपरोक्त।

८७. उपरोक्त।

८८ उपरोक्त अजमेर रूल्स एण्ड रेग्यूलेशन्स पृ० ११९०।

८९. उपरोक्त।

९० उपरोक्त।

९१ कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाड़ा को पत्र दिनाक १२ जून, १८७४।

९२. उपरोक्त।

९३ उपरोक्त।

९४ उपरोक्त।

९५. उपरोक्त ।

९६ उपरोक्त ।

९७ उपरोक्त ।

९८ आर० केवेंडिश सुपरिटेंडेंट अजमेर द्वारा रेजीडेन्ट राजपूताना को पत्र दि० १० जुलाई, १८२९ ।

९९ उपरोक्त ।

१०० उपरोक्त ।

१०१. डिप्टी कमिश्नर अजमेर द्वारा कमिश्नर अजमेर को पत्र दि० ८ जुलाई, १८६२, क्रमांक २०७ ।

१०२. जे० डी० लाटूश, सेटलमेन्ट रिपोर्ट, १८७४ अनु० १२९ ।

१०३ उपरोक्त ।

१०४ इस्तमरारी एरिया कमेटी रिपोर्ट, (१९३७) ।

१०५ वाडन पोवेल ए मेन्युअल ऑफ दी लैण्ड रेवेन्यू सिस्टम एण्ड लैण्ड टेन्योर्स (१८८०) ।

१०६. इस्तमरारी एरिया कमेटी रिपोर्ट (१९३७) ।

१०७ उपरोक्त—पृष्ठ १२ अनु० १६ ।

१०८. इन ठिकानो के पटेलो की हैसियत व अधिकार महाराष्ट्र के पटेलों जितने नहीं थे । वह केवल प्रमुख ग्रामजन होता था । एक समय उसे विवाह आदि पर नेग या लागें प्राप्त हुआ करती थी, किन्तु बाद मे इनका प्रचलन बद हो गया था ।

१०९ इस्तमरारी एरिया कमेटी रिपोर्ट, १९३७, पृ० १२ अनु० १६ ।

११० उपरोक्त ।

१११ इस्तमरारी एरिया कमेटी रिपोर्ट, (१९३७) पृ० १३ ।

११२. उपरोक्त पृ० १३ अनु० २१ ।

११३ उपरोक्त पृ० १७ अनु० २४ ।

११४. अजमेर भू एव राजस्व नियामक १८७७, धारा २१ ।

११५. इस्तमरारी एरिया कमेटी रिपोर्ट, (१९३७) पृ० ३९ ।

११६ उपरोक्त पृ० २१ अनु० ३० ।

११७ इस्तमरारी एरिया कमेटी रिपोर्ट, १९३७ पृ० २२ ।

११८. उपरोक्त ।

११६. उपरोक्त ।

१२०. उपरोक्त ।

१२१. इस्तमरारी एरिया कमेटी रिपोर्ट, (१६३७) पृ० ३३ ।

१२२. उपरोक्त ।

१२३. केवेंडिश रिपोर्ट, सन् १८२६ ।

१२४. उपरोक्त ।

१२५. एच. मैकॅंजी का पत्र क्रमाक ७४, दिनाक ६ फरवरी, सन् १८३० (रा० रा० पु० म०) ।

१२६. इस्तमरारी एरिया कमेटी रिपोर्ट, (१६३७) पृ० ३५ ।

८

भौम, जागीर व माफी

भौमियां

राजपूताना की भूमि व्यवस्था मे 'भौम भोम' एक अनोखी और विशिष्ट प्रथा थी। 'भौम' का अर्थ है भूमि और इसका स्वामित्व धारण करने वाले को 'भौमिया' कहा जाता था जो सामन्ती सरदार तथा खालसा भूमि के किसान से बिल्कुल भिन्न था।[1] भौमिया सामंती पुलिस-व्यवस्था और स्थानीय अनियमित सैनिकों के तौर पर कुछ सेवाए प्रदान किया करते थे। वे गांव की फसल और मवेशियो को लुटेरो से रक्षा करने के लिए कर्तव्यबद्ध थे।[2] उनके गांव की सीमा के अन्तर्गत जान माल की सुरक्षा की जिम्मेदारी उनकी होती थी। उनकी सेवाए और जिम्मेदारियां केवल उनके अपने गांव तक ही सीमित थी।[3] इन्हे क्षेत्र मे उत्पात दबाने के लिए सूबेदार की सहायता करनी पडती थी, परतु उन्हें अपनी सीमा से बाहर जाने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता था। ये लोग अपने-अपने गांवो की सुरक्षा एव शाति का भार वहन करते आए थे और यदि वे अपने क्षेत्र मे से चोरी गए माल की बरामदगी मे असफल रहते या अपराधियो को पकड नही पाते तो उन्हे चोरी की कीमत जमा करानी होती थी। यही प्रथा सोलहवीं सदी मे शेरशाह ने भी अपनाई थी। उस समय के चौधरियो और मुकद्दमों को जो प्रतिष्ठा और विशेषाधिकार प्राप्त थे उनके उपलक्ष मे वे भी इसी तरह की सेवाए प्रदान करते थे।

कर्नल टॉड के अनुसार भौमिया सशस्त्र किसान होते थे। ये एक तरह के अर्ध सैनिक सामत थे जो राज्य को लगान के उपलक्ष मे सीधी सेवाए प्रदान करते थे। आक्रमण के समय राज्य उनकी सेवाए प्राप्त कर सकता था। इस अवसर पर राजा को उनके भोजन आदि की व्यवस्था करनी होती थी। भौम का भूभाग इतना प्रतिष्ठित होता था कि बडे से बडा ठाकुर भी अपने अधीनस्थ गाँवो मे इसकी प्राप्ति के लिए उत्कंठित रहा करते थे। 'भौम ही एकमात्र ऐसा भूभाग था राज जिसका पुनर्ग्रहण नही कर सकता था और यह भाग सही माने मे पूर्णत वशपरम्परागत था। यद्यपि यह भूमि भी कई व्यक्तियो मे बँटती चली जाती थी तथापि इसकी अनुमति राज्य से प्राप्त करनी पडती थी।[४]

विल्डर ने भौमियो को चौकीदार मात्र माना था।[५] परन्तु अजमेर मेरवाडा के भौमियो की तुलना बगाल प्रेसीडेन्सी के चौकीदारो से नही की जानी चाहिए। अजमेर के भौमिया बगाल के चौकीदारो से सर्वथा भिन्न थे। भौमिया गाँव का बडा आदमी होता था और ग्रामीण समाज उन्हें भय और आदर की नजर से देखता था।[६] सामान्यत वह अपनी गढी मे रहा करता था और गाँव मे उसके रहन सहन का स्तर अच्छा हुआ करता था। राजपूत सैनिक होने के नाते वह तलवार धारण किए रहता था और आर्थिक हालत ठीक होने की स्थिति मे एक दो घोडे भी रखा करता था। वह हल के हाथ तभी लगाया करता था, जबकि परिवार का भरण-पोषण कठिन हो जाता था।[७] उनके विवाह सम्बन्ध मेवाड, मारवाड व जयपुर के ठाकुर परिवारों के साथ समान स्तर पर हुआ करते थे। उसकी आर्थिक स्थिति अच्छी नही होने पर भी उसके वश और रक्त की पवित्रता उज्वल मानी जाती थी। पडोसी रियासतो के ठाकुरो जैसी ही उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा और प्रभाव होता था।[८]

अग्रेजो के शासनकाल मे अजमेर मेरवाडा के भौमियो के निम्नलिखित उत्तरदायित्व थे।[९]

प्रथम—ये लोग जिन गाँवो के भौमिया होते थे, उन गाँवो मे यात्रियों की सपत्ति की चोरी और डाकुओं से रक्षा करना।

द्वितीय—उस जुर्म से हुई क्षति, जिसे रोकना इनका फर्ज था—उसकी पूर्ति करना।

अजमेर मे प्रचालित भौम-व्यवस्था और उससे जुडे हुए कर्तव्यो की व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है—

प्रथम, भौम वशपरम्परागत सपत्ति होती थी। इस भूमि पर राजस्व कर माफ होता था। स्वामित्व राज्य के द्वारा प्रदान किया जाता था। इस तरह यह "माफी'

और "जागीर" से भिन्न होता था क्योंकि माफी और जागीर मे राज्य अपने राजस्व संबधी अधिकार ही उन्हे प्रदान करता था।

द्वितीय—राज्य के विरुद्ध अपराध की स्थिति मे अथवा उन अपराधों में जहाँ व्यक्तिगत संपत्ति जब्त करने का प्रावधान था "भौम" को राज्य पुनर्ग्रहण कर सकता था।

तृतीय—राज्य द्वारा "भौम" के पुनर्ग्रहण कर लेने पर उसमें निहित स्वामित्व के अधिकार के साथ-साथ राजस्व से मुक्ति के अधिकार भी समाप्त हो जाते थे क्योंकि ये दोनो कभी भी पृथक् नहीं माने गए थे।

चतुर्थ—अपने कर्त्तव्यों की अवहेलना या त्रुटि होने पर भोमियो पर जुर्माना थोपा जा सकता था और उस अर्थदंड की पूर्ति न होने तक राज्य उसकी भौम को जब्त कर लेता था।

यदि कोई भोमिया बिना सरकार से पूछे अपनी जमीन हस्तांतरित कर देता तो राज्य उसकी जमीन को पुनर्ग्रहण कर सकता था। राज्य को इसे किसी और को प्रदान करने का अधिकार था।

राजपूताना की अन्य रियासतों मे भी भोमियो को इसी तरह के निम्नलिखित उत्तरदायित्व वहन करने होते थे।[१०]

१—अपने क्षेत्र मे से गुजरने वाले यात्रियो की सुरक्षा का भार इन पर होता था।

२—अपने क्षेत्र मे होने वाली डकैती के लिए वे जिम्मेदार माने जाते थे।

३—वे लोग अपनी 'भौम भूमि' का विक्रय नहीं कर सकते थे।

४—इनकी भूमि करो से मुक्त होती थी।

५—इनसे किसी तरह की पुलिस सेवा नही ली जाती थी।

६—उनके आतरिक मामलो मे हस्तक्षेप अवाछनीय था।

७—भोमिया अपने परिवार मे विवाह, मरण अथवा अचानक ऐसा ही कोई अवसर उपस्थित होने पर इस अतिरिक्त व्यय के वहन-हेतु एक अलग उपकर लागू कर सकता था।

सन् १८२९ म, इस जिले की भौम संपत्तियो के बारे मे विस्तृत जाँच की गई थी। उसके अनुसार भोमियो पर मेरो और डाकुओ से ग्राम क्षेत्र की रक्षा करने का उत्तरदायित्व होता था। वे ग्राम सीमा मे चरने वाले मवेशियो की निगरानी रखते थे और सूबेदार द्वारा तलब किए जाने पर दस या पन्द्रह दिन के लिए उसकी सेवा

मे जाते थे, परन्तु इन दिनो का भोजन आदि का व्यय सूबेदार को वहन करना होता था।[11] केवल राजपूत और पठान ही भौमिया हो सकते थे। इनकी भौम सपत्ति वशपरम्परागत होती थी, सूबेदार को भौमियो की कर्त्तव्यपरायणता मे शिथिलता माने अथवा उनके लापरवाही दिखाने पर जुर्माना करने का अधिकार था। यह कहा जाता है कि चोरी गए माल की क्षति-पूर्ति का प्रावधान प्रारम्भिक भौम-व्यवस्था के साथ जुड़ा हुआ नही था परतु बाद मे मराठा शासनकाल मे लागू किया गया लगता है और कालातर मे यह व्यवस्था मजबूत होती गई और बाद मे इन्हे क्षतिपूर्ति के लिए उत्तरदायी ठहराया जाने लगा। राज्य ने इसकी जिम्मेदारी भौमियो पर हस्तातरित कर दी।[12]

अजमेर-मेरवाडा जिले मे भूमि पाँच तरह की थी—

१—"मुडकटी" अर्थात् पूर्वजो के युद्ध मे मर जाने के कारण राजा द्वारा प्रदत्त।

२—आन्तरिक शाति अथवा जनता के जान-माल की सुरक्षा के प्रयत्नो से प्रसन्न होकर प्रदान की गई।

३—राज्य द्वारा युद्ध मे शौर्य दिखाने पर प्रदान की गई "भौम"।

४—राज्य द्वारा सीमा सुरक्षा-हेतु प्रदान की गई "भौम"।

५—गाँवो मे गश्त और निगरानी के लिए ग्रामजनो द्वारा प्रदत्त "भौम"।[13]

अजमेर मे लगभग सभी भौम सपत्ति उपरोक्त चौथी और पाँचवी श्रेणी की थी। जो लगभग एक दूसरे के समान थी। केवल दो भौम सपत्तियां तीसरी श्रेणी की थीं। यहाँ की सभी 'भौम' सपतिया चाहे उनके मूल उद्‌गम का स्वरूप कैसा भी क्यो न रहा हो चोरी व डकैती का पता नही लगा पाने पर क्षति-पूर्ति के लिए जिम्मेदार थी।[14]

पाँचवी श्रेणी के भौमिया, जिन्हे गाँव के लोगो ने गश्त एव निगरानी के लिए भौम प्रदान की थी, उसका उपभोग राज्य की स्वीकृति से करता था। क्योकि 'भौम' पर राज्य का स्वामित्व होता था न कि गाँव का राज्य इसे उस व्यक्ति को ट्रस्ट के रूप मे प्रदान करता था। इस "ट्रस्ट" के साथ अगर कोई शर्त जुडी होती थी तब उस शर्त के भग होने पर राज्य उस भौम को पुनर्ग्रहित कर सकता था। राज्य द्वारा सीमा क्षेत्रो की रक्षा के लिए प्रदत्त 'भौम' भी सशर्त होती थी, परन्तु इस तरह का भूभाग केवल विश्वासपात्र और प्रतिष्ठित परिवार को ही प्रदान किया जाता था। इस तरह सशर्त भोग वाली भौम का उपभोग करने वाले को उसकी शर्तें

मे राज्य की बिना स्वीकृति के परिवर्तन करने का अधिकार नहीं होता था। इनके विक्रय या बधक के लिए राज्य की पूर्व स्वीकृति आवश्यक थी।[१५]

अजमेर-मेरवाडा की अधिकाश 'भोम' सपत्तियो के बारे म प्रचालित कथन यह है कि आलमगीर और उसके पुत्र शाहआलम के समय इन लोगो को प्रत्येक गाँव मे गाँव वालो की मेरो और चीतो के आक्रमण से रक्षा करने के लिए भूमि प्रदान की गई थी। मुगल शासन द्वारा इनको सभी तरह के करो से मुक्त रखा गया था।[१६] इस जिले के हस्तातरण के समय भौमिया "भोम" और 'मापा' नामक कर वसूल करते थे। भोम शुल्क उन सभी चीजो पर लगता था जो रास्ते मे से गुजरते समय रात पडने पर उक्त गाँव मे रहती थी। मापा शुल्क गाँव मे बेची जाने वाली सभी चीजो पर कृषि सामग्री को छोडकर वस्तु के मूल्य के कुछ प्रतिशत के आधार पर ली जाने वाली राशि होती थी। विल्डर के प्रतिनिधित्व पर ये शुल्क समाप्त कर दिए गए थे। इनकी समाप्ति से इस्तमरारदारों को हुई क्षति का उन्हें मुआवजा प्रदान किया गया परन्तु यह मुआवजा उसके वास्तविक हकदार भौमिया को प्राप्त नहीं हुआ था।[१७]

मराठो ने इस क्षेत्र पर अधिकार स्थापित करने पर भौमियो से "भोमबाब" व "भोम दस्तूर" वसूल करना प्रारम्भ किया था।[१८] प्रति दूसरे वर्ष इस्तमरारदारो के समान इनसे भी अनिश्चित राशि भौमिया की हैसियत और फसल के आधार पर वसूल करते थे।[१९]

केवेंडिश के समय मे कानूनगो द्वारा सगृहीत रिपोर्ट के अनुसार ऐसा प्रतीत होता है कि सन् १७५२ मे जोधपुर नरेश बख्तसिंह ने "भोमबाब" वसूल की थी। उन्होने यह कर केवल एक साल ही लिया। इस आशय का कोई लिखित प्रमाण उपलब्ध नहीं है कि उन्होने "भोमबाब" के रूप मे कितनी राशि कितने "भौमियो" से वसूल की थी। १७९२ मे स्थानीय मराठा अधिकारी शिवाजी नाना के समय से "भोमबाब" नियमित रूप से वसूल होता रहा। यह कर उन्ही प्रमुख भौमियो से वसूल किया जाता था जो हैसियतदार होते थे और इस कर की राशि उनकी हैसियत के अनुसार ही कम या अधिक हुआ करती थी। इसकी वसूली के पीछे कोई सिद्धात या निश्चित प्रक्रिया नही थी। शिवाजी नाना ने अपने दस वर्षों के प्रशासनकाल में केवल एक बार ही यह कर सगृहीत किया था। तदुपरात ९ वर्षों मे यह कर प्रति तीसरे साल वसूल किया जाने लगा और तातिया सिंधिया ने इसे प्रति दूसरे साल वसूल करने की प्रथा जारी की थी। आगामी ९ वर्षो मे यह कर पाँच बार वसूल किया गया था। इस तरह अग्रेजो के शासनकाल के पूर्ववर्ती वर्षों मे यह केवल दस वर्षों के लिए ही सगृहीत हुआ था। इस कर को प्रति दूसरे वर्ष वसूल नही करने का कारण मराठों द्वारा भौमियो के प्रति अपनी उदारता बतलाया गया था।[२०]

सन् १८१८ मे जब यह जिला अंग्रेजों को हस्तांतरित हुआ तब भौमिया प्रति दूसरे वर्ष "भौमवाब" चुका रहे थे। हस्तातरण के ठीक पूर्व जो राशि इस कर की मद मे प्राप्त हुई थी उसे आधार मानकर विल्डर ने ८,४०८ रुपए १२ आने ६ पाई इस कर से राज्य की आय निर्धारित कर दी थी। यह राशि प्रति दूसरे वर्ष सन् १८४२ तक वसूल होती रही। सन् १८४२ मे 'पटेलवाब' और 'फौजखर्च' के साथ इसे भी समाप्त कर दिया गया था।[२१] अजमेर के कमिश्नर सदरलैंड ने गवर्नर जनरल को अपनी रिपोर्ट मे इसकी आलोचना करते हुए लिखा था कि फौजखर्च और पटेलबाब सहित ये मराठा उपकर इस्तमरारदारो पर भारी बोझ है और जिस प्रजा से ये वसूल किए जाते हैं उसका इस्तमरारदार व किसान की स्थिति पर गहरा दुष्प्रभाव पड़ता है।[२२] लगभग तीन वर्षों तक सदरलैंड द्वारा उत्तरपश्चिमी सूबे और सर्वोच्च भारत सरकार के बीच एक लम्बे पत्र-व्यवहार के पश्चात् गवर्नर जनरल ने "भौमबाब" और भौम दस्तूर को पूर्णत बिना किसी शर्त के समाप्त किया था।[२३] इस कर को समाप्त करते समय गवर्नर जनरल ने भौमियो को यह हिदायत दी थी कि सरकार ने जिस तरह इन करो को समाप्त कर उन्हे लाभान्वित किया है, उसी तरह वे भी गाँव से उक्त कर की वसूली समाप्त कर ग्रामीणो को लाभ पहुँचाए।

सन् १८५६ तक भौमिया गाँव वालो से कई तरह के उपकर वसूल करते थे। ये उपकर जिन्हे 'लाग' कहा जाता था सामाजिक जीवन के हर पहलू और प्रक्रिया पर लगते थे। भौमियां होली और दशहरे पर भेंट वसूल करते थे, अपनी गढी की मरम्मत के लिए गाँव के लोगों से बेगार लेते थे तथा प्रतिवर्ष गाँव से उन्हें एक बकरा भेंट होता था और कुछ गांवो मे इसके बजाय 'भैंसा' लेने की व्यवस्था थी। गाँव के बलाई को प्रतिवर्ष भौमिया के कुँए के लिए एक चरस और जूतो की जोडी देनी होती थी। प्रत्येक खेत से वे अन्न के ७० पूले लेते थे तथा कुछ गाँवो से केवल प्रति खेत मुट्ठी भर अन्न ही वसूल किया जाता था। भौमिया के ज्येष्ठपुत्र के विवाह पर ग्रामीणो को उसे भेंट देनी होती थी। प्रत्येक गाँव वाले को अपने घर मे भी शादी के अवसर पर भौमिया के यहाँ चँवरी और 'कांसा' भेजना पडता था। कर्नल डिक्सन ने यह सुझाव दिया था कि 'भौमवाब' के समाप्त हो जाने के कारण इससे सबधित सभी 'लागें' भौमियो द्वारा ग्रामवासियो से वसूल करना भी समाप्त हो जानी चाहिए तथा विवाह के अवसर पर कांसा भेजना गाँववालों की इच्छा पर छोड देना चाहिए। सरकार ने कर्नल डिक्सन से पूर्ण सहमति प्रकट करते हुए सन् १८५४ मे उन्हे अपने प्रस्तावो को व्यावहारिक रुप देने का आदेश दिया था।[२४]

सन् १८३० मे सरकार ने भौम जमीन का समय-समय पर बदोबस्त का अधिकार रखा था।[२५] परतु अजमेर के चीफ कमिश्नर सदरलैंड का यह मत था कि जिस तरह इस्तमरारदारो पर सरकार ने बदोबस्त के अधिकार का परित्याग किया

था उसी आधार पर सरकार को 'भौम' पर भी इस अधिकार को भी त्याग देना चाहिए। वह इस मत के थे कि दोनों भूभाग यद्यपि पृथक् हैं, तथापि उनका आधार एक ही है व अन्तर केवल इतना ही है कि तालुकेदार सेवा के उपलक्ष मे शुल्क प्रदान करते रहे हैं, जबकि भोमियो को यह माफ किया जाता रहा है।[२६] सदरलैंड की सिफारिश पर सरकार ने भोम पर पुन कराधान का अधिकार सन् १८७४ मे त्याग दिया था।[२७]

उस समय जिले म कुल १११ भौम थे[२८] और वे निम्नांकित प्रकार से विभाजित थे —

	भौम-भूसपत्तियों की संख्या	गाँवों की संख्या
राठौड़	८२	७८
गौड़	९	८
कछवाहा	६	५
सिसोदिया	१	१
पठान	९	९
सय्यद	१	१
मेर	१	१ कोयाज
चीता	१	१ सोमुलपुर
मुगल	१	० बोर
	१११	१०४

इनमे से अंतिम तीन 'भौम' नही मानी गई थी। वास्तविक भौम भूसपत्तिया १०८ थी। भौम सपत्तियो के उद्‌गम का पता लगाना कठिन है। यद्यपि इनमे से आधी दिल्ली के सम्राटो के द्वारा प्रदान की गई थी तथा आधे से अधिक भौम राठौडो के पास थी जो अपने आपको पडोसी रियासतों के राजा महाराजाओं के रिश्तेदार मानते थे। केवेंडिश के समय मे केवल ६ गाँवो के भोमिया ही सनदें प्रस्तुत कर पाए थे, शेष का कहना था कि मराठो के कुशासन और अराजकता के काल में उनकी सनदें या तो नष्ट हो गई थी अथवा खो गई थी। ख्वाजापुर की सनद जफरखा को सन् १७४० म गोविन्दराव ने प्रदान की थी जिसके अनुसार जफरखा पर अजमेर से राजोरिया तक की सडक की सुरक्षा का भार था। इसी प्रकार दौलतराव व सिंधिया द्वारा अर्जुनपुरा के भौम की सनद ठाकुर धनसिंह को प्रदान की गई थी।[२९]

बडगांव के लिए महाराजा सिंधिया की सनद थी, जिसमे यह घोषित किया गया था कि यहाँ की जमीदारी पुराने जमाने से ही जफरखा के यहाँ चली आ रही है और अमलो को निर्देश दिए गए थे कि उसके वशजो को परम्परागत भौम के सभी हकों और हकूको का उपभोग करने दिया जाए।[३०]

केकडी के भौमिया को दिल्ली के मुगल सम्राट् फर्रुखसय्यद ने अपने शासन के चौथे वर्ष मे सनद प्रदान की थी जिसमे परगना केकडी के सभी कानूनगो और चौधरियो को आगाह किया गया था कि १००० बीघा जमीन, एक बाग और एक रहने का मकान राजसिंह राठौड को प्रदान किए गए थे।[३१]

नाद भौम के लिए महाराजा अभयसिंह द्वारा, हिन्दूसिंह, हिम्मतसिंह एव बखतसिंह के नाम सनद थी जिसमे लिखा था कि उक्त व्यक्तियो ने गुजरात मे सरबुलदखा के साथ लडाई मे बहादुरी दिखाई और कुंवर दुल्लेसिंह उस युद्ध मे मारा गया था अतएव १३३१ बीघा जमीन प्रदान की जाती है।[३२] केवल उपर्युक्त दस्तावेज ही भौमिया अपने प्रमाण मे प्रस्तुत कर सके थे। इनमे भी अर्जुनपुरा, ख्वाजापुरा और बडगांव की सनदो से यह कही भी स्पष्ट नही होता है कि इनकी मूल शर्ते क्या थी। नाद के भौमियो द्वारा प्रस्तुत सनद वास्तविक थी, परन्तु इसमे भी यह नही लिखा था कि यह भेंट सशर्त है और यह उल्लेख भी नही था कि यह भौम सेवा के उपलक्ष मे है। केकडी की सनद भी एक सामान्य राजस्व मुक्त जागीर के सामान्य पट्टा जैसी ही थी। यदि "भौम" अन्य राजस्व मुक्त जागीरो की अपेक्षा स्थाई स्वामित्व एव प्रतिष्ठा सूचक नही होती तो जूनिया जैसे ठिकाने का शक्तिशाली ठाकुर अपने आपको केकडी का भौमिया कहलाने मे कभी गौरव अनुभव नहीं करता। जूनिया के ठाकुर ने केवेंडिश के समक्ष यह कहा था कि सम्पूर्ण केकडी का कस्बा मुगल सम्राट औरगजेब ने किशनसिंह की शानदार सेवाओ के उपलक्ष मे उन्हें जागीर मे प्रदान किया था। उसके ठिकाने मे चौकीदारो की व्यवस्था थी और वह किसी भी तरह की आर्थिक क्षति के लिए अपने को जिम्मेदार नहीं मानते थे।[३३]

इन १०८ भौम मे प्रत्येक भौम के अन्तर्गत औसत भूमि ४६४ बीघा थी, परन्तु इन भौम मे २१०२ हिस्से थे, इस तरह प्रत्येक भौम मे औसतन बीस भागीदार थे जिनमे प्रत्येक के हिस्से मे औसतन २६ बीघा १४ बिस्वा भूमि आती थी। पुराने बदोबस्त की शर्तो के अन्तर्गत इनका कराधान किया जा चुका था और इनमे से प्रत्येक को १७ रुपए ८ आने राजा को देना पडता था।[३४]

सन् १८४३ के पूर्व प्राय सभी भौमिया अपनी भौम को वश-परम्परागत मानकर बधक भी रख देते थे जबकि उन्हे यह अधिकार प्राप्त नही था। वे लापरवाह और आलसी हो गए थे तथा अपने गाँवो की रक्षा करने योग्य भी नही रह गए थे। ये लोग न तो घोडे रखन का खर्च ही वहन करने की स्थिति मे थे और न चौकीदार

ही रख सकते थे। जब कभी इनके क्षेत्र में चोरी या डकैती पड़ने पर इन लोगों की क्षतिपूर्ति के लिए कहा जाता तो ये अपनी भौम के बधक होने का बहाना कर उसे टाल जाते थे। इन भौमिया के पास सवारी के साधन और शस्त्र नही होने के कारण ये लोग अपने क्षेत्र की चौकसी व निगरानी करने म असमर्थ थे।[३५] जब एक बार भूमि को बधक रख दिया जाता तो महाजन अपने कर्ज की डोरी को इतना कस देता था कि वह भूमि कभी छूट कर इन्हे वापिस प्राप्त नही हो पाती थी।

इसलिए सन् १८४३ मे सरकार ने यह आदेश जारी किए कि कोई भी भौमिया अपनी भूसपत्ति को न तो विक्रय ही कर सकता था और न उसे बधक ही रख सकता था। इस आदेश का पालन नही करने वालो के लिए दड का प्रावधान रखा गया था। महाजनो को यह आदेश दिया गया था कि वे भौम सपत्ति को बधक नहीं रख सकते हैं। उन्हे यह निर्देश दिए गए थे कि वे अपने ऋण की वसूली अन्य साधनों द्वारा अथवा भौमिया की दूसरी सपत्ति से करें। सरकार ने यह भी घोषणा कर दी थी कि यदि किसी ने भौम सपत्ति को बधक रखा, अथवा किसी ने उस सपत्ति को बधक के रूप मे स्वीकार किया है तो बधक भौम सपत्ति का दावा कोई भी न्यायालय स्वीकार नही करेगा तथा बधक स्वीकार करने वाला इस भौम के उपयोग से वचित रहेगा। सरकार ने यह नियम बना दिया था कि यदि किसी गाँव की सीमा मे कोई अपराध घटित होगा तो उसकी क्षतिपूर्ति भौम से होगी और इस बारे मे किसी भी तरह का बहाना स्वीकार नही किया जाएगा। सभी भौमियो को व भौम सपत्ति को बधक के रूप मे स्वीकार करने वालो को उक्त आदेश से अवगत *करा दिया गया था।*[३६] *इस आदेश के बावजूद भी भौमिया अपनी जमीनें बधक* रखते रहे, फलस्वरूप सन् १८४६ मे कर्नल डिक्सन को इस प्रक्रिया के विरुद्ध कडी आज्ञा जारी करनी पडी। सरकार ने इनको दिए गए शर्तनामें मे यह लिख दिया था कि वे अपनी भौम का विक्रय नही करेंगे और न उसे बधक ही रख सकेंगे।[३७]

सरकार को विक्रय और बधक पर प्रतिबध इसलिए लागू करना पडा क्योकि, यदि सरकार भौमियो के अपनी भौम को अन्य पक्ष के हाथो विक्रय और बधक के अधिकार स्वीकार कर लेती तो अन्य पक्ष को प्रदेश के सामान्य नियमो के अन्तर्गत इन भौमो से जुडे अधिकार तथा उत्तरदायित्व भी वहन करने पडते जो कि मूल स्वामी को प्राप्त थे। सरकार की यह धारणा थी कि मालदार सूदखोर महाजन भौमियो की तरह कुशल और चुस्त चौकीदारी एव निगरानी की व्यवस्था नहीं कर सकते थे।

राजपूताने की कुछ रियासतो मे भौमियो को अपनी भौम-सपत्ति केवल दो अवसरो पर ही बधक रखने की अनुमति थी। वे पिता के अन्तिम सस्कार के व्यय को *वहन करने के लिए तथा अपनी अथवा अपने पुत्र की शादी व्यय के लिए बधक रख*

सकते थे। परन्तु उसके लिए बंधक रखते समय अपने निर्वाह योग्य तथा निगरानी एवं चौकसी के कार्य मे बाधा न पड़े, इस लिए उचित भूमि अपने पास रखना अनिवार्य था। अजमेर-मेरवाडा के कार्यग्राहक कमिश्नर कर्नल ब्रूक्स ने सभी रियासतो के वकीलों के साथ पूरे दरबार में इस प्रश्न की चर्चा की थी जिसमे उन्होने यह राय प्रकट की थी कि भोम राज्य की स्वीकृति से ही बंधक रखी जा सकती थी, क्योंकि जिन कार्यों के लिए भोम दी गई थी उनके पालन करवाने का उत्तरदायित्व राज्य पर था।[३९] कर्नल डिक्सन ने इस भूसपत्ति की व्याख्या करते हुए कहा था कि भोम "चौकसी एवं निगरानी के लिए सरकार द्वारा प्रदत्त भूमि है जिस पर भोमियो को स्वामित्व का अधिकार नहीं है।"[३३] कर्नल डिक्सन द्वारा बंधक के विरुद्ध आज्ञा जारी होने के बाद भी भोम के विक्रय एवं बंधक के उदाहरण सरकार के समक्ष आते रहे। प्रशासन को इन भोमियों के विरुद्ध कानूनी कदम उठाने मे कठिनाई अनुभव होती थी क्योंकि सरकार को पहले यह निर्धारित करना था कि भोमिया अपनी भोम-सपत्ति मे स्वामित्व का अधिकार रखते हैं या नही और क्या भोम जिस सेवा के उपलक्ष मे इन्हें प्रदान की गई थी उसकी पूर्ति के अभाव मे अन्य भोम की तरह उस पर सरकार राजस्व एवं कराधान लगा सकती थी या नही ?[४०] अजमेर के तत्कालीन डिप्टी कमिश्नर के अनुसार भोम "पूर्ण स्वामित्व के अधिकारो सहित राजस्व एवं कर रहित भूमि थी।"[४१] अतएव उन्होने इस प्रश्न को स्पष्टीकरण के लिए भारत सरकार के सम्मुख प्रस्तुत किया था। भोम पर भोमियो के मालिकाना हक के बारे मे कर्नल डिक्सन के बाद के काल मे भी भ्रम बना हुआ था।

ब्रूक्स के अनुसार विभिन्न तरह के 'भोम' प्रचलित थे अतएव उनके साथ व्यवहार मे भी भिन्नता आवश्यक थी। उन्होने इस प्रश्न को केवल राजस्व की समस्या न मान कर सामान्य नीति का प्रश्न माना था। उन्होने सरकार को यह सुझाव दिया था कि प्रथम चार श्रेणी के भोमियो के साथ व्यवहार करते समय पाँचवी श्रेणी के भोमिया को पृथक् रखना जरूरी है। उनकी मान्यता के अनुसार प्रथम चार श्रेणी वाले भोमियो में से कतिपय ऊँचे घरानो के थे और उनके परिवार का जयपुर और मेवाड के ठाकुर परिवारो के साथ विवाह सबंध एवं बराबरी का रिश्ता कायम था। अतएव उन्हे अपनी भूमि से वञ्चित करना उचित नहीं होगा, उन्हे अपनी भोम के विक्रय एवं बंधक के अधिकार दिए जाने चाहिए। जहाँ तक पाँचवी श्रेणी के भोमियो का प्रश्न था जिन्हे भोम चौकसी एवं निगरानी सेवा के लिए दी गई थी, उनका मत था कि इस भोम को सशर्त मानी जाए और इस तरह की भोम यदि बेची या बंधक रखी जाती है तो नए बदोबस्त के अन्तर्गत उन पर कराधान लागू किया जाना चाहिए।[४२]

जे सी. ब्रूक्स के अनुसार चौकसी एवं निगरानी की सेवा के निमित्त स्वीकृत

सभी "भौम" से कर वसूल किया जाना चाहिए क्योंकि पहले भी इनसे कर लेना औचित्यपूर्ण माना गया था। उन्होंने इन 'भौम' पर 'भौमबाब' और 'भौम दस्तूर' फिर से लागू करने का सुझाव दिया था क्योंकि, राजपूताने की अन्य रियासतो में यह 'भौम' कभी भी सर्वथा कर मुक्त नही रही थी और भौमिया पहले सदा 'भौमबाब' और 'भौम दस्तूर' चुकाते रहे थे। अंग्रेजो के शासनकाल मे ही सन् १८४२ तक इनसे 'भौमबाब' और 'भौम दस्तूर' वसूल किया जाता था। सन् १८४२ में सरकार ने फौजी खर्च के साथ-साथ इसे भी समाप्त कर दिया था। ब्रुक्स के अनुसार फौजखर्च नियमित राजस्व वसूली के अतिरिक्त मराठो द्वारा थोपी गई 'लाग' थी जबकि 'भौमबाब' इस तरह की कोई अनियमित प्रथा नही थी।[४३]

इन सभी बाधाओ और भ्रम की स्थिति को समाप्त करने के लिए गवर्नर जनरल की कौंसिल ने भौम सपत्तियो के बारे में सन् १८७१ मे निम्न सिद्धांत स्वीकार किए —

१ किसी भी तरह की भौम जो प्राप्तकर्ता या उसके परिवार के अधिकार मे हो उस पर कराधान नही किया जाए।

२ सभी भौम-सपत्ति जो स्थाई रूप से हस्तातरित की जा चुकी है अथवा भविष्य मे हस्तानरित हो उस पर करायान लागू किया जाए।

३ सभी सशर्त भौम जो चौथी और पाँचवी श्रेणी के अन्तर्गत आती हो यदि अस्थायी रूप से हस्तातरित की जा चुकी है अथवा भविष्य मे की जाए तथा उससे सम्बद्ध शर्तों की पूर्ति होने की सभावनाए नहीं हों तो इन पर कराधान लागू किया जाए।

४ सशर्त भौम, स्वामी के जीवन पर्यन्त के लिए ही बधक रखी जा सकती है। गवर्नर जनरल 'भौमबाब' को पुन लागू करने के पक्ष में तो नही थे, परतु वे यह अवश्य चाहते थे कि इन 'भौम' के साथ सेवा सबधी जो शर्त जुडी हुई है वह इनसे भौम सपत्तियो के अनुपात मे ली जाय। गवर्नर जनरल की यह राय थी कि यदि इनका उपयोग चोरियो की रोकथाम मे नही किया जा सके तो कम से कम उन्हे क्षतिपूर्ति के लिए उत्तरदायी बनाया जाए। बधक और विक्रय प्रतिबधित हो और इनके उल्लघन पर 'दण्डस्वरूप' 'भौम' पर कराधान लागू किया जाना चाहिए तथा अबतक की हस्तातरित सभी 'भौम' पर पूरा कराधान लागू होना चाहिए।[४४]

सन् १८६६ के एक्ट को इस जिले मे लागू कर देने पर डिप्टी कमिश्नर ने सभी भौमियो को अपना नाम चौकीदारो की सूची मे दर्ज करवाने के आदेश प्रदान किए थे। जिन्होंने व्यक्तिगत चौकीदारी करने मे असमर्थता प्रकट की थी उन्हें अपने

क्षेत्र मे प्रति २० बीघा सिंचित भूमि पर एक चौकीदार के अनुपात मे चौकीदार रखने व ६० रु० प्रति चौकीदार प्रतिवर्ष उनकी तनखा चुकाने के लिए बाध्य किया गया। सभी भौमियो ने इस आधार पर कि इस तरह की व्यवस्था भौम पट्टेदारी मे नही है, इस आदेश के विरुद्ध प्रार्थना-पत्र प्रस्तुत किए। यद्यपि इन भौमियो के निवेदन पर कोई निर्णय नहीं हुआ तथापि डिप्टी कमिश्नर का आदेश भी क्रियान्वित नहीं किया गया।[४५]

भौमियो में उत्तराधिकार की प्रथा स्पष्ट थी और व्यवस्थित रूप से चली आ रही थी। १६ भौम सपत्तियो मे ज्येष्ठ पुत्र का अधिकार माना जाता था, १० भौम मे बडे लडके को अपने छोटो के हिस्सो से कुछ बडा भाग मिला करता था। शेष भौम सामान्य उत्तराधिकार नियमो के अनुसार बँटा करती थी।[४६]

व्यवस्थित चौकीदार प्रथा स्थापित होने से पूर्व भौमिया चौकसी एव निगरानी का कार्य किया करते थे। उनके हलके मे चोरी और डकैती की घटनाओं पर उनका यह फर्ज होता था कि वे अधिकारियो को सूचना प्रदान करें। परन्तु वे ऐसा कभी नही करते थे क्योंकि उन्हें क्षतिपूर्ति का डर रहता था। इतना ही नही जब पुलिस अधिकारी घटना की जाँच पडताल के लिए गाँव मे पहुँचते तो भौमिया उनकी कोई मदद नहीं करते थे।[४७] पुलिस जब कभी घटना की जाँच के लिए गाँव मे पहुँचते तो भौमिया आपस में ही इस बात को लेकर विवाद प्रारम्भ कर देते थे कि उस दिन किसकी चौकीदारी थी।[४८]

भौमियों की नियुक्ति उस काल मे हुई थी जब सरकार की अपनी व्यवस्थित पुलिस नहीं थी, अतएव उस समय कदाचित् यही व्यवस्था उत्तम रही होगी कि कुछ लोगों को भूमि प्रदान करके उसके बदले म यात्रियों और ग्रामीणो की जान माल की सुरक्षा व्यवस्था इनके हाथो सौंप दी जाए। परन्तु जब सरकार ने अपनी नियमित पुलिस व्यवस्था गठित कर ली तब भौमियो का उपयोग समाप्त हो गया था और भौम व्यवस्था की आवश्यकता और उपयोगिता उस अराजकता के युग के समाप्त होने के साथ ही नष्ट हो गई थी। भौम मे हिस्सा पाने वाले की औसत आय १७ रुपए के लगभग थी, अतएव उसकी सपत्ति से क्षतिपूर्ति की आशा निरर्थक थी।[४९] उनकी सेवाओं का समुचित उपयोग कर पाना और इनसे पहले जैसी सेवाए प्राप्त करना भी असभव था। समय इतनी तेजी से बदल गया था और पुलिस के कर्तव्यो को इतना सुस्पष्ट एव नियमित कर दिया गया था कि सरकार द्वारा इसका 'पुलिस-व्यवस्था" के लिए उपयोग करना सभव नही रहा था।

अब सरकार के समक्ष यह समस्या उत्पन्न हो गई थी कि भौमियो का कैसे उपयोग किया जाए। इस समस्या पर विचार करने के लिए सरकार ने अजमेर के डिप्टी कमिश्नर मेजर रिपटन की अध्यक्षता मे एक समिति गठित की थी।[५०] यह

समिति इस निर्णय पर पहुँची कि भौमिया जिस प्रकार की सेवाए पहले प्रदान किया करते थे, अब उनकी आवश्यकता नही रह गई है अतएव इस दिशा मे उन्होने निम्न सुझाव प्रस्तुत किए —

१ भौमियो द्वारा गांवो की सुरक्षा का कार्य तथा उनके द्वारा चोरी और डकैती की क्षतिपूर्ति की जिम्मेदारी समाप्त कर दी जाए ।

२. गांवो मे दगों की स्थिति शात करने तथा चोरो और डाकुओ का पीछा करने मे उनका उपयोग किया जाना चाहिए ।

३. प्रत्येक भौमिये को सम्राट के जन्म दिवस पर डिप्टी कमिश्नर के कार्यालय मे उपस्थित होकर नजराना भेंट करना होगा ।

४ नजराना की राशि पुराने 'भौमबाब' कर की राशि ४,२०० रुपए वार्षिक के आधार पर निश्चित की जानी चाहिए और यह भोग की सभी जोतो मे उचित रूप से मौजूदा पैमाइश के आधार पर विभाजित की जानी चाहिए ।

५ भौम की जमीन को ऋण की अदायगी स्वरूप कुर्क नहीं किया जाए और न इस भूमि को किसी को बेचा या बधक रखा जाए । यदि इस आदेश का उल्लघन करे तब इस तरह की बधक या बेची गई भूमि पर पूरी दरो से राजस्व वसूल किया जाए । परतु यह नियम भौमियों के आपसी हस्तातरण पर लागू नही था ।

६ उपर्युक्त शर्तों का उल्लेख करते हुए प्रत्येक भौमिये को सनदें प्रदान की जाए ।[५१]

भौम समिति ने 'भौम' के पुनर्ग्रहण का सुझाव इसलिए स्वीकार नहीं किया क्योकि ऐसा कदम राजपूताने मे कही भी प्रचलित नही था और इससे व्यापक असतोष भड़कने की भी आशका थी । बेदखल हुआ भौमिया लूटपाट और डकैती का मार्ग ग्रहण कर सकता था और वह लोगों की सहानुभूति और सहयोग भी प्राप्त करने मे समर्थ हो सकता था । अतीत म किसी भी भौमिये को अपने कर्तव्य की अवहेलना करने के अपराध मे कभी भी बेदखल नही किया गया था । इस सदर्भ मे दड केवल जुर्माने अथवा चोरी गई सम्पत्ति की क्षतिपूर्ति तक ही सीमित रहता था ।[५२]

सरकार की नीति पुरानी भूभाग व्यवस्था और प्रथाओ के साथ समयानुकूल परिस्थितियो के अतर्गत सामजस्य स्थापित करने की थी । अग्रेज सरकार यह नही चाहती थी कि पुरानी प्रथा को समाप्त कर उसके स्थान पर नई व्यवस्था जो पुरानी व्यवस्था के मुकाबले भले ही अच्छी हो, स्थापित की जाए क्योकि नई व्यवस्था

को एकाएक ग्रहण कर लेना भी संभव नहीं था।[२३]

सरकार ने सन् १८७४ में भौम समिति की रिपोर्ट में सुझाए गए प्रस्तावों को स्वीकार कर लिया था।[२४] इसी वर्ष भौमियों को चौकीदारी और निगरानी की सेवाओं से तथा हर्जाने के उपलक्ष में क्षतिपूर्ति वाले प्रावधान से पूर्णतः मुक्त कर दिया गया था।[२५] इन लोगों को वंशपरम्परागत जागीरदार और माफीदारों की श्रेणी में घोषित किया गया और उनकी जोतों को लगान मुक्त रखा गया।[२६] सन् १८७५ में सरकार ने भौमियों को सनदें प्रदान की जिनमें उनके भावी भू भाग की शर्तें निहित थी। उसके बाद उनमें किसी तरह का परिवर्तन नहीं किया गया। अंग्रेज सरकार ने भौमियों को उनकी अधिकांशतः पुरानी जिम्मेदारी से मुक्त कर दिया था परन्तु उनके विशेषाधिकार कायम रहने दिए थे।

जागीर —

जागीर भूसम्पत्तियां अजमेर जिले में एक दूसरी ही तरह की कर रहित जोतें थी। इनको राजपूताने की रियासतों में प्रचलित जागीरदारी व्यवस्था के अनुरूप नहीं समझना चाहिए। ये अधिकांशतः अंग्रेजों से शासित प्रदेशों के धार्मिक एवं पुण्यार्थ के कामों के लिए दान अथवा भेंट के तौर पर प्रदत्त भूमि थी। जागीर में प्राप्त सम्पूर्ण गांव या गांव में कुछ भाग थे। प्रारम्भ में जागीरदार केवल भूराजस्व का अधिकारी होता था, परन्तु कालांतर में उसके हितों में व्यापक विस्तार हो गया था।[२७]

सन् १८१८ में जिले के हस्तांतरण के समय ऐसे ६४ गांव थे। इनमें से पांच गांव—सूरजकुण्ड, आधा नादना, भूट्टी, नाथाथुला और खानपुरा विल्डर के कार्यकाल में सरकार के आदेश से पुनर्ग्रहित कर लिए गए थे।[२८] केवेंडिश के कार्यकाल में ऐसे ५६ जागीर गांव थे। सन् १८३० में नवाब हाकिमखान के निधन पर छतरी गांव तथा सन् १८३६ में दीवान मेंहदी अली खोरी के निधन पर गरारका सरकार ने अपने अधिकार में कर लिए थे। गोलास गांव पुष्कर स्थित ब्रह्माजी के मन्दिर की जागीर थी और नंदरामपुरा तथा हरमाडा आपाजी सिंधिया के समाधि-स्थल की जागीरें थी। १२ दिसम्बर, १८६० में अंग्रेज सरकार और सिंधिया के मध्य हुई संधि के अनुसार सिंधिया ने अपनी अजमेर स्थित जागीरें भी अंग्रेजों को हस्तांतरित कर दी थीं। ये पाँचों गांव स्थाई रूप से अजमेर के खालसा भूमि में सम्मिलित कर लिए गए थे तथा मंदिर व छतरी के लिए इन गांवों से राजस्व वद्ध हो गया था। इस प्रकार कुल ५२ जागीरें शेष रहीं, जिनमें ४६ पूरे जागीर गांव और तीन में कुछ भाग जागीरों का था व कुछ खालसा का था। बाद में राजगढ़ व नीलसेरी के गांव भी जागीरों में स्वीकार कर लिए जाने पर जागीरों की कुल संख्या ५४ हो गई थीं। इन जागीरों में दो गांव डेवू और अकरी में आधी वापिस

आमदनी इन गाँवो के दोनो जागीरदारो को दी जाती थी और आधी सरकार को प्राप्त होती थी।[५९] नादला गांव भी स्पष्टत दो भागो मे विभाजित था। इस तरह जागीर गाँवो की वास्तविक सख्या साढे इक्यावन अथवा बावन (५२) थी।[६०]

जागीर गांव निम्न तीन श्रेणी मे विभक्त थे:—

१ सस्थानो की भेंट गांव अथवा सस्थान के सबध कार्यवाहको को भेंट।

२ व्यक्तिगत प्रदत्त ग्राम।

३. नियमों को प्रदत्त गांव। इनमे किसी के नाम नही दिए गए थे। इसके राजस्व का वे सभी लोग उपभोग करते थे जो उसकी सीमाओं मे आते थे।[६१]

प्रथम श्रेणी के अतर्गत निम्न सस्थान, उनके नाम के समक्ष उल्लिखित जागीरो का उपभोग करते थे —

१. दरगाह ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती.—

१७ गांव परवतपुरा, चाँदसेन, ख्वाजापुरा, केर आधा मेसाना, ख्वाजपुरा, भैरवार, कुर्डी, पीचोलिया, तिलोरा, कणिया, बुधवारा, कदमपुरा, किशनपुरा, केकरान, दातरा।

२. दरगाह मीरां साहिब.—

३ गांव-डोरिया, सोमलपुरा, करिया।

३ चिल्लापीर दस्तगीर —

१ गांव मालपुरा।

४. नाथद्वारा मदिर.—

१ गांव-भवानीखेड़ा।

५. छतरी श्रीजीराव —

२ गांव लाली खेड़ा और भगनपुरा।

६. दुधारी पुण्यार्थ ट्रस्ट —

१ गांव-नालाशिवरी।

जागीर कमिश्नर ने द्वितीय श्रेणी की जागीरो मे दो तरह के जागीरदारों को मान्यता प्रदान की थी। एक तो व्यक्तिगत जागीरें जिनमे ज्येष्ठ पुत्र को उत्तराधिकारी के रूप मे जागीर का स्वामित्व ग्रहण हुआ करता था और इनके अधिकारो मे आधे गांव स कम भूसपत्ति नही रहती थी। दूसरी वे जागीरें जो कि आधे गांव से भी कम थी।[६२]

इन जागीरदारों में भूमि सभी उत्तराधिकारियों में विभाजित हुआ करती थी। वे आपस में इनको विक्रय व बंधक से हस्तांतरित कर सकते थे। परन्तु बाहर के व्यक्तियों को हस्तांतरण पर प्रतिबंध था। इस श्रेणी के अन्तर्गत बानेरी, आरोरा, मोराजा (आवा), नादवा, हाथी खेड़ा (आधा) एवं दीवारा के गाँव आते थे।

तृतीय श्रेणी की जागीर व्यक्तिगत न होकर समुदायगत थी। इस श्रेणी में पाँच गाँव आते थे। दरगाह ख्वाजा साहब के खादिम के अधिकार में बीर, घैगर एवं बनुजी के गाँव थे। पुष्कर की बड़ी बस्ती के ब्राह्मण पुष्कर के जागीरदार थे। पुष्कर की छोटी बस्ती के ब्राह्मणों को नादलिया की जागीर प्राप्त थी।

सन् १८७३ में जागीरदारों और किसानों के आपसी सम्बन्ध भी न्यायालय द्वारा स्पष्ट कर दिए गए थे।[९३] वे सभी किसान जिनके कब्जे में तालाब, जलाशयों और कुँओं से सिंचित भूमि थी जिसके सिंचाई स्रोत जागीरदारों द्वारा प्रदत्त सिद्ध नहीं हुए थे उक्त जोतों के स्वामी या बिस्वेदार स्वीकार कर लिए गए थे। जागीरदार उस सिंचित भूमि के स्वामी माने गए जिनके सिंचाई के स्रोतों का निर्माण उनके द्वारा किया गया हो।

इस्तमरारदार की तरह जागीरदार को अपनी भूसम्पत्ति में हस्तांतरण का पूर्ण अधिकार नहीं था। वह सम्पूर्ण सम्पत्ति अथवा उसका अंश किसी भी बाहरी व्यक्ति को न तो बेच ही सकता था और न भेंटस्वरूप प्रदान कर सकता था। परन्तु जागीरदार अपने जीवन पर्यन्त के लिए अपनी जमीन को पट्टे पर उठा सकता था व बंधक के रूप में रख सकता था। वह उन किसानों को मालिकाना या बिस्वेदारी का हक प्रदान कर सकता था जो असिंचित और बरानी भूमि को कुँए आदि खोदकर कृषि के लिए विकसित करते थे। जागीर भूमि के बिस्वेदार को अपनी जोतों को जागीरदार की पूर्व स्वीकृति के बिना हस्तांतरण या विक्रय करने का अधिकार था। अतएव भूमि विकास ऋण कानून के अन्तर्गत उन्हें भी जागीरदारों की तरह अग्रिम राशि समुचित जमानत प्रस्तुत करने पर प्रदान की जा सकती थी।[९४]

जागीरों के संबंध में यह नियम था कि इन जागीरों में कोई भी भागीदार अपना अंश भेंट अथवा बंधक के रूप में किसी भी बाहरी व्यक्ति को अपने जीवनकाल से अधिक समय के लिए हस्तांतरण कर सकता था। किसी बाहर के व्यक्ति को जागीर हस्तांतरित करने वाले स्वामी की मृत्यु के पश्चात् वह सरकार द्वारा पुनर्ग्रहीत की जा सकती थी और उस पर राजस्व कराधान लागू किया जा सकता था।[९५]

जागीर गाँवों में जागीरदार अपना राजस्व फसल के रूप में वसूल करता था, केवल कपास और मक्का की फसलें ऐसी थीं, जिन पर भुगतान नगदी में लिया जाता

था। यह राशि 'बीघोडी' या 'मपनी' कहलाती थी। बीघोडी और मपती वाले क्षेत्र को छोड़कर जागीर भूमि मे कूता की प्रथा थी और जागीरदार का हिस्सा भूमि की किस्मो अथवा आपसी समझौते से निर्धारित हुआ करता था। यह कराधान दो तरह का होता था जिसे स्थानीय बोली म कूता और लाटा कहा जाता था। कूता का अर्थ फसल की कटाई के समय निर्धारित कराधान होना था। फसल मे से भूसा व अन्न को पृथक् करके उसे तोल कर अंश निर्धारण की क्रिया को 'लाटा' कहा जाता था। लाटा द्वारा जागीरदार का हिस्सा पृथक् निकाल कर उसे दे दिया जाता था।[६६]

कुँओ और नालियो के निर्माण के लिए विशेष एव निश्चित सिद्धात नहीं थे। जब कोई किसान कुँआ अथवा नाली का निर्माण करना चाहता तो उसे जागीरदार आपसी समझौते द्वारा निर्धारित नजराना राशि लेकर पट्टा प्रदान किया करता था। जब कोई किसान कुँआ या नाडी खुदवाता था तब उसकी भूमि पर राजस्व की दरें कुछ समय के लिए घटा दी जाती थी और जब नाडी या कुँआ तैयार हो जाता तब किसान अपनी जोत का स्वामी मान लिया जाता था। इन जागीर-गाँवो मे फसल पूर्णतः वर्षा पर निर्भर थी।

माफीदार

माफी' की भूमि प्राप्त व्यक्ति केवल राजस्व प्राप्ति के हकदार होते थे। सरकार उन्हे तकावी उसी स्थिति मे देती थी जबकि वे बिस्वेदार होते थे। माफीदार को भूमि हस्तान्तरण के अधिकार प्राप्त नही थे। माफी के हकों को हस्तातरित करने पर उसकी जोत पुनर्ग्रहीत की जा सकती थी।[६७]

'भौम' और 'जागीर' को अंग्रेजो ने सामान्यत उन्हे पुरानी प्रथा के अनुकूल ही बनाए रखा। वह इनम किसी भी तरह के परिवर्तन के पक्ष मे नही थे क्योकि इससे इन लोगो मे सदेह या असतोष पैदा हो सकता था। अजमेर जिले की 'जागीर' व 'माफी मे केवल इतना ही अन्तर था कि जागीर का सामान्य अर्थ सम्पूर्ण गाँव या गाँव के अंश मे लिया जाता था और माफी जोतो का अर्थ निश्चित जमीन के टुकडे से था। इन जागीरदारो के भूभाग पर किसी तरह की सैनिक सेवा या अन्य सेवा का प्रतिबन्ध नही था।[६८]

अध्याय ६

१ एल० एम० साडर्स, कमिश्नर, अजमेर मेरवाडा द्वारा चीफ कमिश्नर

अजमेर-मेरवाडा को पत्र, दि० १२ सितम्बर, १८७३, सख्या ३१६५ राजपूताना गजेटीयर्स भाग ३ पृ० ३७।

२. आर० केवेंडिश सुपरिन्टेन्डेन्ट एव पोलिटिकल एजेन्ट, अजमेर द्वारा कार्यवाहक रेजीडेन्ट दिल्ली को पत्र दि० ८ जुलाई, १८३०।

३. कर्नल डिक्सन,कमिश्नर अजमेर द्वारा सेक्रेट्री उत्तरी-पश्चिमी सूबा सरकार को पत्र दि० १४ अप्रैल, १८५६, सख्या १४३।

४ टॉड—एनल्स एण्ड एन्टिक्विटीज ऑफ राजस्थान, खण्ड १, पृ० १६८।

५ भौम कमेटी रिपोर्ट सन् १८७३।

६ कर्नल जे० सी० ब्रुक्स कार्यवाहक चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा द्वारा सचिव परराष्ट्र विभाग भारत सरकार को पत्र, आबू दि० १७ अगस्त, १८७१ व कर्नल जे० सी० ब्रुक्स द्वारा सी० यू० एचिसन सचिव परराष्ट्र विभाग भारत सरकार को पत्र दि २१ फरवरी, १८७१ सख्या १०४।

७. उपरोक्त।

८ भौम कमेटी की रिपोर्ट, सन् १८७३।

९. उपरोक्त।

१० चीफ कमिश्नर अजमेर द्वारा सेक्रेट्री भारत सरकार को पत्र, दि० १० जनवरी, १८७४ सख्या ३०।

११. आर केवेंडिश, सुपरिटेंडेंट एव पोलिटिकल एजेन्ट द्वारा कार्यवाहक रेजीडेंट दिल्ली को पत्र, दिनाक ८ जुलाई, १८३०।

१२. कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर मेरवाडा को सुपरिटेंडेंट की कार्यवाही (मई १८४३) सहित पत्र, दिनाक १२ सितम्बर, १८७३ (रा रा पु म)।

१३ कर्नल ज सी ब्रुक्स, कार्यवाहक चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा द्वारा सी. यू ऐचीसन् सचिव परराष्ट्र विभाग भारत सरकार को पत्र, आबू दिनाक १७ अगस्त, १८७१ सख्या २०५।

१४. भौम कमेटी रिपोर्ट, सन् १८७३।

१५. कर्नल जे सी ब्रुक्स, कार्यवाहक चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा द्वारा सी यू ऐचीसन् सचिव परराष्ट्र विभाग भारत सरकार को पत्र, आबू दिनाक १७ अगस्त, १८७१ सख्या २०५।

१६. एफ. विल्डर पोलिटिकल एजेन्ट एव सुपरिटेंडेंट अजमेर द्वारा डी०

ऑक्टरलोनी रेजीडेंट मालवा एव राजपूताना को पत्र, अजमेर दिनाक ५ सितम्बर, १८२२ ।

१७ आर केवेंडिश सुपरिटेंडेंट एव पोलिटिकल एजेन्ट अजमेर द्वारा कार्यवाहक रेजीडेंट, देहली को पत्र अजमेर दिनाक ८ जुलाई, १८३० ।

१८ कर्नल डिक्सन, कमिश्नर अजमेर द्वारा सेक्रेट्री उत्तर-पश्चिमी सूबा सरकार को पत्र, दिनाक ३० अक्टूबर, १८५४ स. ४२० ।

१६ आर केवेंडिश सुपरिटेंडेंट एव पोलिटिकल एजेन्ट द्वारा कार्यवाहक रेजीडेन्ट देहली को पत्र, अजमेर, दिनाक ८ जुलाई, १८३० ।

२० भीम कमेटी रिपोर्ट, सन् १८७३ ।

२१ आर केवेंडिश, सुपरिटेंडेंट अजमेर द्वारा कार्यवाहक रेजीडेंट देहली को पत्र, दिनाक ८ जुलाई, १८३० ।

२२ कर्नल सदरलैंड ए जी. जी राजस्थान द्वारा आर एम. हेमिल्टन, सचिव उत्तर-पश्चिमी सूबा सरकार को पत्र, दिनाक ८ जनवरी, १८४२ ।

२३ सचिव, भारत सरकार द्वारा आर एम सी हेमिल्टन सचिव उत्तर-पश्चिमी सूबा सरकार को पत्र, दिनाक १४ नवम्बर, १८३२ सख्या ६६ ।

२४. भीम कमेटी रिपोर्ट, सन् १८७३ ।

२५ जे थाम्पसन, कार्यवाहक उप सचिव भारत सरकार द्वारा कार्यवाहक रेजीडेन्ट एव चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा को पत्र दिनाक फोर्ट विलियम, ७ दिसम्बर, १८३० ।

२६. एल एस साण्डर्स कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा द्वारा चीफ कमिश्नर को पत्र अजमेर दिनाक १२ सितम्बर, १८७३ सख्या ३१६५ ।

२७. सचिव भारत सरकार द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर को पत्र दिनाक २६ सितम्बर, १८७६ सख्या २३० ।

२८ भीम कमेटी रिपोर्ट, सन् १८७३ ।

२६. कमिश्नर द्वारा चीफ कमिश्नर को पत्र अजमेर दिनाक १२ सितम्बर, १८७३ सख्या ३१६५ ।

३०. भीम कमेटी रिपोर्ट, सन् १८७३ ।

३१. उपरोक्त ।

३२ उपरोक्त ।

३३. भीम कमेटी रिपोर्ट, सन् १८७३ ।

३४. एल. एस. साडर्स कमिश्नर द्वारा चीफ कमिश्नर को प्रेषित पत्र अजमेर दिनाक १२ सितम्बर, १८७३ सख्या ३१६५।

३५. "भौमियो को सनद अदायगी" फाइल, सुपरिटेंडेंट अजमेर कार्यालय की हिन्दी कार्यवाही का अनुवाद, दिनाक ४ मई, १८४३।

३६. उपरोक्त फाइल, कर्नल डिक्सन का आदेश ४ मई, १८४३।

३७. उपरोक्त दिनाक २५ जुलाई, १८४६।

३८. कर्नल जे सी. ब्रुक्स कार्यवाहक चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा द्वारा सी. यू. एचिसन सचिव परराष्ट्र विभाग भारत सरकार को पत्र आबू, दिनाक १६ अगस्त, १८७१ सख्या २०५।

३९. रुटन डिप्टी कमिश्नर अजमेर द्वारा एल. एस. साडर्स कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा को पत्र दिनाक २७ जुलाई, १८७१ सख्या २१६४।

४०. उपरोक्त।

४१. डिप्टी कमिश्नर अजमेर द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर को पत्र दिनाक २० जनवरी, १८७३ संख्या ७६।

४२. कर्नल जे सी. ब्रुक्स कार्यवाहक चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा द्वारा सी. यू. एचिसन, सचिव परराष्ट्र विभाग भारत सरकार को पत्र आबू दिनाक १६ अगस्त, १८७१ सख्या २०५।

४३. उपरोक्त।

४४. सचिव परराष्ट्र विभाग भारत सरकार द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा को पत्र दिनाक २८ अक्टूबर, १८७१ व फाइल "भौमियों को सनद अदायगी।"

४५. चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा द्वारा सचिव परराष्ट्र विभाग भारत सरकार आबू, दिनाक १६ अगस्त, १८७१ सख्या २०५ व फाइल "भौमियो को सनद अदायगी"।

४६. भौम कमेटी रिपोर्ट, सन् १८७३।

४७. डिप्टी कमिश्नर अजमेर द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर को पत्र दिनाक २० जनवरी, १८७३ सख्या ७६।

४८. जिला सुपरिटेंडेंट पुलिस द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर को पत्र दिनाक ४ जनवरी १८७३ सख्या ८।

४९. कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा को पत्र, दिनाक १२ दिसम्बर, १८७३ सख्या ४२१४।

५० एल. एस सांडर्स कमिश्नर अजमेर मेरवाड़ा द्वारा चीफकमिश्नर को कमेटी नियुक्त करने के बारे मे पत्र दिनाक २७ जनवरी, १८७३ सख्या ३०६ ।

५१ भोम कमेटी रिपोर्ट, सन् १८७३ ।

५२ उपरोक्त ।

५३ फाइल 'आदेश भोम सपत्तियो एव ग्राम पुलिस' सख्या २३० आर चीफ कमिश्नर अजमेर द्वारा सचिव भारत सरकार को पत्र दिनाक १० जनवरी, १८७६ सख्या २३० व फाइल "भोम सपत्तियो एव ग्राम पुलिस पर आदेश" ।

५४ सचिव भारत सरकार द्वारा चीफ कमिश्नर, अजमेर-मेरवाड़ा को पत्र दिनाक २४ सितम्बर, १८७४ ।

५५ *फाइल 'भोम सम्पत्तियाँ एव ग्राम पुलिस पर आदेश" ।*

५६ एल० एस० साडर्स कमिश्नर अजमेर-मेरवाड़ा द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा को पत्र दिनाक १२ सितम्बर, १८७३ सख्या ३१६५ ।

५७ असिस्टेंट कमिश्नर द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाड़ा को पत्र अजमेर दिनाक ६ अगस्त, १९०६ क्रमाक २९८१ ।

५८ जागीर कमेटी रिपोर्ट दिनाक १६ मई, १८७४ ।

५९ असिस्टेन्ट कमिश्नर द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर को पत्र दिनाक ८ मई, १८८६ क्रमाक ५०० ।

६० कमिश्नर अजमेर द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाड़ा को पत्र दिनाक ३ अगस्त, १८८६ क्रमाक १८६२ ।

६१. जागीर कमेटी रिपोर्ट दिनाक १६ मई, १८७४ ।

निम्नांकित तालिका प्रत्येक वर्ग की जागीरो के अन्तर्गत गाँवो तथा इन जागीरो के उद्गम को प्रकट करती है—

जागीर देने वाले का नाम	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी	कुल
अकबर	१६		....	१६
जहागीर	१	½	४	५½
शाहजहा		३		३
आलमगीर	....	½	....	½

जागीर देने वाले का नाम	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी	कुल
फर्रुखशियर	२	६½	...	८½
मुहम्मद शाह	...	४	...	४
मराठा	५	६	१	१२
महाराजा अजीतसिंह	..	१	...	१
अंग्रेज़ सरकार	१	१	....	२
कुल संख्या	२५	२२½	५	५२½

आधा डेह्य प्रथम श्रेणी और आधा आखेरी तृतीय श्रेणी के अन्तर्गत आते थे।

उपरोक्त गांवो में से १० गांवो में ज्येष्ठ पुत्र उत्तराधिकारी माना जाता था तथा ८ गांवो मे जागीर पैतृक सम्पत्ति के रूप मे बटा करती थी।

६२— —प्रथम श्रेणी—

१. राजा देवीसिंह	कोठाज एव राजगढ।
२. दीवान गियासुद्दीन अलीखा	देलवाडा।
३. नवाब शमशुद्दीन अलीखा	सीदारिया, आधा डेह्य, बोराज, काजीपुरा, सोलबर।
४ राजा बलवतसिंह	मगवाना, उतरा एव मगरा।
५ मीर इनायत-उल्लाह शाह	कुडियाना, आधा देलवाडा।
६. मीर निजाम अली	जावासा, भटियाना।
७. गुलाबसिंह	अर्जुनपुरा।
८ सालिगराम ज्योतिपी	मगलियावास।
९. गोकुलपुरी गोसाई	चोवडिया।

६३—असिस्टेन्ट कमिश्नर द्वारा कमिश्नर अजमेर को पत्र दिनाक ६ अगस्त,

६४—उपरोक्त।

६५—उपरोक्त ।

६६—उपरोक्त।

६७—लाटूश अजमेर-मेरवाड़ा की बंदोवस्त रिपोर्ट सन् १८७४।

६८—असिस्टेन्ट कमिश्नर अजमेर द्वारा कमिश्नर अजमेर को पत्र दिनांक ६ अगस्त, १९०६ क्रमांक २९८१ ।

७

पुलिस एवं न्याय-व्यवस्था

सन् १८६२ से पूर्व अजमेर-मेरवाड़ा में नियमित पुलिस जैसी कोई व्यवस्था नही थी। पुलिस सेवाओ के लिए विभिन्न प्रथा एवं प्रक्रियाएं प्रचलित थी।[1] अंग्रेजो द्वारा मेरवाड़ा को अधीनस्थ करने के बाद, इस क्षेत्र में व्यवस्था एवं नागरिक प्रशासन के दृष्टिकोण से तीन प्रमुख भारतीय अधिकारियो की नियुक्तियां की गई थी। प्रारम्भ मे एक ही अधिकारी को राजस्व व्यवस्था एवं नागरिक प्रशासन सम्बन्धी कार्यभार वहन करना होता था।[2] टाडगढ के तहसीलदार को जिसके क्षेत्र मे ८१ गाँव और १३ ढाणियाँ थीं, दक्षिणी परगने के दवेर, टाडगढ, भायला और कोटकिराना के राजस्व सम्बन्धी कार्यों के प्रशासन के अतिरिक्त जिले के इस भूभाग मे नागरिक प्रशासन की भी व्यवस्था करनी होती थी। टाडगढ तहसीलदार के क्षेत्र मे पाँच प्रमुख पुलिस थाने थे। प्रत्येक थाने मे एक पेशकार तथा तीन चपरासी नियुक्त थे। सुचारू व्यवस्था की दृष्टि से इस क्षेत्र को और भी कई भागो मे विभाजित किया गया था प्रत्येक। चपरासी पृथक् रूप से प्रत्येक तीन या चार-चार गाँवो की देखरेख के लिए नियुक्त कर दिया गया था। ये लोग अपने क्षेत्र के अपराध की स्थिति के बारे मे प्रतिदिन सबंधित थानो के पेशकार को सूचना देते रहते थे। इस तरह की प्रशासनिक व्यवस्था के द्वारा तहसीलदार अपने क्षेत्र के अन्तर्गत घटी घटनाओ से सम्पर्क बनाए रखता था। चोरियो और डकैती की घटनाओं की सूचना सबंधित थानो या तहसीलदार को अविलम्ब की जाती थी। सारोठ तहसीलदार के क्षेत्र के अन्तर्गत जिले के केन्द्र मे स्थित

सारोठ और कोटडा परगने थे जिनमे ५३ गांव और १५ ढाणियाँ थी। उत्तरी क्षेत्र के तहसीलदार के अन्तर्गत ब्यावर, भाक, श्यामगढ और चाग के परगने थे जिनमे १०६ गाँव और ५२ ढाणियाँ थी। इसी तरह का प्रशासनिक उप विभाजन ब्यावर क्षेत्र का भी था, जिसके अधीन कई थानो और चपरासियो की व्यवस्था की हुई थी। टाडगढ, देवर और सारोठ के किलो म मेर बटालियन की सैनिक टुकडिया नियुक्त की गई थीं। मेरवाडा के पहाडी भाग म व्यापारिक काफिलो और यात्रियो की सुरक्षा की समुचित व्यवस्था थी। जब कभी कोई डकैती की घटना घटती तो क्षतिग्रस्त पक्ष की क्षतिपूर्ति का भार उन ग्रामो को वहन करना होता था, जहाँ ये दुर्घटनाए घटित होती थी।[3]

इस्तमरारदारो को उनके अपने क्षेत्रो की सम्पूर्ण पुलिस व्यवस्था इसी आधार पर सौंपी हुई थी कि यदि कोई दुर्घटना इन क्षेत्रो के अन्तर्गत घटती तो उन्हे इसका उत्तरदायित्व वहन करना होता था। उन दिनो इसी तरह की व्यवस्था प्रचलित थी। भौमियो को उनकी भूसपत्ति के पूर्ण अधिकार इसी आधार पर प्राप्त थे कि वे अपने क्षेत्र की व्यवस्थित चौकसी एव निगरानी रखेगें। खालसा भूमि में भौमियो की प्रथा नही थी। वहाँ सरकार को निगरानी एव चौकसी के लिए चौकीदार नियुक्त करने पडे थे। चौकीदार बहुधा मीना एव मेर जातियो के लोगो मे से नियुक्त किए जाते थे। इन पर यह जिम्मेदारी थी कि अगर उनकी लापरवाही के फलस्वरूप किसी तरह की दुर्घटना घटती तो उन्हे क्षतिपूर्ति करनी होती थी। ये लोग जरायम पेशा कोमो मे से थे। इनकी नियुक्ति के पीछे यही आशय था कि जबतक वे नियुक्त होगें तब इनके जाति भाई इन क्षेत्रो मे चोरी करने का दुस्साहस नही करेंगे।[4]

उन दिनो अजमेर-मेरवाडा मे जब किसी व्यक्ति का सामान इस्तमरारदारी या भौम गाँव म चोरी हो जाती तो वे फौजदारी अदालतो मे इस आशय का प्रार्थना पत्र प्रस्तुत कर इस्तमरारदार या भौमियें से क्षतिपूर्ति की रकम अदालत के जरिये वसूल कर सकते थे।[5] अजमेर-मेरवाडा के इस्तमरारदारो को अपने क्षेत्र की समूची पुलिस-व्यवस्था का भार वहन करना होता था। केवल कुछ ही प्रमुख कस्बो म सरकारी पुलिस चौकियों की व्यवस्था थी जो कि नोटिस, सम्मन या वारंट तलबी का काम करती थी। अजमेर जिले के एक तिहाई क्षेत्र मे इस्तमरारदारी व्यवस्था थी। इस क्षेत्र की समूची पुलिस-सवा उनके अधीनस्थ ही थी।

इस्तमरारदार को उसके कर्तव्य के प्रति सचेत रखने के लिए जिला अधिकारी को क्षतिपूर्ति लागू करने का अधिकार उपलब्ध था। इस आशय के सभी मामले दीवानी अदालतो के बजाय फौजदारी अदालतो से तय होते थे। यदि ये मामले दीवानी अदालतो के सुपुर्द कर दिये गये होते तो जिला अधिकारी का इस्तमरारदारो पर नियत्रण डगमगा जाता तथा जिला अधिकारी का इस्तमरारदारो और भौमिया से चौकसी और निगरानी

की सेवाएं लेना कठिन हो जाता। क्षति ग्रस्त व्यक्ति दीवानी दावों की लम्बी प्रक्रिया से परेशान होकर शीघ्र ही इस्तमरारदारों और भोमियों से समझौता कर लेना कहीं अधिक उचित समझता। यही एक ऐसी प्रक्रिया थी जो इस्तमरारदारों को अपने कर्तव्यों के प्रति चौकन्ना रखे हुई थी।[६] सन् १८७४ में इस्तमरारदारों का क्षतिपूर्ति का दायित्व समाप्त कर दिया था।[७]

सन् १८५८ में कर्नल डिक्सन ने १८ गाँवों में तीन रुपये मासिक वेतन पर चौकीदारों की नियुक्तियां की थी। इनके वेतन का एक भाग यात्रियों से कर के रूप में तथा शेष गाँव के खर्चे की राशि में से वसूल किया जाता था। कर्नल डिक्सन की यह मान्यता थी कि मेर स्वयं अपनी व्यवस्था करने में सक्षम हैं। इसलिये उस क्षेत्र में केवल एक या दो बड़े कस्बों में, जहाँ व्यापारी वर्ग अधिक था, सरकारी चौकीदारों की नियुक्तियां की गई थी। कस्बे के प्रत्येक निवासी को इन चौकीदारों के वेतनस्वरूप निश्चित मात्रा में अनाज देना होता था।[८] सन् १८६१ तक इस जिले की सामान्य व्यवस्था का भार मेरवाड़ा बटालियन के हाथ में था। इस बटालियन का केन्द्रीय कार्यालय भी उन दिनों ब्यावर में स्थित था।[९]

मेरवाड़ा-क्षेत्र की पहाड़ियों में कुछ ही सड़कें थी जहाँ से आवागमन संभव था। अंग्रेजों के आधिपत्य के पूर्व यह भाग व्यापारिक काफिलों को लूटने के लिए लुटेरों का विशेष स्थान बन गया था। नयानगर, अथाजा, जस्सा खेड़ा, टाडगढ़ और दवेर के मशहूर डकैत इस क्षेत्र में लूटपाट कर लूट का माल सीमा पार के क्षेत्रों में बेच आते थे। लूट व चोरी के माल में अधिकतर मवेशी हुआ करते थे। कभी-कभी डाकुओं के दल डाका डालने की नियत से अंग्रेजी के क्षेत्रों में बारातियों का वेश धारण करके गुजरते थे। सीमा स्थित कई ठाकुर भी इन लुटेरों को शरण एवं सुरक्षा प्रदान किया करते थे।[१०]

इस क्षेत्र पर अंग्रेजों के आधिपत्य के पश्चात् प्रमुख रास्ते निकटवर्ती ग्रामों को निगरानी में सौंप दिये गये थे। इस तरह के लूटपाट के अपराधों को बहुत कुछ रोकथाम की जा सकी थी। कर्नल डिक्सन ने लूटपाट की जिम्मेदारी रास्तों से सटे हुए ग्रामों पर थोप दी थी। मेरवाड़ा में इन रास्तों से यात्रा करने वालों से नाममात्र का शुल्क उनकी सुरक्षा-हेतु वसूल किया जाता था। इस तरह के क्षेत्र में यह शुल्क अत्यंत लाभकर सिद्ध हुआ तथा यात्रियों को यह कर कभी भार के रूप में प्रतीत नहीं हुआ। इससे गाँव के लोग यात्रियों को सुरक्षित पहुँचाने के लिए एक तरह से अनुबंधित हो गये थे। सड़कों को डकैतों और लुटेरों की कार्यवाही से मुक्त एवं सुरक्षित रखने में यह राशि उपयोगी सिद्ध हुई थी। सन् १८६७ तक इस क्षेत्र में कस्टम व चुंगी कर लगते थे जिसके कारण कई चुंगी-अधिकारी इस क्षेत्र में नियुक्त थे, जिनकी उपस्थिति मात्र ही इस क्षेत्र में चोरी-छिपे घुसपैठ करने वालों पर अंकुश थी। डाकुओं और लुटेरों का पीछा करने

के लिए कालातर मे झासी रिजर्व से बुलाई गई घुडसवारो की टुकडी इस क्षेत्र मे तैनात कर दी गई थी । बाद मे इस तरह की घुडसवार टुकडी का गठन अजमेर मे भी कर लिया गया था ।[११]

ठगी और डकैती का उन्मूलन –

राजपूताना मे ठगी और डकैती का दमन करने के लिए अपर, लोअर व ईस्टर्न राजपूताना नाम की तीन एजेन्सिया सन् १८८९ मे स्थापित की गई थी । अपर राजपूताना एजेन्सी का सदर मुकाम अजमेर मे था । इसका कार्यभार 'असिस्टेन्ट जनरल सुपरिटेंडेंट ठगी एव डकैती उन्मूलन' को सौंपा गया था । [१२] उक्त अधिकारी को तृतीय श्रेणी के दडनायक के अधिकार प्राप्त थे । [१३] सन् १८८६ मे अपर, लोअर और ईस्टर्न राजपूताना एजेंसियो को समाहित करके राजपूताना के लिए एक नई एजेंसी का गठन किया गया जिसका कार्यभार जनरल सुपरिटेंडेंट राजपूताना के असिस्टेन्ट को सौंपा गया । अलवर, जयपुर और आबू मे भी निरीक्षण चौकिया कायम की गई व असिस्टेंन्ट का सदर मुकाम अजमेर मे रखा गया ।[१४]

डकैतियो के दमन के लिए अजमेर मेरवाड़ा और सीमावर्ती पडोसी रियासतो के बीच आपसी सहयोग की आवश्यकता अनुभव होने लगी । मारवाड ही एक अकेली ऐसी रियासत थी जिसके वकीलो को अभियुक्तो को पकडने मे अजमेर पुलिस की सहायता करने के अधिकार प्राप्त थे । इस रियासत का एक वकील अजमेर मे और दूसरा ब्यावर मे नियुक्त था । जयपुर की ओर से एक वकील देवली मे भी था । मेवाड़ का भी अपना वकील था, परन्तु बाद मे हटा लिया गया था । [१५]

वकील अजमेर पुलिस को परवाना देते थे जिससे वह उनकी रियासत मे प्रवेश कर अभियुक्त और चोरी का माल बरामद कर सकें [१६] । इस पुलिस दस्ते की सहायता के लिए भी एक चपरासी उनके साथ भेजा जाता था । जब कभी अभियुक्त और चोरी का माल अन्य सीमाओ मे बरामद होता तो उसे निकटवर्ती स्थानीय अधिकारियो की निगरानी मे सौंप दिया जाता था । तत्पश्चात् अभियुक्त की मय माल के गिरफ्तारी का वारट जारी किया जाता था । परतु सामान्य मामलो मे वकील के पद और उसमे निहित विश्वास के आधार पर कि वह अभियुक्त बरामद माल को अजमेर-मेरवाडा मे समय पर प्रस्तुत कर सकेगा, बिना वारट के ही पुलिस दस्त के साथ भेज दिया जाता था। यह व्यवस्था अग्रेज शासित देश और रियासतो के बीच सहयोग पर आधारित थी । यह सहयोग सभी निकटवर्ती रियासतो को अजमेर के सबध मे उपलब्ध था । इन रियासतो के पुलिस अधिकारियो को इस कार्य के लिए अजमेर-मेरवाडा मे प्रवेश करने की अनुमति थी । इसके लिए उनके पास परवाना होना अनावश्यक था । इसके लिए इतना ही पर्याप्त था कि वे अपने आगमन की सूचना कर दें और अभियुक्त की गिरफ्तारी व माल बरामदगी मे अजमेर पुलिस की मदद लें । अभि-

युक्त और बरामदशुदा माल अजमेर पुलिस की सुरक्षा में तबतक रखा जाता था जब-तक कि तत्सम्बन्धी नियमित कार्यवाही सम्पन्न नहीं हो जाती थी। असाधारण मामलों में जब भी यह अनुभव होता कि विलम्ब के कारण अभियुक्त फरार हो सकता है अथवा न्याय में देर हो सकती है तो उपर्युक्त रियासत पुलिस अधिकारी बिना विशेष औपचारिकता पूरी किए ही कार्यवाही सम्पन्न कर लेते थे। आवश्यकता पड़ने पर अगर अजमेर पुलिस की सहायता के बिना ही यदि अभियुक्त को गिरफ्तार कर लिया जाता तब भी बहुधा इसे नियम का उल्लंघन नहीं माना जाता था और औपचा-रिकता की पूर्ति बाद में कर ली जाती थी।[१७] इस संबंध में पड़ोसी रियासतों की मदद मिलती रही।[१८] सभी बड़ी रियासतों के अधिकृत वकील पहले अजमेर में रहा करते थे और जब वे आबू जाते तो अपने स्थान पर अन्य मातहतों को छोड़ जाते थे। ऐसी स्थिति में कभी-कभी दुविधा व परेशानी पैदा हो जाया करती थी।[१९] रियासतों के इन वकीलों के पद पर और कार्यों के बारे में कोई लिखित कानून नहीं था। समय-समय पर दिए गए निर्णय और सरकारी आदेश ही उसका आधार थे। इस बात का सदा ध्यान रखा जाता था कि अजमेर-पुलिस और रियासतों के बीच इस संबंध में सहयोग और सद्भावना बनी रहे।[२०]

उन्नीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में राजपूताना में अराजकता की स्थिति व्याप्त थी। इसको समाप्त करने में अंग्रेजों का काफी महत्वपूर्ण योग रहा था। इस स्थिति के उत्पन्न होने के कई कारण थे। असंतुष्ट ठाकुरों द्वारा बहुधा डकैती का मार्ग अपना लेना, डाकुओं के गिरोहों को एक राज्य से दूसरे में प्रवेश कर जाने पर वहाँ कानून व दंड से मुक्ति मिल जाना, कुछ भागों में भील और मीणों का आवारा होना, जिन पर रियासतों का नियंत्रण नाममात्र का था, परन्तु इस स्थिति के उत्पन्न होने का प्रमुख कारण अधिकांश रियासतों में अच्छे शासन और संगठित पुलिस सेवा का अभाव था।

अगर ऐसी परिस्थितियां एक रियासत तक सीमित रहतीं तब तो उन्मूलन शनैः शनैः प्रशासन में सुधार एवं सरकारी नियंत्रण को कड़ा करके किया जा सकता था, परन्तु यह समस्या एक राज्य तक ही सीमित नहीं थी इसने अन्तर्राज्यीय रूप ले लिया था जिसे उन दिनों अन्तर्राष्ट्रीय कहा जाता था।

इस तरह के अपराधों को रोकने के लिए सबसे महत्वपूर्ण कार्य उत्तरदायित्व निर्धारित करना था। इस संबंध में सन् १८३१ में यह निश्चय किया गया कि जहाँ घटना घटे उस क्षेत्र के अधिकारी को ही इसके लिए उत्तरदायी ठहराया जाना चाहिए। उत्तरदायित्व संबंधी इस सिद्धांत को ज्यादा व्यापक बनाने के लिए सन् १८३८ में यह निर्णय लिया गया कि "यदि किसी रियासत में शरण प्राप्त लुटेरे कोई लूट-पाट उस क्षेत्र में करते हैं तो इसका उत्तरदायित्व उस राज्य को वहन करना होगा।"[२१]

इन मामलो मे किसी भी तरह का उत्तरदायित्व निर्धारित करने के पूर्व क्षतिपूर्ति के दावेदार को यह सिद्ध करना होता था कि उसने अपनी जानमाल की हिफाजत की सामान्य व्यवस्था कर रखी थी। यात्रियों से यह अपेक्षित था कि गांव मे पहुँचने पर वे सराय मे रुकेंगे ताकि गांव का चौकीदार उनकी चौकसी रख सके। उन्हे अपनी सम्पत्ति को गांव के अधिकारियो की सुरक्षा मे सौंप देना अवश्यक था जो कि उसकी अमानत के तौर पर निगरानी रखते थे। मार्ग मे यात्रा करते समय अपनी सम्पत्ति की सुरक्षा के लिए अतिरिक्त व्यवस्था रखना भी यात्रियो के लिए आवश्यक था। सन् १८५४ मे घटित एक ऐसी घटना प्रकाश मे आई जिसमे मदसौर से चित्तौड़ को भेजी जा रही एक लाख रुपयो के मूल्य की काली मिर्च जिसकी रक्षा के लिए चार सशस्त्र व्यक्ति साथ मे थे—लुट गई और उसकी क्षतिपूर्ति का दावा प्रस्तावित किया गया। क्षतिपूर्ति के समय यह निर्देश अंकित किया गया कि इतनी मूल्यवान सामग्री की रक्षा के लिए तैनात केवल चार सशस्त्र व्यक्ति पर्याप्त नही कहे जा सकते, फलस्वरूप इस लूट का उत्तरदायित्व सम्बन्धित रियासत पर नही है।[२२]

उन दिनो व्यापारिक सामग्री और मूल्यवान वस्तुए बहुधा बीमा कम्पनियो के माध्यम से भेजी जाती थी। वे एजेन्सिया "मार्ग की स्थिति" के अनुसार ही अपना सुरक्षा-शुल्क निर्धारित किया करती थी। इस तरह की एक अन्य मनोरंजक घटना का उल्लेख भी पत्रो मे मिलता है। एक व्यापारी ने ३५०० रुपये का सोना और जवाहरात उदयपुर से मदसौर भेजने के लिए उपर्युक्त माध्यम अथवा अन्य उचित सुरक्षा का मार्ग अपनाकर अपने दो घरेलू नौकरो के हाथो भिजवाई। ये नौकर साधुओ के वेष मे वह सोना घर ले जा रहे थे। रास्ते मे इन्हे भीलो ने घायल कर सामान लूट लिया था। क्षतिपूर्ति के लिए प्रस्तुत इस मामले पर टिप्पणी करते हुए उदयपुर मे स्थित पोलिटिकल ऐजेन्ट ने लिखा 'इस मामले मे देसी रियासत को उत्तरदायी मानना मुझे न्याय की दृष्टि से अत्यन्त संदेहास्पद लगता है क्योकि लूटी हुई सम्पत्ति के स्वामी ने उचित सुरक्षा का तरीका अपनाने की अपेक्षा भाग्य अथवा देव पर भरोसा करना अधिक उचित समझा, और लोभ के लिए दो निरपराध व्यक्तियो को घायल होने के संकट मे धकेल दिया।"[२३]

वकील अदालत

सुरक्षा एव व्यवस्था के दृष्टिकोण से केवल उत्तरदायित्व निर्धारित करने का सिद्धात निश्चित करना ही पर्याप्त नही था। इसके कारण दीर्घकालीन पत्र व्यवहार के अलावा और कोई विशेष लाभ नही हुआ। अतएव इस दिशा मे सुधार लाने के लिए दो आवश्यक प्रशासनिक कदम और उठाए गए। पहला अराजकता के दमन के लिए अधिक सक्रिय और कडी कार्यवाही तथा दूसरा, क्षतिपूर्ति के निर्धारण और

उत्तरदायित्व स्थिर करने के लिए एक नियमित आयोग की स्थापना।[२४] पहले कदम के अन्तर्गत मालवा और मेवाड मे भील सैनिक सेवा का जन्म हुआ और दूसरा प्रशासनिक कदम वकील अदालत की स्थापना था।[२५] प्रारम्भ मे इस तरह की तीन अदालतें अजमेर, नीमच और कोटा मे थी, बाद मे जोधपुर और जयपुर मे भी एक एक वकील अदालतों की स्थापना की गई।[२६]

अजमेर में अठारह रियासतो के अधिकृत वकीलो मे से पाँच प्रतिनिधियो की एक वकील-अदालत स्थापित की गई थी। यह अदालत उन सभी फौजदारी मामलो को निपटाती थी जो एक रियासत के निवासी, व्यापारी या यात्री, दूसरी रियासतो के बारे मे शिकायत के तौर पर प्रस्तुत करते थे। अजमेर से सम्बन्ध रखने वाले वाद इस पचायत मे प्रस्तुत होते थे। अदालत प्रतिवादी रियासत के वकीलो और साक्षियो को जिला हाकिमो के माध्यम से सम्मन भेजकर बुलवाती और मुकदमों की सुनवाई करती थीं। सम्पूर्ण वाद की जाँच के पश्चात् अदालत अपनी कार्यवाही और डिग्री ए० जी० जी० को भेज देती थी। जिस रियासत के विरुद्ध डिग्री पारित होती थी, उसके वकील द्वारा वादी को क्षतिपूर्ति की राशि देनी पडती थी और वादी पक्ष इसकी लिखित रसीद रियासत को दिया करता था।[२७] आरम्भ मे ये वकील-अदालतें फौजदारी मामलों के साथ-साथ कुछ खास किस्म के दीवानी मामले, जैसे समझौता-भग, विवाह विच्छेद इत्यादि अन्तर्राज्यीय मामले भी सुनती थी। परन्तु बाद मे दीवानी मामलो की सुनवाई को प्रोत्साहन नही दिया जाने लगा और यह अदालत पूर्णत फौजदारी मुकदमें की ही सुनवाई करने लगी।[२८]

केवल महत्वपूर्ण एव गभीर मुकदमो मे ही ए० जी० जी० उपस्थित रहते थे अन्यथा मामलो की कार्यवाही और निर्णय उन्हे प्रेषित कर दिए जाते थे और वे अपने निरीक्षण के पश्चात् अदालत का फैसला सम्बन्धित रियासत को भेजकर उससे डिग्री की बकाया राशि चुकाने की व्यवस्था करते थे।[२९] वादी एव प्रतिवादी रियासतों के वकील इस अदालत के सदस्य होते थे परन्तु वे अपने मतो का उपयोग कभी कभी ही किया करते थे। इन अदालतो को एक तरफा डिग्री मजूर करने का अधिकार भी था।[३०]

इन अदालतो का मुख्य उद्देश्य उन यात्रियों तथा लोगो को न्याय प्रदान करना होता था जो अपनी रियासत के बाहर के लोगो के हाथो जान माल की क्षति उठाते थे। यह ऐसे सभी मामलो को सुनती और निर्णय देती थी जिनमे व्यक्ति और सपत्ति सम्बन्धी भारतीय-दड-सहिता लागू होती थी तथा वे सभी मामले जो भारत सरकार और राजपूताना की रियासतो के बीच प्रत्यर्पण (extradition) सधि की शर्तों के अन्तर्गत आते थे। सन् १८६२ के नियमो के अन्तर्गत इन अपराधो को "अन्तर्राष्ट्रीय" कहा गया था परन्तु सन् १८७० म इनको "अन्तर्राज्यीय अपराध" का नाम दिया

गया था। इनका अधिकार-क्षेत्र केवल रियासतों तक ही सीमित नही था वरन् अजमेर-मेरवाडा का क्षेत्र भी इनके अधिकार के क्षेत्र मे था। इस तरह की सयुक्त अदालत के गठन के पूर्व निकटवर्ती रियासतो से इन मामलो पर एक लम्बे समय तक निरर्थक पत्र-व्यवहार विभिन्न पोलिटिकल ऐजेंटों के बीच चलता रहता था। उसका प्रतिफल विलम्ब और न्याय की असफलता के अतिरिक्त और कुछ नही था। इस सयुक्त न्यायालय के गठन के पश्चात् यह परेशानी समाप्त हो गई थी। अजमेर-मेरवाड के असिस्टेंट कमिश्नर या डिप्टी कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा से सम्बन्धित मामले उठने पर इस न्यायालय मे बैठ सकते थे परन्तु उनकी उपस्थिति न्यायालय के निर्णय को प्रभावित नही कर सकती थी। अन्य रियासतें अपने वकीलो के माध्यम से प्रतिनिधित्व प्राप्त करती थीं और उनके वकीलो को मुकदमे मे कहने सुनने का अधिकार था। अजमेर-मेरवाडा को इस तरह का प्रतिनिधित्व प्राप्त नही था। यह न्यायालय भारतीय-दड-सहिता के अन्तर्गत उल्लिखित जान माल सबधी अपराधो तथा प्रत्यर्पण-सधियो के अन्तर्गत आने वाले मामलों की सुनवाई एव जाँच करके निर्णय करने में सक्षम थी।[31]

इन न्यायालयो को जुर्माना, कारावास, मुआवजा का दड देने और उन मामलों में जहाँ न्यायालय को यह सदेह होता है कि इसमे स्थानीय पुलिस अथवा गाँवो का हाथ है, वहाँ पुलिस अथवा गाँव को दड देने का अधिकार भी प्राप्त था। यद्यपि दड सबधी नियम लिखित नही थे तथापि यह न्यायालय सामान्यत भारतीय दडसहिता व स्थानीय प्रथाओ से मार्ग-दर्शन प्राप्त करता था।[32]

इस न्यायालय मे उत्तरदायित्व निश्चित करने के निम्न आधार थे—

१—वह रियासत जहाँ अपराध गठित हुआ हो।

२—वह रियासत जिसमे अपराधी का तत्काल पीछा किया गया हो।

३—वह रियासत जहाँ अपराधी रहता हो।

४—वह रियासत जहाँ चोरी एव लूट का माल अथवा उसका कुछ भाग बरामद हुआ हो।[33]

उत्तरदायित्व निश्चित करने मे न्यायालय इस बात का ध्यान रखता था कि अपराध के घटित होने और अपराधी के भाग छूटने मे रियासत की ओर से कितनी अवहेलना हुई है। यात्रियो से भी यह अपेक्षा की जाती थी कि वे जान और माल की सुरक्षा के लिए कुछ विशेष हिदायतो का पालन करेंगे। रियासतो पर क्षति-पूर्ति की रकम निश्चित करते समय इस बात का ध्यान रखा जाता था कि यात्री ने उन हिदायतो का कहाँ तक पालन किया है।[34]

मूल्यवान वस्तुओ सहित यात्रा करने वालों को सामान्य नियमों के अन्तर्गत पहरे के साथ यात्रा करनी होती थी। नियमानुसार प्रति हजार रुपए के मूल्य की

सामग्री पर दो सशस्त्र पहरेदार उसके आगे आठ हजार तक की राशि वाली वस्तुओं के लिए प्रति हजार पर एक अतिरिक्त सिपाही तथा आठ हजार से अधिक की राशि पर प्रति दो हजार पर एक अन्य अतिरिक्त सिपाही रखना आवश्यक था। इन काफिलों को रात्रि के समय गाँव मे रुकना आवश्यक था, जहाँ ग्राम अधिकारियों को अपने आगमन से सूचित कर और उनसे चौकीदार की सेवाएं प्राप्त करनी होती थी। इन चौकीदारों के अतिरिक्त उन्हें अपनी सपत्ति की सुरक्षा-हेतु सशस्त्र पहरे का प्रबंध करना होता था। इन चौकीदारों और सिपाहियों को अपनी सख्या के अनुपात मे किसी तरह की क्षति एव नुकसान की स्थिति मे पहरे पर तैनात व्यक्ति को क्षतिपूर्ति का भार वहन करना होता था।[३५]

यात्रियो के लिए मार्गदर्शक रखना भी जरूरी होता था। मार्गदर्शक प्रति पाँच यात्रियो पर एक, दस पर दो तथा बीस यात्रियो पर तीन की सख्या के अनुपात मे होते थे। बारात आदि के लिए सशस्त्र पहरेदारो की आवश्यकता रहती थी और सोना-चाँदी, जवाहरात तथा अन्य मूल्यवान वस्तुओ को किसी भी स्थिति मे केवल दो या तीन वाहकों को नही सोपी जा सकती थी।[३६]

भौमिया

सन् १८६७ तक गाँवों मे भौमियो के पास पहरे व चौकी की व्यवस्था थी। इसका परिणाम यह हुआ कि ग्रामो मे पहरे एव चौकी जैसी व्यवस्था ही प्राय समाप्त हो गई थी। जब कभी पुलिस घटनाग्रस्त ग्राम मे पहुँचती और चौकीदार की तलाश करती तो भौमियो मे इस बात को लेकर आपसी कलह आरम्भ हो जाया करता था कि अपराध वाले दिन चौकीदारी की व्यवस्था किसके जिम्मे थी। बहुधा घटना घटित होने की सूचना पुलिस तक पहुँचाई ही नही जाती थी। पुलिस-अधिकारी के घटनास्थल पर पहुँचते ही भौमिया इस तरह का ढोंग रचते मानो वे सम्पूर्ण घटना से बेखबर हों। इस तरह की बिगडी हुई परिस्थितियो के फलस्वरूप ही सरकार को वेतन भोगी नियमित चौकीदारी-व्यवस्था करनी पडी थी। सन् १८७० से लेकर सन् १८८० तक चौकीदारी व्यवस्था शनै शनै सम्पूर्ण क्षेत्र मे लागू की जा चुकी थी।[३७]

चौकीदार

सन् १८७० में सरकार ने अजमेर मेरवाडा मे (जिसमे नसीराबाद, पुष्कर शहर और केकडी भी सम्मिलित थे) ६३० चौकीदार नियुक्त किए थे। इस व्यवस्था पर प्रति चौकीदार चार रुपए मासिक वेतन के हिसाब से प्रति माह २५०० रुपए व्यय किए जाते थे। डिप्टी कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा ने १ जनवरी, १८७१ को चौकीदारों की सख्या ६३० से घटाकर ४६८ निम्न तालिकानुसार कर दी थी :—[३८]

अजमेर ४४७ चौकीदार।

ब्यावर	१३ चौकीदार।
टाडगढ	३८ चौकीदार।

जनवरी, १८७३ मे पुष्कर और केकडी के कस्बो को छोड़कर शेष जिले मे चौकीदारो को राज्य की नौकरी से अलग कर पुन पहरे व चौकी की व्यवस्था भोमियो को सौंप दी गई थी।[३९]

सन् १८७४ मे भोमियो की क्षतिपूर्ति की जिम्मेदारी समाप्त कर दिए जाने पर[४०] सरकार ने अजमेर मे ३३ चौकीदार, ब्यावर में २ तथा टाडगढ़ मे १३ चौकीदार नियुक्त किए थे। यह व्यवस्था सन् १८७६ तक बनी रही। नगरपालिका द्वारा नियुक्त चौकीदार इनके अतिरिक्त थे। सन् १८७० से १८७६ तक क्षेत्र मे चौकीदारों की सख्या का विभाजन क्षेत्र के अनुपात मे इस प्रकार का था—[४१]

कुल गाँवों की सख्या	गाँवो की सख्या जहाँ चौकीदार नियुक्त किए गए।	चौकीदारों की सख्या
अजमेर तहसील १८४	२२	३३
ब्यावर तहसील २२८	२	२
टाडगढ तहसील १००	१०	१४

उपरोक्त तालिका मे अजमेर और ब्यावर खास, नसीराबाद छावनी, पुष्कर शहर और केकडी सम्मिलित नहीं हैं। अजमेर और ब्यावर की नगरपालिका सीमाओं में नगरपालिका द्वारा पुलिस की व्यवस्था थी। सन् १८५६ के कानून २० के अन्तर्गत नसीराबाद, पुष्कर और केकडी मे भी चौकीदारो की व्यवस्था की गई थी जो निम्नाकित तालिका के अनुसार थी—[४२]

स्थान	जमादारों की सख्या	चौकीदारों की सख्या
नसीराबाद	३	४०
केकडी	१	१२
पुष्कर	१	१६

उन सभी खालसा या जागीर गाँवो मे जहाँ घरों की सख्या दो सौ से कम होती थी, चौकीदार नियुक्त नहीं किए जाते थे। ऐसे ४७६ गांव थे जो चौकीदारी की व्यवस्था से वंचित थे।[४३]

केवल दो सौ घरो से कम आबादी वाले गाँवो को ही चौकीदारी-व्यवस्था से वंचित नहीं रखा गया था, बल्कि कई बडे-बडे कस्बे भी चौकीदारी-व्यवस्था से वंचित रह गए थे। ऐसा प्रतीत होता है कि उक्त व्यवस्था नियमित रूप से लागू नहीं हो

पाई थी। निम्न तालिका[४४] उन कस्बों की है जो जनसंख्या में चौकीदारी व्यवस्था के अन्तर्गत आते थे, परन्तु इस लाभ से वंचित रखे गए थे :—

१.	जैठाना	६०० घरों से अधिक की आबादी
२.	तबीजी	५०० घरों से अधिक की आबादी
३.	सराधना	५०० घरों से अधिक की आबादी
४.	श्री नगर	८०० घरों से अधिक की आबादी
५.	बोर	६०० घरों से अधिक की आबादी
६.	राजगढ़	५५० घरों से अधिक की आबादी

चौकीदार को पुलिस के साधारण सिपाही के समान अधिकार प्राप्त नहीं थे। वह केवल मात्र ग्राम का वेतन भोगी नौकर होता था। जिन ग्रामों में चौकीदार नियुक्त नहीं किए गए थे, वहाँ गाँव वाले मिलकर स्वयं चौकी पहरे की व्यवस्था करते थे। खालसा और जागीर ग्रामों में सभी महाजनों और गैर-काश्तकारों के घरों से प्रति घर एक रुपया वार्षिक शुल्क वसूल किया जाता था, जो कि हैड लम्बरदार का वेतन स्वरूप होता था अथवा ग्राम के खर्चे की मद में जमा कराया जाता था। चौकीदारों को चार रुपए मासिक तक वेतन मिला करता था। चौकीदार हैड लम्बरदार के अधीन होते थे जो स्वयं सरकार के प्रति जिम्मेदार होता था।[४५]

जागीर पुलिस

जागीर के ग्रामों में जागीरदार हैड लम्बरदार के रूप में उत्तरदायित्व वहन करता था। सभी जागीर और खालसा ग्रामों के माफीदारों से शुल्क वसूल किया जाता था जिसे गाँव के खर्चे के मद में जमा कराया जाता था या हैड लम्बरदार को चुकाया जाता था। यह शुल्क जोत के राजस्व रहित होने पर उसके कराधान का १.१४ प्रतिशत होता था तथा इसके साथ ३.२ प्रतिशत राशि माफीदारों और जागीरदारों से सड़कों, पाठशालाओं और डाक शुल्क के रूप में ली जाती थी। माफीदारों पर यह शुल्क कराधान की राशि का पाँच प्रतिशत हुआ करती थी।[४६] इस्तमरारदारियों की पुलिस-व्यवस्था आरम्भ से ही इस्तमरारदारों के अधीन थी। परन्तु सन् १८७३ में सरकार ने इस्तमरारदारियों की सम्पूर्ण पुलिस-व्यवस्था का उत्तरदायित्व उनके हाथों सौंप दिया था और सरकारी पुलिस का वहाँ कोई काम नहीं रह गया था। इस्तमरारदारी व्यवस्था के अन्तर्गत ग्राम बलाई को चौकीदारी एवं निगरानी का उत्तरदायित्व सौंपा गया तथा जब कभी उसके क्षेत्र में किसी तरह के अपराध की घटना घटती तो उसे निकटवर्ती पुलिस थाने को इसकी सूचना देनी होती थी।

चौकीदारी व्यवस्था में परिवर्तन

सन् १८८८ में चौकीदारी-व्यवस्था में नये नियमों के अन्तर्गत कतिपय परिवर्तन लागू किए गए।[४७] जिला दण्डनायक अपनी इच्छा के अनुसार प्रत्येक गाँव

में चौकीदारों की आवश्यक संख्या निर्धारित करता था परन्तु सामान्यतः निम्न स्तर अपनाया जाता था —

(क) सौ से लेकर डेढ़ सौ घरों तक एक चौकीदार।

(ख) जहाँ १५० घरों से अधिक की बस्ती होती वहाँ प्रति डेढ़ सौ घरों पर एक चौकीदार।

(ग) साधारण रूप से सौ से कम घरों वाले गाँव के लिए चौकीदार की व्यवस्था नहीं की जाती थी, परन्तु जिला-दण्डनायक उक्त गाँव की स्थिति और स्वरूप को ध्यान में रखते हुए एक चौकीदार नियुक्त कर सकता था।[४८]

नये नियमों के अन्तर्गत गाँवों के समूहीकरण की व्यवस्था लागू की गई थी। जहाँ कहीं भी गाँवों में चौकीदार की नियुक्ति के लिए आवश्यक घरों की कमी होती थी ऐसे गाँवों को मिलाकर हल्का स्थापित कर दिया जाता था। यह हल्का एक चौकीदार के जिम्मे रहता था। एक चौकीदार के जिम्मे दो या तीन या इससे भी अधिक गाँव निगरानी के लिए रहते थे। अधिकतर ये गाँव एक दूसरे से सटे हुए होते थे।[४९] जिस किसी ग्राम में चौकीदारों की संख्या पाँच या पाँच से अधिक होती थी वहाँ उनमें से एक चौकीदार को मुखिया बनाया जाता था, वह जमादार कहलाता था। जमादार को छोड़कर प्रत्येक चौकीदार को लाल नीली पगड़ी, एक पट्टा और खाकी रंग का कोट पहनना होता था और उसे भाला रखना पड़ता था। जमादार की वर्दी नीली पगड़ी और खाकी कोट होता था जिसकी बाँई आस्तीन पर लाल पट्टी लगी रहती थी।[५०]

प्रत्येक गाँव के चौकीदार के लिए उसके गाँव के लिए नियुक्त पुलिस थाने के अधिकारी को अपराध घटने पर अविलम्ब सूचना देना अनिवार्य था। यह नियम था कि ग्राम-चौकीदार का वेतन चार रुपए मासिक से कम व जमादार का मासिक वेतन सात रुपए से कम नहीं होना चाहिए। वेतन का निर्धारण जिला दण्डनायकों द्वारा किया जाता था और उसका भुगतान नकदी में होता था। ग्राम-चौकीदारों का वेतन और उनकी वर्दी इत्यादि का व्यय चौकीदार शुल्क में से चुकाया जाता था तथा यह शुल्क उक्त ग्राम या ग्रामों से वार्षिक कर के रूप में वसूल किया जाता था। प्रत्येक ग्रामों से कितना वार्षिक शुल्क निर्धारित किया जाएगा इसका निर्धारण जिला दण्डनायक पर निर्भर रहता था।[५१]

इस्तमरारदारों के पुलिस अधिकार

सन् १८३६ में इस्तमरारदारों को न्यायिक और पुलिस-अधिकार प्रदान किए गए थे। इस्तमरारदार अपने ठिकाने या हल्के के अन्तर्गत अपराधों की जाँच करते

तथा इनके हल्को के सीमाक्षेत्र का निर्धारण समय-समय पर चीफ कमिश्नर किया करता था। इस क्षेत्र के ग्राम चौकीदार अपने यहाँ घटित अपराधों की सूचना पुलिस अधिकारी को न भेजकर इन हल्को व ठिकानो के इस्तमरारदारो को देते थे और इस्तमरारदार थानेदार या अन्य निकट के थाने के सरकारी पुलिस अधिकारी को मामला जाँच के लिए सौंप देता था। उक्त अधिकारी इस आदेश की पालना करने के लिए बाध्य होता था तथा इस्तमरारदार को अपनी जाँच रिपोर्ट प्रस्तुत करता था जिस पर वह उसी तरह के निर्देश व आदेश पारित किया करता था जो आदेश या निर्देश ऐसे मामलों मे पुलिस अधीक्षक पारित करने मे सक्षम होता था।

पुलिस द्वारा अभियोग तैयार कर लेने पर कार्यवाही की स्थिति मे उसे इस्तमरारदार के पास भेजा जाता था। यदि उक्त मामला उसके अधिकार-क्षेत्र से बाहर का होता तो अभियोग और पुलिस अधिकारी की रिपोर्ट की सुनवाई करके अपराध के दण्डनीय प्रतीत होने पर वह अभियुक्त को अभियोग की कार्यवाही और साक्षियो सहित जिला-दण्डनायक अथवा निकटवर्ती सक्षम दण्डनायक को सौंप देता था। यदि इस्तमरारदार का यह प्रतीत होता कि मामले मे साक्ष्य पर्याप्त नही होने से सदेह की गु जाइश है तथा दण्डनायक को मामला प्रेषित करने के लिए पर्याप्त आधार नहीं हैं तो वह अभियुक्त को जमानत पर या व्यक्तिगत मुचलके के आधार पर, अभियुक्त यथासमय आवश्यकता होन पर न्यायालय म उपस्थित हो जायेगा, रिहा कर देता था। किसी गभीर अपराध के घटित होने पर, हत्या अथवा हिंसक दगों की स्थिति मे इस्तमरारदार को स्वय घटनास्थल पर पहुँचकर जाँच करनी होती थी।

सन् १८८८ मे नई चौकीदारी व्यवस्था लागू की गई थी। इसके अनुसार सम्पूर्ण अजमेर-मेरवाडा में वेतन भोगी चौकीदारो की सख्या निम्न प्रकार थी।[२२]

		जमादार	चौकीदार
अजमेर	खालसा, जागीर व इस्तमरारदारी	१	१५०
मेरवाडा	खालसा	१०	२९

मेरवाडा-बटालियन की पुलिस-सेवाएं

सन् १८६१ तक, जिले की सामान्य शांति-व्यवस्था स्थानीय सेना के हाथों मे थी। यह सेना मेरवाडा-बटालियन कहलाती थी और इसका मुख्य कार्यालय ब्यावर में था।

मेरवाडा-बटालियन द्वारा सन् १८५७ के सैनिक विद्रोह मे अग्रेजों के प्रति स्वामिभक्ति प्रदर्शित करने के कारण अग्रेजों ने उसी वर्ष एक और मेर रेजीमेन्ट की स्थापना की थी जिसका मुख्य कार्यालय अजमेर मे था। आर्थिक कटौती के कारण

सन् १८६१ मे इसमें छँटनी कर इसे पुरानी मेर-बटालियन में विलय कर दिया गया था। मेरवाडा सैनिक बटालियन की बजाय अब इसका नाम मेरवाडा पुलिस बटालियन रखा गया था। इसे उत्तर-पश्चिमी सूबा सरकार के इन्सपेक्टर जनरल के अधीन रखवा दिया गया।[५३]

नागरिक सेवाओं का गठन

मेर रेजीमेन्ट और मेरवाडा-बटालियन के विलीनीकरण से सेवामुक्त हुए ३४८ व्यक्तियों से एक असैनिक पुलिस सगठन का गठन कर उसे १ जनवरी, १८६२ से पुलिस अधीक्षक के अधीन रख दिया गया था। १ जनवरी, १८६२ से उत्तर-पश्चिमी सूबो मे लागू पुलिस एक्ट अजमेर-मेरवाड़ा मे भी लागू कर दिया गया था।[५४] *सन् १८५३ से लेकर सन् १८७० तक नागरिक पुलिस की अपराधो की* जाँच-पड़ताल, रोकथाम और अभियोग चलाने की जिम्मेदारी थी। सेना का कार्य सरकारी कोषागारो, तहसील और जेल की सुरक्षा था।

मेरवाडा-बटालियन, कमाडर, सहायक कमाडर और ऐजुटेंट (सहायक) नामक तीन सैनिक अधिकारियो के अधीन थी। सन् १८६२ से लेकर सन् १८६६ तक कमाडर का नागरिक पुलिस सम्बन्धी कोई उत्तरदायित्व नही था। उप कमाडर (कमाडर इन सैकेंड) पदेन पुलिस अधीक्षक होता था और ऐजुटेंट उपअधीक्षक पुलिस के पद पर काम करता था। यह व्यवस्था उलझन भरी सिद्ध हुई क्योकि दो छोटी श्रेणी के अधिकारियों को दो पृथक् *अफसरो के अधीन काम करना पड़ता था। सन् १८६६ मे नैनीताल* पुलिस आयोग के सुझावो पर बटालियन का कमाडर पद और जिला पुलिस अधीक्षक का पद समाहित करके एक ही अधिकारी के अन्तर्गत रख दिया गया था और उसकी सहायता के लिए दो सहायक नियुक्त किए गए थे इन मे से एक के अधीन मेरवाडा तथा दूसरे के अधीन अजमेर क्षेत्र था।[५५]

सन् १८६६ मे स्वीकृत कुल सैनिक पुलिस सख्या निम्नलिखित थी—[५६]

थानेदार (सब इस्पेक्टर)	हैड कांस्टेबल	घुडसवार	सिपाही
१५	७६	३६	३८८

उपर्युक्त *नवीन व्यवस्था भी अत्यन्त असुविधाजनक सिद्ध हुई थी। कमाडर* अपनी रेजीमेन्ट के साथ ब्यावर मे रहता था। डिप्टी कमिश्नर, जिसके साथ कमाडर को नागरिक प्रशासन सम्बन्धी मामलों के कारणो से नित्य सम्पर्क मे रहना होता था, वह चालीस मील दूर अजमेर मे रहता था और इस तरह वह मुख्य पुलिस अधिकारी के साथ सीधे सम्पर्क से वचित रह जाता था। प्रथम पुलिस सहायक अजमेर मे डिप्टी कमिश्नर के साथ रहते थे और कमाडर की अनुपस्थिति मे जिले का पुलिस प्रशासन सम्भालते थे। यद्यपि मूलत यह उत्तरदायित्व कमाडर का होता था। उक्त अधिकारी को प्राय वे सभी सामान्य मामले जो चीफ कमिश्नर से विचार-विमर्श के लिए

निर्धारित होते थे, अनुमति के लिए ब्यावर भेजने पड़ते थे। इससे बहुधा विलम्ब हो जाया करता था। इसके अतिरिक्त मेरवाड़ा क्षेत्र के लिए एक पृथक् पुलिस अधिकारी नियुक्त था और उस क्षेत्र के लिए डिप्टी कमिश्नर से विचार विमर्श के लिए कोई अधिकारी अजमेर मे नियुक्त नही था। अतएव जिला पुलिस अधीक्षक पुलिस विभाग को कुशलता से नियन्त्रित नहीं कर पाते थे। इस व्यवस्था मे सबसे बड़ी बाधा यह थी कि कमाडर का ध्यान सैनिक एव असैनिक उत्तरदायित्व मे बँटा रहता था और उसे बहुधा अपनी नागरिक सेवाओ के सदर्भ मे ब्यावर से बाहर रहना पड़ता था। ऐसी स्थिति मे सेना केवल एक ही अग्रेज अधिकारी के उत्तरदायित्व मे रह जाती थी। मेर कोर की विशिष्ट सरचना और मेरो के स्वभाव को देखते हुए यह प्रश्न उपस्थित होना स्वाभाविक था कि मेर कोर की कार्य-कुशलता एव अनुशासन तथा सद्भावना के हित मे कमाडर का अपनी कोर (corps) से अलग रहना कहाँ तक उचित है ? मेर कोर (corps) के कमाडर की सैनिक सेवाओ और असैनिक सेवाओं मे भारी विरोधाभास भी था तथा इन दोनों विभागो को एक ही पद के अन्तर्गत रखने का निर्णय उचित प्रतीत नही होता था। मेर कोर के गार्ड सभी नागरिक सेवा का उत्तरदायित्व वहन करते थे परन्तु नागरिक पुलिस किसी भी रूप मे मेर कोर (corpS) के कार्यों से सम्बन्धित नही थी।[४७]

अतएव इन तीन अधिकारियो मे से दो अधिकारी कमाडर और ऐजुटेंट को स्थाई-रूप से मेर कोर (corps) से ही सम्बन्धित रखा गया और तृतीय अधिकारी को अजमेर और ब्यावर के जिला पुलिस अधीक्षक के पद पर ६०० रुपए मासिक वेतन पर सन् १८७० मे नियुक्त किया गया था। इस व्यवस्था के फलस्वरूप व्यवस्था सबधी बाधाए समाप्त हो गई थीं। इसके परिणामस्वरूप नागरिक पुलिस डिप्टी कमिश्नर एव जिला पुलिस अधीक्षक के सीधे नियत्रण मे आ गई जिससे सम्बन्धित मामलों मे यथासमय व्यक्तिगत विचार-विमर्श द्वारा निर्णय लेने की सुविधा सभव हो गई थी।[४८]

सन् १८७० मे मेरवाड़ा-बटालियन को पुन पूर्व सैनिक स्वरूप प्रदान कर दिया गया था। सन् १८७१ मे अजमेर पुलिस विभाग को भी उत्तर-पश्चिमी सूबा के इन्सपेक्टर जनरल पुलिस के नियत्रण से हटाकर अजमेर-मेरवाड़ा कमिश्नर के हाथों मे सौंप दिया गया था।[४६] एक पुलिस इसपेक्टर मेरवाड़ा मे नियुक्त किया गया और उसके तत्वावधान मे पाँच थाने ब्यावर, जवाजा, जस्साखेड़ा, टाडगढ़ और देवर मे स्थापित किए गए। इन थानो के अधीन अन्य कई चौकियां कायम की गईं थी। प्रत्येक गाँव मे नियुक्त चौकीदार को वेतन भी सीधा पुलिस विभाग से चुकाया जाता था।

सन् १८७७ में जिला पुलिस सेवा की निम्नांकित स्थिति थी—[१०]

यूरोपीय अधिकारी एस० ग्रो० और इन्सपेक्टर।	भारतीय इन्सपेक्टर थानेदार, हैडकान्स्टेबल	घुड़सवार	सिपाही	
३	९३	४०	४४६	कुल ५८२

इसी वर्ष पुलिस थानों को भी तीन श्रेणियों में विभाजित किया गया था। प्रथम श्रेणी, द्वितीय श्रेणी और पुलिस चौकिया। अजमेर में ९ प्रथम श्रेणी के थाने और ६ द्वितीय श्रेणी के तथा ९ पुलिस चौकिया थी। मेरवाड़ा में ३ प्रथम श्रेणी के, २ द्वितीय श्रेणी और १६ पुलिस चौकियाँ निम्न तरह से स्थापित की गई—[११]

जिला	पुलिस थाने का नाम	पुलिस चौकी का नाम	विशेष
		प्रथम श्रेणी	
अजमेर	अजमेर	सराधना	
	सिटी एक्सटेन्शन		
	रेल्वे वर्कशॉप		
	नसीराबाद	दिल्ली दरवाजा,	शहर खास
	मागलियावास	आगरा दरवाजा,	
	भिनाय	त्रिपोलिया दरवाजा	
	गोयला	ग्रोस्वी दरवाजा	
	केकड़ी	सराय	
		लोहागल	उपनगर अजमेर
		मदार पहाड़िया	
		दाता	
		खरवा	
		बादनवाड़ा	
		शोसला	
		द्वितीय श्रेणी	
अजमेर	पीसागन	नागोला	
	मेगल	हरमाड़ा	
	श्री नगर	देवली	
	सावर	सथाना	
	मसूदा	नाद	
	पुष्कर	—	

प्रथम श्रेणी

मेरवाडा	टाडगढ	बराखान	
	जसाखेडा		
	ब्यावर	रूपनगढ, सैदडा	
		अजमेरी दरवाजा	ब्यावर शहर
		सूरजपोल, मेवाडी	
		दरवाजा, चाग दरवाजा	

द्वितीय श्रेणी

सैंर	बाधाना
जवाजा	थर

अजमेर मेरवाडा के दडनायक के अधिकार-क्षेत्र सम्बन्धी क्षेत्रीय व्यवस्था लागू होने के फलस्वरूप पुलिस चौकियो म भी परिवर्तन आवश्यक हो गया था।[६२] इसलिए सन् १६०३ मे निम्न पुलिस थानो और पुलिस चौकियो की स्थापना की गई—[६३]

जिला	पुलिस थाने का नाम	पुलिस चौकी का नाम	विशेष
		प्रथम श्रेणी	
अजमेर	अजमेर नगरपालिका	मदार दरवाजा, औस्नी	
		दरवाजा, त्रिपोलिया	अजमेर शहर
		दरवाजा, आगरा दरवाजा,	
		केसरगज, सराय ।	
		मदारनाका, रेल्वे वर्कशॉप	
		केसर बाग, आनासागर,	देहात
		बाडी नदी ।	
	अजमेर इम्पीरियल	सराधना,	
	नसीराबाद	रेस कोर्स, रेल्वे स्टेशन	
		लोहारवाडा	नसीराबाद देहाती क्षेत्र
		दाता	
	गोयला	सिराना	
	केकडी	बोगरा	
	भिनाय	बादनवाडा	
	मगलियावास	देवली	

द्वितीय श्रेणी

	पुष्कर	नाद
	पीसांगन	नागलाव
	गेगल	हरमाडा
	श्री नगर	सिघाना
	मसूदा	
	सरवाड़	देवली

प्रथम श्रेणी

मेरवाडा	ब्यावर	अजमेरी दरवाजा, सूरजपोल, मेमुनीदरवाजा ब्यावर शहर
		चागगेट
		सेनेबा चौकी
		रूपनगर
	जस्सा खेडा	छावनी
	टाडगढ	बराखान
	जवाजा	भीम
	देवर	बाघाना

जस्साखेडा पुलिस थाने के अन्तर्गत मई १९०३ मे करियादेह की एक नई पुलिस चौकी स्थापित की गई थी।[६४] करियादेह और सरापना की पुलिस चौकियाँ सन् १९०९ मे समाप्त कर दी गई थीं। इन मामूली परिवर्तनो के अतिरिक्त इस काल मे अन्य कोई विशेष परिवर्तन पुलिस थानो और चौकियो मे नही किया गया।[६५]

सन् १८७७ में अजमेर जिला पुलिस की सख्या निम्न थी:—[६६]

यूरोपीय अधिकारी पुलिस अधीक्षक एव इन्सपेक्टर।	भारतीय इन्सपेक्टर, थानेदार और हैड कान्स्टेबल	घुड़सवार	सिपाही	कुल
३	६३	४०	४४६	५८२

सन् १८८३ के उत्तरार्द्ध मे नगरपालिका पुलिस और छावनी पुलिस का प्रादुर्भाव हुआ। सन् १८३३ के बाद शहरी क्षेत्रो मे प्रत्येक नगरपालिका अपनी सीमाओ मे चौकसी एव गश्त तथा सामान्य अपराधो की रोकथाम के लिए अपना अलग पुलिस बदोवस्त करने लगी। अजमेर नगरपालिका की स्थापना सन् १८३३ मे हुई थी। इसके पूर्व जब भारी वर्षा के कारण शहर पनाह की दिवारें नई जगहों पर गिरने लगी और मरम्मत अनिवार्य हो गई तो एक स्वायत्त कोष की स्थापना की

गई थी। यह राशि शहर चौकसी एवं गश्त कार्यों पर भी खर्च की जाने लगी। सन् १८६७ में उक्त स्वायत्त कोष नगरपालिका कोष में परिवर्तित कर दिया गया।[६७] नगरपालिका में उन दिनों केवल पुलिस व्यवस्था के लिए स्वायत्त कोष से धन प्रदान करने के अतिरिक्त इस संबंध में और कोई जिम्मेदारी वहन नहीं करती थी। इसलिए सामान्य पुलिस विभाग पर इस प्रशासनिक कदम से कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ा। सन् १८८३ के पश्चात् नगर पालिका को इस आर्थिक भार से भी अपनी आय को अन्य कार्यों पर व्यय करने-हेतु मुक्त कर दिया गया था। अजमेर नगरपालिका नियम सन् १८६६ के अन्तर्गत नगरपालिका द्वारा जो पुलिस बंदोबस्त स्थापित किया गया था उसमें या तो चौकीदार नियुक्त किए गए थे अथवा सरकार के पुलिस कर्मचारियों की सेवा इस कार्य के लिए प्राप्त करली थी।[६८]

सन् १८८८ में पहली बार पुलिस सेवा परीक्षा आरम्भ की गई।[६९] परीक्षा समिति में निम्न पदाधिकारी सदस्य थे—

१—जिला पुलिस अधीक्षक	अध्यक्ष
२—एक दंड नायक	सदस्य
३—परीक्षा पारित इन्सपेक्टर	सदस्य

परीक्षार्थी को निम्नांकित तीन विषयों में परीक्षा देनी पड़ती थी —[७०]

१—स्थानीय भाषा

२—विभागीय जाँच एवं

३—कवायद ।

परीक्षार्थी से यह अपेक्षा की जाती थी कि उसे भारतीय दंड-संहिता, जाब्ता फौजदारी कानून, अपरिवर्तित पुलिस सेवा नियमों व आदेशों का ज्ञान विविध कानूनों, विदेशी-कानून, प्रत्यर्पण कानून, चौकीदार-कानून, साक्षी-कानून, सन् १८८८ का छावनी-कानून, मवेशी अपहरण या अवैध प्रवेश-कानून, जीवों पर क्रूरता नियमन-कानून, जंगलात-कानून, जुआ, निरोधक-कानून, अफीम-कानून, डाकघर-कानून और नमक चुंगी कानून की सामान्य जानकारी होनी चाहिए।[७१]

यदि नियुक्ति के बाद दो वर्षों में कोई इन्सपेक्टर उक्त परीक्षा पारित करने में असफल रहता तो उसके पद में अवनति या उसे सेवा से अलग किया जा सकता था। थानेदारों, हैड कान्स्टेबलों, मुन्शी और कांस्टेबलों के लिए पृथक् परीक्षाएं निर्धारित की गई थी। प्रत्येक जुलाई माह में इन परीक्षाओं का आयोजन किया जाता था। सभी थानेदारों, मुन्शी व हैड कांस्टेबलों को उक्त परीक्षाएं उत्तीर्ण करना अनिवार्य था। इस परीक्षा में उत्तीर्ण हुए बिना उच्च पद पर नियुक्त या पदोन्नति नहीं की जाती थी।[७२]

सन् १६०३ मे, जिला पुलिस अधीक्षक के नियंत्रण मे नियमित सभी श्रेणी के पुलिस कर्मचारियो की संख्या ६०४ थी। इसके अनुसार ३८ वर्गमील क्षेत्र पर १ पुलिस कर्मचारी तथा प्रति ६७७ लोगो पर १ पुलिस कर्मचारी नियुक्त था। इस विभाग पर कुल व्यय राशि ६,१५,६२० रुपए थी जो प्रति व्यक्ति पौने चार आने पड़ती थी। सरकारी कोष से इस राशि में ८८,६६२ रुपए प्राप्त होते थे। शेष राशि तीनो नगरपालिकाओ, नसीराबाद छावनी तथा कुछ शराब के ठेकेदारो से प्राप्त होती थी।[७३]

१ अप्रेल, १६११ से अजमेर और ब्यावर नगरपालिकाओ तथा कुछ समय बाद केकड़ी नगरपालिका को भी पुलिस-सेवाओ के कार्य से मुक्त कर दिया गया था।[७४] सन् १६१० से स्थानीय पुलिस अधिकारियो को पुलिस सेवा-प्रशिक्षण के लिए मुरादाबाद भेजा जाने लगा।[७५]

उपरोक्त काल मे पुलिस प्रशासन को सन्तोषजनक नही कहा जा सकता। पुलिस सेवा मे भरती मे पूरी सावधानी नही बरती जा सकती थी क्योंकि स्थानीय कवायद का मैदान छोटा था तथा साथ ही एक बार किसी को भर्ती कर लेने पर उसे निकालना कठिन होता था। यद्यपि अन्य प्रदेशो मे असामाजिक एवं अपराधी तत्वो को जिले से निष्कासित करने एवं उनके गिरोह को भंग करने की व्यवस्था थी तथापि रियासतो से जुड़े हुए अजमेर मे यह कदम अव्यावहारिक था। फलस्वरूप चयन मे अत्यन्त सावधानी बरतना अत्यन्त आवश्यक था। भरती किए गए व्यक्तियो मे सामान्य ज्ञान का स्तर निम्न पाया जाता था।[७६] कभी कभी तो सजा पाए व्यक्ति अथवा चालीस साल की उम्र से भी अधिक आयु के लोग भरती कर लिए जाते थे।[७७]

अजमेर पुलिस सेवा मे दूसरे प्रदेशों के लोगो की संख्या अधिक थी। अधिकांश कर्मचारी उत्तर पश्चिमी सूबा और अवध से थे। स्थानीय लोगों को समुचित अवसर प्रदान करने की दृष्टि से भीणों को भरती के लिए प्रोत्साहित किया गया था क्योकि ये लोग क्षेत्र की स्थिति से परिचित होने के कारण अच्छे सिपाही सिद्ध हुए थे। उन दिनो कर्मचारियो मे व्याप्त अनुशासन एवं व्यवहार को भी अच्छा नही कहा जा सकता था। अनुशासनहीनता एवं कर्त्तव्यो की अवहेलना के लिए दोषी कर्मचारियो का प्रतिशत पच्चीस के लगभग बना रहता था।[७८]

पुलिस सेवा की इस असन्तोषजनक स्थिति का मूल कारण स्थानीय लोगो में से उचित व्यक्तियों को स्थान न मिलना था। इस कमी की पूर्ति दूसरे प्रदेशो की पुलिस सेवा कर्मचारियों से तथा मुख्यतः उत्तरी पश्चिमी सूबा पुलिस विभाग से की जाती थी। इन कर्मचारियो पर स्थानीय जिला पुलिस अधीक्षक का प्रभाव नगण्य सा था।

उन दिनो पुलिस विभाग द्वारा गभीर अपराधो की सफल जाँच पडताल तथा अपराधियो को दड का प्रतिशत अत्यन्त निम्न था। इस असफलता का प्रमुख कारण जिले की विशेष भौगोलिक स्थिति थी। अजमेर चारो ओर से रियासतो से घिरा हुआ था, जहाँ बहुधा अपराधी भागकर शरण ले लेते थे। अजमेर के एक महत्वपूर्ण रेल केन्द्र बन जाने तथा देश के बडे-बडे शहरो से जुड जाने के कारण भी यहाँ बाहरी विशेषकर मुरादाबाद, अलीगढ़ और आगरा के कुख्यात अपराधी असामाजिक तत्व अधिक सख्या मे आकर्षित होने लगे थे। स्थानीय अपराध जाँच विभाग के अधिकाश अधिकारी अनुभवहीन एव जाँच-पडताल की वैज्ञानिक एव सुचारू पद्धति से अनभिज्ञ थे। अधिकाश मुकदमों में गभीर अपराधो के अभियुक्त भी फौजदारी अदालत में जाँच के दौरान पर्याप्त प्रमाणो के अभाव तथा अन्य प्रक्रिया सम्बन्धी त्रुटियो के कारण सजा पाने से बच जाते थे क्योकि कतिपय पुलिस अधिकारियो को कानूनी प्रशिक्षण प्राप्त नही था। अधिकाश मुकदमो मे थानेदार अदालती कार्यवाही के दौरान पर्याप्त गवाहिया प्रस्तुत करने मे असफल रहते थे। अपराधो की जाँच-पडताल का कार्य अनुभवहीन व अप्रशिक्षित थानेदारों के हाथो मे था।[७६]

उन दिनों अजमेर-मेरवाडा मे पुलिस सेवा लोकप्रिय नही थी। इसमे छुट्टी के कठिन नियम व कम वेतन होने के कारण लोगों को भरती होने मे हिचकिचाहट रहती थी। पुलिस विभाग मे सेवामुक्त होने मे एक तरह से होड लगी रहती थी, कभी कभी तो इन त्यागपत्रो की सख्या एक साल मे सौ तक पहुँच जाती थी।[८०] इसका एक प्रमुख कारण यह भी था कि अधिकाश रगरूट अकाल एव सूखे की स्थिति टालने के लिए पुलिस मे भरती हो जाते थे और ज्योही वह स्थिति टल जाती, वर्षा होते ही अविलम्ब त्यागपत्र देकर भाग छूटते थे। गर्मी अथवा अकाल के दिनो में लोगो का पुलिस सेवा के प्रति अस्थाई आकर्षण हो जाता था और वे परिस्थितियोवश ही यह सेवा अगीकार करते थे। इसके प्रति उनकी स्वाभाविक रुचि नही थी। अजमेर जिले के स्थानीय लोगो मे से दो भारतीय रेजीमेन्टो मे भी भरती हुआ करती थी। इन रेजीमेन्टों के वेतनमान पुलिस सेवा की अपेक्षा अधिक आकर्षक थे। एक नये रगरूट को फौज मे भरती होने पर एक साधारण कान्स्टेबल के वेतन से अस्सी प्रतिशत अधिक प्राप्त हुआ करता था। जबकि पुलिस के कर्मचारियो को अपने वेतन मे से ही वर्दी तथा अन्य साज-सामान की कीमत भी चुकानी पडती थी। इस तरह शेष बची राशि मे एक विवाहित दपति का जीवनयापन तो अत्यन्त कठिन अवश्य कहा जा सकता है। इसका परिणाम यह हुआ कि पुलिस सेवा के सभी कर्मचारियों मे ऋण सक्रामक रूप से व्याप्त था।

अग्रेजों के आगमन से पूर्व न्याय-व्यवस्था

अजमेर-मेरवाडा मे अग्रेजो के आगमन से पूर्व नियमित व्यवस्था नहीं थी। विवादो के फैसले बहुधा तलवारों से ही हुआ करते थे। प्रत्येक व्यक्ति अपनी या अपने

सगे सम्बन्धियों की शक्ति पर आश्रित रहता था। अधिकतर अपराध एक जाति के लोगो द्वारा दूसरी जाति की महिलाओ का अपहरण अथवा विवाह-विच्छेद के होते थे।[८१] बहुधा इन झगडो का निर्णय अधविश्वास भरी प्रक्रियाओ के द्वारा किया जाता था। एक प्रचलित तरीका तो यह था कि मन्दिर या पवित्र स्थान पर विवादास्पद सपत्ति को रखकर उसे उठाने के लिए चुनौती दी जाती थी और यह माना जाता था कि इस तरह अनाधिकृत व्यक्ति की एक धार्मिक स्थान से उस वस्तु को उठाने की हिम्मत नही होगी या उस पर परमात्मा का कोप होगा। कई बार विवाद का हल सौगन्ध उठाकर करवाया जाता था। यह विश्वास किया जाता था कि यदि निश्चित अवधि मे सौगधकर्त्ता की स्वय की अथवा उसके परिवार मे से किसी की मृत्यु होगी अथवा उसके मवेशी या सम्पत्ति नष्ट हो जाएगी, तो यह माना जाएगा कि उसके द्वारा उठाई गई सौगन्ध असत्य थी और वह व्यक्ति अपराधी मान लिया जाता था। उन दिनो इसी तरह की अधविश्वास भरी प्रथाए न्याय के नाम पर प्रचलित थीं।

महिलाओ के अपहरण, विवाह समझौते के भग करने, जमीन के मुकदमें, ऋणो के मुकदमे तथा सीमा विवाद सम्बन्धी मामलो मे या उन सभी मामलो मे जिसमें किसी पक्ष को क्षति अथवा चोट पहुँचाई गई हो, आदि मामलो मे पचायतों का भी उपयोग किया जाता था। असामान्य बड़े अपराधो के अतिरिक्त पचायत ही लोगो मे न्याय प्रशासन का एकमात्र साधन थी।

प्रारम्भ मे मेरवाडा के सुपरिटेंडेंट केवल राजस्व सम्बन्धी मामलो में हस्तक्षेप करते थे। दीवानी और फौजदारी मामलो मे पचायतें ही निर्णायक थी।[८२] उन दिनो अजमेर स्थित सुपरिटेंडेंट जोधपुर, जैसलमेर और किशनगढ रियासतों के लिए पोलिटिकल एजेन्ट भी थे। इसलिए स्थानीय फौजदारी मामले उनके एक सहायक के अधीन थे एव दीवानी मामलो को सदर अमीन तथा असाधारण गभीर मामले सुपरिटेंडेंट स्वय सुनते थे।

सन् १८४२ मे डिक्सन को अजमेर और मेरवाडा का सुपरिटेंडेंट नियुक्त किया गया था। सन् १८५०-५१ मे कर्नल डिक्सन को दीवानी और फौजदारी अधिकार प्रदान किए गए थे और उनकी सहायता के लिए दो सहायक (एक अजमेर में तथा दूसरा मेरवाडा मे) नियुक्त किए गए थे। इन दो अधिकारियो के अतिरिक्त अजमेर मे दो सदर अमीन भी नियुक्त थे जो दीवानी और फौजदारी काम देखा करते थे।[८३]

सन् १८४६-४७ से दीवानी मुकदमो की सुनवाई के लिए निम्नलिखित प्रक्रिया लागू की गई थी[८४]

क्रम	न्यायालयो का पद	दीवानी न्यायाधीश का राशि सबधी	आगे अपील

		अधिकार अधिक से अधिक	
१	पडित अदालत	१ से ५० तक	कनिष्ठ सदर अमीन
२	कनिष्ठ सदर अमीन	५० से ६०० तक	वरिष्ठ सदर अमीन
३	वरिष्ठ सदर अमीन	६०० से ४००० तक	सुपरिटेंडेंट
४	सहायक सुपरिटेंडेंट	४००० से अधिक	सुपरिटेंडेंट
५.	सुपरिटेंडेंट	केवल अपीलो से सम्बधित	

उन दिनो सुपरिटेंडेंट ने नियमित वादो की सुनवाई करना स्थगित कर दिया था अतएव बहुत ही कम अपीलें की जाने लगी थी।[८५]

कमिश्नर सुपरिटेंडेंट और सदर अमीन के दायित्व :—

दीवानी मुकदमे मे सुपरिटेंडेंट की कचहरी से फैसले की अपील कमिश्नर को की जाती थी। हत्या के मामलो मे जहाँ सुपरिटेंडेंट को आदेश जारी करने की सक्षम नहीं था, कमिश्नर आदेश जारी करता था। विशेष मामलो मे सुपरिटेंडेंट कार्यालय की अपील कमिश्नर को प्रस्तुत होनी थी।[८६]

उन दिनों सुपरिटेंडेंट के अधिकार भी कम नही थे। वह दोनो जिलो के दीवानी, फौजदारी, राजस्व तथा चुगी आदि प्रशासनिक कार्यों के लिए उत्तरदायी था।[८७] वह अपने अधीनस्थ सभी अदालतो को आवश्यक आदेश जारी कर सकता था। दीवानी मामलों में वह अपने सहायक सुपरिटेंडेंट और सदर अमीन की कचहरियो के फैसलो की अपील सुना करता था। उसे राजस्व मे ऋण प्रदान करने तथा राजस्व-भुगतान स्थगित करने के भी अधिकार थे। चुगी वसूली के सामान्य कामो पर उसका पूर्ण नियन्त्रण था।

वरिष्ठ सदर अमीन छ सौ रुपए से लेकर चार हजार की राशि तक के दीवानी मुकदमो का निर्णय करता था। फौजदारी मुकदमे तथा पुरानी प्रथा के अनुसार सपत्ति पर लिए गए बलात् कब्जो के मुकदमो की भी सुनवाई करता था। कनिष्ठ सदर अमीन के फैसले के विरुद्ध दायर की गई अपील की सुनवाई करने का उसे अधिकार प्राप्त था।[८८] कनिष्ठ सदर अमीन को ६०० रुपयो की राशि तक के दीवानी मामले निर्णीत करने व पडित अदालत के फैसलो के विरुद्ध अपील सुनने का अधिकार था। उसका काम अजमेर शहर और बाहर की इमारतो की देखभाल का भी था। वह सभी काम सहायक अधीक्षक के निर्देशन म करता था और आवश्यक होने पर सहायक अधीक्षक या सुपरिटेंडेंट को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करता था।[८९] पडित अदालत केवल ५० रुपयों की राशि तक के ही मामले सुना करती थी। इसका कार्य क्षेत्र अजमेर शहर तक ही सीमित था।[९०]

मेरवाडा मे सन् १८२६ के एक्ट ८ के लागू होने तक सभी दीवानी मामले पचायतें निपटाती थी।[९१] सन् १८१८ से सन् १८४३ तक अजमेर मे यह

प्रथा प्रचलित थी कि स्थानीय लोगो और महाजनो अथवा अन्य लोगो के बीच सभी राशिगत लेन-देन के प्रपत्रों पर सुपरिटेंडेंट के हस्ताक्षरो का होना अनिवार्य था। लेनदार को स्वय उसके वकील या वकील के सबंधित अधिकार के समक्ष प्रस्तुत होकर प्रपत्र की लिखापढी सत्य होने की तस्दीक करनी होती थी। इस बात पर कोई ध्यान नही दिया जाता था कि लेनदार अपनी सारी सपत्ति या उसका कोई भाग बधक रख रहा है। केवल यही पर्याप्त समझा जाता था कि सबंधित पक्ष ने पत्र की लिखापढी को मौखिक तौर से सही स्वीकार कर लिया है। यदि लेनदार स्वय प्रस्तुत होकर एक लिखित प्रपत्र प्रस्तुत कर इकरारनामो की स्वीकृति की प्रार्थना करता तो कार्यवाही मे विलम्ब नही होता था। एक सादे कागज पर इस आशय का प्रार्थना-पत्र ही पर्याप्त समझा जाता था तथा यह मान लिया जाता था कि सभी कानूनी खर्चे चुकाकर दीवानी अदालत की कार्यवाही पूरी की जा चुकी है। इस तरह की प्रक्रिया के फलस्वरूप अजमेर की जनता का एक बडा भाग सूदखोरों के चगुल मे फँस गया था। यदि कोई इस्तमरारदार सरकारी लगान चुकाने मे असमर्थ होता तो वह किसी साहूकार को उस राशि के बदले कुछ आय निश्चित वर्षों के लिए हवाले कर देता था। कर्नल डिक्सन ने स्वय इस प्रथा के दोषो एव ऋणग्रस्तता की स्थिति का चित्रण किया है। उसने इसे समाप्त करने का सबसे पहले प्रयत्न किया था।

इसके स्थान पर नियामक प्रान्तो मे सिविल प्रोसीजर कोड के लागू होने के पहले जो व्यवस्था थी, वह प्रारम्भ की गई। न्यायालय मे वाद प्रस्तुत होने पर प्रतिवादी को स्वयं अथवा वकील के माध्यम से पन्द्रह दिन में उपस्थित होने का नोटिस जारी किया जाता था। यदि वह उक्त अवधि में उपस्थित नही होता तो दावे का फैसला एक तरफा कर दिया जाता था।[६२] यदि प्रतिवादी अपना जवाब दावा तथा अन्य औपचारिकताए पन्द्रह दिन की अवधि मे पूरी कर देता तब मुद्दे निर्धारित किए जाते थे और वादी को अपने सबूत और साक्षी प्रस्तुत करने के लिए ६ सप्ताह का अवसर दिया जाता था। इस तरह मामले की सुनवाई प्रारम्भ होने के पूर्व तीन माह का समय निरर्थक व्यतीत हो जाता था। इसके पश्चात् भी मूल मुद्दो के निर्धारण मे भी अनावश्यक विलब होता था।[६३]

न्यायिक विकास (१८४८–१८७१)

सन् १८४८ तक ए जी जी का आवास अजमेर मे ही था और जिला कमिश्नर तथा सुपरिटेंडेंट उनके अन्तर्गत काम करते थे। तबतक यह जिला गैर-नियामक था। साल मे केवल एक बार राजस्व का आय-व्यय प्रस्तुत होता था। यहाँ न तो कानून ही लागू थे और न सदर न्यायालय का यहाँ अधिकार-क्षेत्र ही था।[६४] कर्नल सदरलैंड के निधन के पश्चात् जब कर्नल लो ने पदग्रहण किया तब ए जी जी से अधिकाश अदालतो सम्बन्धी कार्य सुपरिटेंडेंट को हस्तातरित किया

गया था।[९५] सन् १८५३ मे ए. जी जी को अजमेर मेरवाडा के नागरिक प्रशासन के भार से मुक्त कर दिया गया था।[९६] उस समय से न्यायिक अपीलें ए जी जी राजपूताना के बजाय सदर दीवानी अदालत, आगरा को होने लगी थी।[९७]

सन् १८६२ मे पुलिस एव न्याय विभागो का पृथक्करण कर दिया गया था।[९८] फौजदारी अदालतें उच्च न्यायालय के अधीन रखी गई थी। उत्तर-पश्चिमी सूबा सरकार द्वारा जो कानून लागू थे वे धीरे-धीरे अजमेर मेरवाडा मे लागू किए गए थे। इस तरह कुछ वर्षों मे अजमेर-मेरवाडा गैर नियामक जिले से नियामक जिले में परिवर्तित हो गया था।[९९]

निम्न आकडो से यह स्पष्ट है कि जिले मे मुकदमो की निरन्तर अभिवृद्धि होती रही —[१००]

सत्र न्यायालय मे वाद की सख्या।	
१८६४	१५
१८६५	००
१८६६	१८
१८६७	५
१८६८	८
फौजदारी अपीलों की सख्या	
१८६४	२४
१८६५	७१
१८६६	६७
१८६७	६०
१८६८	—
दीवानी अपीलें और वादों की सख्या	
१८६४	३८
१८६५	६०
१८६६	६८
१८६७	६४

त्रुटिपूर्ण व्यवस्था

उन्नीसवी सदी के मध्य तक अजमेर में न्याय-व्यवस्था का जो विकास हुआ उसमे अभी भी कई त्रुटिया थी। एजेन्ट का कार्यालय ६ माह के लिए आबू मे रहता था। उसे अजमेर के राजस्व आयुक्त, सत्र न्यायाधीश व सदर दीवानी अदालत के न्यायाधीश के रूप मे काम करने के अतिरिक्त कतिपय विविध एव सामान्य प्रशासनिक मामलों मे उत्तर-पश्चिमी सूबा सरकार के विभिन्न विभागाध्यक्षों के अन्तर्गत भी कार्य

करना पडता था।[१०१] इस तरह ए. जी जी पर प्रशासनिक एव न्यायिक कार्यों का बहुत भार था। ए. जी जी अजमेर मे एक वर्ष मे एक बार सत्र न्यायालय की बैठक कर पाते थे अतएव अभियुक्तो को पूरे साल भर हवालात मे रखा जाता था।[१०२] कार्याधिक्य के कारण एजेन्ट का राजनीतिक कार्य भी अत्यधिक शिथिल हो गया था। वह पडोसी रियासतो के यथा समय दौरे तक कर पाने मे असमर्थ थे। स्थिति यह हो गई थी कि कर्नल कीटिंग को १६ अप्रेल, १८६८ के पत्र मे स्पष्ट कहना पडा था कि कोई भी व्यक्ति जिसे ए जी. जी का कार्यभार भी वहन करना पडता हो, अजमेर जिले का विकास करने की स्थिति मे नहीं है। ऐसी स्थिति मे प्रशासन का पुनर्गठन अनिवार्य हो गया था।[१०३]

न्यायपालिका का पुनर्गठन (सन् १८७२) —

इस जिले मे १ फरवरी मे अजमेर न्यायालय नियमन कानून १८७२ मे लागू हुआ। न्यायालयो को आठ श्रेणियों में पुनर्गठित किया गया—[१०४]

१–तहसीलदार की कचहरी।
२–सहायक कमिश्नर का न्यायालय (साधारण अधिकार)।
३–सहायक कमिश्नर-न्यायालय (पूर्ण अधिकार)।
४–छावनी दडनायक-अदालत।
५–न्यायिक सहायक कमिश्नर-अदालत।
६–डिप्टी कमिश्नर-कचहरी।
७–कमिश्नर-न्यायालय।
८–चीफ कमिश्नर न्यायालय।

सन् १८७२ से चीफ कमिश्नर, डिप्टी कमिश्नर, न्यायिक सहायक कमिश्नर, छावनी दडनायक, सहायक कमिश्नर एव अतिरिक्त सहायक कमिश्नरों की नियुक्तिया गवर्नर जनरल की कोंसिल द्वारा की जाती थी[१०५] तथा तहसीलदारों की नियुक्ति का अधिकार चीफ कमिश्नर को था।[१०६]

अधिकार-क्षेत्र

चीफ कमिश्नर गवर्नर जनरल की आज्ञा से किसी न्यायालय की स्थानीय सीमाओ का निर्धारण एव परिवर्तन कर सकता था।[१०७] अजमेर के विभिन्न न्यायालयो के अधिकार-क्षेत्र इस प्रकार थे—[१०८]

कार्यालय-नाम	फौजदारी अधिकार-क्षेत्र	दीवानी अधिकार-क्षेत्र
१—तहसीलदार	चीफ कमिश्नर द्वारा जाब्ता फौजदारी कानून के तहत समय-समय पर प्रदान	दीवानी अदालत के अधिकार, जिनमे वाद की राशि सौ रुपए से

	किए गए अधिकार ।	अधिक मूल्य की नहीं हो ।
—असिस्टेंट कमिश्नर (सामान्य अधिकार)	,, ,,	दीवानी अदालत के अधिकार जहाँ वाद की राशि पाँच सौ रुपए के मूल्य से अधिक की नहीं हो ।
३—असिस्टेंट कमिश्नर (सम्पूर्ण अधिकार)	,, ,,	लघुवाद न्यायालय के अधिकार जहाँ वाद की लघुवाद न्यायालय के अधिकार क्षेत्र के हो और वाद की राशि १ हजार से अधिक नहीं हो ।
४—छावनी दंडनायक-अदालत	,, ,,	लघुवाद न्यायालय के अधिकार जहाँ वाद लघुवाद न्यायालय के अधिकार क्षेत्र का हो और वाद की राशि १ हजार से अधिक नहीं हो ।
५—न्यायिक सहायक कमिश्नर	दंडनायक के सम्पूर्ण अधिकार	लघुवाद न्यायालय के समान अधिकार जहाँ वाद मूल्य १००० रुपयों से अधिक न हो ।
६—डिप्टी कमिश्नर	दंडनायक के सम्पूर्ण अधिकार तथा आज्ञा फौजदारी के ४४५ ए के अन्तर्गत निहित अधिकार ।	दीवानी न्यायालय के किसी भी राशि तक के अधिकार ।
	अधीनस्थ दंडनायकों के निर्णय के विरुद्ध अपीलें सुनने का अधिकार	उपरोक्त ५ श्रेणी के न्यायालयों में से किसी भी वाद, अपील या जारी कार्यवाही के स्थानान्तरण करने का अधिकार ।

		इन्हें वह स्वय सुन सकते थे अथवा अन्य सक्षम न्यायालय को वाद की राशि के आधार पर हस्तातरित कर सकते थे।
७—कमिश्नर	सत्र न्यायाधीश के अधिकार सम्पूर्ण अधिकारयुक्त दडनायक के न्यायालय तथा डिप्टी कमिश्नर के निर्णयो के विरुद्ध अपील सुनने के अधिकार।	जिला न्यायालय के अधिकार, तृतीय, चतुर्थ, पचम और षष्ठ श्रेणी के न्यायालयो के फैसले के विरुद्ध अपील सुनने का अधिकार।
८—चीफ कमिश्नर सदर न्यायालय के अधिकार।	" "	सभी वादों में जहाँ नियमों के अन्तर्गत कमिश्नर के निर्णय के विरुद्ध अपील की सुनवाई के अधिकार। अपील सम्बन्धी उच्चतर न्यायालय के अधिकार।

चीफ कमिश्नर

प्रथम ६ श्रेणी के न्यायालयो पर कमिश्नर का सामान्य नियत्रण था।[१०९] चीफ कमिश्नर गवर्नर जनरल की स्वीकृति से प्रथम चार न्यायालयो मे से किसी भी न्यायालय मे निहित अधिकार आनरेरी रूप मे किसी एक व्यक्ति या तीन व तीन से अधिक व्यक्तियो को बैंच के रूप मे प्रदान करने का आदेश दे सकते थे।[११०] चीफ कमिश्नर ब्यावर के सहायक कमिश्नर को न्यायिक सहायक कमिश्नर के अधिकार प्रदान कर सकता था। वह किसी भी छावनी दडनायक के सहायक कमिश्नर को भी विशेष अधिकार प्रदान कर सकता था।[१११] वह किसी भी नायब तहसीलदार को तहसीलदार के सम्पूर्ण अथवा अशत अधिकार प्रदान करने मे सक्षम था। चीफ कमिश्नर अतिरिक्त सहायक कमिश्नर को सहायक कमिश्नर के सम्पूर्ण अथवा अशत सामान्य अथवा पूर्ण अधिकार प्रदान कर सकता था।[११२] उसे मातहत अदालतो से वाद का प्रत्याहरण करने, स्वय उसकी सुनवाई करने अथवा उसे अन्य सक्षम न्यायालय को सौंपने का भी अधिकार प्राप्त था।[११३]

दीवानी न्याय-प्रक्रिया [११४]

अजमेर न्यायालय नियमन, १८७७ के अन्तर्गत इस क्षेत्र का दीवानी न्याय-प्रशासन मे पुन परिवर्तन किया गया था।[११५] इस क्षेत्र मे सबसे छोटी अदालत मुन्सिफ की थी। इसे सौ रुपए तक के वाद निर्णीत करने के अधिकार प्राप्त थे।[११६] अजमेर, ब्यावर व टाडगढ के तहसीलदारो और नायब तहसीलदारो को यह अधिकार प्राप्त थे।[११७] भिनाय, पीसागन, सरवाड, खरवा, बादनवाडा और देवली के इस्तमरारदारो को भी उक्त अधिकार प्राप्त थे। मुन्सिफ कोर्ट से अपील उप न्यायाधीश (सब जज)[११८] प्रथम श्रेणी सुनता था जिसकी मातहती मे मुन्सिफ होता था। सब जज से अपील कमिश्नर जिला न्यायाधीश के रूप मे सुनता था।[११९] चीफ कमिश्नर की अदालत मे कमिश्नर के यहाँ से अपीलें होती थी।[१२०] पाँच सौ की राशि तक के दीवानी वाद सुनने के अधिकार छावनी दडनायक देवली तथा अतिरिक्त सहायक कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा को प्राप्त थे।

निम्न अधिकारियो को प्रथम श्रेणी के दीवानी न्यायाधीश के अधिकार प्राप्त थे जो दस हजार मूल्य राशि तक के सभी वाद सुन सकते थे—[१२१]

सहायक (असिस्टेंट) कमिश्नर, अजमेर-मेरवाडा।
छावनी दडनायक, नसीराबाद।
न्यायिक सहायक कमिश्नर, अजमेर।
अतिरिक्त सहायक कमिश्नर, केकडी व अजमेर।
उप दडनायक, ब्यावर।[१२२]

उपर्युक्त अधिकारियो मे से केवल न्यायिक सहायक कमिश्नर अजमेर और अतिरिक्त सहायक कमिश्नर अजमेर व मेरवाडा को अपीलें सुनने व निर्णय करने का अधिकार था।[१२३] इनके न्यायालयों से अपील सीधी कमिश्नर की अदालत मे जो जिला न्यायाधीश भी थे, की जाती थी। कमिश्नर के निर्णय की अपील चीफ-कमिश्नर की अदालत मे की जाती थी जो कि जिले की उच्च न्यायालय थी।

पाँच सौ रुपयो की राशि तक के लघुवाद न्यायालय के अधिकार सहायक कमिश्नर, मेरवाडा, छावनी-दडनायक, नसीराबाद, अतिरिक्त सहायक कमिश्नर (द्वितीय श्रेणी) अजमेर और उपदडनायक ब्यावर तथा २० रुपए की राशि तक के लघुवाद निर्णीत करने के अधिकार रजिस्ट्रार लघुवाद न्यायालय, अजमेर को प्राप्त थे।[१२४]

फौजदारी मुकदमो मे कमिश्नर के यहाँ से जो कि सेशन्स जज का कार्य भी करते थे अपील चीफ कमिश्नर की अदालत मे होती थी जो कि जिले की हाईकोर्ट थी।[१२५] उनके अधीन अजमेर और मेरवाडा के असिस्टेंट कमिश्नर थे जो अपने

क्षेत्रों के जिला दंडनायक भी थे। छावनी दंडनायक, नसीराबाद, न्यायिक सहायक, अतिरिक्त सहायक कमिश्नर केकड़ी, उपदंडनायक ब्यावर और सहायक कमिश्नर डीडवाना को प्रथम श्रेणी दंडनायक के अधिकार प्राप्त थे। छावनी दंडनायक देवली, तहसीलदार अजमेर, ब्यावर और टाडगढ़ तथा ऑनरेरी दंडनायक अजमेर और ब्यावर को द्वितीय श्रेणी दंडनायक के अधिकार प्राप्त थे जिनके फैसलों की अपील जिला दंडनायक के यहां की जाती थी। नायब तहसीलदारों को तृतीय श्रेणी दंडनायक के अधिकार प्राप्त थे तथा इसी तरह के अधिकार ऑनरेरी दंडनायकों के रूप में भिनाय, पीसांगन, सावर, खरवा बादनवाड़ा और देवली के इस्तमरारदारों को भी प्राप्त थे। सन् १८७७ में डिप्टी कमिश्नर का पद समाप्त करने पर दोनों सहायक *कमिश्नर को भारतीय दंड संहिता के अन्तर्गत आने वाले अपराधों के सम्बन्ध में* जिला दंडनायक के अधिकार प्रदान कर स्वतंत्र रूप से न्याय-विभाग के काम सौंपे गए थे।[१२६]

सन् १८७७ के पश्चात् विचाराधीन वादों की संख्या में भारी वृद्धि हो गई थी।[१२७] सभी अधिकारियों पर न्यायिक कार्यों का बहुत भार था। उन पर अन्य नियमित प्रशासनिक कार्यों के भार के कारण प्रशासन में शिथिलता का आना स्वाभाविक ही था। इसीलिए निम्न अधिकारियों की नियुक्ति की गई थी—

(१) सन् १८८९ में अतिरिक्त सहायक कमिश्नर राजस्व

(२) रजिस्ट्रार (सन् १८९०)

अतिरिक्त सहायक कमिश्नर 'राजस्व' केवल राजस्व सम्बन्धी मामलों के लिए नियुक्त किया गया था और रजिस्ट्रार को बीस रुपयों तक की राशि के लघुवाद निपटाने के अधिकार प्रदान किए गए थे।

इस व्यवस्था से लघुवाद मुकदमों को निपटाने में अधिक सहायता मिली जो निम्न आंकड़ों से स्पष्ट है—[१२८]

लघुवाद न्यायालय के मुकदमें

	वर्ष	मुकदमों की संख्या
सन्	१८८५	६८६०
	१८८६	७१७३
	१८८७	६८४२
	१८८८	६५३७
	१८८९	४४७३

उक्त न्यायालयों के कार्यों में वृद्धि का एकमात्र कारण इनके कार्य-क्षेत्र को रेल मार्गों तक विस्तृत कर देना भी था। यह सभी क्षेत्र जो राजपूताना व पश्चिमी

राजपूताना रेल्वे के अन्तर्गत था और जिस पर पोलिटिकल एजेंट अलवर, रेजिडेन्ट जयपुर व पश्चिमी स्टेट एजेन्सी का प्रशासन था, उस सभी क्षेत्र पर सन् १८८० मे अस्थाई तौर पर चीफ कमिश्नर अजमेर को सेशन्स न्यायालय के अधिकार प्रदान किए गए।[१२९]

सन् १८८१ मे सहायक कमिश्नर मेरवाडा को जिला अदालत के अधिकार दिए गए और अब वह मूल दीवानी मुकदमो की सुनवाई कर सकता था। उसे लघुवाद न्यायालय का न्यायाधीश भी नियुक्त किया गया। सन् १८८२ म उसे मारवाडा मेरवाडा सीमावर्ती उस रेल मार्ग के लिए जो मारवाड के सिरोही क्षेत्र से गुजरता है, प्रथम श्रेणी के दडनायक का कार्य भी सौपा गया।[१३०]

सन् १८८४ मे, छावनी दडनायक नसीराबाद को जिला न्यायाधीश के रूप मे नियुक्त किया गया जिसका अधिकार स्टेट्स रेल्वे के उस भूभाग पर था जो मेवाड और टौंक रियासतो के मध्य पडता था। सन् १८८५ म, न्यायिक सहायक कमिश्नर तथा छावनी दडनायक, नसीराबाद को अस्थाई रूप से लघुवाद न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त किया गया तथा इनका अधिकार क्षेत्र राजपूताना रेल्वे के उस भूभाग पर रखा गया जो जयपुर, किशनगढ और मेवाड तथा टौंक रियासतो मे से होकर गुजरता था।[१३१]

१८ सितम्बर, १८८६ को अजमर व मेरवाडा के सहायक कमिश्नर को उनके अपने अपने अधिकार क्षेत्र मे सन् १८८८ के एक्ट १० (जाब्ता फौजदारी) लागू होने से जिला-दडनायक के पद पर नियुक्त किया गया परन्तु दोनो ही जिलो के चुगी और आबकारी के मामलो मे केवल कमिश्नर को ही जिला दडनायक के अधिकार प्रदान किए गए।[१३२] अजमेर के न्यायालयो मे काम के बँटवारे म काम की प्रक्रिया व्यवस्थित नही थी। सन् १६०० मे यह महसूस किया गया कि वर्तमान व्यवस्था जिसके अन्तर्गत सहायक कमिश्नर सभी दीवानी और फौजदारी मामला को स्वीकार कर उन्हें विभिन्न न्यायालयो म वितरित करने का कार्य त्रुटिपूर्ण था।[१३३] सहायक कमिश्नर का अधिकाश समय प्रतिदिन विभिन्न न्यायालयो म काम के बँटवारे म ही व्यतीत हो जाया करता था। इन्हे स्थानीय जानकारी प्राप्त करने का अवसर उपलब्ध ही नही हो पाता था। इस एक मूल कारण के अतिरिक्त अन्य कतिपय कारणों से भी यह निर्णय लिया गया कि विभिन्न न्यायालयो के सीमा-क्षेत्र निर्धारित कर उसके आधार पर दीवानी और फौजदारी मामलो का कार्य उनम बाँटा जाए।[१३४] अजमेर मेरवाडा के कमिश्नर का भी यह मत था कि इस योजना से प्रशासनिक लाभ होगा।[१३५]

सरकार न नवम्बर, १६०३ म न्यायिक कार्य विभाजन की नवीन योजना लागू की।[१३६] इस प्रकार न्यायपालिका मे सुधार के लिए निरन्तर प्रयास जारी रहे।

अजमेर म अग्रेजो के शासन के बाद ही आधुनिक न्याय प्रणाली प्रारम्भ हुई। प्रारम्भिक न्याय प्रक्रिया का स्वरूप सरल था। सुपरिटेंडेंट एक साथ ही दीवानी,

फौजदारी, राजस्व और चुगी सम्बन्धी मामलो के प्रशासन का मुख्य अधिकारी होता था। सुपरिटेंडेंट की कचहरी से अपीलें कमिश्नर सुना करता था। सन् १८६२ तक दडनायक और पुलिस के अधिकारो मे सीमा रेखा निर्धारित नही हो पाई थी। सन् १८६२ के बाद पुलिस और न्याय विभागो को पृथक्-पृथक् किया गया।

अजमेर डिवीजन मे जाब्ता फौजदारी कानून लागू होने के पूर्व फौजदारी मामलो मे डिप्टी कमिश्नर सत्र न्यायाधीश का कार्य करता था। कमिश्नर को केवल विस्तृत न्यायिक और प्रशासनिक अधिकार ही प्राप्त नही थे वरन् उन्हे राजस्व सबधी अधिकार भी प्राप्त थे। सन् १८६६ मे इस दिशा मे पृथक्करण का प्रयास किया गया, परन्तु यह व्यवस्थित नही हो पाया।

अजमेर-न्यायालय विनिमय द्वारा सन् १८७७ मे उस आधार को जिस पर आज की न्यायपालिका का स्वरूप विकसित हुआ है, स्थापित किया गया। सन् १८७७ के प्रारुप पर न्याय-व्यवस्था उन्नीसवी सदी तक चलती रही और बीसवी सदी के पूर्वार्ध तक वह थोड़े से सशोधनों के साथ बनी रही।

अध्याय ७

१ सारदा, अजमेर—हिस्टोरिकल एण्ड डिस्क्रिप्टिव (१६४१), पृ० २६६।

२ यह पांच थाने-ब्यावर, जवाजा, जस्सा खेडा, टाडगढ और देवर मे स्थापित किए गए थे। त्रिपाठी, मगरा-मेरवाडा का इतिहास (१६१७) पृ० २०।

३ डिक्सन, स्केच ऑफ मेरवाडा (१८५०) पृ० ५।

४. कर्नल ए० जी० डेविड्सन, डिप्टी कमिश्नर द्वारा आर० एच० कीटिंग, कमिश्नर व ए० जी० जी० राजपूताना को पत्र, दिनाक ११ अप्रेल, १८६८ पत्र सख्या ५६८।१८६८।

५. लेफ्टिनेंट जान लिस्टन, असिस्टेंट कमिश्नर द्वारा डिप्टी कमिश्नर को पत्र, दिनाक ६ अक्टूबर १८६६, पत्र सख्या १६८।१८६६।

६ डिप्टी कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा द्वारा कमिश्नर व ए०जी०जी० राजपूताना को पत्र, दिनाक ११ अप्रेल, १८६८ पत्र सख्या ५६८।१८६८।

७ कमिश्नर, अजमेर-मेरवाडा द्वारा चीफ कमिश्नर को पत्र, दिनांक १७ मई, १८५७ सख्या ५६८।

८. एच० एम० रप्टन, डिप्टी कमिश्नर द्वारा एल० एस० साडर्स कमिश्नर अजमेर मेरवाडा को पत्र, दिनाक २७ जुलाई, १८७१ ।

९ सी० सी० वाट्सन, राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटीयर्स भाग १ ।

१० एल० एस० साडर्स कमिश्नर अजमेर द्वारा कर्नल जे० सी० ब्रुक्स, कार्यवाहक चीफ कमिश्नर को पत्र, दिनाक २५ जनवरी, १८७२ ।

११ कर्नल जे० सी० ब्रुक्स कार्यवाहक चीफ कमिश्नर द्वारा सी० यू० एचीसन, सचिव भारत सरकार को पत्र दिनाक केम्प नसीराबाद ६ फरवरी १८७२ पत्र सख्या ९८ ।

१२ असिस्टेंट जनरल सुपरिटेंडेंट, ठगी एव डकैती उन्मूलन कार्यवाही द्वारा कमिश्नर अजमेर मेरवाडा को पत्र, दिनाक ७ जुलाई, १८८४ सख्या २६६ ।

१३ चीफ कमिश्नर अजमेर मेरवाडा की विज्ञप्ति आबू दिनांक १५ अगस्त, १८८५ सख्या ८७७ ।

१४ सचिव, भारत सरकार द्वारा जनरल सुपरिटेंडेंट, ठगी एव डकैती उन्मूलन कार्यवाही फोर्ट विलियम दिनाक ९ फरवरी, १८६६ पत्र सख्या २०३ जी० ।

१५ सुपरिटेंडेंट जिला पुलिस द्वारा कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा को पत्र, दिनांक १४ जुलाई, १८९३ पत्र सख्या २७४।१६८ ।

१६ उपर्युक्त ।

१७ सुपरिटेंडेंट जिला पुलिस द्वारा कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा को पत्र, दिनाक २६ जनवरी, १८९४ पत्र सख्या ३०४ ।

१८ प्रशासनिक रिपोर्ट अजमेर मेरवाडा सन् १८८८ से १८९४ तक ।

१९ सुपरिटेंडेंट जिला पुलिस द्वारा चीफ कमिश्नर को पत्र दिनाक २६ जनवरी, १८९४ सख्या ३०४ ।

२० प्रथम असिस्टेंट ए० जी० जी० राजपूताना का कमिश्नर अजमेर के पत्र परसुपरिटेंडेंट जिला पुलिस द्वारा व्यक्त मत आबू दिनाक २ जनवरी, १८९४ पत्र सख्या ७६ ।

२१ भारत सरकार का लेफ्टिनेन्ट गवर्नर उत्तर-पश्चिमी सूबा सरकार को सरक्यूलर, सन् १८३७ ।

२२ चकील कोर्ट की रचना एव इतिहास पर आलेख (आबू रेकॉर्ड राजस्थान विश्वविद्यालय पुस्तकालय, जयपुर) ।

२३ उपर्युक्त ।

२४ उपर्युक्त ।

२५ उपर्युक्त ।

२६ उपर्युक्त ।

२७ डिप्टी कमिश्नर द्वारा ए० जी० जी० राजपूताना को पत्र, दिनांक ११ अप्रेल, १८६८ सख्या ५६८ ।

२८. वकील कोर्ट की रचना एवं इतिहास पर आलेख (आबू रेकॉर्ड, राजस्थान विश्वविद्यालय पुस्तकालय, जयपुर) ।

२९ उपर्युक्त ।

३० उपर्युक्त ।

३१ डिप्टी कमिश्नर द्वारा ए०जी० जी० राजपूताना को पत्र, दिनांक ११ अप्रेल, १८६८ पत्र सख्या ५६८ ।

३२ वकील कोर्ट की रचना एवं इतिहास पर आलेख (आबू रेकॉर्ड, राजस्थान विश्वविद्यालय पुस्तकालय, जयपुर)

३३ उपर्युक्त ।

३४ उपर्युक्त ।

३५ उपर्युक्त ।

३६ उपर्युक्त ।

३७ सुपरिटेंडेंट जिला पुलिस द्वारा डिप्टी कमिश्नर, अजमेर-मेरवाड़ा को पत्र, दिनांक ४ जनवरी, १८७३ पत्र सख्या ८ ।

३८ सुपरिटेंडेंट जिला पुलिस द्वारा डिप्टी कमिश्नर अजमेर मेरवाड़ा को पत्र, दिनांक १२ जुलाई, १८७६ पत्र सख्या ७६८ ।

३९ उपर्युक्त ।

४०. सचिव परराष्ट्र विभाग, भारत सरकार द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाड़ा को पत्र, दिनांक २४ सितम्बर, १८७६ पत्र सख्या ७६८ ।

४१ प्रशासनिक रिपोर्ट अजमेर-मेरवाड़ा १८७५–१८७६ ।

४२ सुपरिटेंडेंट जिला-पुलिस द्वारा चीफ कमिश्नर को पत्र, दिनांक १२ जुलाई, १८७६ पत्र सख्या ७६८ ।

४३ कमिश्नर द्वारा चीफ कमिश्नर को पत्र, दिनांक १५ दिसम्बर, १८७४ सख्या ३८४० ।

४४ सुपरिटेंडेंट जिला पुलिस द्वारा चीफ कमिश्नर को पत्र, दिनाक १२ जुलाई, १८७६ सख्या ७६८ ।

४५ मेजर रप्टन डिप्टी कमिश्नर, अजमेर द्वारा एल० एम० साडर्स, कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा को पत्र, दिनाक ३० नवम्बर, १८७४ सख्या १२८८ ।

४६. एल० एस० साडर्स कमिश्नर द्वारा चीफ कमिश्नर को पत्र, दिनाक १२ सितम्बर, १८७३ ।

४७ कमिश्नर द्वारा चीफ कमिश्नर को पत्र दिनाक २२ अप्रेल, १८६१ पत्र सख्या १४११५ ।

४८ चीफ कमिश्नर की विज्ञप्ति क्रमाक २८८ आबू, दिनाक ४ अप्रेल, १८८८ ।

४६ सुपरिटेंडेंट जिला पुलिस द्वारा जिला दडनायक अजमेर मेरवाडा को पत्र, दिनाक २७ जून, १८६३ सख्या ५६६ ।

५० चीफ कमिश्नर विज्ञप्ति क्रमाक २८८ दिनाक आबू ४ अप्रेल १८८८ ।

५१ सुपरिटेंडेंट जिला पुलिस द्वारा जिला दडनायक को पत्र दिनाक २७ जून, १८६३ सख्या ५६६ ।

५२ उपर्युक्त ।

५३ सी० सी० वाट्सन, राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटीयर्स खड १ ।

५४ उपरोक्त तथा डिप्टी कमिश्नर द्वारा आर० सिम्सन सचिव उत्तर पश्चिमी सूबा सरकार को पत्र, दिनाक १२ मई, १८६८ पत्र सख्या १ ।

५५ इन्सपेक्टर जनरल ऑफ पुलिस के पत्र, दिनाक १४ फरवरी, १८६६ सख्या ७६७ पर टिप्पणी, फाइल न० ६६ (पृ० १२२) ।

५६ इन्सपेक्टर जनरल ऑफ पुलिस उत्तर पश्चिमी सूबा सरकार के निजी सहायक सी० ए० ओडेल द्वारा सचिव उत्तर पश्चिमी सूबा सरकार को पत्र, इलाहाबाद दिनांक १४ फरवरी, १८६८ सख्या ७६७ ।

५७ उपर्युक्त ।

५८ एम० वाइटविंग जिला दडनायक अजमेर मेरवाडा द्वारा कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा को पत्र, दिनाक १ जुलाई, १८८६ सख्या ८८७ ।

५६ हरविलास सारदा, अजमेर हिस्टोरिकल एण्ड डिसक्रिप्टिव (१६४१) पृ० २६६ ।

६०. राजपूताना गजेटीयर्स (१८७६) खड २ ।

६१ चीफ कमिश्नर की विज्ञप्ति आबू दिनाक २३ अप्रेल, १८८३ सख्या १०८ ।

६२. असिस्टेन्ट कमिश्नर द्वारा कमिश्नर अजमेर को पत्र दिनाक १० नवम्बर, १६०२ सख्या ३२५६ ।

६३ चीफ कमिशार की विज्ञप्ति, दिनाक १४ फरवरी, १६०३ सख्या १५०७ ।

६४. चीफ कमिश्नर की विज्ञप्ति, दिनाक ५ मई, १६०३ सख्या ५१३ ।

६५. असिस्टेन्ट कमिश्नर द्वारा कमिश्नर अजमेर को पत्र दिनाक २२ जुलाई, १६०६ सख्या २६८३ ।

६६ राजपूताना गजेटीयर्स (१८७६) खड २ ।

६७. फाइल न० १६, पत्र सख्या १८ दिनाक १२-४-६० ।

६८ भारत सरकार का प्रस्ताव दिनाक १८ मई, १८८२ सख्या १७१७४७ । ७५६ ।

६६ प्रशासनिक रिपोर्ट अजमेर-मेरवाडा सन् १८८८ ।

७० सुपरिटेंडेंट जिला पुलिस द्वारा कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा को पत्र, दिनाक १६ अक्टूबर, १८६६ सख्या ८०१।५२६ ।

७१ उपर्युक्त ।

७२ उपर्युक्त ।

७३. प्रशासनिक रिपोर्ट अजमेर मेरवाडा वर्ष १६०२-१६०३ ।

७४ उपर्युक्त, वर्ष १६११-१६१२ ।

७५ उपर्युक्त, वर्ष १६१०-१६११ ।

७६ उपर्युक्त, वर्ष १८६५ -१८६६ ।

७७. उपर्युक्त, वर्ष १८६५-१८६६ ।

७८ प्रशासनिक रिपोर्ट अजमेर मेरवाडा वर्ष १८६७-६८ ।

७६ उपर्युक्त, वर्ष १६१० ।

८० उपर्युक्त ।

८१ इस प्रश्न पर सारा कबीला एव उसके मित्रगण इसे अपना ही झगडा मानकर चलते थे । इस प्रश्न पर बहुधा गम्भीर सघर्ष उत्पन्न हो जाते थे ।

८२. फाइल क्रमाक ६६ (रा० रा० पु० म०, बीकानेर) ।

८३ गवर्नर जनरल के सचिव द्वारा ए० जी० जी० राजपूताना को पत्र दिनाक ११ दिसम्बर, १८४८ ।

८४. कमिश्नर अजमेर द्वारा सचिव उत्तर-पश्चिमी सूबा सरकार को पत्र (सन् १८३२ से १८५८ तक अजमेर-मेरवाडा मे प्रशासन सबधी फाइल सख्या ७ पत्र सख्या ५२)।

८५. उपर्युक्त।

८६ कमिश्नर की कचहरी से जारी पत्र दिनाक १ दिसम्बर, १८५७।

८७. उपर्युक्त।

८८. उपर्युक्त।

८९ उपर्युक्त।

९०. उपर्युक्त।

९१. डिप्टी कमिश्नर अजमेर द्वारा कार्यवाहक कमिश्नर अजमेर को पत्र दिनाक १२ अप्रेल, १८६०।

९२. उपर्युक्त।

९३. उपर्युक्त।

९४ लेफ्टिनेंट कर्नल कीटिंग कार्यवाहक कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा द्वारा आर० सिम्सन सचिव उत्तर-पश्चिमी सूबा सरकार को पत्र, दिनाक २५ फरवरी, १८६८ पत्र सख्या ११४।

९५ उपर्युक्त।

९६. उपर्युक्त।

९७. सी० एल० कार्यवाहक सचिव भारत सरकार द्वारा कमिश्नर अजमेर को सन् १८३३ से १८५८ तक अजमेर मेरवाडा प्रशासन पर पत्र (फाइल सख्या ७, पत्र सख्या ६२१। अ० सी० रा० रा० पु० म०, बीकानेर)

९८. लेफ्टिनेण्ट कर्नल कीटिंग कार्यवाहक कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा द्वारा आर० सिम्सन सचिव उत्तर-पश्चिमी सूबा सरकार को पत्र, दिनाक २५ फरवरी, १८५८ पत्र सख्या ११४।

९९. उपर्युक्त।

१००. उपर्युक्त।

१०१. भारत सरकार के परराष्ट्र विभाग के अधीन अजमेर-मेरवाडा की पृथक् चीफ कमिश्नरी का गठन पर फाइल, फाइल सख्या ११७ (रा० रा० पु० मं०, बीकानेर)।

१०२. उपर्युक्त।

१०३ उपर्युक्त।

१०४ धारा ४ अजमेर न्यायालय विनियम १८७२।

१०५ धारा ६, उपर्युक्त।

१०६ धारा ६ „

१०७ धारा १० „

१०८. धारा ११ „

१०९ धारा ८ „

११० धारा १२ „

१११ धारा १४ ,

११२ धारा १४ ,

११३ धारा १६ „

११४ सन् १८९० के पूर्ववर्ती दस वर्षों मे दीवानी और फौजदारी न्यायालयो म सम्पत्ति सबधी मुकदमो की वार्षिक औसत २६७५ २ थी। बाद के दस वर्षों मे यह औसत बढकर २९३६ २ हो गई थी। सन् १९०२ मे ३११० नये मुकदमे दर्ज हुए थे। इस वृद्धि का कारण अकाल की वजह से ऋणग्रस्तता थी।

११५ निम्न पांच स्तर की दीवानी अदालतें स्थापित की गई थी —

१ चीफ कमिश्नर की कचहरी।

२ कमिश्नर की कचहरी।

३ प्रथम श्रेणी न्यायाधीशो की अदालतें।

४ द्वितीय श्रेणी न्यायाधीशो की अदालते।

५. मुंसिफ अदालत।

११६ धारा ६ अजमेर न्यायालय विनियम १८७७।

११७ विज्ञप्ति स० ३५५–ए दिनाक १ जून, १८७७।

११८ धारा १४ (अ) अजमेर न्यायालय विनियम १८७७।

११९ धारा १४ (व) उपर्युक्त।

१२० धारा २२ उपर्युक्त।

१२१ धारा ८ उपर्युक्त।

१२२ चीफ कमिश्नर विज्ञप्ति स० ३५५ (अ) दिनाक १ जून, १८७७।

१२३ चीफ कमिश्नर विज्ञप्ति स० ३१२-सी ११४ दिनाक २४ दिसम्बर, १८६१।

१२४ धारा ११ अजमेर न्यायालय विनियम १८७७।

१२५ धारा ३८ उपर्युक्त।

१२६. फाइल क्रमाक ७३ प्रस्ताव फोर्ट विलियम, दिनाक २७ मार्च, १८७७।

१२७ जप्ती के मुकदमो मे ८२ प्रतिशत, अपील के मुकदमों में ८६ प्रतिशत और फौजदारी मुकदमो मे ८७ प्रतिशत की वृद्धि हुई।

१२८ कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा को पत्र, दिनांक २२ नवम्बर, १८६० पत्र सख्या ३०८६।

१२९ उपर्युक्त।

१३० उपर्युक्त।

१३१. उपर्युक्त।

१३२ अकाल प्रशासन नियमावली अजमेर-मेरवाड़ा (१९१५) पृ० ३।

१३३ असिस्टेन्ट कमिश्नर अजमेर द्वारा कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा को पत्र दिनाक ८ अक्टूबर, १९०० पत्र सख्या २१५३।

१३४ असिस्टेन्ट कमिश्नर अजमेर द्वारा कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा को पत्र दिनाक २६ फरवरी, १९०१ पत्र सख्या ५९३।

१३५. कमिश्नर अजमेर द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर मेरवाडा को पत्र दिनाक २० फरवरी, १९०१ पत्र सख्या ११४ डी तथा कमिश्नर द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर मेरवाडा को पत्र, दिनाक ७ मार्च, १९०१।

१३६. कमिश्नर द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा को पत्र, दिनाक १६ सितम्बर, १९०१ तथा कमिश्नर द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा को पत्र, दिनाक १४ नवम्बर, १९०३।

८

शिक्षा

सन् १८४७ मे प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री लार्ड मेकॉले ने हाउस ऑफ कामन्स में भाषण करते हुए कहा "माननीय ! मेरा विश्वास है कि जन-साधारण को शिक्षा के साधन प्रदान करना राज्य का कर्त्तव्य एव अधिकार है..........अतएव मैं यह कहना चाहता हूँ कि सरकार के मुख्य उद्देश्य की प्राप्ति के लिए जन-साधारण की शिक्षा केवल साध्य ही नहीं है, यह उस लक्ष्य प्राप्ति के लिए सर्वोत्तम साधन भी है। यदि यह सत्य है तो मेरा मस्तिष्क इस तर्क को कैसे स्वीकार कर सकता है कि कोई व्यक्ति इसमे ही परमसतोष का अनुभव करके चले कि जनसामान्य की शिक्षा से सरकार का कोई सबध नहीं है।[1] सन् १८३३ मे हाउस ऑफ कामन्स मे लॉर्ड मेकॉले ने पुन. कहा कि भारत का शासन इस तरह किया जाए कि वहाँ की जनता अग्रेजो की स्वाधीनता एव सभ्यता के स्तर तक उन्नत हो सके तथा उन्होने एक प्रश्न प्रस्तुत किया "क्या हम भारत को अपना दास बनाए रखने के लिए ही वहाँ की जनता को अज्ञानी रखना चाहते हैं ?[2] भारत आने पर उन्होने अपने उन्हीं सिद्धान्तो को व्यावहारिक रूप देने का प्रयत्न किया जो उन्होने ब्रिटिश पार्लियामेन्ट मे उद्घोषित किए थे। मेकॉले के कारण सरकार ने भी एक प्रस्ताव द्वारा शीघ्र ही अग्रेजी भाषा मे शिक्षा-नीति लागू करने का निर्णय लिया।

भारत मे अग्रेजी शासन मे प्रथम शिक्षण सस्था कलकत्ता मे वारेन हेस्टिग द्वारा सन् १७८२ मे मदरसे के रूप मे खोली गई थी। तत्पश्चात् सन् १७९१ में

जोनाथन डकन ने बनारस मे हिन्दुओ के लिए कॉलेज का शिलान्यास किया। सन् १८१५ मे, लॉर्ड हेस्टिंग्स ने यह अभिमत प्रकट किया कि वे भारत मे शिक्षा व्यवस्था लागू करना चाहते हैं।

उन दिनो भारतीय और पाश्चात्य शिक्षा-पद्धति के प्रश्न को लेकर एक सघर्ष छिड़ा हुआ था। राजा राममोहन राय जो भावी युग के स्वप्नदृष्टा थे उन्होने पाश्चात्य शिक्षा-नीति का समर्थन किया। ईसाई मिशनरी शिक्षा सम्बन्धी प्रश्नो पर आपस मे एक मत नहीं थे। डॉ० केरे एव उनके सहयोगी स्थानीय भाषा मे शिक्षा देने के पक्ष में थे। उन्होंने १८१८ मे श्री रामपुर मे जो उन दिनो डेन्मार्क के अधीन था, एक कॉलेज की स्थापना की। इस कॉलेज का घोषित लक्ष्य भारतीयो को ईसाई मतावलवी बनाने का था। सन् १८२० मे, इन लोगो के द्वारा ईसाई युवको को मूर्तिपूजको मे ईसाईयत का प्रचार करने का प्रशिक्षण देने के लिए कलकत्ता मे एक कॉलेज की स्थापना की गई।[3] परन्तु सन् १८३० मे डॉ० डफ ने पुन राजा राममोहन राय की सहायता से साहित्य, विज्ञान एव धार्मिक शिक्षा के लिए एक स्कूल की स्थापना की। इस तरह आग्ल भाषा के अध्ययन को प्रभावशाली पहल प्रदान की गई। डॉ० डफ की यह मान्यता थी कि ईसाई धर्म अग्रेजी भाषा के ज्ञान प्रसार से ही प्रसारित हो सकता है।[4]

उन्नीसवी सदी मे अजमेर मे भी प्रचलित शैक्षणिक व्यवस्था का विकास हुआ। केरे ने कुछ प्रारम्भिक कठिनाईयो के बाद पहले अजमेर और बाद मे पुष्कर मे नवम्बर, १८१८ मे एक-एक स्कूल की स्थापना की। नवम्बर, १८२१ मे इन दोनो मे, प्रत्येक स्कूल मे चालीस छात्र थे। सन् १८२१ मे अजमेर सरकार ने अजमेर शहर के स्कूल के लिए तीन सौ रुपयों की आर्थिक सहायता प्रदान की। इसके अलावा सरकार के द्वारा जन-सामान्य की शिक्षा के लिए और कोई कदम नहीं उठाया गया।[5]

केरे को अक्टूबर, १८२२ मे कई अन्य स्थानो पर भी स्कूल खोलने मे सफलता मिली।[6] स्कूलो की कार्यविधि के अध्ययन के लिए एक 'जन शिक्षण समिति' का गठन किया गया। इस समिति ने २४ अप्रेल, १८२२ को अपनी प्रथम रिपोर्ट तथा ५ मार्च, १८२५ को दूसरी रिपोर्ट प्रस्तुत की जिससे ज्ञात होता है कि शिक्षा के विस्तार की गति बहुत धीमी थी। इन स्कूलों के परिणाम इतने अपर्याप्त थे और उनके खर्च इतने भारी थे कि समिति ने ऐसे स्कूलो की उपयोगिता तक म सदेह प्रकट किया। जनरल कमेटी तथा स्थानीय अधिकारियो के निरतर विरोध के बावजूद केरे ने इन स्कूलो में "न्यूटेस्टामेंट" पढाना शुरू किया जिससे छात्रो के अभिभावको के मन-मस्तिष्क मे इन स्कूलो के उद्देश्यों के प्रति सदेह होना स्वाभाविक ही था। अक्टूबर, १८३२ मे लार्ड बेंटिक ने अजमेर स्कूल का निरीक्षण किया और उसे पूर्णतया अपर्याप्त एव निरर्थक ठहराया जिसके फलस्वरूप इसे बद कर दिया गया।[7]

सन् १८३६ मे अजमेर मे एक सरकारी स्कूल की स्थापना की गई। इस स्कूल मे एक यूरोपीय प्रधानाध्यापक तथा दो भारतीय अध्यापक एक हिन्दी के लिए व दूसरा उर्दू के लिए नियुक्त किए गए। नसीराबाद और अजमेर के यूरोपीय समाज ने इस स्कूल को दान एव मासिक चदे के रूप मे अच्छी सहायता प्रदान की, और कुछ वर्षों तक इस स्कूल ने अच्छी उन्नति की। सन् १८३७ के अत मे छात्रो की सख्या २१६ तक पहुँच गई थी तथा कई सालो तक स्कूल निरतर तरक्की करता रहा। परन्तु भारतीयो के मस्तिष्क मे आरम्भ से ही इन सरकारी स्कूलो के खोले जाने के प्रति सदेह की भावना थी। एस०डब्ल्यू फॉलो ने अपनी रिपोर्ट मे यह उल्लेख किया है। सरकारी स्कूलो को लोग सदह की नजरो से देखते हैं। उन्हे इसमे किसी विशेप उद्देश्यो की सफलता दृष्टिगोचर नहीं होती।[८] इस तरह की सदेह की भावना और शका के कारण सन् १८३७ के बाद सरकारी स्कूल मे छात्रो की सख्या मे भारी गिरावट आई, जिसके फलस्वरूप सन् १८४३ म इसे बद कर देना पडा। यह स्कूल न तो भारतीय उच्च वर्ग और न मध्यम वर्ग के लोगो को ही आकर्पित कर सका और न इस पर किए जाने वाले व्यय के अनुकूल परिणाम ही निकले। इस स्कूल पर प्रति-वर्ष ६ हजार की राशि व्यय की जाती थी।[९] कुछ वर्षों बाद जनता शिक्षा की आवश्यकता महसूस करने लगी तथा जो सदेह इन स्कूलो के प्रति आरम्भ मे बन चला था शनै शनै समाप्त होने लगा।[१०]

सन् १८४७ मे सरकारी स्कूल खोलने और उसे कॉलेज स्तर तक उन्नत करने के प्रश्न पर पुनर्विचार किया गया। इस आशय का एक प्रस्ताव सरकार द्वारा निदेशको के सम्मुख प्रस्तुत किया गया। उन्होने ६ जुलाई १८४७ को इसके लिए स्वीकृति प्रदान की तथा यह निर्देश दिया कि स्कूल को कालातर मे कॉलेज के रूप में परिवर्तित करने का प्रश्न अभी न उठाया जाकर भावी निर्णय पर छोड दिया जाय। परन्तु एक लम्बे समय तक इस आदेश का पालन नही हो सका। सन् १८५१ से डॉ० बुच के निर्देशन मे अजमेर शहर मे एक सरकारी स्कूल खोला गया।[११]

इसके साथ साथ ही राजपूताना के कई नरेशो व सरदारो ने अग्रेजी भाषा सीखने की तीव्र उत्कठा प्रकट की। अग्रेज सरकार भी इस बात से बहुत खुश थी कि कतिपय प्रभावशाली प्रतिष्ठित भारतीय आग्ल भाषा का ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं। जयपुर के महाराजा रामसिंह अग्रेजी अच्छी तरह से पढ लेते थे और वे इस भाषा के ज्ञान वर्धन मे भी रुचि ले रहे थे। उन्होने जयपुर मे एक अग्रेजी स्कूल खोल रखा था। जयपुर से कई ठाकुरो व रियासत के प्रतिष्ठित लोगो ने अपने बच्चो की अग्रेजी शिक्षा दीक्षा के लिए निजी अध्यापक रख छोडे थे।[१२] महाराजा किशनगढ ने भी अग्रेजी सीखने के लिए एक अध्यापक नियुक्त कर रखा था तथा इस भाषा मे उनकी विशेप रुचि थी।[१३] अतएव इस ओर ध्यान दिया गया कि अजमेर को जो कि राजपूताना के केन्द्र मे स्थित है, इस भावना की पूर्ति और राजपूताना की

इन पड़ोसी रियासतो के लोगो म इग्लैंड के साहित्य एव आग्ल भाषा की जानकारी एव अध्यापन प्रदान करने मे पहल करनी चाहिए।[14]

अजमेर मे सन् १८५१ मे आरम्भ किया गया स्कूल थोडे समय मे ऐसा केन्द्र-बिन्दु बन गया जिसके आधार पर आगे जाकर अजमेर मे शिक्षा प्रणाली का उद्भव और विकास हुआ।[15] सन् १८५४ मे भारत सरकार द्वारा इस सबध मे दिया गया निर्देश भी शिक्षा के विकास मे बहुत लाभदायक सिद्ध हुआ।[16] यद्यपि उसमे कुछ कमियां थी। सन् १८६८ मे यह स्कूल प्रिन्सिपल गोल्डींग महोदय के प्रयास एव सद्प्रयत्नो के फलस्वरूप कॉलेज के स्तर को प्राप्त कर सका। १७ फरवरी, सन् १८६८ को कर्नल कीटिंग द्वारा कालेज का शिलान्यास किया गया था।[17] इस नए कॉलेज भवन का उद्घाटन गवर्नर जनरल द्वारा १७फरवरी, १८७० को सम्पन्न हुआ।

लार्ड मेयो जब अजमेर म राजपूताना के नरेशो के दरबार म सम्मिलित होने को आए तब इस दरबार मे उन्होने राजपूताना के नरेशो व जागीरदारो के पुत्रो की शिक्षा के लिए एक रॉयल कॉलेज (गवर्नमट कॉलेज के अतिरिक्त) की स्थापना की घोषणा की। परन्तु गवर्नमट कॉलेज के प्रिन्सिपल ने इस सुझाव के प्रति अरुचि प्रकट की तथा अजमेर मे एक और नए कॉलेज के खोलने से क्या नुकसान होगा उस ओर ध्यान आकर्षित किया।[18] उनका कहना था कि —

१ गवर्नमेन्ट कॉलेज सिर्फ अजमेर की जनता के लिए ही नही खोला गया है। यहाँ के लोग यदि गरीब नही हैं तो धनवान भी नही है। यह कॉलेज विशेष रूप से राजपूताने म और विशेषकर राजाओं, राजकुमारों और प्रमुख जागीरदारो मे शिक्षा के प्रसार के लिए खोला गया है।[19]

२ यदि यहाँ नया कॉलेज खुलता है तो गवर्नमेन्ट कॉलेज को राजपूताने की कई रियासतो के धनी एव मध्यम वर्ग के लोगो की शिक्षा की अपेक्षा अजमेर शहर के लडको की शिक्षा तक ही सीमित रह जाना पडेगा।[20]

३ गवर्नमेन्ट कॉलेज ने हाल ही मे छात्रावास खोलकर अजमेर जिले के धनी एव प्रभावशाली लोगो से अपना सम्पर्क स्थापित किया है, नए कॉलेज के खुलने से यह सम्पर्क समाप्त हो जाएगा।[21]

४ नए कॉलेज के खुल जाने से गवर्नमेन्ट कॉलेज की हैसियत और उसकी वर्तमान स्थिति बुरी तरह से प्रभावित होगी।[22]

५ राजपूताना के सामतों मे कॉलेज तो दूर रहा, हाई स्कूल तक शिक्षा प्राप्त करने की क्षमता नही है। उनके लडके पूरी तरह से अनपढ़ हैं और उनके लिए यदि कोई शैक्षणिक संस्था खोलनी ही है तो साधारण प्राथमिक स्कूल ही पर्याप्त होगा।[23]

प्रिन्सिपल डिमेलो के गवर्नमेन्ट कॉलेज के बारे में इतनी एक पक्षीय मान्यता एवं सद्भाव तथा उसके हितो की रक्षा की उत्कठा को सफलता नहीं मिली। नया कॉलेज खोलने की घोषणा ने व्यावहारिक रूप ग्रहण किया तथा शीघ्र ही मेयो कॉलेज की स्थापना की गई।

इसमे कोई सदेह नही कि मेयो कॉलेज ने वायसराय द्वारा राजघराने के बच्चो मे शिक्षा प्रसार की भावना एव अभिरुचि के फलस्वरूप जन्म लिया था।[२४] उनकी यह मान्यता थी कि एक तरुण राजपूत नरेश मे केवल किताबी ज्ञान के अलावा नैतिक एव शारीरिक योग्यताए होना अत्यधिक आवश्यक है।[२५] अतएव सामत वर्ग के लिए एक अलग कॉलेज की रूपरेखा प्रस्तुत की गई।

वायसराय ने कॉलेज की सहायतार्थ राजपूताना के सामतो से सार्वजनिक धनदान द्वारा एक कोष-स्थापना की योजना तैयार की जिससे मेयो कॉलेज मे शिक्षको का वेतन अन्य शिक्षा सबधी सामग्री, छात्रवृत्तिया तथा भवन की मरम्मत आदि के लिए आवश्यक व्यय की पूर्ति सभव हो सके। अनुदान के लिए धनराशि राजाओ और प्रमुख सरदारो से आमन्त्रित की गई। फलस्वरूप लगभग छः लाख की राशि के वचन प्राप्त हुए, जो बाद मे सात लाख की राशि तक पहुँच गए थे।[२६] इस राशि पर प्राप्त ब्याज तथा भारत सरकार से प्राप्त आर्थिक अनुदान मिलकर कॉलेज की स्थाई आय का साधन बनाया गया। इस कार्य के लिए सबसे उदार सहायता जयपुर नरेश से प्राप्त हुई जिनका कुल योगदान दो लाख से भी अधिक था। जोधपुर, उदयपुर, कोटा, झालावाड़ का योगदान एक एक लाख से अधिक का था। अग्रेज सरकार ने अपनी ओर से कॉलेज के लिए १६७ बीघे जमीन प्रिन्सिपल और वाइस प्रिन्सिपल के लिए आवास तथा छात्रावास भवन प्रदान किया। सरकार ने निर्माण एव चार भवनो की मरम्मत का व्यय स्वयं अपने ऊपर लिया।

मेयो कॉलेज का मुख्य भवन "भारतीय यूनानी स्थापत्य कला का एक अनूठा सम्मिश्रण है।" इसके निर्माण मे करीब ४,०१,४०० रुपया खर्च हुआ था।[२७] इस भवन का शिलान्यास सर एलफ्रेड लॉयल द्वारा ५ जनवरी, १८७८ को रखा गया तथा इसका उद्घाटन ७ नवम्बर, १८८५ को वायसराय डफरीन के हाथो सम्पन्न हुआ।

अजमेर मे शिक्षा की निरतर प्रगति को देखते हुए सन् १८९६ से यहाँ डिग्री कक्षाओ की आवश्यकता महसूस की जाने लगी।[२८] इसके पूर्व जबकि शिक्षा का प्रसार कम था, सामान्य शिक्षित युवको को भारतीय रियासतो और अग्रेज सरकार के अधीन नौकरी आसानी से उपलब्ध हो जाया करती थी, परन्तु अब शिक्षा का विकास व उसका स्तर उन्नत हो जाने के कारण एक सामान्य युवक के लिए जबतक कि वह स्नातक अथवा स्नातकोत्तर शिक्षा प्राप्त नही हो तबतक नौकरी प्राप्त करना

कठिन था । राजपूताना में स्नातकों के अभाव में स्थानीय नियुक्तियां बाहरी प्रदेशों के ऊँची शिक्षा प्राप्त युवकों से की जाने लगी । इस तरह उन्नीसवीं सदी के अंत तक अजमेर और राजपूताना में उच्च शिक्षा प्राप्त करने की इच्छा लोगों में जागृत हो चली थी ।

उच्च शिक्षा प्रदान करने तथा तत्सम्बंधी व्यवस्था के लिए एक भारी धन-राशि आवश्यक होती है । सरकार की यह नीति थी कि सामान्य शिक्षा के लिए तो वह खर्च करती थी तथा उच्च शिक्षा की व्यवस्था गैर सरकारी स्वयं सेवी शैक्षणिक संस्थाओं के हाथों में छोड़ देती थी । भारत में दूसरे स्थानों पर भी उदाहरणस्वरूप, दिल्ली, आगरा, बरेली, मेरठ तथा अन्यत्र राजा महाराजा, जमींदार वर्ग, धनी एवं प्रतिष्ठित शिक्षित वर्ग के लोगों ने उच्च शिक्षा प्रदान करने के लिए साधन जुटाने में आगे बढ़कर उदारतापूर्वक योगदान दिया था । अतएव, अजमेर में भी ऐसी ही आशा व्यक्त की गई थी कि कॉलेज की नितांत आवश्यकता अनुभव करने वाले लोगों का उदार सहयोग प्राप्त किया जाना चाहिए । फलस्वरूप १० अप्रेल, १८९६ को इसके लिए एक सार्वजनिक सभा आमन्त्रित की गई ।

इस सभा का आयोजन दौलत बाग में किया गया जो पूर्णतया सफल रहा । यह नगर के गण्यमान्य लोगों की सभा थी, जिसकी अध्यक्षता तत्कालीन कमिश्नर कब्ब महोदय ने की ।[२६] चंदे के लिए की गई अपीलों का जनता ने दिल खोलकर स्वागत किया और उदारता से धन प्रदान किया । मसूदा राव ने व्यक्तिगत रूप से तीन हजार की राशि तथा ब्यावर के सेठ चम्पालाल ने पांच हजार का धन दान में दिया । अजमेर कॉलेज के भूतपूर्व विद्यार्थियों की संस्था ने इस कार्य में गंभीर रुचि लेते हुए धन संग्रह के लिए सहयोग प्रदान किया । इन भूतपूर्व विद्यार्थियों ने कॉलेज की उन्नति के लिए अपने एक माह का वेतन प्रदान करना स्वीकार किया और इस तरह शीघ्र ही एकत्रित ग्यारह हजार की धनराशि इस तथ्य को प्रमाणित करती है कि जनता में इस प्रयास की सफलता के लिए सराहनीय उत्साह था ।[३०] सरकार ने १५ जुलाई, १८९६ से अजमेर के गवर्नमेन्ट कॉलेज में स्नातक कक्षाएं प्रारम्भ करदीं ।

बीसवीं सदी के प्रारम्भ में विज्ञान-शिक्षा की आवश्यकता भी महसूस की जाने लगी । कृषि विशेषज्ञ, चिकित्सक एवं इंजीनियरों की कमी पहले से ही अनुभव की जा रही थी । देश में उन दिनों टेक्नीकल विशेषज्ञों की भारी कमी थी । इंग्लैंड के सम्राट ने ६ जनवरी, १९१२ को कलकत्ता विश्वविद्यालय में भाषण देते हुए कहा 'मेरी यह कामना है कि इस धरती पर स्कूलों और कॉलेजों का जाल सा बिछ जाए जिससे स्वामिभक्त तथा उपयोगी नागरिक तैयार हो सकें जो अपने कर्तव्यों के प्रति गौरव अनुभव कर सकें । मेरी यह कामना है कि मेरी भारतीय प्रजाजनों के घरों में ज्ञान का प्रसार हो तथा उनके श्रम के फल एवं ज्ञान की गंध से सुवासित उच्च

विचार, सुख-सुविधा एवं स्वास्थ्य की प्राप्ति मे सहायक हो। मेरी कामना की पूर्ति शिक्षा के माध्यम से पूरी की जा सकती है और भारत मे शिक्षा का उद्देश्य मेरे हृदय के बहुत समीप है।[31] भावी अंग्रेजी शासन की भावी शिक्षा-नीति एवं लक्ष्य की एक झलक इससे झांकी जा सकती है।

ब्रिटिश सम्राट की इस घोषणा से अजमेर की जनता मे उत्साह एवं प्रेरणा को बल मिला। यहाँ स्नातक कक्षाओ मे विज्ञान-विषय का अभाव तेजी से अनुभव किया जा रहा था। इसलिए २५ मई, १९१३ को ट्रेवर टाउन हॉल अजमेर में प्रमुख नागरिको की सभा बुलाई गई जिसमे कमिश्नर ए० टी० होम्स की अध्यक्षता मे एक समिति का गठन किया गया जिसका उद्देश्य इस कार्य के लिए धन-संग्रह करना था। गवर्नमेन्ट कॉलेज अजमेर मे बी० एस० सी० कक्षाएं आरम्भ करने के लिए पन्द्रह हजार का सार्वजनिक चन्दा इकट्ठा करने का निर्णय इस समिति ने किया।[32] समिति के इस उद्देश्य की सफलता का मूल कारण इस प्रदेश के प्रमुख नागरिको का उत्साह तथा गवर्नमेन्ट कॉलेज के भूतपूर्व विद्यार्थियो का सक्रिय सहयोग था। जुलाई, १९१३ से गवर्नमेन्ट कॉलेज मे बी० एस० सी० की कक्षाएं प्रारम्भ की गई और इसे इलाहाबाद विश्वविद्यालय से सम्बद्ध किया गया।[33]

अजमेर मे सन् १८५० के पूर्व प्राथमिक शिक्षा स्थानीय लोगों द्वारा ही संचालित होती थी और उसमे किसी तरह का सरकारी हस्तक्षेप नही किया जाता था। इन देशी पाठशालाओ को स्थानीय जनता का सहयोग प्राप्त था। परन्तु सन् १८५० के बाद कर्नल डिक्सन द्वारा अजमेर मेरवाडा मे ७५ स्कूल स्थापित किए गए और लोगो को इनके व्यय की पूर्ति-हेतु, कर के रूप मे साधन स्रोत जुटाने के लिए अनुप्रेरित किया गया। बाद मे इन स्कूलो की संख्या घटाकर ५७ कर दी गई। सन् १८५१ मे अजमेर के देहाती क्षेत्र की स्कूलो के लिए तथा मेरवाडा की स्कूलो के लिए भी सन् १८५२ मे एक-एक निरीक्षक नियुक्त किए गए। कर्नल डिक्सन के निधन के पश्चात् इस कर के प्रति जनता का असंतोष बढ गया था। इस कारण सरकार को बाध्य होकर यह कर समाप्त करना पड़ा और यह निर्णय लिया गया कि वे सभी स्कूलो में जो जनता से कर के रूप में एकत्रित धन से अनुचालित होती थी बंद कर केवल सरकारी व्यय पर चलने वाली पाठशालाएं रखी जाएं।[34]

इन देशी पाठशालाओ के अध्यापको का वेतन बहुत कम था तथा ये अध्यापन-कार्य के अयोग्य भी थे। सरकारी निरीक्षक ने सन् १८५८ मे अपनी रिपोर्ट मे यह कहा कि जबतक इन पाठशालाओ की वर्तमान स्थिति बनी रहेगी इस प्रदेश में शिक्षा का स्तर लज्जाजनक रहेगा। इससे पूर्ववर्ती रिपोर्ट मे यह स्पष्ट बतलाया गया था कि इन स्कूलो मे कई वर्ष व्यतीत करने के बाद भी छात्र को जो ज्ञान प्राप्त होता है, वह कितना अधकचरा एवं अनुपयुक्त है। उसमे कहा गया है कि दस या बारह

वर्ष स्कूल में व्यतीत कर लेने के बाद जब छात्र स्कूल छोड़ता है तो उसकी योग्यता की यह स्थिति रहती है कि १०–१२ वर्ष तक फारसी भाषा या १२–१३ वर्ष तक अरबी भाषा का अध्ययन करने के बाद उसको कुरान का कामचलाऊ ज्ञान होता है और यही स्थिति उसकी दफ्तर के काम की समझ के संबंध में होती है।

सन् १८७१ में अजमेर मेरवाड़ा का सीधा नियन्त्रण भारत सरकार के हाथों में चले जाने से यहाँ के शिक्षा-विभागों का उत्तर-पश्चिमी सूबों से सम्बन्ध विच्छेद हो गया और ये विभाग कमिश्नर अजमेर मेरवाड़ा के सीधे नियन्त्रण में आ गए जो शिक्षा विभाग के निदेशक पद का भार भी संभाले हुए थे। सन् १८९१ में, अजमेर-मेरवाड़ा में ४७ अपर प्राईमरी पाठशालाएं थी जिनकी छात्रसंख्या ३०८२ थी। इन सार्वजनिक संस्थाओं के अतिरिक्त निजी तौर पर ८३ प्रारम्भिक पाठशालाएं भी चल रही थी जिनकी छात्र संख्या २७७७ थी। आगामी दशक में अकाल एवं सूखे की स्थिति के कारण प्रारम्भिक शिक्षा में स्पष्ट ह्रास हुआ था, परन्तु इसके पश्चात् सन् १९०७ में, प्राथमिक शिक्षा ने बड़ी तेजी से प्रगति की।[34] सन् १८८१ में पाठशाला जाने योग्य आयु के बच्चों की तुलना में शिक्षा ग्रहण कर रहे बच्चों का अनुपात १२.८ प्रतिशत, सन् १८९१ में १३.५ प्रतिशत तथा सन् १९०३ में १२.५ प्रतिशत था।

सार्वजनिक प्राथमिक पाठशालाओं का संचालन शिक्षा विभाग के नियन्त्रण में था जिसके संचालक कमिश्नर स्वयं थे। विभाग को इन सरकारी पाठशालाओं के संचालन व देखरेख के लिए सरकारी सहायता के अलावा नगरपालिकाओं एवं जिला बोर्ड से भी आर्थिक सहायता प्राप्त होती थी। पाठशालाओं में छात्रों से फीस भी ली जाती थी। अध्यापकों के वेतनमान में बहुत फर्क था। गवर्नमेन्ट ब्रांच स्कूल अजमेर के प्रधानाध्यापक को सौ रुपए मासिक वेतन मिलता था जबकि विभाग के कनिष्ठ अध्यापक का वेतन ६ रुपए प्रतिमाह था। पचास प्राथमिक पाठशालाओं में से सात लड़कियों के स्कूल थे और ४२ पाठशालाएं देहातों में थी। सन् १९०३ में सार्वजनिक प्राथमिक पाठशालाओं पर कुल व्यय १७,७२२ रुपए प्रतिवर्ष था।

अजमेर में माध्यमिक शिक्षा की स्थिति अच्छी थी। सन् १९०३ में सार्वजनिक माध्यमिक पाठशालाओं की संख्या १४ थी जिनमें २४६५ छात्र थे।[36] इन १४ माध्यमिक पाठशालाओं में से ९ पाठशालाएं तहसील स्तर पर ग्रामों में विशुद्ध वर्नाक्यूलर पाठशालाएं थीं। दो सरकारी सहायता प्राप्त हाई स्कूल (नसीराबाद और ब्यावर) थे तथा दो बिना सरकारी सहायता के संस्थाओं द्वारा संचालित अजमेर मिशन स्कूल और दयानन्द ऐंग्लो वैदिक स्कूल थे तथा एक सरकारी स्कूल था जो गवर्नमेन्ट कॉलेज में स्थित था।[37]

इन दो जिलों में सरकारी स्कूलों एवं कॉलेज के कर्मचारियों एवं संचालन

पर सरकार द्वारा निम्न तालिका मे प्रदर्शित राशि व्यय होती थी —

कॉलिज के अध्यापक	रुपए	२४,४०४
विविध व्यय		३,१६६
१८ ग्राम पाठशालाए (अजमेर मे)		५,६६४
विविध व्यय		२,२०४
१४ ग्राम पाठशालाए (मेरवाडा मे)		१,९४२
विविध व्यय		४००
गर्ल्स नॉर्मल स्कूल और महिला नॉर्मल स्कूल विविध व्यय सहित		१,०२०
पुरुष नॉर्मल क्लास		६००
विविध व्यय		१९२
वार्षिक सरकारी व्यय		३९,३९२ रुपए

सन् १८८३ मे *शिक्षा शुल्क निम्नलिखित था —*

अभिभावक की आय	प्रारंभिक या विशुद्ध वर्नाक्यूलर			लोग्रर या ११,१०, ९,८,७ वीं कक्षाए			मिडिल ६,५,४ कक्षाए			हायर तीसरी कक्षा आदि		
मासिक रुपए	रु	आ	पै	रु	आ	पै	रु	आ	पै	रु	आ	पै
रुपए ७ से १५	०	१	०	०	३	०	०	४	०	०	५	०
,, १५ से २५	०	२	०	०	५	०	०	७	०	०	६	०
,, २५ से ५०	०	३	०	०	६	०	०	१२	०	१	०	०
,, ५० से १००	०	४	०	१	०	०	१	८	०	२	०	०
,, १०० से २००	०	६	०	२	०	०	२	८	०	३	०	०
,, २०० से ५००	०	८	०	३	०	०	३	८	०	४	०	०
,, ५०० से १०००	०	८	०	४	०	०	४	८	०	५	०	०
,, १००० से अधिक	०	८	०	५	०	०	७	०	०	१०	०	०

सन् १८९९ मे अजमेर मेरवाडा मे व्याप्त शिक्षा प्रसार का अन्य प्रातों से तुलनात्मक अध्ययन निम्न तालिका से सभव है।[३५] निम्न तालिका बबई प्रेसीडेंसी की

है जहाँ स्कूल जाने योग्य बच्चों की सख्या ४,०४४,६३६ थी तथा पढ़ने वाले छात्रो की सख्या ६४८,६४१ थी। इस तालिका मे व्यावसायिक शिक्षा, चिकित्सा एव इजीनियरिंग इत्यादि सम्मिलित हैं :—

बम्बई :

क्षेत्र—१,६३,१४६ वर्गमील

कस्बे एव ग्राम–४०,६६६।

जनसख्या–२,६६,६६,२४२।

छात्रों की सख्या

	११ आर्ट्स कॉलेजो मे	१,६५६
	४ व्यावसायिक कॉलेजो मे	८६३
	४६३ माध्यमिक स्कूलो मे	४१,६७६
	६,६३० प्राथमिक शालाओ मे	५,३३,५७७
	१८ प्रशिक्षण स्कूलों मे	७६१
	३१ विशेष स्कूलो में	२,०१६
	२,७६२ निजी शिक्षण सस्थाओ मे	६७,७८६
कुल	१२,६७६ शिक्षण शालाओ मे	६,४८,६४१

ऐसा प्रतीत होता है कि उन दिनो बम्बई मे प्रति १०० कस्बो एव ग्रामो पर ३,१७७ शिक्षण सस्थाए थीं और पढने वाले छात्रो का प्रतिशत १६ था।

मध्यप्रदेश में (सेन्ट्रल प्राविन्स) स्कूल जाने योग्य छात्रो की सख्या १६,४१,७२१ थी उसमे से १,४०,०६८ शिक्षा प्राप्त कर रहे थे।[३४]

		छात्र
	३ आर्ट्स कॉलेजो मे	३०१
	२ व्यावसायिक कॉलेजो मे	२६
	२४६ सैकण्डरी स्कूल मे	२५,४०६
	२२३२ प्राथमिक शालाओं मे	१,१४,०१३
	५ प्रशिक्षण शालाओं मे	१८१
	४ विशेष स्कूलों मे	१७१
कुल	२४६२ सस्थाए	१,४०,०६८

प्रत्येक सौ कस्बों और ग्रामों पर लगभग ६ शिक्षण संस्थाएं थीं। इसमें स्कूल जाने योग्य छात्रों की संख्या का ६२ प्रतिशत शिक्षा प्राप्त कर रहे थे। इनमें निजी शिक्षण संस्थाओं की स्थिति उनकी रिपोर्ट में वर्णित नहीं होने से समाविष्ट नहीं है। इनके समावेश से भी संख्या में कोई विशेष अन्तर नहीं होता क्योंकि वे सामान्य प्रारम्भिक स्तर की थी। उत्तर-पश्चिम प्रांतों और अवध में जहाँ शिक्षा-योग्य बच्चों की संख्या १७,०३५ ७६२ थी, शिक्षा प्राप्त कर रहे छात्र ३,५२,६७२ थे, जिनका विवरण निम्न प्रकार से है [४०] —

	छात्र
१० आर्ट्स कॉलेजों में	१,८६३
९ व्यावसायिक कॉलेजों में	५७२
५०० सैकण्डरी स्कूलों में	५ ९७२
६,२९२ प्राथमिक शालाओं में	२,१६,२७३
५ प्रशिक्षण विद्यालयों में	५९१
५० विशेष स्कूलों में	२,६२०
५,६३० निजी शिक्षण-संस्थाओं में	७१,५११
कुल १२ ५०६ शिक्षण-संस्थाओं में	३,५२,६७२

उपर्युक्त विवरण के अनुसार प्रत्येक सौ कस्बों और ग्रामों पर २ शिक्षण-संस्थाएं और स्कूल जाने वाले छात्रों का अनुपात ५ प्रतिशत था।

अजमेर मेरवाड़ा जैसे छोटे से जिले में जहाँ स्कूल जाने योग्य बच्चों की संख्या ८१,३५३ थी, वहाँ १०,७८० छात्रों को शिक्षा प्रदान की जा रही थी। [४१]

	छात्र
१ आर्ट्स कॉलेज	७३
१४ सैकण्डरी स्कूलें	२,६२०
५० प्राथमिक स्कूलें	४,२५४
१ प्रशिक्षण विद्यालय	१२
१३४ निजी शिक्षण-संस्थाएं	३,५२१
कुल २०० शिक्षण संस्थान	१०,७८०

इस तरह प्रत्येक सौ कस्बों और ग्रामों पर २७ शिक्षण-संस्थाएं थीं। स्कूल जाने योग्य छात्रों की संख्या तथा शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्रों की संख्या का

अनुपात १३ ५ प्रतिशत था। ऊपर दिए गए विवरण म कॉलज के ७३ छात्र भी सम्मिलित हैं जो कि प्रथम वप से लेकर चतुर्थ वर्ष तक की कक्षाओ में अध्ययन कर रहे थे।

प्रात	प्रति सौ कस्बों एव ग्रामो पर शिक्षण सस्थाए	स्कूल जाने योग्य बच्चों मे से स्कूल जाने वाले छात्रों का अनुपात	विशेष
बम्बई	३१ १७	१६	
मध्यप्रदेश	६ ००	७ २	इनम प्राइवेट शिक्षण-सस्थाओ का समावेश नही है।
उत्तर-पश्चिमी सूबे एव अवध	१२	५	
अजमेर मेरवाडा	२७	१३ ५	

इस तरह अजमेर मेरवाडा मे शिक्षा प्रसार उल्लेखनीय गति स विकास कर रहा था और उपर्युक्त आंकडे इस तथ्य को बताते हैं कि इस छोटे से जिले मे भी शिक्षा के प्रति अत्यधिक जागृति हो चली थी।[४२]

विभिन्न स्तरों पर विभाजित विद्यार्थियों की सख्या एव प्रतिशत निम्नाकित था।[४३]

प्रात	कॉलेज		सैकण्डरी		प्राथमिक स्कूल		अन्य निजी शिक्षण-सस्थाए	
	सख्या	प्रतिशत	सख्या	प्रतिशत	सख्या	प्रतिशत	सख्या	प्रतिशत
बम्बई	२५११६	३६	४११७६	६ ४७	५३३२६६	८२ २६	७०५६६	१० ८८
मध्यप्रदेश	३२७	२३	२५४०६	१८ १४	११४०१३	८१ ३८	३३२	२५
उत्तर-पश्चिमी सूबे एव अवध	२४३५	६६	५६१७२	१६ ७६	२११६७३	६१ २७	७१०६२	२१ २८
अजमेर-मेरवाड़ा	७३	६८	२६२०	२७ ०१	[illegible]	[illegible]		

कुल सख्या	प्रतिशत
६४८६४१	१००
१४००६८	१००

निजी शिक्षण सस्थाए सम्मिलित थी —

३५२६७२	१००
१०७८०	१००

सबसे पहले सन् १८६४ में एक मिशनरी स्कूल मसूदा में खोला गया। इसके बाद भिनाय और बोर मे भी मिशन स्कूल खुले। सन् १८८१ में इसपेक्टर स्कूल ने अपनी वार्षिक रिपोर्ट मे यह सुझाव दिया कि टाटोटी, परायका, सुकरानी, मसूदा, भिनाय और बीर मे सरकारी स्कूल खोले जाने चाहिए। रीड ने रिपोर्ट मे यह स्पष्ट कहा कि मिशन स्कूलें जनता मे लोकप्रिय नही हैं व सभी जगह सरकारी स्कूलें खोलने पर बहुत जोर दिया जा रहा है तथा जिले के अधिकाश ग्रामो को सरकारी स्कूलों के लाभ से वचित नहीं रखा जा सकता है।[४४] मिशन स्कूलो की कार्य-प्रणाली पर टिप्पणी करते हुए रीड ने लिखा 'सभी दृष्टिकोणो से मैं यह विश्वास करने पर बाध्य हुआ हू कि क्षेत्र में मिशन स्कूलें लोकप्रिय सिद्ध नही हुई हैं और वे जो शिक्षा प्रदान कर रही है वह बहुत थोडी हैं। दुर्भाग्य से इन्होने जिले के बडे कस्बो को अपना कार्य-क्षेत्र चुना है परन्तु मेरा यह मत है कि अब वह समय आ गया है जब इस जिले के बडे कस्बो को सरकारी स्कूलो के लाभ से वचित नही रखा जा सकता है।"[४५]

एक अन्य पत्र में उन्होने स्पष्ट लिखा 'मिशन स्कूलें जनता की शैक्षणिक आवश्यकताओ की पूर्ति मे असफल रही हैं। मसूदा और टाटोटी के ठाकुरों ने मुझ से कई बार अनुरोध किया है कि मैं उनके वहाँ सरकारी स्कूलें खोले जाने के लिए सरकार से सिफारिश करू और भिनाय ठाकुर (जिनसे मै आज तक मिला तक नहीं) ने भी बार बार यही अनुरोध मेरे डिप्टी इस्पेक्टर से किया है।"[४६]

इस सदर्भ मे रीड का दृष्टिकोण नवीन नही था। इसी तरह का मत प्रशासनिक पुनर्गठन के समय, कुछ वर्षों पूर्व, मेजर रीप्टन ने प्रकट किया था। सन् १८७७–७८ की अपनी रिपोट मे मेजर डब्ल्यू वाईट ने भी मिशन स्कूलों की प्रशसा नही की थी। सामान्यत जिले मे सर्वत्र लोगो ने इन्हें अस्वीकार ही किया। रीड के असतोष का मुख्य कारण इन मिशन स्कूलो मे शिक्षा का निम्न स्तर था।[४७] उसने स्पष्ट कहा कि "२१ वर्षों तक बिना हस्तक्षेप किए इन्हें परीक्षण का अवसर दिया गया था परन्तु ये अपने कर्तव्य मे असफल सिद्ध हुए और अब यदि उनके हितों की अपेक्षा जनता के अत्यधिक आवश्यक हितो को प्राथमिकता दी जाती है तो उन्हें असतोष प्रकट नहीं करना चाहिए।"[४८]

ब्यावर मिशन स्कूलो के सुपरिटेंडेंट डी० डी० स्वलग्रेड ने रीड द्वारा सरकारी स्कूलें खोलने की राज्य की नीति के विरुद्ध कड़ा विरोध प्रकट किया था।[४६] अजमेर के कमिश्नर एव निदेशक शिक्षा विभाग सॉंडर्स को उनके द्वारा लिखे गए एक पत्र मे यह असतोष पूर्णतया स्पष्ट है। इस पत्र में उन्होंने यह तर्क दिया है कि इस तरह के सरकारी स्कूल खोलना सार्वजनिक धन का अपव्यय मात्र है।[५०] मिशन के अधिकारियों ने भी भारत के वायसराय रिपन को एक ज्ञापन प्रस्तुत किया जिसमे यह कहा गया था कि "मिशन स्कूलें जनता की शैक्षणिक आवश्यकताओ की पूर्णतया पूर्ति कर रही हैं। इन सभी में उन छात्रो को शिक्षित करने की पूर्ण शक्ति एव सामर्थ्य है जो स्कूल मे उपस्थित होते हैं और नए सरकारी स्कूल खोलने का परिणाम पहले की तरह कटुता एव द्वेष का वातावरण होगा।"[५१] इस तरह के ज्ञापन का सरकार पर कोई प्रभाव नहीं पडा।[५२]

सन् १८८१ मे, पाँच सरकारी स्कूलें सेंदड़ा, टाटोटी, मसूदा, परायड़ा और भिनाय मे खोली गई।[५३] मसूदा मे मिशन और सरकारी स्कूल दोनो थे। वहाँ के सबध मे सन् १८८२ मे हेरिल ने अपनी रिपोर्ट में लिखा है कि मसूदा के अधिकाश लोग सरकारी स्कूल के जारी रखने के पक्ष मे हैं और छात्रो की सख्या एव उनके शैक्षणिक स्तर के दृष्टिकोण से सरकारी स्कूल अपने प्रतिद्वन्द्वी (मिशन स्कूल) से कहीं अधिक श्रेष्ठ है।[५४] यह निश्चित रूप मे कहा जा सकता है कि गत सदी के अन्तिम बीस वर्षों में मिशन स्कूलो की असतोषजनक स्थिति के कारण ही सरकारी स्कूलें स्थापित करने की नीति को प्रोत्साहन मिला था।

इस बात की सभावना पहले से ही थी कि अजमेर जहाँ की अधिकाश जनसख्या रूढिवादी व पिछड़ी हुई थी उसमे शिक्षा की गति धीमी रहेगी।[५५] सन् १८७१ में अजमेर में महिला नार्मल स्कूल स्थापित कर उसके साथ लड़कियों का एक स्कूल भी (कन्या शाला) सम्बद्ध कर दिया गया। १८७५–७६ मे महिला नॉर्मल स्कूल में १२ व स्कूल मे १६ छात्राए थी।[५६] लड़कियो ने सीने पिरोने के प्रशिक्षण को अधिक पसद किया और इसी प्रशिक्षण मे लड़किया इस स्कूल की ओर प्रारम्भ मे आकर्षित हुई। १८६०-६१ मे निजी और सार्वजनिक सस्थाओं को मिलाकर १६ स्कूलो मे ५६७ लड़किया शिक्षा ग्रहण कर रही थी। शिक्षा योग्य महिलाओं की सख्या के अनुपात मे इनका प्रतिशत १.५ था। धीरे धीरे महिला शिक्षा के प्रति प्रचलित अधविश्वास कम होता गया। मुसलमान महिलाए अपनी पर्दानशीनी के कारण और राजपूत महिलाए अपनी जातिगत सकीर्णता के फलस्वरूप इस क्षेत्र में काफी पिछड़ी रही। अजमेर-मेरवाड़ा की जनता के लिए महिला शिक्षा एकदम 'अनूठी' और नवीन बात थी। इसकी धीमी गति होना आश्चर्यजनक नहीं था।

सन् १८८१ में, प्रात में यूरोपीय छात्रो के लिए सिर्फ एक रेल्वे स्कूल अजमेर में था।[४७] उस वर्ष इसमे छात्रो की सख्या २६ थी और सन् १८६१ में यह बढकर ६४ तक पहुँच गई थी। सन् १८६६-६७ में यूरोपीय लडके लडकियो के लिए एक स्कूल रोमन कैथोलिक कान्वेंट ने अजमेर में शुरू किया। इसने शीघ्र ही सभी रोमन कैथोलिक माता पिता का ध्यान आकृष्ट कर लिया और रेल्वे स्कूल के छात्रो की सख्या घट कर सन् १६०३ म ५४ रह गई, जबकि कान्वेंट स्कूल में ८८ छात्र छात्राओ की सख्या थी। दोनो ही सेकेंडरी स्तर की स्कूलें थी जिन्हें सरकार से आर्थिक अनुदान प्राप्त होता था।[४८]

अजमेर मेरवाडा मे प्राथमिक शिक्षा प्रसार के लिए गत शताब्दी के चतुर्थ दशक में किए गए प्रारम्भिक प्रयास असफल रहे। वास्तविक आधार तो सन् १८५१ में स्थापित हुआ और शिक्षा का प्रसार तेजी से होने लगा। अग्रेजी शिक्षा के प्रति लोगो का अविश्वास और सदेश भी लुप्त हो गया। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में गवर्नमेन्ट कॉलेज की स्थापना और मेयो कॉलेज खोलने की घोषणा महत्वपूर्ण कदम थे। ये सस्थाए बुनियादी तौर पर ठाकुरो और रजवाडो के राजघराने के लोगों के लिए थी। सन् १८६६ में बी०ए० विषय तथा सन् १६१३ में बी० एस० सी० के विषय खुल जाना अजमेर मेरवाडा के शैक्षणिक क्षेत्र में विकास के लक्षण थे।

महिला शिक्षा इतना व्यापक स्वरूप ग्रहण नही कर सकी इसके मूल में लोगो की पुराणपथी मनोवृत्ति और सामाजिक पिछडापन बाधक था। गत शताब्दी के उत्तरार्द्ध में मिशनरियों ने भी प्रमुख कस्बो और ग्रामो में कई स्कूलो की स्थापना की, परन्तु मिशन स्कूलें लोगो में लोकप्रियता नही प्राप्त कर सकी और उनका शैक्षणिक स्तर भी सामान्यत काफी गिरा हुआ था।

अध्याय ८

१ लार्ड मेकॉले के भाषण—लागमेन्स—लदन (१८६३) पृ० २२३-२५।

२ उपरोक्त पृ० ७८।

३ एनीबेसेन्ट, इन्डिया ए नेशन, मद्रास १६२३ पृष्ठ १०१।

४ उपरोक्त

'यद्यपि यह सच है कि अग्रेजी शिक्षा का श्रेय ईसाई मिशनरियों को है तथापि यह भी सही है कि उनका ध्येय शिक्षा न होकर धर्म-परिवर्तन

था तथा शिक्षा उसका माध्यम था। भारतीयों ने ईसाई धर्म की अवहेलना करते हुए शिक्षा का पूर्ण फायदा उठाया।

५ शिक्षा सिर्फ देशी स्कूलों में दी जाती थी। सन् १८४५–४६ में इनकी सख्या ५६ थी जिनमे से ४२ हिन्दी व संस्कृत पाठशालाए थीं व इनमे ८०७ छात्र अध्ययन करते थे तथा १४ फारसी व अरबी के मदरसे थे जिनमे २६६ छात्र थे। अजमेर व शाहपुरा में १३ फारसी व २० हिन्दी के स्कूल थे तथा शेष गाँवो मे थी। राजपूत, शिक्षा के प्रति उदासीन थे। इस जाति के कुछ विद्यार्थी हिन्दी स्कूलों मे अवश्य थे परन्तु फारसी मदरसे मे एक भी नहीं था। (फाइल न० ६६ आर० एस० ए० बी०)।

६. इन स्कूलो मे से अजमेर मे ४५, पुष्कर मे ५६, भिणाय मे १६, केकड़ी में १६ व रामसर में १६ विद्यार्थी थे। (फाइल नम्बर ६६ आर० एस० ए० बी०)।

७ फाइल क्रमांक ६६।

८ अजमेर देहात पाठशालाओं के निरीक्षक एस० डब्ल्यू फॉलन द्वारा एच० एस० रीड को पत्र दि० १ अक्टूबर, १८५६ पत्र सख्या ३८।

९ कर्नल सदरलैंड ए० जी० जी० राजपूताना द्वारा सचिव, भारत सरकार को पत्र, दि० १० मार्च, १८४७।

१० अजमेर देहात पाठशालाओ के निरीक्षक एस० डब्ल्यू फॉलन द्वारा एच० एस० रीड को पत्र, दि० १ अक्टूबर, १८५६ पत्र सख्या ३८।
'कुछ वर्षों पूर्व दिल्ली मे इस आशय की अफवाह फैली थी कि देहली कॉलेज के विद्यार्थियों को अंग्रेजी पोशाक पहनना अनिवार्य कर दिया जाएगा, इसे लोगो ने ईसाईयत का पर्याय मान लिया था। इसी तरह अजमेर मे भी सैनिक विद्रोह के दिनो में यह अफवाह फैली थी कि गवर्नमेंट स्कूल के विद्यार्थियो की जाति नष्ट करने के लिए उनमे एक विशिष्ठ मिठाई वितरित की जाएगी। दोनो ही मामलो में कुछ अभिभावकों ने सतर्कतावश अपने बच्चो को कुछ दिनो के लिए स्कूल भेजना स्थगित कर दिया था, परन्तु जब ये अफवाहे निर्मूल सिद्ध हुई तो वे उन्हें पुन स्कूल भेजने लगे।'

११ सन् १८५३ मे कुल २३० विद्यार्थी थे जिनमे ४४ मुसलमान और १८६ हिन्दू थे। सन् १८६१ मे यह स्कूल कलकत्ता विश्वविद्यालय से सबधित था और सन् १८६८ मे इसे कॉलेज के रूप मे परिवर्तित कर दिया गया था। परन्तु शिक्षको की सख्या कलकत्ता विश्वविद्यालय की प्रथम कक्षा

परीक्षा के शिक्षण के लिए आवश्यक सीमा तक ही निर्धारित रखी गई थी।

१२. उत्तर-पश्चिमी प्रांत के सहायक सचिव द्वारा सचिव, भारत सरकार को पत्र, दिनांक ३ अप्रेल, १८४७।

१३. उपरोक्त।

१४. उपरोक्त।

१५. प्रोफेसर हॉल व डा फालोन के निर्देशन में स्कूल ने बड़ी तरक्की की थी।

१६ सर चार्ल्स वुड ने सन् १८५४ मे अपना बहुचर्चित सदेश प्रसारित किया जिसमे यूरोपीय ज्ञान के व्यापक प्रसार, प्रजा के नैतिक मानसिक एव शारीरिक विकास तथा उच्चतम योग्यता के सरकारी कर्मचारियो की प्राप्ति के सुझाव निहित थे। सरकारी व्यय से अधिकतम प्रजा को सभी उपयोगी और व्यावहारिक ज्ञान देने की योजना सुझाई गई थी। प्रत्येक जिले मे ऐसी स्कूलें खोलने का सुझाव दिया गया था जो स्थानीय भाषा के माध्यम द्वारा उच्चतम शिक्षा प्रदान कर सकें। प्रारम्भिक शिक्षा से लेकर कालेज एव विश्वविद्यालय के स्तर तक शिक्षा को पहुँचाने का लक्ष्य एव इस आशय का शिक्षा क्रम इसमे निर्धारित किया गया था। उक्त सदेश पर आधारित सरकारी आदेश के अन्तर्गत जनता मे व्याप्त अशिक्षा की समाप्ति के लिए शिक्षा-विभाग की स्थापना की गई। एस० डब्ल्यू फॉलन द्वारा एस० एस० रीड को प्रेषित पत्र, दिनांक १ अक्टूबर, १८५६ पत्र सख्या ३८।

१७ सी० एच० डिमेलो कार्यवाहक प्रिंसिपल अजमेर कालेज द्वारा कर्नल ब्रूक्स ए० जी० जी० राज० को पत्र, दिनांक १३ अक्टूबर, १८७०, सन् १८८८ मे कालेज इलाहाबाद विश्वविद्यालय से सम्बन्धित था और सन् १८६९ तक कालेज का शिक्षणस्तर प्रथम कला वर्ग अथवा इंटरमीडियेट से आगे नही बढ़ पाया था। सन् १८६६ में ४२ विद्यार्थी एंट्रेंस कक्षा में पढ़ रहे थे जो मैट्रिक परीक्षा की तैयारी कर रहे थे, जबकि चार कक्षाओ में विद्यार्थियो की सख्या ५५ थी। (ड्यून फाक, अजमेर-मेरवाड़ा की मेडिकल टोपोग्राफिकल रिपोर्ट) पृ० ८८।

१८. सी० एच० डिमेलो द्वारा निदेशक, शिक्षा-विभाग को पत्र दिनांक ७ नवम्बर, १८७०।

१९. उपर्युक्त।

२०. उपर्युक्त।

२१ उपर्युक्त ।

२२. उपर्युक्त ।

२३ उपर्युक्त ।

२४. सी० यू० एचीसन द्वारा डिप्टी कमिश्नर अजमेर को पत्र दिनांक १२ जनवरी, १८७१ "इस योजना को प्रस्तुत करने में वायसराय एव कौंसिल का मुख्य उद्देश्य राजाओं और राजपूताने की प्रजा की रुचि शिक्षा के प्रति जागृति कर इस क्षेत्र मे उनकी सहानुभूति प्राप्त करना है। ऐसी आशा है कि रियासतो के शासक स्वय इतने समझदार हैं कि वे रियासतो के मध्य ऐसी सस्था की सरचना के लाभ को अच्छी तरह से समझते हैं।"

२५ जे० डी० लाटूश-गजेटीयर्स अजमेर-मेरवाडा (१८७५) पृ० ६२

२६ धौलपुर, जैसलमेर और डूगरपुर की तीन रियासतो ने आरम्भ मे इस कोष मे अनुदान राशि नही दी थी परन्तु बाद मे डूगरपुर और जैसलमेर ने अनुदान राशि प्रदान कर दी थी। जयपुर, उदयपुर, जोधपुर, कोटा, भरतपुर बीकानेर, झालावाड, अलवर तथा टोंक रियासतो ने कॉलेज पार्क म छात्रावास भवनो का ४,२८,००० रुपए की लागत से निर्माण करवाया था तथा उस पर वार्षिक व्यय लगभग १८,५६०० रुपए किया जाता रहा। इस राशि मे हाऊस मास्टर और कर्मचारियो का वेतन भी समाहित था।

२७ जे० डी० लाटूश गजेटीयर्स अजमेर मेरवाडा (१८७५) पृ० ६२।

२८ "गत बीस वर्षो मे शिक्षा की अजमेर और राजपूताने मे बहुत प्रगति हुई है। सन् १८७६ मे २१ विद्यार्थी मैट्रिक की परीक्षा मे बैठे थे जबकि सन् १८९६ मे इन विद्यार्थियो की सख्या २०० हो गई थी। यदि उचित सुविधाए प्राप्त होती रही, तो यह निश्चित है कि इनमे से अधिकाश विद्यार्थी बी० ए० तक शिक्षा जारी रख सकेंगे जिससे उन्हें सरकारी विभागो एव रजवाडो मे आजीविका प्राप्त हो सकेगी।"

एफ० एल० रीड, प्रिन्सिपल गवर्नमेंट कॉलेज अजमेर द्वारा प्रसारित विज्ञप्ति दिनाक २३ मार्च, १८९६।

२९. प्रिन्सिपल रीड की विज्ञप्ति दिनाक २३ मार्च, १८९६।

३०. कमिश्नर अजमेर मेरवाडा द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा तथा ए० जी० जी० राजपूताना को पत्र दि० २३ जून, १८९६।

निम्न तालिका बी० ए० की कक्षा को प्रारम्भ करने के लिए प्राप्त आर्थिक सहायता की सूचक है —

अ—ठाकुर तथा इस्तमरारदार

१—रावबहादुरसिंह मसूदा	रुपए	३,०००
२—देवलिया ठाकुर	"	५००
३—दातरी ठाकुर	"	४००
४—सावर ठाकुर	"	१,०००
५—खरवा ठाकुर	"	१०
६—गोविंदगढ ठाकुर	"	७५
७—ठाकुर सरदारसिंह	"	७५
८—नवाब शम्सुद्दीन अलीखान	"	११०

ब—सेठ एव साहूकार

९—सेठ चपालाल	रुपए	५,०००
१०—सेठ समीरमल	"	२,०००
११—सेठ मूलचन्द सोनी	"	२,०००
१२—सेठ सोभागमल	"	७००
१३—सेठ पन्नालाल	"	४००
१४—सेठ हरनारायण	"	३०१
१५—भूतपूर्व विद्यार्थी एव अन्य	"	१०,३३०
कुल योग		२९,५२६

(परिशिष्ट सूची सलग्न पत्र सख्या ३७७–८ दिनाक २३ नवम्बर, १९०५ प्रिन्सिपल गवर्नमेन्ट कॉलेज अजमेर द्वारा कमिश्नर, अजमेर-मेरवाड़ा को प्रेषित)

३१ शिक्षा विभाग भारत सरकार द्वारा प्रसारित विज्ञप्ति, २१ फरवरी, १९१३, स० ३०१ सी० डी० ।

३२. फाइल क्रमाक २२८ सन् १९१३–१४ (कमिश्नर कार्यालय, अजमेर) ।

३३ रजिस्ट्रार इलाहाबाद विश्वविद्यालय द्वारा प्रिन्सिपल गवर्नमेन्ट कॉलेज अजमेर को पत्र, दि० २० जनवरी, १९१४ सख्या २८० ।

कॉलेज के पास एक अच्छा पुस्तकालय था उसके अहाते मे छात्रावास भवन भी था जिसमे नार्मल स्कूल मे पढने वाले छात्र तथा देहातो से आए हुए छात्रवृत्ति प्राप्त छात्रो के लिए रहने एव खाने की व्यवस्था थी। इस

छात्रावास मे पचास छात्रो की व्यवस्था थी। कॉलेज के कर्मचारी वर्ग मे १ प्रिन्सिपल, सस्थाम्रो के प्रधानाचार्य, ६ प्रोफेसर, १३ अंग्रेजी के शिक्षक, ६ पडित, ६ मौलवी एव १ पुस्तकालय व्यवस्थापक की व्यवस्था थी। (डुरेल पाक, मेडिको टोपोग्राफिक्ल रिपोर्ट अजमेर-मेरवाडा पृष्ठ ८८)।

३४. शिक्षा-कर की अलोकप्रियता का अनुमान इसी से आंका जा सकता है कि सन् १८५७ मे जब भिनाय राजा की साली सती होने लगी तो पडितो ने उसकी चिता के चारों ओर खडे होकर उक्त सती से अपने प्रभाव द्वारा देहाती स्कूलो पर लगने वाले कर की समाप्ति की याचना की।

३५ फाइल क्रमाक २२६ सन् १६१३, कमिश्नर कार्यालय, अजमेर। सन् १८७६-७७ मे जिला पाठशालाओ का पुनर्गठन किया गया था। इन्हें सरकार से आर्थिक सहायता तथा ३½ वार्षिक शुल्क में से (१ प्रतिशत) अनुदान मिलता था। सन् १८७६-७७ से लेकर सन् १६०० तक इन पाठशालाओ की सख्या मे किसी भी तरह का परिवर्तन नहीं हुआ था। इनकी सख्या यथावत रही। सन् १८७६ मे इन पाठशालाओ के नियमित छात्रो की सख्या १७७० थी, सन् १६०० मे छात्रसख्या ४०८५ थी जिसमे २७८८ छात्र अजमेर के तथा १२६७ छात्र मेरवाडा के थे। अजमेर-मेरवाडा की मेडिको टोपोग्राफिकल रिपोर्ट डुरेल पाक पृ ८८।

३६. क्षेत्र मे १६ एडवाइड स्कूलें भी थीं जो सार्वजनिक सस्थाओ द्वारा सचालित होती थीं।

३७ दो तरह की स्कूलें थीं—एक तो तहसील स्कूलें अथवा वर्नाक्यूलर मिडिल स्कूलें एव दूसरी हलकाबदी या वर्नाक्यूलर एलीमेंटरी स्कूलें थीं। तहसील स्कूलों का सम्पूर्ण भार सरकार द्वारा वहन किया जाता था। स्कूल भवनों का निर्माण तथा शिक्षको का वेतन सरकार चुकाती थी। सामान्य प्रभार की पूर्ति विद्यार्थियों के शिक्षा शुल्क से की जाती थी। हलकाबदी स्कूलें जमीदारों से उगाहे गए शिक्षा शुल्क पर निर्भर थी—
विद्यालय निरीक्षक द्वारा एल एम सॉडर्स को पत्र, दिनाक २८ अगस्त, १८७१।

३८ ई एफ. हैरिस, कार्यवाहक प्रिन्सिपल गवर्नमेन्ट कॉलेज, अजमेर द्वारा कमिश्नर अजमेर मेरवाडा को पत्र, दि १८ जुलाई, १८६६ सख्या २६५।

३६ उपर्युक्त।

४०. उपर्युक्त।

४१. उपर्युक्त।

४२. उपर्युक्त।

४३. उपर्युक्त।

४४. विद्यालय निरीक्षक, अजमेर की वार्षिक रिपोर्ट वर्ष सन् १८८०-८१ से अंकित उद्धरण।

४५ उपर्युक्त।

४६. रीड, प्रिन्सिपल गवर्नमेन्ट कालेज द्वारा सॉंडर्स कमिश्नर अजमेर के पत्र, दि. ११ दिसम्बर, १८८१।

४७. रीड का कथन है कि उन्होने मसूदा मिशन स्कूल का निरीक्षण करने पर यह देखा कि ढ़ाई साल की शिक्षा के बाद भी छात्र साधारण गुणा करने मे असमर्थ थे। अन्य विषयो मे भी उनका सामान्य ज्ञान बहुत ही निम्न स्तर का था। टाटोटी मिशन स्कूल मे चार साल की शिक्षा के पश्चात् भी छात्र सामान्य ज्ञान से अधिक आगे नही बढ़ सके थे। ब्यावर स्कूल भी पुराने रिकॉर्डों की जाँच तथा व्यक्तिगत निरीक्षण से पूर्णतया असतोष-जनक सिद्ध हुआ था। रीड प्रिन्सिपल गवर्नमेन्ट कालेज, अजमेर द्वारा सॉंडर्स कमिश्नर अजमेर को पत्र दि. ११ दिसम्बर, १८८१।

४८. सॉंडर्स, कमिश्नर अजमेर को पत्र दिनाक २२ जून, १८८१।

४९. स्कूलग्रेड द्वारा कमिश्नर एव शिक्षा निदेशक अजमेर को पत्र दिनाक २२ जून, १८८१।

५०. स्कूलग्रेड द्वारा सॉंडर्स को पत्र दिनाक २६ जून, १८८१।

५१. सन् १८८१ मे आयोजित मिशन कान्फ्रेन्स की ओर से स्कूलग्रेड एवं जे. ग्रे. द्वारा वायसराय को प्रस्तुत ज्ञापन, फाइल क्रमाक १८।

५२. रीड द्वारा सॉंडर्स कमिश्नर अजमेर को पत्र, फाइल दिनाक ११ दिसम्बर, १८८१।

५३. मसूदा स्कूल २० जून, १८८१ को खुला और शीघ्र ही ८० लड़के भरती हो गए थे।

५४. हेरिस द्वारा विशेष रिपोर्ट दिनाक २८ जून, सन् १८८२,

५५. सन् १८६७ मे महिला अध्यापिकाओं के प्रशिक्षण के लिए एक स्कूल पुष्कर मे खोला गया था परन्तु यह परीक्षण सफल नहीं हुआ, क्योंकि इस स्कूल के अध्यापिका पद के लिए शिक्षित महिलाएं उपलब्ध नहीं हो

पाई थीं। प्रिंसिपल अजमेर कॉलेज द्वारा एल. एस. साउर्स कमिश्नर, अजमेर-मेरवाडा को पत्र, दि. १७ फरवरी, १८७२।

५६. निरीक्षिका महिला नार्मल स्कूल द्वारा निरीक्षक शिक्षा विभाग अजमेर-मेरवाडा को पत्र—फाईल सख्या ११।

५७. मैनेजर राजपूताना-मालवा रेल्वे द्वारा ए० जी०जी० के प्रथम असिस्टेन्ट को पत्र, दि० २५ अप्रेल, १८८२ (पत्र सख्या ५७०६)।

५८. रेल्वे स्कूल को मासिक सहायता ७५) रुपया व कानवेन्टे स्कूल को १००) रुपया मासिक थी।

९

जनता की आर्थिक स्थिति

सन् १८५७ के सैनिक विद्रोह मे स्थानीय जनता ने भाग नही लिया था और गदर एक गरजते बादल की तरह बिना बरसे ही अजमेर के राजनीतिक आकाश से गुजर गया था।[१] किन्तु इससे यह अनुमान लगाना गलत होगा कि अजमेर-मेरवाडा की जनता अग्रेजी प्रशासन के अन्तर्गत सुखी और समृद्ध थी।

अजमेर-मेरवाडा मे अग्रेजो के शासन के अन्तर्गत किसानो की दयनीय स्थिति बराबर बनी रही। इसका मुख्य कारण यह था कि मराठो ने अपने शासन के अन्तिम वर्ष मे जो लगान की रकम वसूल की थी उसी को आधार मानकर अग्रेज सरकार इस पूरे काल मे अपनी लगान की राशि को निर्धारित करती रही। खालसा-क्षेत्र मे केवल उन्ही किसानो को भूमिया ठिकाने मे हक प्राप्त थे, जो अपनी भूमि मे कुँआ, नाडी, मेडबदी आदि का निर्माण करते थे।[२] असिंचित और बजर भूमि पर सरकार का स्वामित्व था।[३] अग्रजो के शासन के प्रारम्भिक काल मे लगान की दर फसल का आधा हिस्सा होती थी। सरकार किसानो की गिरी हुई हालत से अनभिज्ञ थी। उनके द्वारा निर्धारित राशि अपूर्ण एव अविश्वस्त आँकडो पर आधारित थी।[४] लगान निर्धारित करने मे उनका दृष्टिकोण सिर्फ राजस्व की वृद्धि करना होता था।[५] उन्होंने लोगो की स्थिति जानने का कभी प्रयत्न किया ही नहीं।[६] मेरवाडा मे जमीन पथरीली होने के कारण आधी फसल लगान के रूप मे देना किसान की क्षमता के बाहर था। कुछ समय के लिए सरकार ने यह व्यवस्था

भी करदी थी कि अगर किसी गाँव मे किसान के गाँव छोड़कर चले जाने या कृषि के धन्धे का परित्याग कर देने के कारण लगान की राशि मे जो कमी होगी तो उसकी पूर्ति उन लोगों को करनी पड़ती थी जो खेती नही करते थे । इसने लोगो पर कर का भार बढ़ा दिया था।[७] यद्यपि बाद में लगान की दर आधी से घटा कर ⅓ कर दी गई थी,[८] परन्तु इसने भी किसानो को वास्तविक राहत प्रदान नही की, क्योंकि प्रारम्भ मे निर्धारित कर की दर इतनी ज्यादा थी कि उसका ⅓ हिस्सा भी किसानो के लिए अधिक था। सरकार ने सिंचाई के लिए कुछ तालाबों आदि का निर्माण अवश्य कराया परन्तु इसमे भी सरकार का दृष्टिकोण किसान को सिंचाई के साधन उपलब्ध करवाने के बजाय अपनी राजस्व की आय की वृद्धि की नीयत रहती थी। सिंचाई के साधन भी सरकार अपनी ओर से तैयार नही करवाती थी। जब कभी कोई नया तालाब बनाया जाता था या पुराने की मरम्मत की जाती थी तब कराधान के समय निर्माण का व्यय का खर्च अतिरिक्त जोड़ा जाता था। कर्नल डिक्सन जैसे व्यक्ति ने भी लगान की दर इतनी ऊँची निर्धारित की थी कि उसे अच्छे वर्षों मे ही वसूल किया जा सकता था। कर्नल डिक्सन ने यद्यपि अकाल व सूखे की स्थिति मे लगान में आवश्यकतानुसार छूट की व्यवस्था रखी थी परन्तु सन् १८८०-८४ के बीच अजमेर में केवल ६५५ रुपए तथा मेरवाड़ा मे कुल ५६१ रुपए की छूट दी गई थी।[९] इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि यह राहत सिर्फ दिखावामात्र थी। इस्तमरारदारी क्षेत्र मे लगान के कड़े नियमों के बाद भी खालसा क्षेत्र के अन्य किसानो की तुलना मे यहाँ के किसानों की स्थिति ठीक थी। खालसा-क्षेत्र के किसान भारी कर्ज मे डूबे हुए थे।[१०]

मराठा शासनकाल से इस्तमरारदारी क्षेत्र मे किसानो की हालत खराब होने लगी थी। मराठों की नीति थी 'जितना लिया जा सके ले लो।" वे मनमाने कर इस्तमरारदारो से वसूल करते थे।[११] इस्तमरारदार जितना धन मराठों को प्रदान करते थे वह उनके द्वारा किसानो से वसूल किया जाना स्वाभाविक था। मराठा काल मे लगभग ४० कर व उपकर प्रचलित थे। इस कारण मराठा काल मे किसानो से कई नये कर व उपकर वसूल किए जाने लगे। मुगलकाल मे इन ठिकानेदारों को अपने ठिकाने छिनने का भय बना रहा था परन्तु मराठों ने नकद भुगतान के एवज में उन्हें अपने ठिकानो का स्थाई स्वामी बनाकर उन्हें निरंकुश अधिकार प्रदान कर दिए थे।[१२] मराठों की मुख्य इच्छा धन बटोरने की थी। उन्होंने इन ठिकानेदारों को भूमि का स्वामी बना कर किसानो को पूर्णतया उनकी मर्जी पर छोड़ दिया था। इस कारण ठिकानेदारों को अपने ठिकाने मे रहने वाली जनता पर असीमित अधिकार प्राप्त हो गए थे।[१३] अंग्रेजो ने इस स्थिति मे कोई परिवर्तन नही किया। अंग्रेज सरकार ने सन् १८७७ में इस्तमरारदारों पर अतिरिक्त कर समाप्त करते समय भी इस बात का कोई ध्यान नहीं रखा कि उसी अनुपात मे करों व लागबागों

से आम जनता को राहत मिले।[14] इसका परिणाम यह हुआ कि इस्तमरारदार को आर्थिक राहत मिलने के बाद भी जनता करो से पहले के समान ही दबी रही।[15] सिर्फ उन चन्द व्यक्तियो को छोडकर जिनके परिवार उस ठिकाने मे इस्तमरारदार के आगमन के पूर्व से बसे हुए थे, शेष जनता को अपने मकानों को बेचने का अधिकार भी प्राप्त नही था।[16] अंग्रेज सरकार ने सन् १८७७ में भूमि एव राजस्व विनिमय की धारा २१ के अन्तर्गत ठिकानो मे किसान को इस्तमरारदार की भूमि पर किरायेदार का स्थान दे दिया था। इस्तमरारी ठिकानो मे किसान को भूमि पर ऐसा कोई अधिकार प्राप्त नहीं था कि जिसके अन्तर्गत किसान ठिकानेदार के अप्रसन्न होने पर भी उस ठिकाने मे रह सकता था।[17] कठोर कर और असुरक्षा के कारण ठिकानो मे किसान की स्थिति दयनीय हो गई थी।[18] किसान को अपनी उपज का साठ प्रतिशत ठिकानेदार को लगान व अन्य लागबागो के रूप में दे देना पडता था।[19] इस्तमरारदारी क्षेत्र में किसान को उनकी बेदखली के विरुद्ध किसी भी प्रकार के कानूनी अधिकार प्राप्त नही थे।[20] अंग्रेज सरकार ने सार्वभौम सत्ता होने के नाते नागरिको के अधिकारो के प्रश्न पर भी ठिकाने की जनता को सुरक्षा प्रदान करने का प्रयत्न नही किया था।[21]

प्राय प्रतिवर्ष अकाल पडने से क्षेत्र की जनता की आर्थिक स्थिति जर्जर हो गई थी। सन् १८१९, १८२४, १८३३, १८४८, १८६८, १८९० ९२, १८९८–१९०० और १९०१–१९०२ के अकाल वर्षों ने क्षेत्र म भुखमरी की स्थिति पैदा कर दी थी, जिससे लोगो का आत्मविश्वास और आत्मसम्मान पूर्णतया नष्ट हो गया था।[22] गरीब जनता राहत के लिए कराहने लगी थी। पारिवारिक बधन शिथिल हो गए थे। क्षेत्र के तीन-चौथाई मवेशी नष्ट हो गए थे। सन् १८७९ मे राजपूताना-मालवा रेल मार्ग ने भौतिक समृद्धि के आसार उत्पन्न किए परन्तु इससे विशेष फर्क नहीं हुआ। अजमेर शहर की जनसख्या भी पहले की अपेक्षा दुगनी हो गई थी। शहर का महत्व बढ़ा एव विस्तार भी हुआ परन्तु जिले के ग्रामीण क्षेत्र के लोगों पर अकालो के इतने गहरे प्रहार हुए कि अजमेर इनकी क्षतिपूर्ति करने मे असमर्थ रहा और इसकी प्रगति मे ये विपदाएं बहुधा बाधक ही बनी रहीं।[23]

अजमेर मेरवाडा जिले की अधिकाश जनता कृषि प्रधान थी अतएव इस तथ्य को समझ लेने मात्र से ही हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि निरतर अकालो एव सूखो की स्थिति ने कितनी गभीर क्षति पहुँचाई होगी। औद्योगिक जनसख्या केवल १७ ७४ प्रतिशत थी जो मुख्यतया कपास एव चमडे के उद्योगो, किराना एव परचून के धंधो और रेल्वे वर्कशॉप मे लगी हुई थी। खेतिहर मजदूरो के अतिरिक्त सामान्य श्रमिक की जनसख्या १० ५९ प्रतिशत थी। निजी नौकरियो गैर सरकारी मे ५ ९१ और ४ २१ प्रतिशत व्यापार मे लगी हुई थी। स्वतत्र साधन वाले लोग

मुश्किल से १.८०, प्रतिशत थे जबकि रोजगार एव सरकारी सेवाग्रो मे लगे लोग २ ५६ और २.३८ प्रतिशत थे। अत- यह स्वाभाविक था कि अकाल के वर्षों ने अधिकाश जनता पर क्रूर प्रहार किया और यहाँ के उद्योग धर्धो पर गहरा दुष्प्रभाव पड़ा।[२४]

मुश्किल से १८० आर्थिक कठिनाइयो के साथ ही कुछ तो शिक्षा प्रसार और बहुत कुछ सामाजिक-धार्मिक आन्दोलनो के फलस्वरूप राजनीतिक चेतना बढ़ने लगी जिसने की लोगो में निराशा का भाव पैदा हुआ। इस निराशा की भावना ने अंग्रेज शासन के प्रति घृणा की भावना उत्पन्न की।[२५]

यद्यपि यह जिला सन् १८५१ मे नियमित व्यवस्था के अन्तर्गत आ गया था तथा कर्नल डिक्सन के समय मे कृषि आदि के क्षेत्र मे कई महत्वपूर्ण कार्य भी हुए परन्तु साथ ही यह तथ्य भी साफ है कि अंग्रेजो ने राजस्व के रूप मे जहाँ दो सौ की राशि औचित्यपूर्ण मानी थी वहाँ लोगो से तीन सौ रुपए तक वसूल किए तथा जहाँ चार सौ रुपया लेना चाहिए था वहाँ पाँच सौ रुपए वसूल किए और इतने पर भी उनका सदा ही यह तर्क रहता था कि राजस्व व सरकारी शुल्क मे और भी वृद्धि की गुजाइश है।[२६] फलस्वरूप जनता आर्थिक भार से दब गई थी और उसकी स्थिति भिखारियो जैसी बन गई थी। अंग्रेजो ने चौकीदारी कर पहले दुगुना और फिर चौगुना कर दिया था। इस तरह उन्होने लोगो को करो से दबा रखा था। सभी प्रतिष्ठित और शिक्षित लोगो के धधे चौपट हो गए थे और लाखो लोग जीवनयापन की तलाश मे बेघरबार हो गए थे। जब कभी कोई व्यक्ति धधे या काम की तलाश मे एक स्थान से दूसरे स्थान को जाने का निर्णय भी करता तो प्रत्येक व्यक्ति से सडकों पर गुजरने के कर के रूप मे एक आना व बैलगाडी के लिए चार आने से लेकर आठ आने तक कर वसूल किया जाता था। केवल वे ही लोग यात्रा कर पाते थे जो यह कर चुका सकते थे। किसानो की हालत दयनीय हो गई थी और नौकरी-पेशा लोगों की स्थिति भी शोचनीय थी।[२७]

अंग्रेजो के आधिपत्य के सम्पूर्ण काल मे अजमेर-मेरवाडा का किसान आकाश-वृत्ति पर ही जीता था। उनके जीवन-यापन का एकमात्र साधन खेती था। किसान पर्याप्त सख्या मे मवेशी पालकर भी अपनी आय मे अतिरिक्त वृद्धि करने का प्रयास करते थे परन्तु अकाल एव अभाव की स्थिति के कारण पशु भी अधिकाशतः नष्ट हो जाते थे। मवेशियों से उन्हें दूध, घी, ऊन और खेतों के लिए खाद उपलब्ध हुआ करती थी।[२८] अकाल के समय में पाँच प्रतिशत पशु ही बच पाते थे। घास व चारे के अभाव में, मवेशियो की भारी क्षति होती थी और इस तरह उनके जीवन की दैनिक आवश्यकताओ की पूर्ति होना भी कठिन हो जाता था।[२९]

किसानों मे बच्चों की सख्या एक सबसे बडी समस्या थी। उन्हें अपने सीमित हाथो एव साधनो से अनेक प्राणियों का पेट भरना होता था। एक तरफ आए दिन परिवार मे नये सदस्यों की वृद्धि और दूसरी तरफ अकाल से किसानो के लिए भोजन

और जीवनोपयोगी वस्तुए जुटाना कठिन समस्या थी। इसका दुष्प्रभाव उनकी खुराक पर पड़ता था। उन्हें पोषण शक्ति से हीन और अपर्याप्त भोजन पर गुजारा करना पड़ता था। सामान्यत वे एक समय ही भोजन करते थे।[३०]

कृषि भूमि में भी वृद्धि हुई थी। खाद्यान्नों के ऊँचे भावों से किसान को लाभ न पहुँच कर सूदखोर महाजनो को इसका लाभ मिलता था। किसान ऋण से दबा रहता था। यदि किसान अपनी फसल निकट एव दूरस्थ मण्डियो में बेचने ले जाता तो उसे अवश्य ही लाभ पहुँच पाता, परन्तु यहाँ का किसान ग्राम साहूकार पर अधिक निर्भर रहता था।[३१]

लोगो की सामान्य खुराक गेहूँ, बाजरा, जौ, मक्का, ज्वार और मोठ आदि की दालें थी। किसान अधिकाशत जो और मक्का पर गुजारा करता था। जिले के अधिकाश क्षेत्र मे यही फसलें बहुतायत से होती थी। अकाल एव पशुधन के ह्रास से घी दूध किसानो के लिए जीवन की आवश्यकता न रहकर त्योहारो की चीजों मे शुमार होने लगा था। लोगो की वार्षिक खपत के अनुपात मे फसलो की उपज मे भारी गिरावट आगई थी। रेल्वे की रसीदो को देखने से पता चल जाता है कि उन दिनों अजमेर मे बाहर से प्रतिवर्ष भारी गल्ला मँगाया जाता रहा था।[३२]

अकाल के दिनो मे अग्रेज सरकार ने राहत कार्य हाथ मे लेना प्रारम्भ किया था जिससे किसानो को भुखमरी और दूसरे स्थानों पर जाने से बचाया जा सका। सरकार के इन कदमों का जनता पर विशेष प्रभाव पड़ा।[३३] सरकार तकावी ऋण बाँटने, कतिपय अकाल राहत कार्य और अन्य राहत सामग्री वितरित करने के कदम उठाती रहती थी। अगर ऐसा नही किया जाता तो जिले की स्थिति और भी खराब हो जाती तथा भारी सख्या मे लोग दूसरे स्थानो पर चले जाते। राहत कार्य मे लगे लोगो को इतनी ही मजदूरी दी जाती थी जो मात्र उनके भरण पोषण के लिए पर्याप्त होती थी। रेलो के माध्यम से चारा बाहर से मगवाया जाता था ताकि जिले के मवेशियो को बचाया जा सके।[३४]

भारत के सभी प्रान्तो की अपेक्षा राजपूताना अपनी विशिष्ट प्राकृतिक स्थिति के कारण आये दिन अकाल से घिरा रहता था। अजमेर मेरवाड़ा जिले मे एक भी नदी या नहर नहीं होने से यहाँ की खेती समय पर होने वाली वर्षा पर ही निर्भर थी। जब कभी वर्षा का अभाव होता, लोग सिंचाई के लिए कुँओ, जलाशयो आदि स्रोतों का उपयोग करते थे। कुँओ तालाबो एव नाडियो के निर्माण द्वारा यदि कभी एक मौसम सूखा रहता तो कुछ उपज इन साधनो से सभव हो पाती थी। इस जिले मे अकाल एव सूखे का सामना करने के लिए इन साधन स्रोतो मे वृद्धि की गई थी। इस तरह के निर्माण कार्यों से राज्य के राजस्व मे भी वृद्धि हुई। इस तरह एकाध वर्ष वर्षा की कमी एव सूखे के व्यापक प्रभाव को किसान आसानी से इन सिंचाई

स्रोतो की सहायता से झेलने मे समर्थ हो गया था।[३५]

एक साथ ही दो तीन वर्ष तक अकाल का लगातार प्रकोप न होने पर अकाल की इतनी भयावहता का यहाँ की जनता को कदापि अनुभव नही होता था। यद्यपि सरकार ऐसे समय राहत कार्य करती थी तथापि अकाल के दिनो मे किसानो का अपने मवेशियो के साथ दूसरे स्थानो पर जाना बना रहता था। क्योंकि किसान सरकार द्वारा प्रारम्भ किए गए कार्यों के प्रति कुछ ज्यादा आशावान नही होते थे।[३६] ज्यादातर किसान सूखे एव अकाल के दिनो मे अपने मवेशियो को मालवा ले जाया करते थे।[३७]

जहाँ तक सुख-सुविधाओ के उपयोग का प्रश्न है अजमेर-मेरवाडा की कृषक जनता यह लाभ केवल अच्छी फसल प्राप्त करने पर ही उठा सकती थी। राजपूताना मे अफीम और तम्बाकू मौज शौक की वस्तुओ मे सम्मिलित नही थी। ये जीवन की आवश्यकताए बन गई थी और लोग साधन उपलब्ध होने पर इनका खुलकर उपयोग किया करते थे। परन्तु अकाल के दिनो का प्रभाव इन पर भी पड़ता था। देहातों मे इस व्यसन का बहुत अधिक प्रचलन नही था परन्तु शहरो एव कस्बो मे जहाँ मजदूरी आसानी से उपलब्ध हो जाती थी, वहाँ दूसरी ही स्थिति थी। एक किसान शराब तभी पीता था जब उसकी अन्य आवश्यकताओ की पूर्ति हो जाती या उसके खेत लहलहा उठते थे। कर्ज मे दबे रहने के कारण किसान आभूषण पर भी खर्च नहीं कर पाते थे। इस तरह की सभावनाए इसलिए भी पैदा नही हो सकती थी क्योकि गाँव का महाजन बाज की तरह किसान-परिवार मे समृद्धि के लक्षण नजर आने की बाट मे लगा रहता था जिससे कि वह दीवानी अदालत की सहायता से उस पर झपट्टा मार सकें।[३८]

"वाल्टर कृत हितकारी सभा" के उद्घाटन के साथ ही राजपूताना के राजपूतों मे विवाह एव अन्य क्रियाकर्मो सम्बन्धी सामाजिक सुधार होने लगे थे। इन सुधारों की आवश्यकता एक लम्बे समय से अनुभव की जा रही थी। इन सुधार-आन्दोलनों का समाज मे स्वागत हुआ था। शहर और गाँवो की सभी जातियो मे इनका अनुकरण करने का प्रयास प्रारम्भ हुआ और विवाह एव अतिम क्रियाकर्म और अवसरो पर होने वाले अधाधुन्ध खर्च पर रोक के प्रयत्न प्रारम्भ हुए। सामान्य अशिक्षित जनता इन सुधारों के प्रति सहज ही आकृष्ट नही हुई होती यदि इस क्षेत्र मे अकाल तथा कर्ज के भार से लोगो की आर्थिक स्थिति खराब नही होती। खराब आर्थिक स्थिति के कारण भी लोगो ने व्यर्थ के खर्चे से बचाने के लिए सामाजिक सुधार का सहारा लिया। जब अच्छी एव भरपूर फसल होती थी तब किसान "मौसर" आदि के नाम पर जी खोल कर व्यय करने मे पीछे नहीं रहता था।[३९]

जिले मे रेलों के आगमन से भी चीजों के भावो मे स्थिरता आई थी और

रुई के व्यापार को प्रोत्साहन मिला था। इस जिले से रुई ही एकमात्र ऐसी व्यावसायिक फसल थी जो बाहर भेजी जाती थी परन्तु इसका किसानों पर विपरीत प्रभाव पडा क्योंकि रेलो का साधन होने से पहले वे स्थानीय उपज के अच्छे दाम उठाया करते थे।[४०]

कृषको की ऋणग्रस्तता ने व्यापक स्वरूप ग्रहण कर लिया था इस ऋणग्रस्तता की वृद्धि के कारण किसानो मे व्याप्त गरीबी, अज्ञान, दूरदर्शिता का अभाव, विवाहो व क्रियाकर्म पर अपव्यय तथा ऋण चुकाने की असमर्थता इसके मुख्य कारण थे।[४१]

भारत मे प्रचलित सयुक्त कुटुम्ब प्रणाली, कस्बो एव शहरो की अपेक्षा ग्रामों में अधिक गहरा प्रभाव जमाए हुए थी। इस प्रथा से लाभ और हानि दोनो ही थे। परन्तु इस बात में कोई सन्देह नहीं है कि अगर सौभाग्य से किसान सूदखोर या महाजन के चगुल से बच पाता तो अन्य व्यवसायो की अपेक्षा वह अधिक अर्जित करने की स्थिति मे था। परन्तु एक बार वह अगर बनिए की छोटी सी ऋणग्रस्तता मे भी फँस जाता तो उसका पीढियो तक उसके चगुल से निकलना सभव नही था। पितृऋण चुकाने की नैतिक परम्परा का पालन करने के कारण बहुधा सूदखोर अपनी बेईमानी से किसान का शोषण करता चला जाता था।[४२]

किसान हिसाब नही रखता था उसका सभी लेन देन गाँव के साहूकार के यहाँ था जहाँ उसकी अतिरिक्त फसल उसके भडार मे जमा हो जाती थी। महाजन की बही मे किसान का अनाज कम मूल्य मे जमा कर लिया जाता था और उसे कर्ज के रूप में धन बहुत ही ऊँची दरो पर दिया जाता था। यदि दुर्भाग्य से मौसम प्रतिकूल रहता, जो कि राजपूताना मे सामान्य बात थी, तब किसान को आवश्यकता की वस्तुए भी उसी के यहाँ से लानी पडती और एक बार ऋण का खाता आरम्भ हो जाने के पश्चात् वह सदा के लिए साहूकार के हिसाब से बढता ही जाता और उसका कभी अन्त नही हो पाता था।[४३]

अज्ञानवश किसान एव अशिक्षित समाज तात्कालिक आवश्यकता की पूर्ति के लिए किसी भी शर्त पर ऋण लेने को उद्यत रहता था व उसके भावी परिणामों की ओर कदाचित् ही उसका ध्यान जाता था। इस तरह उनका साहूकारो के चगुल से छुटकारा पाना असभव था।

सामाजिक प्रथाओ मे विवाह, मृतक भोज तथा गगोज प्रमुख रूप से प्रचलित थे। इनके साथ धार्मिक भावनाए बधन के रूप मे जुडी हुई थी। इनका पालन करना एक तरह से अनिवार्य एव सामाजिक प्रतिष्ठा का प्रश्न होता था। इनमे विशाल भोज होते थे जो कि साधारण व्यक्ति पर अत्यधिक आर्थिक भार लाद देते थे।

ऋण ली गई राशि पर ब्याज की ऊँची दरें, गृहस्थो मे नये सदस्यो की अभिवृद्धि, मौसम की अनुकूल-प्रतिकूल अस्थिरताए, सभी मिलकर कर्जे मे वृद्धि ही किया करती । लाट्रूश ने इन सभी तथ्यो के विश्लेषण के पश्चात् जो साराश प्रस्तुत किया है उसे काफी हद तक निश्चित एव सही भविष्यवाणी के रूप मे लिया जा सकता है "अकाल का यह परिणाम सदा यह रहा है कि सम्पूर्ण जिला कर्ज के चगुल मे फँस जाता है और कदाचित् ही वह इससे मुक्ति पाने में सफल हो पाया हो। बकाया राजस्व चुकाने के लिए लिया गया कर्ज किसान के लिए बहुत घातक सिद्ध होता था क्योकि उन्हें महाजन को बहुत सस्ते भाव पर अपना अनाज बेचने के लिए बाध्य होना पडता था और आवश्यकता पडने पर यही अनाज उन्हें ऊँचे भावो पर खरीदना पडता था।'[४४]

भू-भाग भी सामान्यत असुरक्षित था। अकेले अजमेर मे रजिस्ट्रेशन के आँकडो से यह पता चलता है कि भूमि का बधक या विक्रय दिन प्रतिदिन बढता जा रहा था। इस तरह भूस्वामित्व का हस्तातरण अबाधगति और अनियन्त्रित जारी रहने देने का फल यह हुआ कि मूल स्वामी के पास बहुत कम भू सपत्ति शेष रह गई थी तथा सरकार द्वारा प्रदत्त तकावी ऋण की एवज मे बडे-बडे खेत बधक के रूप मे रखे जाते थे।[४५]

सम्पूर्ण अजमेर जिले मे व्यापारियो की अपेक्षा सूद पर रुपया देने का धधा ज्यादा था। पैसे वालो मे से अधिकाश ओसवाल या जैन समाज के लोग थे। ये लोग ब्याज बट्टे का धधा करते थे। गाँवो मे इनका समाज मे प्रमुख स्थान था। ये किसानो को कपडे एव अन्य आवश्यक सामग्री भी उधार दिया करते थे।[४६]

जिले में रेलमार्ग खुल जाने से कपास ओटने की मशीनें लगने लगी जिसकी वजह से यहाँ के रुई व्यापार को अच्छा प्रोत्साहन प्राप्त हुआ था। ब्यावर, केकडी व नसीराबाद मे जिनिग फैक्टरिया स्थापित हुई थी। जिले से रुई और अफीम का ही निर्यात व्यापार होता था, परन्तु ब्यावर, नसीराबाद आदि स्थानो मे फैक्टरिया और अजमेर मे रेल कार्यालयो व रेल्वे वर्कशॉप खुल जाने से शहर की व जिले की बढती हुई जनसख्या की आवश्यकता की पूर्ति के लिए भी बाहर से खाद्यान्न एव अन्य सामग्री आयात होने लगी। अग्रेजो के शासनकाल मे, जिले के आयात और निर्यात व्यापार मे अभिवृद्धि हुई थी। सभी उपभोक्ता सामग्री के भावों में वृद्धि हो गई थी और गेहूँ, चना, मक्का, बाजरा, दालें, मोठ, घी, जो इत्यादि के दाम बढते ही जाते थे।[४७]

गाँव का मजदूर, यद्यपि सही माने मे अपने खेतों को जोतकर फसल के स्वामित्व वाला किसान तो नहीं था, परन्तु उसके हित इस वर्ग के साथ इस तरह जुडे हुए थे कि किसान की स्थिति मे परिवर्तन के साथ साथ उसकी स्थिति में भी

उत्थान-पतन होता रहता था। जिले में दैनिक मजदूरी पर खेत पर मजदूर रखने की प्रथा अधिक प्रचलित थी, जो कि 'हाली' कहलाते थे। ये मजदूर खेत जोतने, निराई करने, रखवाली करने और फसल काटने के लिए नियुक्त किए जाते थे। इन लोगों को मजदूरी नगदी में अथवा अनाज के रूप में दी जाती थी। यदि नगद रूप मे मजदूरी दी जाती तो पुरुष को चार रुपए, महिला को ३ रुपए और अल्पवयस्क को जो बारह साल से कम नहीं होता था २ रुपए प्रतिमाह दिया जाता था। यदि मजदूरी खाद्यान्न के रूप मे दी जाती तो पुरुष को डेढ सेर, महिला को एक सेर और बच्चे को आधा सेर अनाज प्रतिदिन की दर से दिया जाता था। मौसम की अनुकूलता का भी इनके वेतन पर प्रभाव पड़ता था। मजदूर अधिकांशत चमार, बलाई, डोम आदि जाति के होते थे। मजदूरी के अलावा वे अपने जातीय व्यवसाय भी करते थे। मजदूरी के अतिरिक्त इनमे कई लोग घास, जगली लकडी (ईंधन) बेचने का काम भी करते थे। प्रत्येक जाति का अपना जातिगत व्यवसाय होता था जैसे चमार चमडे का काम करता था, बलाई कपडा बुनता था और ये लोग अपनी जीविका के लिए पूर्णतया किसान पर ही निर्भर रहते थे। ग्राम मे इन की अपनी जमीनें नहीं होने के कारण इनकी दशा इतनी दयनीय थी कि इन लोगो को ऋण भी उपलब्ध नहीं हो पाता था। यही एक प्रमुख कारण था कि दो फसलो के बीच के समय मे इनकी गुजर बसर बडी ही कठिनाई से हो पाती थी। यद्यपि ये लोग अधिकाशत ऋणग्रस्त नही थे क्योकि बिना द्रव्याधार के इन्हें ऋण मिलता ही नहीं था परन्तु ग्राम के गरीब से गरीब किसान की अपेक्षा इनकी आर्थिक हालत अत्यन्त गिरी हुई थी।[४८]

इन मजदूरो की मुख्य खुराक मक्का और जौ थी जिसे ये लोग गाँव के समृद्ध किसानो के घर से छाछ माँग कर उसके साथ खाते थे। इन लोगो को मुश्किल से एक समय का भोजन ही मिल पाता था। दूध, घी, शाक भाजी इनके लिए त्योहारो की चीज थी। गाँव मे बुने मोटे कपडे के वस्त्र ही इनका पहनावा था। उनके पहनावें में धोती, बगलबन्दी, पछोडा और सर्दियो म एक रजाई होती थी। बहुत कम के पास यह सब होता था तथा अधिकाश की पोशाक खाली धोती ही होती थी।[४९]

कपास ओटने व गाँठें बनाने के कारखाने खुल जाने तथा रेल्वे वर्कशाप के अजमेर मे स्थापित होने पर बहुत से श्रमिक अपने घरबार छोडकर शहरो मे काम करने चले आए थे। अजमेर रेल्वे वर्कशॉप के मजदूरो म उत्तर-पश्चिमी प्रान्तो के सभी भागो से और पजाब के कुछ भागों के मजदूर नौकरी करने आए थे। अजमेर के श्रमिक जबतक कि अकाल की भयावहता से वे बाध्य नही हो जाए, दूसरे स्थान पर काम करना पसद नही करते थे।[५०]

शहर या कस्बे का मजदूर खेतिहर मजदूरो से कुछ बेहतर था। उसे अपना वेतन नकदी मे मिला करता था। शहरो मे एक सामान्य मजदूर का मासिक वेतन पाँच या छ रुपए होता था। इसके अतिरिक्त उसकी पत्नी अनाज पीस कर, पानी भर कर या अन्य शारीरिक श्रम से कुछ न कुछ अतिरिक्त उपार्जन कर लेती थी। खेतिहर मजदूरो की अपेक्षा नौकरी पेशा मजदूरो को ऋण मिलने में भी आसानी रहती थी, परन्तु ऋण की दरें यहाँ भी बहुत थी। अजमेर के सूदखोर उचित ब्याज दर और धन की सुरक्षा की अपेक्षा अधिक वसूल करने की नियत से अपनी रकम खतरे मे डालने से भी नही हिचकिचाते थे। शहरी जीवन ने मजदूर के जीवन मे मौज शौक का वातावरण पैदा कर दिया था। वह अपने दायरे मे सभी व्यसन का उपयोग करता था। एक तरह से उसने नई आर्थिक जिम्मेदारियाँ पैदा कर अपनी आर्थिक स्थिति और भी खराब करली थी। कुछ स्थानो पर कपास ओटने की फैक्टरियाँ और नए नए कारखाने खुलने के कारण मजदूरो की आवश्यकता बढ गई थी अतएव मजदूरो को काम एव अच्छा वेतन सुलभ हो गया था। परन्तु शहरी जीवन के दुर्व्यसनों ने उसे इस तरह घेर लिया था कि उसके वेतन का एक बडा भाग शराब पर खर्च होता था या शादी और मौसर इत्यादि मे नष्ट हो जाता था। वह अंग्रेजी मिलों के बने धोती जोडे, जाकेट या बण्डी पहनता था। उसके रहन-सहन का स्तर निस्सदेह खेतिहर मजदूर की अपेक्षा कही अधिक अच्छा था। परन्तु अन्त दोनो का एक ही सा था। यदि एक तरफ खेतिहर मजदूर को रोजगार के अभाव मे दयनीय जीवन बसर करना पडता था तो दूसरी ओर शहरी मजदूरों को अपनी फिजूलखर्ची के कारण कर्जदारो के कडे तकाजो का सामना करना होता था।[५१]

औद्योगिक कामधधों में अकाल के वर्षों के अतिरिक्त किसी तरह के ह्रास के सकेत नहीं मिलते थे। औद्योगिक व्यवसाय में प्रमुख धन्धे बुनाई, रगाई, पीतल के बर्तनों का निर्माण तथा लुहारी, सुनारी, सुथारी व चमडे के काम मुख्य थे। देशी कपडे की बढती हुई माँग ने बुनकरो को रोजगार के अच्छे अवसर प्रदान कर रखे थे, जबकि रगसाजी स्थानीय कलात्मक रोजगार था। यद्यपि यूरोपीय रासायनिक रगों का इस उद्योग पर अत्यधिक बुरा प्रभाव पडा था परन्तु अजमेर में तबतक वे लोक-प्रिय नहीं हुए थे। लुहार और सुनार की रोजी सामान्यत अच्छी चल रही थी। गहनों का रिवाज बहुत था।[५२]

किसानों एव गाँव के मजदूरो की समृद्धि का आधार अच्छी फसल पर निर्भर करता था। परन्तु समृद्धि का यह आधार अजमेर जिले के लिए स्वप्नमात्र था। अंग्रेजी शासनकाल के इतिहास मे अच्छी फसल का कहीं भी लिखित उल्लेख नहीं मिलता है। इन दोनों ही वर्गों का हित समान ही सा था। प्राप्त आँकडो के आधार पर यह कहा जा सकता है कि अकाल का एव वर्ष किसान और खेतिहर मजदूर पर

इतनी गहरी मार करता था कि उसकी पूर्ति एक अच्छी फसल नही कर पाती थी। एक अकाल की मार को पूरा करने मे इन्हे दस वर्ष लगते थे और वह भी उस हालत मे जबकि उन दस वर्षों मे दूसरा अकाल न पडे।[५३]

किसानो का ज्यादा समय सूखे एव अकाल मे ही गुजरता था। इन प्राकृतिक विपदाओ तथा अन्य कई कारणो से किसान वर्ग गहरे कर्जे मे डूबा हुआ था, परन्तु अधिकाश खेतिहर मजदूर कर्जदारी से मुक्त थे। अजमेर सब डिवीजन के पजीयन आँकडे इस तथ्य को प्रकट करते हैं कि भारी ऋणग्रस्तता के फलस्वरूप किसान खेतों का विक्रय या बधक अधिक करने लगे थे और यह प्रतिवर्ष बढता ही जाता था। पहले यह भी सदेह किया जाने लगा था कि किसान पुरानी प्रथा के अनुसार कदाचित् खाद्यान्न की जमाबन्दी करने लगा हो, परन्तु इस दिशा मे यदि निष्पक्ष जाँच की जाती तो यह तथ्य छुपा नही रहता कि जमाबन्दी के नाम पर किसानों ने केवल पीडाए तथा गरीबी बटोर रखी थी और समृद्धि एव ऐश्वर्य का सपना उनके निकट नही फटक पाया था। वे वास्तव मे अत्यत ही अरक्षित जीवन यापन कर रहे थे। अधिकाश किसानो की आय जीवनोपयोगी आवश्यकताओ की पूर्ति तक मे अपर्याप्त थी। कुछ किसान अच्छा खा पी लेते थे परन्तु ऐसे किसानो की सख्या गिनी चुनी थी।[५४]

जिले के दूसरे कृपको की भाँति, उन दिनो मेरवाडा का किसान भी कठिनाई से दिन गुजार पाता था। वह अच्छी फसल के दिनो म अपनी अतिरिक्त आय खर्च कर डालता था और जब खराब दिनो के बादल मडराते तो उसके लिए साहूकार से ऋण लेने के अलावा और कोई दूसरा चारा शेष नही रहता था, परन्तु यह ऋण की राशि और ब्याज की दरें कदाचित् ही उससे चुक पाती थी। इस भूभाग की प्राकृतिक बनावट एव इसकी भौगोलिक स्थिति ही ऐसी थी कि जिसमे उसकी हालत कभी अच्छी नही हो सकती थी। जिले मे अच्छी फसल भूले भटके ही कभी-कभी होती थी अन्यथा यहाँ निरतर सूखे एव अकाल वर्षों का ताता लगा रहता था और इस वर्ग की ऋणग्रस्तता का यह सबसे प्रमुख एव महत्वपूर्ण कारण था। यद्यपि वे हाथ बुन रेजे के वस्त्रो से सज्जित अवश्य थे तथापि उनका यह पहनावा महाराष्ट्र या बरार के किसानो की तुलना मे पोशाक नही कहा जा सकता था। उनकी आय मात्र गुजर बसर जितनी ही पर्याप्त थी, इससे सुख सुविधा जुटा पाना सभव नही था। कर्नल हॉल और डिक्सन ने इन लोगो को लूटपाट के धन्धे से हटाकर खेती मे जुटा दिया, यह भी कम आश्चर्य की बात नही थी।[५५]

मेरवाडा के खेवतदारो के इतिहास पर दृष्टिपात करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह कृपक वर्ग अभीतक सभ्य समाज के अन्य कृपक वर्गों के स्तर तक उन्नति नही कर पाया था। एक सामान्य सार्वेक्षक को ये लोग असभ्य वनवासी से प्रतीत होते थे। गाँवो म स्कूल खोले गए थे व नई पीढी लिखना पढना सीख रही थी।

जिले के अधिकाश पटवारी मेर और रावत थे और इस बात का भरसक प्रयत्न किया गया था कि गाँवो की स्कूलो से निकले छात्रो को ही विशेषकर मेरो और रावतो को पटवारी के पदो पर नियुक्त किया जाए। मेर युवक जो मेरवाडा बटालियन मे सैनिक अनुशासन की शिक्षा ग्रहण कर चुके थे, अपने गाँवो को लौटने पर अपने साथ सभ्यता के अकुर साथ ले गए थे जिसका इन गाँवो पर प्रभाव स्पष्ट दिखता था।[४६]

मेरवाडा के ग्रामवासियो के बारे मे कर्नल डिक्सन ने यह अभिमत प्रकट किया है कि "मेर लोग विश्वासपात्र, दयालु और उदार चरित्र के होते है और अपनी जाति से अविच्छिन्न रूप से जुडे रहते थे तथा एक दूसरे को परिवार का व्यक्ति मान कर चलते हैं।"[४७] सैनिक विद्रोह के समय वे अंग्रेज सरकार के प्रति वफादार बने रहे थे।[४८]

मेरवाडा मे ब्यावर का एक ही बडा कस्बा था। इस नगर की समृद्धि एव व्यवसायिक प्रतिष्ठानो की स्थापना से मेरवाडा के लोगो की समृद्धि मे भी बहुत योगदान प्राप्त हुआ था। औद्योगिक विकास के साथ मजदूर की स्थिति मे भी परिवर्तन आया था। उसके लिए रोजगार की सुविधाए सुलभ हो गई थी। ब्यावर की समृद्धि का प्रभाव जिले के लोगो पर पडना भी स्वाभाविक ही था।[४९]

एक औसत ग्रामीण मजदूर परिवार मे चार सदस्य होते थे। एक मजदूर परिवार की औसत वार्षिक आय ७३ रुपए के लगभग हुआ करती थी अर्थात् मासिक औसत ६ रुपए प्रति परिवार का अनुमान लगाया जा सकता है। मेरवाडा के खेतिहर मजदूरो और नया नगर के श्रमिको के वेतन मे कोई विशेष अन्तर नहीं आया था। मेरवाडा के खेवतदार खाने-पीने की चीजो मे इन मजदूरो की अपेक्षा अच्छी स्थिति मे थे। यह कहा जा सकता है कि मेरवाडा के खेवतदारो को मजदूरो की अपेक्षा ज्यादा सुख सुविधाए उपलब्ध थी। इसका मूल कारण कदाचित् यह हो सकता है कि मजदूरों के पास अपने खेत नही थे जिन पर उन्हें आसानी से ऋण उपलब्ध हो सकता था। साधारण श्रमिक की पोशाक हाथ बुने मोटे कपडे (रेजे) की होती थी।[५०]

अकाल अथवा सूखे की स्थिति पैदा होने पर ग्रामीण मजदूर को किसी तरह की राहत उपलब्ध नहीं हो पाती थी। उसे निश्चत रूप से अपने परिजनों एव घर बार सहित अन्यत्र जाना पडता था। प्रव्रजन के लिए उसका लक्ष्यबिंदु मालवा अथवा वह जिला था जहाँ कोई सरकारी निर्माण का काम बडे पैमाने पर चल रहा हो और उसे जहाँ आसानी से मजदूरी मिल सकती हो। उसके पास जमीन नहीं होने से ऋण प्राप्ति के साधन नगण्य से थे। इस दृष्टि से उसकी स्थिति मेरवाडा के खेवतदारो से अच्छी थी। बहुत कम श्रमिक कर्जदार पाए जाते थे। अपने भरण-पोषण एव गुजारे लायक वेतन उसे मिल ही जाया करता था, परन्तु वह इतना कम होता था कि मजदूर के लिए इस अल्प वेतन मे सुख सुविधाए जुटा पाना

सभव नही था। खाद्यान्नो के भावो के घटने बढने के अनुसार ही उसकी स्थिति बदलती रहती थी। यदि खाद्यान्न सस्ता होता तो उसका गुजारा आसानी से हो जाता था अन्यथा उसे भी कठिनाई का सामना करना पडता था। खेवतदारों व मजदूरो की स्थिति मे कोई विशेष फर्क नही था।[६१]

अंग्रेजो ने जानबूझकर भारतीय जनता की भावनाओ को ठेस पहुँचाने का कभी प्रयास नही किया। यद्यपि उनको स्वय के बारे मे यह मान्यता थी के वे एक श्रेष्ठ जाति के हैं उनकी अपनी सभ्यता भी श्रेष्ठ है और वे ईमानदारी के साथ पश्चिमी सभ्यता के वरदानो का वितरण पिछडे हुए पूर्व के लोगों को प्रदान करना चाहते थे। परन्तु वे यह बात भूल गए थे कि विदेशी शासको के अच्छे कदम भी स्थानीय जनता के मन में सन्देह उत्पन्न कर सकते हैं और उनका गलत अर्थ लगाया जा सकता है। अपनी इन परिस्थितिगत बाधाओ के होते हुए भी उन्होने कई ऐसे सुधार, जिन्हें वे बहुत ही आवश्यक समझते थे, लागू करने का प्रयास किया। इस दिशा मे अपने उत्साह के कारण उन्होने यह जानने की कोशिश भी नहीं की कि कौन से सुधार अविलम्ब आवश्यक हैं और कौन से सुधार बाद मे भी हो सकते हैं। इसके परिणामस्वरूप कई प्रश्नो पर जनता की धार्मिक भावनाओ को ठेस पहुँचना स्वाभाविक था।

हिन्दू समाज के कट्टरपथी तत्वो को अंग्रेजो द्वारा सती प्रथा की समाप्ति के प्रयास को अंग्रेजो के प्रति द्वेष एव विरोध का आधार बनाने मे हिचकिचाहट नही हुई। आज कोई भी इस बात से इन्कार नहीं कर सकता कि यह सामाजिक सुधार बहुत पहले ही लागू हो जाना चाहिए था और यह प्रथा सभ्य समाज के लिए एक अभिशाप थी। धार्मिक मामलो मे पूर्ण निष्पक्षता बरतने के उद्देश्य से अंग्रेज सरकार उन सभी प्रयासों से दूर रही जिन से हिन्दू एव मुसलमानो के मन मे उनके प्रति किसी तरह का द्वेष उत्पन्न हो सकता था। परन्तु कोई भी सभ्य प्रशासन मनुष्य को जीवित जलाने की प्रथा को कदापि सहन नहीं कर सकता है इसलिए ईस्ट इडिया कम्पनी के निदेशक इस अभिशाप को समाप्त करने के लिए उत्सुक थे। लार्ड विलियम बैंटिक ने इस प्रथा को बद करने का प्रयास किया। उन्हे उदार एव हिन्दू सुधारक राजा राममोहनराय और द्वारकानाथ टगोर आदि का समर्थन प्राप्त था। परन्तु दुर्भाग्य से तत्कालीन समाज मे ऐसे लोग गिने-चुने ही थे और अधिकाश हिन्दू समाज की यह मान्यता थी कि उनके किसी मामले मे हस्तक्षेप धर्म विरुद्ध हैं।[६२]

सन् १८३९ मे, सरकार की धार्मिक नीति मे एक महत्वपूर्ण परिवर्तन आया। भारत में दीर्घकाल से यह परम्परा चली आ रही थी कि राज्य, चाहे उसकी किसी भी धर्म मे मान्यता हो, वह सभी जातियो के तीर्थ स्थानो का परम्परागत सरक्षक माना जाता था और धार्मिक विवादो मे शासक के विभिन्न धर्मावलबी होने के बावजूद

भी उसको मध्यस्थता करनी पड़ती थी। इसी तरह औरंगजेब को हिन्दुओं के धार्मिक विवाद के मुद्दे, पेशवा को रोमन कैथोलिक पादरी के अधिकारों के बारे में निर्णय देना पड़ता था। इस परम्परागत प्रथा के अनुसार ईस्ट इंडिया कम्पनी के अधिकारियों के कंधों पर यह भार आना स्वाभाविक ही था कि वे हिन्दुओं के देवालयों एवं मुसलमानों की सुप्रसिद्ध अजमेर की दरगाह के संरक्षक का कर्तव्य निभाएं। अजमेर की दरगाह की देखरेख भी अंग्रेज अधिकारियों ने इसी उद्देश्य से अपने हाथों में ली थी।[६३] इन पवित्र स्थानों से सरकार की आय में वृद्धि ही हुई थी क्योंकि इनकी देखरेख इत्यादि में यात्रियों से प्राप्त धन में से नाममात्र की राशि ही व्यय होती थी।[६४] परन्तु कम्पनी की सरकार को अपने ही देश में लोगों के तीव्र विरोध के दबाव के कारण हिन्दुओं और मुसलमानों के धार्मिक स्थल उन्हीं जातियों के संरक्षण में छोड़ देने पड़े।[६५]

यहाँ मिशनरियों द्वारा ईसाई धर्म के प्रचार से जनता में रोष की भावना उत्पन्न होने लगी थी। उनके धर्म-प्रचार के अधिकार को चुनौती देने का प्रश्न नहीं था परन्तु ये लोग ईसा का संदेश प्रसारित करने तक ही सीमित नहीं रहे बल्कि ईसाई पादरी खुले आम हिन्दू मुसलमानों की धार्मिक परम्पराओं और उपासना पद्धति का मखौल उड़ाते थे। विक्षुब्ध जनता ने ईसाई मिशनरियों को अंग्रेज शासन का अंग माना क्योंकि बहुधा इन मिशनरियों के साथ पुलिस की व्यवस्था भी रहती थी।[६६]

यद्यपि मिशनरी बहुत ही कुशल अध्यापक होते थे, उनकी यह कुशल शिक्षण-पद्धति पुराणपंथी हिन्दुओं के लिए चिंता का विषय बन गई थी। ईसाई मिशन के अध्यापक बालकों के मानसिक विकास तक ही सीमित नहीं रहते थे अपितु उनका सर्वोपरि उद्देश्य उन पर ईसाई धर्म का प्रभाव डालना होता था। उनके मतानुसार ईसाई धर्म ही मुक्ति का केवलमात्र मार्ग था। उनका यह दावा था कि सम्पूर्ण सत्य का एकाधिकार इस धर्म के पास है और उनके इस अभिमत का एक ही अभिप्राय जो लोगों के समक्ष व्यावहारिक रूप से प्रकट होता था वह यह था कि पश्चिमी शिक्षा का उद्देश्य ही धर्म-परिवर्तन है। उदार हिन्दू यह मानकर संतोष कर लेते थे कि सभी धर्मों का एक ही उद्देश्य है, परमात्मा की प्राप्ति, परन्तु मुसलमान, जिनका दृढ़ विश्वास था कि अकेला उनका ही मजहब सच्चा मजहब है, यह रियायत देने को तैयार नहीं थे। अधिकांश हिन्दू समाज प्राचीन दर्शन से पूर्ण अनभिज्ञ था। उनका यह विश्वास था कि धार्मिक परम्पराओं का पालन और शास्त्रानुसार कर्मकाण्ड के आचरण से ही मुक्ति की प्राप्ति हो सकती है। अधिकांश हिन्दुओं की यह मान्यता थी कि यदि उसके पुत्रों ने उसकी मृत्यु के पश्चात् क्रियाकर्म नहीं किए तो उसकी कभी मोक्ष नहीं होगी और आत्मा भटकती रहेगी। मुसलमानों में ऐसी कोई भावना

नहीं थी। अतएव ईसाईमत-प्रचारकों और गैर ईसाई मतावलंबियों के बीच विवाद का न कोई हल और न कोई मध्यम मार्ग ही था। भारतीयों के मस्तिष्क में यह बात भी घर किए हुए थी कि उसके धार्मिक प्रतिद्वन्दी को सरकार का प्रत्यक्ष या परोक्ष सहयोग प्राप्त है। मिशनरियों की कार्यवाहियां केवल शिक्षण संस्थाओं तक ही सीमित नहीं थीं। ईसाई अध्यापक प्रतिदिन जेल में बंदियों को सामान्य ज्ञान एवं ईसाई मत की शिक्षा देने के लिए जाते थे और प्रति रविवार को बाईबल का उपदेश उन्हें सुनाया जाता था।[९७]

लोगों के इस संदेह को नए कानून (सन् १८४८) से भी बल मिला जिसके अनुसार सभी कैदियों का भोजन एक स्थान पर बनने लगा और उन्हें एक साथ भोजन करने को बाध्य होना पड़ा। यद्यपि आज सामान्य रूप से जेलों में सभी बंदियों का भोजन कुछ कैदियों द्वारा एक जगह बनाया जाता है, परन्तु उन दिनों जातिगत कट्टरता अधिक थी। जेलों में जाति बंधनों का कैदियों द्वारा कड़ाई से पालन किया जाता था और प्रत्येक को अपना खाना बनाने की छूट दी हुई थी। इस नए नियम के अन्तर्गत एक जेल में सभी कैदियों के लिए ब्राह्मण रसोईया नियुक्त किया गया था। यह उच्चवर्णों के हिन्दुओं को अच्छा नहीं लगा क्योंकि ब्राह्मणों में भी कई उपजातियां थीं और दूसरों के हाथों का छुआ नहीं खाते थे।[९८] इस नए नियम का यह गलत अर्थ लगाया गया कि इसका उद्देश्य परोक्ष रूप से हिन्दुओं की जात-पांत नष्ट कर उन्हें ईसाई धर्म में परिवर्तित करना है। पटवारियों या गांवों में सरकारी हिसाब तैयार करने वाले कारकूनों को हिन्दी या नागरी लिपि सीखने के लिए मिशनरी स्कूल में भेजा था। उनकी शिक्षा वहां हिसाब किताब या नागरी लिपि तक ही सीमित नहीं रहती थी। मिशनरी ईसाई मत का प्रचार करने को नियुक्त किए जाते थे। न्यायाधीश देशी पादरी को (जिसे हिन्दू धर्मपरिवर्तन के कारण हीन दृष्टि से देखते थे) जेलों में बंदियों के बीच प्रतिदिन ईसा का उपदेश सुनाने भेजा करते थे। नवयुवक पटवारी अपने विभागीय प्रशिक्षण के बाद गांवों में बाईबिल की प्रतियों के साथ लौटा करते थे। इन सब कारणों की वजह से सामान्य जनता का यह दोषारोपण करना कि सरकार के इरादे नेक नहीं हैं स्वाभाविक था।[९९]

जनता ने सन् १८५० के एक्ट २१ को उपर्युक्त पृष्ठभूमि में ही लिया। इस कानून के अनुसार एक धर्मपरिवर्तित नव ईसाई को अपनी पैतृक संपत्ति में हिस्सा पाने का अधिकार प्रदान किया गया था। सिद्धांतत इस कानून के प्रति कोई मत-भेद नहीं हो सकता कि किसी भी व्यक्ति द्वारा अपनी उपासना-विधि में या धार्मिक विचारों में परिवर्तन मात्र से ही उसे पैतृक संपत्ति से वंचित रखा जाए जबतक कि वह देश के प्रचलित नियमों के विरुद्ध आचरण करे। परन्तु हिन्दू एवं मुसलमान दोनों ने ही इसे नव-ईसाईयों के लिए रियायत के रूप में लिया। हिन्दू धर्म में धर्मत्याग का

कोई स्थान नही है। इसलिए उसे इस नए कानून से कोई लाभ नही मिला और न मुसलमानों को इस कानून से किसी तरह का लाभ मिला क्योंकि उनकी शरीयत में भी मजहब छोडने वाले की सम्पत्ति ग्रहण करने का खुला निषेध है। अतएव इस कानून को दोनो ही मतावलबियों ने अपने पर प्रहार के रूप म लिया। हिन्दुओ के लिए यह कानून इसलिए भी घातक माना गया क्योकि इसके अनुसार नव ईसाई पैतृक सपत्ति बिना किसी उत्तरदायित्व के ग्रहण कर सकता था। वह अपने पिता की सम्पत्ति का स्वामी बिना किसी तरह उसकी अन्तिम क्रिया कर्म किए ही बन सकता था।[70] हिन्दू के मन मे यह भावना जम जाना स्वाभाविक ही था कि इस कानून ने उस पर दुहरीचोट की है। एक तो उसका कमाऊ बेटा छिन जाता है, दूसरा वह उसके पिंडदान व अन्तिम क्रिया कर्म सम्पन्न कराए बिना ही उसकी सम्पत्ति का स्वामी बन सकता है। मुसलमानो के लिए यह कानून एक तरह से धर्मत्याग को प्रोत्साहित करने वाला कदम था क्योकि मुसलमान लोग भी मिशनरी सकट से मक्त नही बचे थे।[71]

इस वातावरण के कारण पुण्यार्थ एव सस्थानो की गतिविधियो तथा जनपयोगी कार्यों के बारे मे भी लोगो के मन मे सदेह एव शका उत्पन्न होने लगी थी। किसी भी भवन या सडको के निर्माण कार्य के दौरान यदि एकाध देवालय बीच मे पड़ जाता तो उन्हें हटा देना पडता था। परन्तु लोगो ने आवागमन की इस सुविधा को नजरों से ओझल करके इन्हें भी विक्षेप का कारण ठहराया, मानो ये भवन और मार्ग, देवालयो को गिराने के निमित बनवाए जा रहे थे। सरकारी अस्पतालो के बारे में भी लोगो की ऐसी ही अप्रिय भावना बन गई थी।[72]

सामान्य जन-साधारण की अग्रेजी प्रशासन के प्रति अनुकूल भावनाए नही थी। अजमेर शहर के नगण्य शिक्षित समुदाय ने अग्रेजो के सामाजिक सुधार कानूनो एव पश्चिमी शिक्षा प्रणाली लागू करने की नीति का स्वागत किया था। इस बात मे भी सदेह है कि बाबू समुदाय में अग्रेजी शासन के प्रति एक मत रहा हो। इन लोगों मे भी बहुधा शासन की निरकुशता एव अनुदारता की कटु आलोचना घर किए हुए थी। एक शताब्दी से भी अधिक काल तक आपसी सम्पर्क एव सम्पर्क के बाद भी यह स्थिति थी कि हिन्दू और अग्रेजो मे आपसी व्यवहार स्थापित नही हुआ था।[73] शासक वर्ग द्वारा अपने को सामाजिक रूप से शासिता से पृथक् रखने की नीति के कारण उनके मन म शासक वर्ग के प्रति घृणा की भावनाओ ने घर कर लिया था। अग्रेज अधिकारियो के दभ और अपने मातहत भारतीय कर्मचारियो के प्रति हिकारत भरे दृष्टिकोण ने दोनो के मध्य एक खाई पैदा कर दी थी। अग्रेजो का भारतीयों को अपने से अलग करने मे बहुत बडा हाथ रहा है।[74] अजमेर-मेरवाड़ा म प्रशासनिक उच्च पदो से जिस व्यवस्थित ढग से भारतीयो को अलग रखा गया था, उसके कारण भी असतोष काफी बढ़ गया था।

अंग्रेजो ने सदा ही भारतीयो के प्रति—चाहे वह उच्चपदासीन अधिकारी हो अथवा मातहत निम्न स्तरीय कर्मचारी—व्यवहार मे कोई अन्तर नहीं रखा। केवल इतना ही नहीं बल्कि छोटे कर्मचारियो की तुलना मे ऊँचे पदासीन भारतीयों को उनके अनादर एव लाछनों का अधिक प्रहार सहना पडता था। अंग्रेजों द्वारा प्रचलित कानून को कभी व्यक्ति की प्रतिष्ठा को ध्यान मे रखते हुए व्यवहार में नहीं लाया जाता था। गरीब किसानो में भी, जिनके हितों की रक्षा के लिए इन कानूनों को बनाया गया था, ये लोकप्रिय और हितकारी सिद्ध नहीं हुए थे। इसका कारण यह नही था कि कानून मे कोई बुराई थी परन्तु इनकी अप्रियता का कारण यह भी था कि कानूनी अदालतें भ्रष्ट हो गई थी।[७६] इसके अतिरिक्त अंग्रेजी कानून की प्रक्रिया इतनी जटिल एव पेचीदा थी कि वह साधारण गरीब एव अशिक्षित किसान के बस की नही थी। उसकी आर्थिक स्थिति ऐसी नहीं थी कि वह वकील नियुक्त कर सके। पुलिस और निम्न अधिकारियो का भ्रष्ट व बदनाम होना भी इन अदालतो व कानून के लोकप्रिय नही होने का कारण है।[७६] कानूनी अदालतें पैसे वालो के हाथ का खिलौना व अन्यायपूर्ण शोषण का साधन बन गई थी। साक्षियों के बनावटी दस्तावेज व झूँठे दावे उस प्रक्रिया के अन्तर्गत सम्भव थे।[७७]

परन्तु सबसे अधिक बदनाम भूमि विक्रय सम्बन्धी कानून था। पुरानी प्रथा के अनुसार सभी व्यावहारिक रूप से भूमि अहस्तांतरित मानी गई थी। अंग्रेज सरकार ने इसके स्थान पर यह कानून बनाया कि जो ऋण चुकाने मे असमर्थ हो उसकी भूमि बेची जा सकती है। लगान पहले से ही इतना अधिक निर्धारित था कि जमींदार उसे चुकाने मे असमर्थ थे। अनुकूल मौसम में उन्हे थोडा बहुत प्राप्त हो जाता था तो प्रतिकूल दिनों म उनकी बहुत ही दयनीय स्थिति हो जाती थी। इस कानून का किसान और तालुकदार दोनो पर ही गहरा प्रहार हुआ।[७८] यही गहरी जमी हुई घृणा और अविश्वास की भावना सन् १८५७ मे सैनिक विद्रोह के रूप मे फूट पडी थी और बाद मे इसी के फलस्वरूप राजस्थान मे राष्ट्रीय गतिविधियो ने प्रखर रूप धारण किया था।

अध्याय ८

१. सी० सी० वाट्सन—राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटीयर्स, खण्ड १ ॥ (१९०४) पृष्ठ १३।

२. जे० डी० लाटूश–बन्दोबस्त रिपोर्ट (१८७४) पृ० २६।

३. एफ० विल्डर द्वारा मेजर जनरल डेविड ऑक्टरलोनी को पत्र, दिनाक २६ सितम्बर, १८१८।
४. एफ० विल्डर द्वारा मेजर जनरल डेविड ऑक्टरलोनी को पत्र दिनांक २६ सितम्बर, १८१८। जे० डी० लाटूश—बन्दोबस्त रिपोर्ट (१८७४) पृ० २०।
५. जे० डी० लाटूश—बन्दोबस्त रिपोर्ट (१८७४) पृ० २०।
६. उपर्युक्त।
७ एडमॉन्सटन–सैटलमेन्ट रिपोर्ट दिनाक २६ मई, १८३६।
८. कर्नल डिक्सन द्वारा सचिव, उत्तर-पश्चिमी सूबा सरकार को पत्र-सख्या २७४।१८५२।
९. सी० सी० वाट्सन राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटीयर्स, खण्ड १ ए (१९०४) पृ० २२।
१०. कमिश्नर, अजमेर-मेरवाडा द्वारा चीफ कमिश्नर को पत्र, दिनाक २६ फरवरी, १८९१।
११. आर० केवेंडिश द्वारा रेजीडेन्ट राजपूताना व देहली को पत्र, दिनाक १० जुलाई, १८२८।
१२. एफ० विल्डर द्वारा मेजर जनरल डेविड ऑक्टरलोनी को पत्र दि० २६ सितम्बर, १८१८।

सर एलफ्रेड लॉयल–भूमिका राजपूताना गजेटीयर्स १८७९।
१३. आर० केवेंडिश द्वारा रेजीडेन्ट राजपूताना व देहली को पत्र दिनाक ११ जुलाई, १८२६।
१४. जे० थामसन सचिव, उत्तर-पश्चिमी सूबा सरकार द्वारा सदरलैंड कमिश्नर अजमेर को पत्र, मई १८४१।
१५. सी० सी० वाट्सन राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटीयर्स, खण्ड १ ए अजमेर-मेरवाडा (१९०४) पृ० ९०। लाटूश-गजेटीयर्स ऑफ अजमेर-मेरवाडा (१८७५) पृ० ५०।
१६. आर० केवेंडिश द्वारा रेजीडेन्ट राजपूताना व मालवा को पत्र दिनाक १० जुलाई, १९२९।
१७. लाटूश–बन्दोबस्त रिपोर्ट (१८७४) अनुच्छेद १२९।
१८. इस्तमरारदारी एरिया इनक्वायरी कमेटी रिपोर्ट अध्याय ४, पृ० ११।

१६. उपर्युक्त—अध्याय ४ पृ० २०।

२० उपर्युक्त—अध्याय ५ पृ० १६।

२१ सी० सी० वाट्सन, राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटीयर्स, खड १-८ (१६०४) पृ० १३।

२२ डुरेलपॉक—मेडीको टोपोग्राफिकल अकाउन्ट अजमेर-१६००-पृ० ८३१।

२३ फाइल क्रमाक ७३३ खड २ (रा० रा० पु० म०) सी० सी० वाट्सन राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटीयर्स, खड १, अजमेर मेरवाड़ा पृ० १३ तथा ७० से ७७ (१६०४)।

२४ सी० सी० वाट्सन, राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गजेटीयर्स, खड १ ए पृ० १७। (१६०४) सन् १८६८-६६ के अकाल वर्ष मे जिला छोड़कर जाने वालों की सख्या २३३४५ कही जाती है। अजमेर से १४१५२, तथा मेरवाड़ा से ६,६११ व्यक्ति बाहर गए थे। अक्टूबर १८६८ से बाहर जाने का क्रम प्रारम्भ हुआ और मार्च १८६६ तक जारी रहा। बाहर जाने वाले व्यक्तियो मे से १०६५० वापस लौट आए थे। निम्न तालिका में सन् १८६०-६२ के अकाल के समय बाहर जाने वाले व्यक्तियों, मृतकों अथवा पुन न लौटने वालो के आंकडे प्रस्तुत हैं—

जिला	निष्क्रमण	वापसी	मृतक अथवा बाहर रह गए।
अजमेर	३२२१६	२३७६३	८४५६
मेरवाड़ा	६२०६	४५५४	१६५३
	३८४२८	२८३१७	१०१११

सन् १८६८-७० के अकाल वर्षों मे जिले मे कई राहत कार्य खोले गए थे। सरकार ने राहत कार्यों पर ७५६,४०७ रुपया व्यय किया था। सार्वजनिक निर्माण विभाग के अन्तर्गत इन राहत कार्यों पर औसतन ६७४२ व्यक्ति प्रतिदिन कार्य करते थे। सन् १८६०-६२ के अकाल वर्षों में राहत कार्यों पर कार्य करने वालो की सख्या प्रतिदिन ११६८२ थी तथा सरकार ने इस पर १२५६११६ रुपया खर्च किया था। डुरेल पॉक, मेडीको टोपोग्राफिकल अकाउट, अजमेर-मेरवाड़ा १६०० पृ० ८३-८४।)।

२५ सन् १६१६ मे आयोजित देहली अजमेर राजनीतिक कांफ्रेंस मे अर्जुनलाल सेठी का भाषण। फाइल क्रमांक ८५-ए (रा० रा० पु० म०)।

२६ खालसा-भूमि का लगान कदापि कम नहीं था। जनता अधिकांशत कृषि पर निर्भर थी और वह बडी ही कठिनाई से गुजारा कर पाती थी। उनका फसलो के अलावा आजीविका का कोई और साधन नहीं था। प्रत्येक सूखे के साल का यह परिणाम होता था कि इससे जमा खोरों को अपने पुराने कर्जे की वसूली का अवसर प्राय मिल जाया करता था। जे० डी० लाटूश अजमेर-मेरवाडा का गजेटीयर्स १८७५-पृष्ठ ११३ एव ११४।

२७ परराष्ट्र एव गुप्त विचार-विमर्श दि० ३०–४–१८५८ क्रमाक १४ (रा० रा० पु० म०) "कमिश्नर के अनुसार सम्पूर्ण खालसा क्षेत्र में लोगो के घरो की हालत नाजुक हो गई थी तथा तालुकादारियो के मुकाबले मे यहाँ के किसानो की हालत बडी ही दयनीय थी।" जे० डी० लाटूश अजमेर-मेरवाडे गजेटीयर्स १८७५-पृ० ६६।

२८ लाटूश के अनुसार अकाल के वर्षों मे जिले से लोगो के निष्क्रमण की गति दिनोंदिन बढ रही थी। लोगों की स्थिति इतनी खराब हो गई थी कि भूख के कारण वे खेजडे की छाल को पीस कर आटे मे मिलाकर रोटियां बनाकर खाने को मजबूर हो गए थे।
लाटूश अजमेर-मेरवाडा गजेटीयर्स (१८७५) पृ० ११०।)

२६. फाइल क्रमाक ७३३ (रा० रा० पु० म०)।

३० फाइल क्रमाक ५६६ पृ० १३ (रा० रा० पु० म०) पृ० १३, अकाल-क्षेत्र के बीच अजमेर पृथक् पड जाता था, उसके पास खाद्यान्न वस्तुओं की पूर्ति का कोई साधन नहीं था, घास-चारा इतना महगा हो गया था कि यह खाद्यान्न वस्तुओं से भी महगे भाव पर उपलब्ध हो पाता था। इन दिनों मे न तो बैलगाडिया ही चला करती थी और न राजपूताना व मध्य भारत की तरह बजारों के सामान लदे काफिले ही घूमते थे। लोगो की दशा दयनीय हो गई थी तथा साहूकारो ने उन्हें ऋण देने से भी हाथ खींच रखा था। कई स्थानो पर मवेशी बिल्कुल नहीं बचे थे। ऐसी स्थिति मे पुरुषो को बैल की तरह जुतकर जमीन जोतने के लिए बाध्य होना पडता था।

लाटूश-अजमेर मेरवाडा गजेटीयर्स (१८७५) पृ० १०६,११०,१११।

३१ जी० एस० ट्रेवर चीफ कमिश्नर, अजमेर-मेरवाडा द्वारा सचिव, भारत को पत्र आबू दि० ७ नवम्बर, १८६२ पत्र सख्या ११७८ ७३५।

३२ उपर्युक्त।

३३. सन् १८६८–७० के अकाल वर्ष मे जिले मे कतिपय राहत कार्य प्रारम्भ किए गए थे उन पर सरकार ने ७,५६,४०७ रुपए व्यय किए थे तथा राहत कार्यों में औसतन ९७४२ व्यक्तियो को सार्वजनिक निर्माण विभाग के अन्तर्गत दैनिक मजदूरी मिलती थी। सन् १८९०–९१ के अकाल वर्ष मे दैनिक मजदूरी करने वाले लोगों की सख्या ११,६८२ थी तथा राहत कार्यों पर १२,५४,११६ रुपए सरकार द्वारा व्यय किए गए थे। सन् १८९०–९२ के वर्षों मे तीन नि शुल्क भोजनगृह भी खोले गए थे जिन पर सरकार ने ३३९४ रुपए ६ आने ३ पाई व्यय किया था। पर्दा नशीन महिलाओ, विधवाओं एव बच्चो को जो जाति अथवा वश के कारण खुले मे मजदूरी करने मे असमर्थ थे, घरेलू काम भी दिए गए थे, क्योकि इनके भरण पोषण का कोई सहरा नहीं था। अक्टूबर, १८९१ मे प्रारम्भ किए गए राहत कार्य मे ४,७९,२७९ व्यक्ति कार्य करते थे जिनमे से ४,७९,२६७ अजमेर तथा १२ मेरवाडा से थे। इन पर ७,७५,९२ रुपए व्यय हुए थे। इनमे ७७,८८५ रुपए अजमेर तथा १०७ रुपए मेरवाडे में खर्च किए गए थे। डुरेल पॉक, मेडीको—टोपोग्राफिकल अकाउट अजमेर-१९०० पृ० ८४ तथा ८५।

३४ बालमुकन्ददास एव इमामुद्दीन सयुक्त रिपोर्ट दि० २०–१०–१८९२

३५. फाइल स० ५९६ '१८९२–१९१२" (रा० रा० पु० म०)।

३६ सन् १८६८–६९ मे अजमेर-मेरवाडे से बाहर जाने वाले व्यक्तियो की सख्या २३३४५ थी। इनमे से १०६५० व्यक्ति वापस लौटे थे। सन् १८९०–९६ मे यहाँ से ३९४२८ व्यक्ति बाहर गए जिनमें से वापस लौटने वालो की सख्या २८३१७ थी। डुरेल पॉक, अजमेर मेरवाडा का मेडीको टोपोग्राफिकल अकाउट ११९०–पृ० ८३।)

३७ लाटूश का मत है कि सन् १८६६ मे राजस्व वसूली की नई प्रक्रिया के कारण भी ऋणग्रस्तता ने नया स्वरूप ग्रहण कर लिया था। नई राजस्व व्यवस्था के अन्तर्गत सरकारी लगान के लिए केवल ग्राम-मुखिया को उत्तरदायी ठहराया गया था। इस कारण उसे अकाल के दिनों में खुद के नाम पर भारी रकमे कर्जे पर लेनी पडी थीं। यद्यपि इस राशि को बाद में जातियो के नाम चढा दिया गया था परन्तु न्यायालयो ने इसे नियमानुसार नहीं स्वीकार किया तथा यह कर्ज की राशि ग्राम-मुखिया के मत्थे मढ दी गई थी और उसकी निजी सपत्ति से वसूली की डिगरियां जारी की जाने लगी थी, जब कि यह राशि ग्राम के लिए कर्ज ली गई

थी। बन्दोबस्त के समय खालसा ग्रामो मे बधक ऋण राशि ११,५४३७ रुपए थी।

लाट्स अजमेर मरवाडा गजेटीयर्स (१८७५) पृ० ११४। फाइल स० ५६८।

३८ फाइल सख्या ७३३ खड २ (रा० रा० पु० म०)।

३९ उपर्युक्त।

४० बालमुकुददास एव इमामुद्दीन द्वारा सयुक्त रिपोर्ट दिनाक २०-१०-१८७२ (रा० रा० अभिलेखागार)।

४१ सन् १८८१ से १८८६ के वर्षों मे जो समृद्धि के वर्ष कहलाते थे बधक रखे गए खेतो का वार्षिक औसत क्षेत्रफल ६०० एकड भूमि था। सन् १८८७-८८ का वर्ष अकाल वर्ष था तथा उस वर्ष से बधक ऋण में वृद्धि के आकडे निम्न थे—

१८८७-८८	=१२०० एकड
१८८८-८९	=२००० एकड
१८८९-९०	=३४०० एकड
१८९०-९१	=३१०० एकड

उपरोक्त आंकडे खालसा एव जागीर कृषि भूमि के हैं जो पजीयन किए गए थे। इनके साथ कतिपय अपजीयत बधक भूमि भी अवश्य रही होगी। उनके आंकडे उपलब्ध नही हो सके थे। कुल खालसा भूमि जो बधक थी, उसके आंकडे निम्न हैं —

वर्ष	क्षेत्रफल	बधक ऋण	वार्षिक सख्या
सन् १८७३	१२६०० एकड	रुपए ३४४०००	रुपए ६८०००
सन् १८८६	१५७०० एकड	रुपए ७०००००	रुपए ९१०००
सन् १८९१	२०००० एकड	रुपए ७०००००	रुपए १४०००

लगभग ७० प्रतिशत किसानो को कृषि योग्य भूमि सूखे एव अकाल के दिनों में बधक रख देनी पडी थी। मेरवाडा मे ६० प्रतिशत से अधिक सिंचित भूमि रहन रखी गई थी।

असिस्टेंट कमिश्नर अजमेर द्वारा कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा को पत्र, दिनांक २२ नवम्बर, १८९१ पत्र सख्या २१२९।

४२ लाट्स अजमेर-मेरवाडा गजेटीयस (१८७५) पृ ११४।

४३. लाटूश के अनुसार अजमेर मे ब्रिटिश प्रशासन की नीति सदा ही धनाढ्य लोगो के पक्ष मे रही थी। विल्डर ने अपने सेठों को अजमेर मे बसने के लिए प्रोत्साहित किया था। यहाँ तक कि कर्नल डिक्सन भी इसी मत के थे कि जल की पूर्ति के पश्चात् क्षेत्र की समृद्धि के लिए महाजन वर्ग को अजमेर मेरवाडा क्षेत्र मे बसाये जाने के लिए प्रशासन को प्रयत्न करना चाहिए। उनकी यह मान्यता थी कि महाजनो के हस्तक्षेप के बिना कृषि विकास संभव नही है।

४४ लाटूश बंदोबस्त रिपोर्ट (१८७४) पृ ८६, अनुच्छेद २०४।

४५. स्थानीय किसानो एव बनियो के बीच तीव्र असतोष की भावना घर किये हुए थी। इस असतोष का प्रमुख कारण यह था कि भूमि तेजी से किसानों के हाथो से निकल कर बनियो के चु गल मे फँसती जा रही थी। किसानो की आय के सभी स्रोत ऋणग्रस्तता मे लिप्त हो गए थे। प्रशासनिक सत्ता दिनोदिन शिथिल होती जा रही थी और किसानो के कष्ट निवारण मे असमर्थ थी। दीवानी अदालतें वास्तविक रूप से बनियों के हितो की रक्षा करती थी और किसानो की दृष्टि मे वे शोषण के प्रमुख साधन बन गए थे। ग्रामीणो मे यह भावना घर कर गई थी कि बनिये उनके साथ धोखा कर रहे थे और अदालतें भी उनके पक्ष मे थी। सरकारी सरक्षण से उसका विश्वास उठ गया था और वह पूर्णतया अपने ही साधन स्रोत पर निर्भर था। असिस्टेन्ट कमिश्नर के मतानुसार सितम्बर, १८९१ मे लूट की दुघटनाओ का मूल कारण यही था। किसानों ने भारी सख्या म सगठित होकर बनियो की दुकानो को लूट लिया था। इसके पीछे मुख्य उद्देश्य खाद्यान्न प्राप्त करना था और बनियो से प्रतिकार लेना था, अतएव उनके खाता बही और गोदाम नष्ट कर दिये गये थे।

लाटूश बंदोबस्त रिपोर्ट (१८७४) पृ ९९।

असिस्टेन्ट कमिश्नर द्वारा चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाडा को पत्र दिनाक २२ नवम्बर, १८९१ पत्र सख्या २१२९।

४६ फाइल सख्या ५६६ (रा रा पु म)।

४७ फाइल सख्या १६५ क्रमाक २०, पृ सख्या १० (रा रा पु म)।

४८ जी एच ट्रेवर चीफ कमिश्नर द्वारा सचिव, भारत सरकार को पत्र दिनाक ■ नवम्बर, १८९२ पत्र सख्या ११७८।

४९ उपर्युक्त।

५० फाइल सख्या १६५, क्रमाक सख्या २० (रा रा अभिलेखागार)।

५१ हरनामदास एव इमामुद्दीन की सयुक्त रिपोर्ट दिनांक २०-१०-१६२६ (रा रा पु म)।

५२ उपर्युक्त।

५३ लाटूश अजमेर-मेरवाड़ा गजेटीयर्स (१८७५) पृ ११३।

५४ सयुक्त रिपोर्ट हरनामदास एव इमामुद्दीन दि० २०–१०–१६२६ (रा. रा पु म)।

५५. लेफ्टिनेंट प्रीचार्ड, असिस्टेन्ट कमिश्नर अजमेर मेरवाडा की रिपोर्ट, दि. २०–१०–१८६२, पु १४ (रा रा पु म) लेखागार।

५६ फाइल न २६६ (रा रा पु म)।

५७ डिक्सन, स्केच ऑफ मेरवाडा (१८५०) पृ ३३।

५८ फाइल सख्या ६ (३), १८२१ चीफ कमिश्नरी कार्यालय, अजमेर।

५६. फाइल क्रमाक ५६६, १८६२ १६१२ (रा रा पु म)।

६० लेफ्टिनेंट प्रीचार्ड, असिस्टेन्ट कमिश्नर अजमेर मेरवाडा की रिपोर्ट दिनाक २०-१०-१८६२ (रा रा पु म)।

६१ उपर्युक्त।

६२. परराष्ट्र एव गुप्त विमर्श, सख्या २२ २३, ३० अप्रेल, १८५८ (रा रा पु म)।

६३. अजमेर कमिश्नर कार्यालय, फाइल सख्या ४२ (रा रा पु. म)।

६४. अजमेर कमिश्नर कार्यालय, फाइल सख्या ८५ (रा रा पु म)।

६५. रिसालदार अब्दुलसमद की घोषणा, रेजीडेंसी रिकॉर्ड फाइल सख्या ३ (८)-५३।

६६ अजमेर कमिश्नर कार्यालय फाइल सख्या (रा रा पु म)।

६७. शेरिंग, दी इण्डियन चर्च ड्यूरिंग दी ग्रेट रिबेलियन(१८५६)पृ १८४ ८५।

६८ प्रेसीस एन एकाउन्ट ऑफ दी म्युटिनीज इन अवध एण्ड ऑफ दी सीज ऑफ लखनऊ रेजीडेन्सी (१८५६) अनुसूची १२ पृ ५५६।

६६ शेरिंग-दी इण्डियन चर्च ड्यूरिंग दी ग्रेट रिबेलियन (१८५६) पृ १८६।

७०. अजमेर कमिश्नर कार्यालय, फाइल सख्या १४ (रा. रा पु म)।

७१ सन् १६२१ में आर्य समाज और अजमेर के वार्षिक अधिवेशन के अवसर

पर प्रोफेसर घीसूलाल धनोपिया का भाषण आर्य प्रतिनिधि सभा की पत्रिका, खंड ११ पृ ४८। (१६३१)।

७२ चीफ कमिश्नर द्वारा गवर्नर जनरल को पत्र दि ३० अप्रेल, १६०४ फाइल सख्या ८३।

७३ प्रोफेसर घीसूलाल का लेख "काजेज ऑफ दी इंडियन रिवोल्ट" राजपूताना हेराल्ड।

७४ रसल "माई डायरी इन इंडिया" (१८६०) खंड १ पृ १४६ प्रीचार्ड "म्यूटिनीज इन राजपूताना" (१८६०) पृष्ठ २७७।

७५ प्रीचार्ड "फ्रोम सिपाई टू सूबेदार" पृ ४१।

७६ उपर्युक्त पृ १२७-१२८।

७७ रायवस, उत्तर-पश्चिमी सूबा सम्बन्धी टिप्पणियां, पृ ७ (१८५८) (रा रा पु म)।

७८ अजमेर कमिश्नर कार्यालय, फाइल सख्या ८५ ए पृ ८८ १०० (राज. रा पु म)।

१०

१८५७ का विद्रोह और अजमेर

मई, सन् १८५७ में जब सैनिक विद्रोह आरम्भ हुआ तब कर्नल डिक्सन अजमेर-मेरवाड़ा के कमिश्नर थे। ये उत्तर-पश्चिमी सूबों के लेफ्टिनेंट गवर्नर के सीधे नियन्त्रण में थे। नीमच यद्यपि मध्य प्रांत के ग्वालियर में था तथापि राजपूताना के अन्तर्गत रखा गया था। नीमच के कमिश्नर का कार्य मेवाड़ के पोलिटिकल एजेन्ट के अधीन था। वह नीमच छावनी में ही रहते थे।[१]

उन दिनों राजपूताना में कोई रेलमार्ग नहीं था। कलकत्ता-लाहौर रेलमार्ग कानपुर से आगे तब नहीं पहुँच पाया था और बम्बई-अजमेर के बीच जो वर्तमान रेलमार्ग दिखाई देता है, उसका उस समय निर्माण नहीं हुआ था।[२] अजमेर से १६ मील की दूरी पर नसीराबाद छावनी में दो रेजीमेंट बंगाल नेटिव इन्फेंट्री १५ एवं ३० तथा फर्स्ट बम्बई कैवेलरी और पैदल तोपखाना बैटरी तैनात थी। नसीराबाद से केवल ६० मील दूर देवली छावनी में कोटा दस्ता तैनात था जिसमें इंडियन कैवेलरी की एक रेजीमेन्ट और इन्फेन्ट्री थी। भारतीय सैनिकों, घुड़सवार और पैदल सैनिकों की एक रेजीमेन्ट नीमच में थी जो नसीराबाद से १२० मील दूर था। अजमेर से सौ मील दूर एरिनपुरा में जोधपुर रियासत के अनियमित सैनिकों की पूरी पलटन तैनात थी जिसकी व्यवस्था जोधपुर रियासत के हाथों में थी। मेवाड़ में उदयपुर से पचास मील दूर खेरवाड़ा में अंग्रेज अधिकारियों के नियन्त्रण में भील पलटन थी।

मेरो की एक अन्य पलटन ब्यावर मे भी तैनात थी।[3] इस तरह उन दिनों राजपूताना म पाँच हजार भारतीय सैनिक थे और एक भी गोरी पलटन नही थी। केवल स्थानीय पलटनो के अतिरिक्त सभी सैनिक विद्रोह के लिए उत्कठित थे और बगावत की चिनगारी धधकने की बाट देख रहे थे। स्थिति इसलिए भी विकट थी क्योकि इस क्षेत्र में स्थित दोनो सैनिक छावनियो मे नियमित सैनिको के रूप मे केवल भारतीय सैनिक थे और उनको विद्रोह की लपटो से दूर रखना सभव नही था।[4]

राजपूताना मे इन पाँच हजार सिपाहियो की उपस्थिति और उनके नियत्रण के लिए एक भी गोरी टुकडी का न होना तत्कालीन ए० जी० जी० के लिए गभीर चिता का विषय बन गया था। १,२८,८५५ वर्ग मील भू-भाग में विस्तृत राजपूताना की रक्षा के लिए पाँच हजार सैनिक थे जोकि स्वय विद्रोह के लिए उत्कठित थे। इनको नियत्रित करने के लिए मात्र बीस गोरे सारजेंट वहाँ थे। निकटतम अग्रेजी सेना की छावनी बम्बई प्रेसीडेंसी म स्थित थी। ऐसी स्थिति मे वास्तव मे अग्रेजो के लिए भावी सकट गभीर चिता का विषय बन गया था।[5] परन्तु लारेन्स ने इस विकट परिस्थिति में भी अपना धैर्य कायम रखा। इस परिस्थिति के मुकाबले के लिए लारेंस ने सभी रियासतो को अपने अपने क्षेत्र में शाति बनाए रखने और अग्रेज सरकार की सहायता के लिए सेनाओ को तैयार रखने की अपील की थी।[6]

राजपूताना के केन्द्र में स्थित होने के कारण, अजमेर का सामरिक दृष्टि से बहुत महत्व था। यदि विद्रोहियो का अजमेर पर अधिकार हो जाता तो राजपूताना मे अग्रेजो के हितो को निस्सदेह आघात लगता। अजमेर शहर मे भारी मात्रा में गोला बारूद, सरकारी खजाना और सम्पत्ति थी। यदि ये सब विद्रोहियो के हाथ पड जाता तो उनकी स्थिति अत्यन्त सुदृढ हो जाती। अजमेर मे भारतीय सैनिको की केवल दो कपनिया ही तैनात थी और उन्हे आसानी से विद्रोह के लिए राजी किया जा सकता था। ऐसी हालत म अजमेर की सुरक्षा के दृष्टिकोण से ब्यावर से दो मेर रेजीमेंट बुलाली गई थी ताकि स्थानीय सिपाहियो द्वारा बगावत की योजना बनाने से पूर्व ही स्थिति पर नियत्रण किया जा सके।[7] एक मामूली पैदल सेना भी डीसा छावनी से अजमेर बुलाली गई थी।[8] कोटा पलटन को भी तत्काल अजमेर पहुँचने के आदेश भेज दिए गए थे,[9] परन्तु इन आदेशो के पहुँचने के पूर्व ही देवली स्थित पलटन ने आगरा के लिए कूच कर दिया था। कुछ दिनो से बाजारो और छावनियो मे दिल्ली से सदेशवाहक फकीरो के वेश मे पहुँच कर विद्रोह का सदेश प्रसारित कर रहे थे और सर्वत्र अफवाहो का बाजार गर्म था। अफसरो को यद्यपि यह विश्वास था कि उनके मातहत सिपाही दगा नही करेगे तथापि सपूर्ण राजपूताना म व्याप्त असतोष को देखते हुए उन पर पूरा भरोसा सभव नहीं था। आशका का एक और कारण यह भी था कि अजमेर मे बगाल नेटिव आर्मी की पन्द्रहवी रेजीमेंट थोडे समय पहले ही मरठ से आई हुई थी और इसमे पूरबिया सिपाही भरे पडे

थे।[१०] इनको विद्रोह के लिए भडकाना बहुत आसान था। अतएव इनकी जगह मेरो को तैनात किया गया। पहाडी, अर्धसभ्य तथा नीची जाति के होने के कारण मेरो की विद्रोहियो के प्रति किसी तरह की सहानुभूति नही थी। मेरो के कारण ही अजमेर मे विद्रोह न हो सका और सम्पूर्ण राजपूताना मे विद्रोही शक्तियां सबल न हो सकी।[११]

सौभाग्य से राजपूताना की सभी रियासतो ने पूर्णत अग्रेज मैत्री का परिचय देते हुए अग्रेजो की खुलकर सहायता की। इसका कारण यह भी था कि अग्रेजो के सरक्षण के कारण ही ये रियासतें मराठो और पिंडारियो के भयकर आतक और लूट से बच पाई थी।[१२] सन् १८०३ से लेकर सन् १८१७ तक इन चौदह वर्षों में मराठो ने इन राजघरानो को जिस तरह लूटा और अपमानित किया था उसका सहज अनुमान सभव नही है। सन् १८५७ तक के गत चालीस वर्षों में मराठो की बर्बर प्रवृत्ति और उनके अत्याचार को लोग भूले नही थे।[१३] इसके अतिरिक्त इन रियासतो मे आपसी तनाव एव कलह की स्थिति भी बनी हुई थी। कई राजघरानों के प्रति यहीं के ठाकुरो मे असतोष फैला हुआ था। इसलिए इन राजघरानो को अग्रेजो के सरक्षण की आवश्यकता बनी हुई थी। इन राजघरानो की आपस में भी नही बनती थी। इनमे राजनीतिक दूरदर्शिता न होने से वे राजनीतिक घटनाचक्र को समझने मे असमर्थ थे।[१४] मराठा अत्याचारो के सौ वर्ष और तत्पश्चात् पिंडारियो की भारी लूट खसोट ने राजपूताना के इन शासक राजघरानों को इतना पगु बना दिया था कि वे बगावत का अपेक्षा अग्रेज सरक्षण को ज्यादा अच्छा समझते थे। इन लोगों को यह भी भय था कि बगावत के फलस्वरूप अग्रेजों की शक्ति क्षीण होने पर उनके अधीन असतुष्ट ठाकुरो को सर उठाते देर नहीं लगेगी। अतएव विद्रोही सैनिको को राजपूताने के किसी भी राजघराने से कोई सहयोग प्राप्त नहीं हुआ और न उन्हे इनकी सहानुभूति ही मिली। यही कारण था कि सन् १८५७ के विद्रोह के इतिहास मे राजपूताने के किसी भी राजघराने द्वारा ब्रिटिश विरोधी भूमिका निभाए जाने का उल्लेख तक नही मिलता है।[१५] उन सभी राजाओ को जिन्होने इस सकटकाल मे मार्गदर्शन चाहा था—यही 'नेक" सलाह दी गई थी कि वे दृढतापूर्वक अग्रेजो का साथ वफादारी से निभाए।[१६]

उन दिनो नसीराबाद छावनी में देशी पलटन की १५वी और ३०वी इन्फेन्ट्री, भारतीय तोपखाना टुकडी और फर्स्ट बम्बई लासर्स के सैनिक थे। १५वी भारतीय इन्फेन्ट्री १ मई, १८५७ को ही मेरठ से आई थी। यद्यपि नसीराबाद छावनी के सैनिक बगावत के लिए अत्यधिक उत्सुक थे तथापि अबाला से भारतीय इन्फेन्ट्री की जो टुकड़ी रायफल प्रशिक्षण प्राप्त कर गभीरसिंह जमादार के नेतृत्व मे नसीराबाद लौटी थी, उसने यहाँ के सैनिको को विश्वास दिलाया कि एन्फील्ड रायफलों और कारतूसो में ऐसी कोई चीज नहीं थी जिससे धर्म या जाति को खतरा हो।

इस कारण वे कुछ समय तक हथियार उठाने में झिझकते रहे। परन्तु मेरठ में सैनिक विद्रोह के समाचार ने उनमें विद्रोह की भावना प्रज्ज्वलित कर रखी थी।[१७] प्रत्येक सैनिक टुकड़ी विद्रोह का साथ तो देना चाहती थी परन्तु पहल कदमी नहीं करना चाहती थी।[१८] अंग्रेज इन अफवाहों से बुरी तरह भयभीत थे। उन्होंने सैनिक केन्द्र की रक्षा के लिए छावनी में फर्स्ट लासर्स के उन सैनिकों से, जो वफादार समझे जाते थे गश्त लगवाना प्रारंभ कर दिया था तथा गोले भर कर तोपें तैयार कर रखी थीं।[१६]

सरकार ने सिपाहियों के संदेह मिटाने के लिए जितने प्रयास किए उतनी ही आग और भड़की। सरकार द्वारा चिकने कारतूसों को हटा लेने के आदेश ने इनमें और संदेह उत्पन्न कर दिया था। एक ओर नई अफवाह उनमें फैल गई थी कि उनका धर्म नष्ट करने के लिए आटे में हड्डियों का चूरा मिलाया गया है। जब उनसे अजमेर के खजाने व शस्त्रागार का भार सौंप देने को कहा गया तो सिपाही भड़क उठे व २८ मई, १८५७ को दिन के तीन बजे खुले विद्रोह पर उतारू हो गए।[२०]

१५वीं नेटिव इन्फेन्ट्री के सिपाहियों ने तोपखाने के सिपाहियों को अपने साथ मिलाकर तोपों पर अधिकार कर लिया था। अफसरों ने अपने सैनिकों को समझाने का प्रयास किया परन्तु निष्फल रहे। यद्यपि १७वीं नेटिव इन्फेंट्री ३० मई, १८५७ तक हिचकिचाहट के कारण सक्रिय कार्यवाही से अलग रही परन्तु अंत में जब १५वीं इन्फेन्ट्री के जवानों ने उन्हें भी ललकारा तो वह इनके साथ मिल गई। यहाँ तक कि लासर्स (संगीनधारी सैनिक) जिनके बारे में मान्यता थी कि वे वफादार बने रहेंगे, अपने दो अफसरों और तोपखाने के साथ विद्रोहियों से मिल गए। जब उनको विद्रोहियों पर गोली चलाने का आदेश दिया गया तो उन्होंने हवा में गोली चलाकर आदेश का पालन किया। विद्रोही तोपों से पहला गोला दगते ही लासर्स ने भी अपनी कतारें भग कर दी व इधर-उधर बिखर गए। उनके जो अफसर उन्हें समझाने के लिए आगे बढ़े वे मारे गए अथवा घायल हुए। इन अफसरों में से एक अफसर न्यूबरी के विद्रोहियों ने टुकड़े-टुकड़े कर दिए।[२१]

अधिक समय तक मुकाबला करना व्यर्थ समझ कर कर्नल पेन्नी ने लासर्स को वापस बुला लिया और सभी अधिकारियों ने यहाँ से हट कर ब्यावर पहुँचने का फैसला किया। बागी सिपाहियों की तोपों से पहला गोला दगते ही अंग्रेज अधिकारियों ने छावनी से अपने बीबी-बच्चों को सुरक्षा के लिए ब्यावर रवाना कर दिया था। लासर्स ने इनके प्राणों की रक्षा करने में अपनी स्वामीभक्ति का परिचय दिया और उनके भागने के मार्ग की विद्रोहियों से रक्षा करने में सहयोग दिया। यह टोली पूरी रात तक भटकती हुई दूसरे दिन ग्यारह बजे ब्यावर पहुँची। वहाँ कमिश्नर कर्नल डिक्सन ने अविवाहितों एवं सैनिक अफसरों के ठहरने की व्यवस्था अपने यहाँ

की तथा महिलाओं और बच्चों को डाक्टर स्मॉल और उनकी पत्नि ने अपने यहाँ ठहराया।[२२] इस टोली को रातभर परेशानी एवं मार्ग की भारी असुविधाओं का सामना करना पड़ा। ये लोग वहाँ जबतक कि विद्रोही सैनिकों ने दिल्ली की ओर कूच नहीं कर दिया तबतक मेरवाड़ा बटेलियन की सुरक्षा में रहे। उसके बाद सैनिक अधिकारी अजमेर लौट गए जहाँ उन्हें बैरक खण्डहरों के रूप में मिली। महिलाएं और बच्चे जोधपुर महाराजा के निमंत्रण पर वहाँ चले गए। महाराजा ने इन्हें लाने के लिए वाहन एवं सुरक्षा के लिए अपने सैनिक भेज दिए थे। नसीराबाद से ब्यावर भागते समय मार्ग में लासर्स के कर्नल पेन्नी को रास्ते में दिल का दौरा पड़ा जिस कारण घोड़े से सड़क पर गिरकर उसका देहान्त हो गया।[२३]

अंग्रेजों के छावनी से भागते ही वहाँ अराजकता फैल गई थी। घरों में आग लगा दी गई, तिजोरियां तोड़ दी गई और प्राप्त धन विद्रोही सैनिकों ने वेतन के तौर पर आपस में बाँट लिया था। लूट के सामान का लाइन्स में ढेर लगा दिया गया था। इन विद्रोही सैनिकों ने व्यर्थ में रक्तपात नहीं किया। बगावत के समय जो चार अफसर घायल या मृत हुए उन्हें छोड़कर एक बूंद खून नहीं गिरा और न कत्लेआम ही हुआ। ३०वीं नेटिव इन्फेंट्री ने अपने अफसरों के हाथ तक नहीं लगाया। इन अफसरों में से एक अफसर कैप्टिन पैनविक सायंकाल आठ बजे तक इन लोगों के साथ रहे परन्तु जब १५वीं इन्फेन्ट्री ने उन्हें स्पष्ट हिदायतें दी तो मजबूरन इन्हें भी अन्यत्र जाना पड़ा। मार्ग में इनकी सुरक्षा के लिए पाँच सैनिक तैनात कर दिए गए थे। ३०वीं पलटन के अन्य अधिकारी पूरी रात और दूसरे दिन भी अपने सैनिकों के बीच ठहरे रहे। एक सौ बीस सैनिकों की एक टुकड़ी अपने भारतीय अफसर के साथ पूरी वफादार रही तथा उसने इन भगोड़े अधिकारियों को ब्यावर तक सुरक्षित पहुँचाने तक में सहायता दी।[२४]

छावनी को तहस-नहस करने के बाद, विद्रोही सैनिकों ने अविलंब दिल्ली की तरफ प्रस्थान किया। लेफ्टिनेन्ट वॉल्टर तथा हीथकोट डिप्टी क्वार्टर मास्टर ने जोधपुर और जयपुर की सेनाओं की मदद से इन्हें घेर कर खदेड़ने का प्रयत्न भी किया परन्तु असफल रहे। इन्होंने १८ जून को दिल्ली पहुँचकर अंग्रेज पलटन पर, जो कि दिल्ली का घेरा डाले हुई थी पीछे से आक्रमण किया। दूसरे दिन दोनों के बीच कड़ा संघर्ष हुआ जिसमें अंग्रेज सेना पराजित हुई।[२५]

विद्रोही सैनिकों ने अजमेर पर आक्रमण करने के बजाय सीधे दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। इसका एक कारण यह भी था कि उनके पास पहले ही लूट का माल था और वे अब अधिक समय खराब करने की स्थिति में नहीं थे। अजमेर-शस्त्रागार पर अधिकार करना कठिन कार्य था। उस समय यह अफवाह जोरों पर थी कि दौसा से अंग्रेज पलटन अजमेर पहुँचने वाली है। एक महत्वपूर्ण कारण यह

भी था कि इन सिपाहियों में बहुतों के साथ उनके बीवी बच्चे भी थे।[२६] उन दिनों विद्रोहियों का लक्ष्य दिल्ली था, इसलिए शायद उन्हें विद्रोह के बाद सीधा दिल्ली पहुँचने का निर्देश मिला होगा।

१५वीं नेटिव इन्फेन्ट्री के एक अधिकारी ई. टी. प्रीचार्ड ने विद्रोहियों की दिल्ली कूच के बारे में बताया कि यद्यपि सड़कें खराब थीं और उनके साथ लूट का अत्यधिक सामान था तथापि वे तेजी के साथ दिल्ली की ओर बढ़ रहे थे। वे अपने लूट के माल की बिना परवाह किए तेजी से आगे बढ़ते गए। कई बागियों ने तो अपनी लूट का माल रास्ते में गांवों में ही लोगों के पास छोड़ दिया। प्रीचार्ड ने एक महत्वपूर्ण तथ्य यह बतलाया कि "राजपूताना की रियासतों के सैनिक अपने साथ अंग्रेज अफसरों के होते हुए भी इन बागी सिपाहियों पर आक्रमण करने में हिचकिचाते ही नहीं थे बल्कि उनकी सहानुभूति भी इन विद्रोहियों के साथ थी क्योंकि उनका भी यह विश्वास था कि अंग्रेजों ने उनके धर्म में हस्तक्षेप किया है।"[२७]

यह वास्तव में आश्चर्यजनक बात है कि विद्रोही सैनिकों ने अजमेर की स्थिति का लाभ नहीं उठाया। अजमेर में प्रतिरक्षा कार्यवाहियों के लिए नियत अंग्रेज अधिकारियों का न केवल खाना पीना और सोना हराम हो गया था बल्कि वे इतने हताश हो गए थे कि तनिक सा संदेह होने पर उक्त सैनिक को फांसी पर लटका दिया करते थे। जोधपुर के महाराजा ने एक बड़ी फौज अंग्रेजों की सहायतार्थ अजमेर भेजी थी, परन्तु इस फौज का व्यवहार बड़ा ही अपमानजनक था। इसलिए इन पर पूर्ण विश्वास नहीं होने के कारण इसे वापस भेज दिया गया था। नसीराबाद के विद्रोही सैनिकों ने अजमेर की इस कमजोर स्थिति से किसी तरह का लाभ नहीं उठाया। वे आश्चर्यजनक जल्दबाजी से दिल्ली की ओर कूच कर गए।[२८] यही आहुवा के विद्रोहियों ने भी किया जिसका नेतृत्व मारवाड़ के सात ठाकुर कर रहे थे। वे पहले दिल्ली पहुँच कर बहादुर शाह की सेवामें उपस्थित होना चाहते थे तथा उनके फरमान हासिल करने के बाद अजमेर पर आक्रमण करना चाहते थे।[२९] केप्टिन शॉवर्स ने अंग्रेजों के हाथ लगा जो गुप्त पत्र-व्यवहार इस संबंध में ए. जी. जी. को प्रस्तुत किया उसके अनुसार दिल्ली के विद्रोही नेताओं ने आहुवा के विद्रोहियों को पहले दिल्ली पहुँचने का आदेश दिया था। यदि इस संदर्भ की सभी कड़ियों को जोड़ा जाए तो यह तथ्य स्पष्ट रूप से सामने आ जाता है कि विद्रोहियों ने दिल्ली की ओर पहले कूच इसलिए किया क्योंकि वहाँ उनकी उपस्थिति नितांत आवश्यक थी और वे वहाँ से मुगल सम्राट का फरमान प्राप्त कर अपनी गतिविधियों और कार्यवाहियों को सवैधानिक रूप देना चाहते थे। यह स्पष्ट करता है कि सर्वोच्च सत्ता से अधिकृत होने की भावना उनमें लूटपाट करने की अपेक्षा कहीं अधिक थी। दिल्ली में एक सर्वोच्च सत्ता की स्थापना हो गई थी जिसे प्रतीक मानकर वे लाखों लोगों को अपने पक्ष में कर सकते थे।[३०] नसीराबाद के विद्रोही

सैनिक बडी ही आसानी से अजमेर पर अधिकार करने की स्थिति मे थे। वे इसे लूटकर प्राप्त धन से अपनी स्थिति को और भी मजबूत बना सकते थे। परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि हिन्दू और मुसलमान दोनो की ही आँखें इस उथल पुथल के दिनो मे देहली और बहादुरशाह पर टिकी हुई थी।[३१] नीमच-छावनी के विद्रोही सैनिको ने दिल्ली और आगरा को कूच करते समय मार्ग मे देवली की छावनी को आग लगा कर सम्पूर्ण गोला-बारूद अपने अधिकार मे कर लिया था।[३२]

इस उथल-पुथल के काल मे ए. जी जी. जनरल पेट्रिक लॉरेंस को विद्रोहियो पर आक्रमण की अपेक्षा अजमेर की रक्षा अधिक प्रिय थी। अजमेर मे किसी भी तरह सैनिक गतिविधि का अर्थ उनके दृष्टिकोण मे इस सम्पूर्ण प्रात का अंग्रेजो के विरुद्ध उठ खडे होना था। वह ऐसा सकट मोल लेने को तैयार नही थे।[३३]

अजमेर की स्थिति हरमेजेस्टीज इन्फेन्ट्री और १२वी बम्बई इन्फेन्ट्री के वहाँ पहुँचने पर सुदृढ हो गई थी। कर्नल लॉरेंस अजमेर-मेरवाडा के चीफ कमिश्नर के रूप मे इन फौजो का भार स्वय सम्हालने आबू से अजमेर आ गए थे। अजमेर के किले की मरम्मत करवाकर छ माह के लिए राशन फौज के लिए वहाँ इकट्ठा कर लिया गया था। लॉरेंस के दिमाग मे अंग्रेजी नीति का मुख्य लक्ष्य यही था कि अजमेर तथा वहाँ के गोला बारूद और खजाने की सुरक्षा की जाए। उनके अपने शब्दो में "अजमेर के महत्व को भुलाया नही जा सकता था। राजपूताना के लिए उसका महत्व उतना ही था, जितना उत्तरी भारत मे दिल्ली का है और यहाँ पर विद्रोह होने का अर्थ असतुष्ट तत्वो का ध्यान उसकी ओर आकर्षित हो जाना है।" सन् १८५८ में भारत सरकार को प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में ब्रिगेडियर जनरल लॉरेंस ने लेफ्टिनेन्ट कर्नल की सेवाओ की मुक्त कठ से सराहना की, जिन्हे मेरो का पूर्ण सहयोग प्राप्त था। उसके द्वारा की गई उचित व्यवस्था के कारण विद्रोही तत्व अजमेर जैसे बड़े और घनी आबादी वाले शहर में हाथ डालने से कतराते रहे।[३४]

सन् १८५७ के उथल-पुथल भरी हलचल का अत होने पर अंग्रेज प्रशासन ने इस बात में गर्व का अनुभव किया कि राजस्थान में उपद्रव केवल नियमित सैनिकों तक ही सीमित रहा और इसका राजघरानो और आम जनता पर कोई प्रभाव नही पड़ा। अंग्रेजों ने इस पर भी सतोष प्रकट किया कि वे सभी लोग उनके साथ रहे, जिनके पास "धन-दौलत, सपत्ति और प्रतिष्ठा थी।"[३५]

अध्याय १०

१. ट्रेवर-ए चेप्टर ऑफ दी इडियन म्यूटिनी (१६०५) पृ० २, सडगावत—

राजस्थान्स रोल इन दी स्ट्रगल ऑफ १८५७ (१६५७) पृ० १४-१५।

२. खडगावत-वही पृ० २१।

३. ट्रेवर-ऐ चेप्टर ऑफ दी इन्डियन म्यूटिनी (१६०५) पृ० २।

४. होम्स-ए हिस्ट्री ऑफ दी म्यूटिनी (१८६८) पृ० १४८, ट्रेवर-ए चेप्टर ऑफ दी इन्डियन म्यूटिनी (१६६) पृ० ३।

५ ज्वालासहाय-लॉयल राजपूताना (१६०२) पृ १६०-२६५।

६. होम्स-ए हिस्ट्री ऑफ दी म्यूटिनी पृ० १४८, ट्रेवर-ए चेप्टर ऑफ दी इन्डियन म्यूटिनी पृ० ३ (१६०५)।

७ आई० आर० कॉल्विन द्वारा डिक्सन को पत्र जिसमें उन्हे अजमेर स्थित शस्त्रागार को मेरो की रखवाली मे सौंप देने के बारे मे राय माँगी गई थी; दिनाक १६ मई, १८५७। डिक्सन का कॉल्विन को पत्र दिनाक १६ मई, १८५७।

८. डिक्सन द्वारा लॉरेंस को पत्र, दिनाक २५-५-१८५७।

६. डिक्सन द्वारा कोटा सैनिक टुकडी के कमान्डर कैप्टिन डेनियल को पत्र, ब्यावर दिनाक १८-५-१८५७।

१०. डिक्सन द्वारा कॉल्विन को पत्र दिनाक १६ मई, १८५७।

११. ट्रेवर-ए चेप्टर ऑफ दी इन्डियन म्यूटिनी (१६०५) पृ० ३ से ४।

१२. खडगावत-राजस्थान रोल इन दी स्ट्रगल ऑफ १८५७ (१६५७) भूमिका पृ० ५।

१३. मुशी ज्वालासहाय-लॉयल राजपूताना (१६०२)।

१४. खडगावत-राजस्थान रोल इन दी स्ट्रगल ऑफ १८५७ (१६५७) पृ० ५ (भूमिका)।

१५. उपर्युक्त भूमिका पृ० ३, ४, ५।

१६ राजस्थान के नरेशो द्वारा प्रदान की गई सहायता के बारे में लॉरेन्स की रिपोर्ट हाउस ऑफ कॉमन्स पेपर सं० ७७ पृ० १३०, अनुच्छेद १२० से १३०। (१८६०)।

१७ पत्र स० १०७-ए-७८४ दिनाक २७ जुलाई, १८५८ ए. जी. जी. द्वारा भारत सरकार को पत्र दि० २७ जुलाई, १८५८ सख्या १०७-ए-७८४।

१८ डिक्सन द्वारा लॉरेंस को पत्र, ब्यावर दिनाक २३-५-१८५७।

१६. मुंशी ज्वालासहाय-लॉयल राजपूताना, (१६०२) पृ० १६७-१६८।

२०. फाइल स० १७६–१८५७, पत्र सं० १६३ ब्रिगेडियर जनरल पी० लॉरेंस द्वारा लेफ्टिनेंट गवर्नमेन्ट उत्तर-पश्चिमी सूबा सरकार को पत्र सं १६३, मुंशी ज्वालासहाय-लॉयल राजपूताना (१९०२) पृ० १९८–१९९।

२१. कर्नल पेन्नी द्वारा ब्रिगेडियर जनरल पी० लॉरेंस को पत्र दि० १ जून, १८५७, मुंशी ज्वालासहाय-लॉयल राजपूताना (१९०२) पृ० १९९, प्रीचार्ड, म्यूटिनीज इन राजपूताना (१८६०) पृ० ४९।

२२. राजपूताना फील्ड फोर्स कमाडर द्वारा ए जी. जी माउट आबू को पत्र दि० २९ मई, १८५७ सख्या १०७-ए-७८६, ए. जी. जी. द्वारा भारत सरकार को पत्र दि० २४ जुलाई, १८५८।

२३. डिक्सन द्वारा लेफ्टि० गवर्नर उ० प्र० सूबा सरकार को पत्र दिनाक ८ जून, १८५७ हॉम्स-ए हिस्ट्री ऑफ दी इन्डियन म्यूटिनी (१८९८) पृ० १५१।

२४. ट्रेवर–ए चेप्टर ऑफ दी इन्डियन म्यूटिनी (१९०५) पृ० ५, हॉम्स-ए हिस्ट्री ऑफ दी इन्डियन म्यूटिनी (१८९८), पृ० १५१। मुंशी ज्वाला-सहाय-लॉयल राजपूताना (१९०२) पृ० २००–२०१।

२५. उपर्युक्त।

२६. इस आशय के तर्क ट्रेवर ने प्रस्तुत किए है, परन्तु वास्तविकता यह थी कि वे दिल्ली की ओर इसलिए शीघ्र रवाना हो गए क्योंकि सभावित खतरे को देखते हुए वहाँ उनकी उपस्थिति आवश्यक हो गई थी। खड्गावत-राजस्थान्स रोल इन दी स्ट्रगल ऑफ १८५७। पृ० १८।

२७ आई० टी० प्रीचार्ड, जो प्रारम्भ मे देशी पलटन मे एक अफसर थे तथा बाद में दिल्ली गजट के सपादक के रूप मे कार्य किया था, राजपूताने मे विद्रोह की घटनाओ पर अपने लेख लिखे थे जिनका प्रकाशन सन् १८६० मे हुआ था।

२८. ट्रेवर–ए चेप्टर ऑफ दी इन्डियन म्यूटिनी (१९०५) पृ० ६, प्रीचार्ड-म्यूटिनीज इन राजपूताना (१८६०)

२९. केप्टिन शॉवर का ए. जी. जी. राजपूताना को पत्र, दिनाक २५–३–१८५८।

३०. मौलाना आज़ाद-भूमिका, डा० सेन का १८५७ (१९५७)।

३१. खड्गावत-राजस्थान्स रोल इन दी स्ट्रगल ऑफ १८५७ (१९५७) पृष्ठ २०।

३२. वी० पी० लॉयल द्वारा कैप्टिन कार्टर को पत्र दिनाक ६ जून, बी० पी० लॉयल द्वारा कर्नल डुराड को पत्र । (राज० रा० अभिलेखागार)।

३३. शॉवर्स .—ए मिसिंग चेप्टर ऑफ दी इन्डियन म्यूटिनी (१८८८) पृष्ठ ४६

ट्रेवर —ऐ चेप्टर ऑफ दी इन्डियन म्यूटिनी (१९०५) पृ० ८।

खड़गावत —राजस्थान्स रोल इन दी स्ट्रगल ऑफ १८५७ (१९५७) पृष्ठ २२-२३ ।

३४. ट्रेवर —ए चेप्टर ऑफ दी इण्डियन म्यूटिनी (१९०५) पृ० १४।

३५ खड़गावत —राजस्थान्स रोल इन दी स्ट्रगल ऑफ १८५७ पृ० ८७-८६ ।

११

राष्ट्रीय एवं क्रान्तिकारी हलचल

अंग्रेज सरकार की हमेशा यह नीति रही थी कि रियासतो का प्रशासन अंग्रेज प्रशासन के मुकाबले खराब दिखता रहे ताकि देशी शासको की तुलना में जनता अंग्रेज शासको को अच्छा समझे। इस कारण अजमेर-मेरवाडा में राजनीतिक और सास्कृतिक उन्नति राजपूताना की रियासतो से ज्यादा होना स्वाभाविक था। अजमेर के सम्पन्न लोगो मे शिक्षा प्रसार के साथ-साथ शनै शनै शिक्षित समुदाय के बीच राजनीतिक चेतना जागृत होने लगी थी। यह राजनीतिक चेतना एक छोटे से समुदाय तक ही सीमित रही और कभी भी खुलकर विस्तृत जन चेतना का स्वरूप नही ले पाई। उन्नीसवीं सदी के अंतिम दशक में बंगाल की क्रांतिकारी हलचलो का प्रभाव अजमेर पर भी दिखाई देने लगा।

बंगाल के देशभक्त क्रांतिकारियो के साहित्य "वर्तमान रणनीति" और "मुक्ति कौन पथ" से यहाँ के नौजवान अत्यंत प्रभावित हुए थे। "बंग–भंग" के बाद ही अजमेर मे क्रांतिकारियों की गतिविधि आरम्भ हुई। क्रांतिकारी "स्वराज्य" प्राप्त करना चाहते थे। इनकी यह मान्यता थी कि स्वराज्य-प्राप्ति के लिए डकैती और हत्याएं पाप नहीं हैं।[१] अंग्रेज सरकार के प्रति रोष एवं उसे उखाड फेंकने की भावना इनमें भी उतनी ही तीव्र थी जितनी कि बंगाल के आतंकवादियों में थी।[२] इन लोगो ने अजमेर मे क्रांतिकारी विचारधारा के प्रसार-हेतु शिक्षण संस्थाओं का जाल सा बिछाकर उनके माध्यम से विदेशी शासन के प्रति असतोष की भावना

जागृत करना प्रारम्भ किया। गैरीवाल्डी और मैजिनी उनके आदर्श थे और उनकी विचारधारा इन क्रातिकारियो के लिए प्रेरणा का स्रोत थी। [३]

उन्नीसवी सदी के अतिम दशक मे अजमेर-मेरवाडा मे जो राजनीतिक चेतना बढ़ी उसके प्रेरणा स्रोत बगाल और महाराष्ट्र के क्रातिकारी थे। राजपूताना की सास्कृतिक विरासत के प्रति अगाध श्रद्धा होने के कारण बगाल के क्रातिकारी इस प्रान्त के प्रति आकर्षित हुए थे। राजपूताना ने महाराणा प्रताप व दुर्गादास जैसे वीरो को जन्म दिया था जिनकी वीरता की कहानिया पूरे भारत मे प्रचलित थीं। इन महापुरुषो की जीवनगाथा क्रातिकारियो के लिए प्रेरणा का स्रोत थी। बगाल मे क्रातिकारी षडयत्रो का सूत्रपात महाराणा प्रताप और राठोड वीर दुर्गादास के देशाभिमान एव बलिदान की प्रेरणास्पद भावनाओ का प्रतिफल था। [४] उन्नीसवीं सदी के बगला साहित्य को राजपूताना के शूरवीरों के शौर्यपूर्ण सघर्ष से प्रेरणा मिली थी। अतएव बगाल के क्रातिकारियो का राजपूताना के प्रति आकर्षित होना स्वाभाविक था। अरविंद घोष द्वारा कई बार राजपूताना का दौरा करने और यहाँ के लोगों मे देश प्रेम जागृत करने के उनके प्रयासो की पृष्ठभूमि मे यही भावना काम कर रही थी। राजस्थान म उस समय शस्त्र कानून लागू नही था। इसलिए देश भर के क्रातिकारियो को यहाँ आसानी से सस्ते भावो मे हथियार मिल जाते थे। [५] राजपूताना के जागीरदार जिन्हे अग्रेजी शासन ने कुचल दिया था, उनके प्रति तीव्र असतोष को मन ही मन सुलगाए बैठे थे। क्रातिकारी इसका अपने हित मे उपयोग करना चाहते थे। [६] झालावाड के महाराज राणा जालिमसिंह द्वितीय को गद्दी से उतार कर उन्हे अग्रेजो द्वारा निष्कासित करने की घटना ने भी लोगो की क्रोधाग्नि भड़का दी थी। [७] मेवाड मे अग्रेजो की प्रशासनिक तानाशाही का विरोध हाउस ऑफ कॉमन्स तक मे प्रतिध्वनित हुआ था और तत्कालीन अग्रेज पोलिटिकल एजेन्ट के विरुद्ध वहाँ गम्भीर आरोप लगाए गए थे। [८]

इस तरह की घटनाओ से बगाल के क्रातिकारियो मे यह धारणा बन चली थी कि राजपूताना की मरुभूमि मे उन्हें अपने कार्य एव गतिविधियो के प्रति व्यापक सहयोग एव सहानुभूति प्राप्त हो सकेगी। राजपूताना के जागीरदारो के पास वे सभी साधन स्रोत उपलब्ध थे, जिनकी सशस्त्र क्राति मे आवश्यकता पडती है। कर्नल टॉड द्वारा लिखित राजपूताना की शौर्य गाथाओं ने इस प्रान्त को भारत भर मे वीर शिरोमणि के रूप मे स्थापित कर दिया था। सुप्रसिद्ध बगला उपन्यासकार बकिमचन्द चटर्जी और नाटककार डी० एल० राय को राजपूताना की यशगाथाओ से अपार प्रोत्साहन मिला था। अतएव क्रातिकारियो द्वारा राजपूताना के प्रति इसी भावना के वश आकर्षित होना और अपनी विद्रोही गतिविधियो के लिए राजपूताना को उपयुक्त समझना स्वाभाविक था। [९]

राजपूताना की प्राकृतिक विशिष्टताए, विस्तृत निर्जन, मरूभूमि, अरावली पर्वत की श्रेणियाँ, रेत के विशाल टीबे और अनुल्लघनीय वन राजद्रोही के शरण देने और अंग्रेजों के चगुल से बचने के लिए वरदान सिद्ध हो सकते थे। आर्य समाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द भी इस वीर भूमि की निधियो से परिचित से लगते थे। उन्होंने भी अपनी गतिविधियो के लिए प्रमुखत शाहपुरा, जोधपुर और अजमेर को केन्द्र बनाया। इन सभी को यह आशा थी कि प्राचीन परम्पराओ को पुनर्जीवित करने के उद्देश्य से किए जाने वाले सभी सांस्कृतिक, सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक आन्दोलनो को राजपूताना के राजघराने और सामन्त वर्ग की सहानुभूति प्राप्त होगी। इसी आशा से सभी ने इस प्रान्त को अपनी गतिविधियो का केन्द्र चुना था।[10]

अजमेर मे राजनीतिक चेतना को जन्म देने वालो मे खरवा के राव गोपालसिंह, बारहठ केसरीसिंह, अर्जुनलाल सेठी और सेठ दामोदरलाल जी राठी प्रमुख थे। ये सभी लोग अजमेर के निकटवर्ती क्षेत्रो के निवासी थे। राव गोपालसिंह अजमेर मे खरवा के इस्तमरारदार थे। बारहठ केसरीसिंह शाहपुरा के व सेठी अर्जुनलाल जयपुर के निवासी थे। वे सभी लोग जिन्होने इनकी प्रत्यक्ष रूप से सहायता की थी उनका अजमेर से निकटतम सम्बन्ध था।[11] दामोदरदास जी राठी क्रातिकारियो की अत्यधिक आर्थिक मदद करते थे। बाहर से आने वाले क्रांतिकारियों को आप अपने यहाँ छिपाकर रखते थे। अरविन्द बाबू व श्यामजीकृष्ण वर्मा भी आपके ही मेहमान रहते थे। उन्होने स्वदेशी की भावना को वास्तविक रूप देने के लिए कपडे का पहला कारखाना ब्यावर मे खोला था।[12] क्रातिकारी स्वामी कुमारानद ने भी अपनी गतिविधियो के लिए अजमेर मेरवाडा को केन्द्र बनाया था। राजस्थान के एक अन्य प्रमुख क्रातिकारी जो बाद मे विजयसिंह पथिक के नाम से प्रख्यात हुए, खरवा में बस गए थे और राव गोपालसिंह के यहाँ काम करते थे। इस तरह अजमेर अपने निकटवर्ती क्षेत्रो सहित राजनीतिक विचारधाराओ का केन्द्र बन चला था। श्री अर्जुनलाल सेठी, केसरीसिंह बारहठ, विजयसिंह पथिक एवं राव गोपालसिंह खरवा ने मिलकर "वीर भारत सभा" नामक गुप्त क्रातिकारी सगठन कायम किया। इस सस्था का देश की दूसरी क्रातिकारी सस्थाओ से सम्बन्ध था।[13]

अजमेर के क्रातिकारियो ने राजस्थान के जागीरदारो मे अंग्रेजों के प्रति व्याप्त असतोष का लाभ उठाने का भरसक प्रयत्न किया। राजस्थान का सामन्ती वर्ग अंग्रेजों से असन्तुष्ट था, क्योंकि अंग्रेजो के हाथो उन्हें अपनी राजनीतिक एवं सैनिक शक्ति खोनी पडी थी। अंग्रेजो द्वारा राजपूताना की रियासतो तथा अजमेर में प्रचलित किए गए नए नियमो से भी वे असतुष्ट थे क्योंकि इनका उद्देश्य जागीरदारो को शक्तिहीन करना था। बदोबस्त की कार्यवाहियाँ, सैनिक सेवा की एवज मे नगद

राशि का भुगतान, सती प्रथा पर रोक, जागीर एवं सैनिक दस्तों को भग करने की नीति ने इन सामंती तत्वों को नाराज कर दिया था। [१४]

स्वामी दयानंद के व्यक्तित्व ने भी अजमेर के लोगो की भावनाओं को इस दिशा में सबसे अधिक प्रभावित किया था। स्वामी दयानन्द और उनके अनुयायियों ने अजमेर को अपनी गतिविधियों का केन्द्र बनाकर यहाँ के लोगों में धार्मिक, राजनीतिक चेतना के प्रसार में बहुत योगदान दिया था। उन्होंने राजपूतों मे वैदिक सभ्यता के पुनर्जागरण के लिए एक तीव्र उत्कंठा जागृत कर दी थी। [१५]

राव गोपालसिंह पर आर्य समाज का इतना गहरा रंग चढा हुआ था कि राजनीतिक जीवन के कठोर अनुभवों एवं वैचारिक परिवर्तनों के बावजूद भी यह प्रभाव शिथिल नहीं हुआ था। उनके राजनीतिक जीवन से सन्यास के बाद भी एक लम्बे समय तक यह प्रभाव बना रहा। [१६]

यदि अजमेर अपने सांस्कृतिक, सामाजिक, धार्मिक, शैक्षणिक और राजनीतिक पुनर्जागरण के लिए किसी के प्रति ऋणी है तो उसमें सर्वोच्च स्थान स्वामी दयानन्द और उनके आर्य समाज आन्दोलन का है। यह स्वामी दयानन्द के अनुयायियों द्वारा स्थापित विभिन्न संस्थाओं के अथक प्रयत्नों का ही फल था कि उन्होंने देश को चोटी के सुधारक और सार्वजनिक कार्यकर्ता प्रदान किए। जिन्होंने अजमेर में सामाजिक-राजनीतिक चेतना उत्पन्न की। अजमेर के लगभग सभी राजनीतिक कार्यकर्त्ताओं ने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा दीक्षा आर्य समाज के स्कूलो मे ही ग्रहण की थी। [१७]

अजमेर के प्रारम्भिक राजनीतिक कार्यकर्त्ताओं ने अपना राजनीतिक जीवन सामाजिक कार्यकर्ता के रूप मे आरम्भ किया था। राव गोपालसिंह ने अपना राजनीतिक जीवन, अकाल पीडित किसानो को वित्तीय सहायता और निर्धन तथा राजपूत विद्यार्थियो को छात्रवृत्तियां देने से प्रारम्भ किया था। [१८] इनका कार्य क्षेत्र छोटे जागीरदारो और भोमियो मे था। हथियार इकट्ठे करना इनका मुख्य कार्य था। पथिक जी जोकि उस समय भूपसिंह के नाम से कार्य करते थे, राव साहब के निकट के सहयोगी थे। [१६] केसरीसिंह बारहठ ने राजपूत परिवारों एवं चारणों मे सांस्कृतिक जागृति लाने का बीड़ा उठाया। [२०] अर्जुनलाल सेठी ने तो अपना सम्पूर्ण जीवन ही शिक्षा जगत् एवं जैन समाज की सेवामें समर्पित कर दिया था। [२१] इन तीनो ही क्रांतिकारियो मे पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली के प्रति घोर अरुचि थी। ये राजस्थानी तरुणों का जीवन पूर्णत भारतीय आशा आकांक्षाओं के अनुकूल ढालना चाहते थे। उनकी आरम्भिक योजनाए यद्यपि राजनीति से अछूती नही थी, तथापि उनमे क्रांतिकारी उद्देश्यों की झलक नही मिलती है।

उन्होंने उन्नीसवी सदी के अन्तिम दशक के आरम्भ मे एक साथ राजस्थान

के तीन विभिन्न स्थानों से अपना कार्य प्रारम्भ किया था। ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने अपनी गतिविधियो को व्यापक रूप देने के लिए कोई योजना तैयार नही की थी। इनकी गतिविधियाँ भी आपस में सम्बन्धित नही थी। सेठी अर्जुनलाल जैनमत प्रवर्तक सस्थाए चलाने के पक्ष मे थे। केसरीसिंह का ध्यान अधिकतर राजपूत परिवारो और चारणो पर केन्द्रित था। राव गोपालसिंह केवल राजपूतो को ही आगे लाने के पक्ष मे थे।[२२] उनका कार्य-क्षेत्र भी अत्यत सीमित था। इन प्रारम्भिक कार्यवाहियो का उद्देश्य किसी भी तरह की अग्रेज विरोधी गतिविधिया या हलचल पैदा करना नहीं था। बारहठ केसरीसिंह का घराना राजपूताना मे प्रख्यात था तथा उन्हें भावुक और धार्मिक कथाओ का पडित माना जाता था। अर्जुनलाल जी सेठी अपना बाह्यरूप पूर्णतया अहिंसक बनाए हुए थे।[२३] राव गोपालसिंह का राजपूताना के अग्रेज समर्थक राजघरानो मे भी सम्मान था। इन क्रान्तिकारियो की प्रारम्भिक गतिविधिया शैक्षणिक एव सामाजिक महत्व की थी। इस क्षेत्र में भी ये लोग एक सी नीति अगीकार करने मे असफल रहे। अपने आरम्भिक दस वर्षीय राजनीतिक जीवन में ये लोग धैर्य पूर्वक मूक और गुप्त रूप से अपने ही केन्द्रो में काम करना अधिक पसद करते थे और सयुक्त कार्यक्रम या एक सयुक्त नीति के गठन का प्रयत्न इन्होंने कभी नहीं किया।

ये क्रांतिकारी धीरे-धीरे बाहरी क्रांतिकारियो के सम्पर्क मे आए। श्यामजी कृष्ण वर्मा ने ब्यावर में राजपूताना कॉटन प्रेस और अजमेर मे राजपूताना प्रिंटिंग प्रेस की स्थापना की थी। उनके प्रभाव से राजपूताना के सार्वजनिक कार्यकर्ताओं में देशभक्ति की गहरी भावना जागृत हुई। सेठ दामोदरदास राठी ने सन् १९०६ के आसपास योगीराज अरविंद और लोकमान्य तिलक को एक गुप्त बैठक मे आमत्रित किया था।[२४] इन बाहरी कार्यकर्ताओ को इस बात का श्रेय है कि उन्होंने ही स्थानीय कार्यकर्ताओं की गतिविधियो को एक निश्चित स्वरूप एव नीति प्रदान की। उनके राजनीतिक विचारों मे भारत धर्म महामडल के स्वामी ज्ञानानद के प्रयासों से और भी अधिक दृढता आई।[२५] राव गोपालसिंह उनके साथ कलकत्ता गए, जहाँ वे प्रसिद्ध देश भक्त सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, वीरेन्द्र पाल, वीरेन्द्र घोष और देवेन्द्र के घनिष्ठ सम्पर्क मे आए। इसी समय उन्होंने 'युगान्तर' 'वदेमातरम्' और 'अमृत बाजार' पत्रिका के सम्पादको से आपसी सम्पर्क स्थापित किया।[२६]

कलकत्ता से लौटने के बाद राव गोपालसिंह ने अपनी राजनीतिक गतिविधियाँ तेजी से प्रारम्भ करदी थीं। अर्जुनलाल सेठी अग्रेज शासित भारत के नेताओं के सम्पर्क मे आए और उन्होंने बगाल के स्वदेशी आंदोलन में भी भाग लिया तथा भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सूरत अधिवेशन मे भी वे सम्मिलित हुए थे।[२७]

सन् १९०७ का वर्ष इन कार्यकर्ताओं की सामाजिक, राजनीतिक गतिविधियों

एवं अंग्रेज विरोधी हलचलों के मध्य विभाजन रेखा सिद्ध हुआ। सन् १९०७ के बाद ही केसरीसिंह जी द्वारा स्थापित चारण राजपूत बोर्डिंग हाउस ने राजनीतिक गतिविधियों में भाग लेना आरम्भ किया और भूमिगत "वीर भारत सभा" की स्थापना की गई।[२८] सन् १९०७ में ही अर्जुनलाल सेठी द्वारा संचालित वर्धमान विद्यालय ने कार्य आरम्भ किया। इसी समय राव गोपालसिंह ने अंग्रेजी विरोधी गतिविधियाँ प्रारम्भ की थी।[२९] इस तरह सन् १९०७ का पूर्ववर्ती काल वास्तविक कार्य की अपेक्षा उमंगों एवं कल्पनाओं का काल कहा जा सकता है। इसमें बंगाल के स्वदेशी आन्दोलनकारियों और बाहरी नेताओं से सम्पर्क स्थापित हुआ, जिन्होंने यहाँ के कार्यकर्ताओं को अस्पष्ट एवं अनिश्चित विचारों एवं गतिविधियों को मार्गदर्शन देकर स्पष्टता प्रदान की। सन् १९०७ से ही अजमेर-मेरवाड़ा ने क्रांतिकारी चरण में प्रवेश किया। इसे एक ओर योगीराज अरविन्द और लोकमान्य तिलक से प्रोत्साहन मिला व दूसरी ओर बंगाल के उच्च क्रांतिकारी नेताओं का सहयोग प्राप्त हुआ। इससे यहाँ की गतिविधियों को दृढ़ता एवं सुस्पष्टता प्राप्त हुई।

सन् १९०७ का वर्ष यहाँ के क्रांतिकारी इतिहास का ही महत्वपूर्ण चरण है, परन्तु यह समूचे उत्तर भारत के लिए भी इतने ही महत्व का रहा। यह लगभग वही समय था जबकि पंजाब में और दिल्ली के आसपास के क्षेत्रों में क्रांतिकारियों की गतिविधियाँ तेज हो चली थी और रासबिहारी बोस के अनुयायियों ने देश भर के प्रमुख स्थानों में अपने केन्द्र स्थापित करने में सफलता प्राप्त की थी। सन् १९०७ के बाद ही दिल्ली में हरदयाल, अमीरचन्द, अवध बिहारी और बालमुकुन्द ने अपनी कार्यवाहियाँ प्रारम्भ की थी। सन् १९०७ के बाद ही प्रसिद्ध क्रांतिकारी शचीन्द्रनाथ सान्याल ने बनारस में क्रांतिकारी अनुशीलन समिति स्थापित की।[३०] सन् १९०७ के बाद अजमेर का प्रारम्भिक क्रांतिकारी आंदोलन उत्तर भारत में क्रांति आंदोलन के प्रसार से पूर्णतः प्रभावित है।

अजमेर में राजनीतिक जागृति का उद्भव मुख्यतया बंगाल के स्वतन्त्रता आन्दोलन की प्रेरणा का प्रतिफल था। अंग्रेज विरोधी उत्तेजना को शनैः शनैः स्वामी दयानन्द के धार्मिक उपदेशों से भी आधार मिलता रहा। परन्तु यदि बंगाल और महाराष्ट्र के क्रांतिकारी इस क्षेत्र के अपने साथियों को आवश्यक प्रोत्साहन प्रदान नहीं करते तो इस क्षेत्र में राजनीतिक जागृति की गति अत्यंत मंथर होती। राव गोपालसिंह के बारे में बम्बई पुलिस ने ए० जी० जी० को सन् १९०९ में ही यह सूचित कर दिया था कि उनके बारे में "इस तरह की बातें प्रचलित हैं कि उनका सम्पर्क राजद्रोही तत्वों से है और वह स्वयं प्रबल अंग्रेज विरोधी है।"[३१]

इन क्रांतिकारियों ने कई क्रांतिकारी केन्द्र, बोर्डिंग हाउस और स्कूलों के रूप में खोले, जहाँ पर क्रांति के लिए आवश्यक प्रशिक्षण दिया जाता था।[३२] जन-जागृति

पैदा करने मे वे सफल नही हुए और न जन साधारण मे सार्वजनिक चेतना उत्पन्न करना उनके लिए संभव हो था। उन्होंने शिक्षण संस्थानो का एक जाल सा बिछा दिया था जो राजनीतिक गतिविधियों के केन्द्र बन गए थे। वर्धमान विद्यालय में शिक्षा दी जाती थी कि स्वराज्य प्राप्ति के लिए सशस्त्र क्रांति आवश्यक है तथा सशस्त्र क्रांति के लिए रिवॉल्वर और पिस्तोल क्रय हेतु यदि डाका भी डाला जाय तो कोई पाप नहीं है।

केसरीसिंह के भारत में अंग्रेज सरकार के प्रति विचार बंगाल के क्रांतिकारियों के समान राजद्रोहात्मक एवं विप्लवकारी थे। युवको मे क्रांतिकारी विचारधारा का प्रसार करने के उद्देश्य से उन्होंने कोटा मे राजपूत बोर्डिंग हाउस और जोधपुर मे राजपूत-चारण बोर्डिंग हाउस खोला था। अपने भाषणों मे वे विद्यार्थियों के मस्तिष्क मे यह बात कूट-कूट कर भरते थे कि शिक्षा प्रसार के लिए आवश्यक धन-राशि यदि गलत तरीके से भी प्राप्त की जाती है तो इसमे किसी तरह का पाप नहीं है।[33] केसरीसिंह के सहयोग से सोमदत्त लाहड़ी और विष्णुदत्त अजमेर के आसपास के ग्रामो मे राजद्रोहात्मक वातावरण बनाने मे जुट गए थे। राव गोपालसिंह ने अपने खर्चे से सोमदत्त लाहड़ी और नारायणसिंह को अजमेर मे शिक्षा पाने मे सहायता प्रदान की थी। इन दोनो ही युवको का कोटा हत्याकाण्ड मे प्रमुख हाथ था। उन्होने गेहरसिंह नामक एक नवयुवक को और तैयार किया था जो ग्रामों मे प्रचार के लिए विष्णुदत्त का सहयोगी था। विष्णुदत्त वेतनभोगी अध्यापक के रूप मे राव गोपालसिंह के यहाँ काम करते थे। अर्जुनलाल सेठी की प्रसिद्ध क्रांतिकारी मास्टर अमीरचन्द, अवधेशबिहारी और बालमुकुन्द से अटूट मैत्री थी।[34] ऐसा प्रतीत होता है कि विष्णुदत्त इन लोगो के बीच कड़ी का काम करता था। वह सदा एक स्थल से दूसरे स्थल की यात्रा करता ही रहता था। सचीन्द्रनाथ सान्याल की अनुशीलन समिति के दो सदस्य खरवा भेजे गए थे जो बम बनाने की कला जानते थे। मणीलाल और दामोदर निरंतर उत्तर प्रदेश और राजपूताना की यात्रा पर ही रहते थे।[35]

सन् १९०७ में क्रांतिकारी विचारधारा का प्रभाव स्पष्ट झलकने लगा था। १४ मई, १९०७ को खरवा के दुकानदारो ने विदेशी शक्कर बेचना बन्द कर दिया था। २३ जुलाई, १९०७ को अजमेर मेरवाडा के जागीरदारो ने साहस जुटा कर अपने कष्ट एवं शिकायतों के समाधान के लिए एक सभा का आयोजन किया था। राव गोपालसिंह ने २८ अक्टूबर को धर्म महामडल की अजमेर मे आयोजित एक सभा की अध्यक्षता की और स्वामी ज्ञानानन्द के साथ ६ मार्च, १९०८ को वायसराय से धर्म महामडल के प्रतिनिधि मडल के सदस्य के रूप म मिलने के लिए कलकत्ता भी गए।[36] विष्णुदत्त ने १९०७ तक क्रांतिकारियो का एक अच्छा सगठन तैयार

कर लिया था। उनके प्रमुख सहयोगियो मे उल्लेखनीय नारायणसिंह, लक्ष्मीलाल लाहडी, रामकरण वासुदेव, सूरजसिंह और रामप्रसाद थे। ये सब उत्तर प्रदेश के रहने वाले थे और विष्णुदत्त इन्हे अजमेर ले आए थे। विष्णुदत्त क्रांतिकारियो को सगठित करने के लिए राजपूताना का दौरा भी किया करते थे।

इन्होने नसीराबाद स्थित राजपूताना रायफल्स के सैनिक अधिकारियो से सपर्क स्थापित कर उनके माध्यम से सैनिको मे अग्रेजी शासन-विरोधी भावना जागृत करने का प्रयास भी किया। इन्ही के जरिए शस्त्र और गोला बारूद प्राप्त किए जाते थे। मुलतान खान व करीम खान नाम के व्यक्तियो के माध्यम से नसीराबाद से शस्त्र खरीदे जाते थे। मणिलाल और दामोदर नामक व्यक्तियो पर इन क्रातिकारियो को बम प्रदान करने का जिम्मा था।[३७]

बारहठ केसरीसिंह का सम्पूर्ण परिवार, उनके पुत्र प्रतापसिंह और भाई जोरावरसिंह क्रातिकारी गतिविधियो मे शामिल थे। चारण राजपूत छात्रावास क्रातिकारी गतिविधियो के केन्द्र बन गए थे और वर्धमान विद्यालय का इस क्षेत्र मे काफी महत्व था। सन् १६११ मे भूपसिंह जिन्होने आगे चलकर विजयसिंह पथिक के नाम से राजस्थान के स्वतत्रता आन्दोलन मे महत्वपूर्ण योगदान दिया था—राव गोपालसिंह के निजी सचिव के पद पर कार्य कर रहे थे। सन् १६११ तक अजमेर को केन्द्र बनाकर गुप्त समितियो ने काम आरम्भ कर दिया था।[३८]

इन क्रातिकारियो की सामाजिक, शैक्षणिक गतिविधियो को राजपूताने के कुछ राजघरानो से सहानुभूति एव आर्थिक सहायता प्राप्त हुई होगी। परन्तु इसका यह अर्थ नही लिया जाना चाहिए कि क्रातिकारियो को राजपूताने के राजघरानो का समर्थन प्राप्त था। इनकी सहानुभूति कदाचित् इन क्रातिकारियो की गतिविधियों के प्रति पूर्ण जानकारी न होने के कारण ही रही होगी क्योकि यह अधिकाशत पूर्णतया गुप्त रूप से सचालित की जा रही थी। इन राजघरानो ने इनकी शैक्षणिक और सामाजिक कार्यक्रमो की सहायता उदारतावश ही की, उन्हे इनकी क्रातिकारी गतिविधियो के प्रति तनिक भी सदेह नही था।। यहाँ तक कि कोटा के महाराज को भी जिनके यहाँ केसरीसिंह नौकरी करते थे उनकी क्रांतिकारी गतिविधियो की कुछ भी जानकारी नही थी। स्पष्टत कुछ राजघरानो द्वारा बारहठ केसरीसिंह और राव गोपालसिंह को दी गई वित्तीय सहायता का अर्थ उनके द्वारा राजद्रोहात्मक कार्यों और क्रातिकारी गतिविधियो मे भाग लेना नही माना जा सकता।[३६] जोधपुर महत हत्याकाण्ड के मामले मे कोटा के महाराव ने अपने फैसले में कहा कि ये नाम इस सदर्भ मे किंचित भी तथ्यपूर्ण नही हैं। इस निर्णय से यह अर्थ लगा लेना भी अनुपयुक्त होगा कि राजघरानो का क्रातिकारियो से निकट का सबध रहा था।[४०]

सन् १६११ के बाद ही राजस्थान के क्रातिकारियो का शचीन्द्रनाथ सान्याल

और रासबिहारी बोस के साथ सम्पर्क स्थापित हुआ था। इनमे से प्रतापसिंह ने दिल्ली और बनारस षड्यन्त्र काडो मे महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। राजस्थान मे उस समय अस्त्र शस्त्रो पर कोई लाईसेन्स न होने के कारण यह प्रान्त क्रातिकारियो के लिए अस्त्र शस्त्र एकत्रित करने व उनके निर्माण हेतु गुप्त कारखाने स्थापित करने के लिए उपयुक्त स्थान था। इसी उद्देश्य से रासबिहारी बोस ने हार्डिग बमकाड के बाद ही भूपसिंह और बालमुकुन्द को राजस्थान भेजा था। इनके राजस्थान आने के बाद यहाँ के क्रातिकारियों का देश के क्रातिकारी सगठनो से सबध स्थापित हो गया था।[४१]

सन् १६१२ से इन क्रातिकारियो ने डकैतिया और हत्याए प्रारम्भ कर दी थीं। जून १६१२ में बारहठ केसरीसिंह की क्रातिकारी टोली ने जोधपुर के एक महत की हत्या कर दी थी। इस हत्या का उद्देश्य क्रातिकारी गतिविधियों के लिए धन प्राप्त करना था। क्रातिकारी इन दिनो धन की भारी कमी अनुभव कर रहे थे। ऐसा प्रतीत होता है कि अब लोगो ने डर से इनकी शैक्षणिक और सामाजिक सस्थाओ को धन देना स्थगित कर दिया था तथा वे इनसे सम्पर्क रखने मे कतराते थे।[४२]

दिसम्बर १६१२ मे लार्ड हार्डिग की हत्या का प्रयत्न किया गया जिसमे उनका एक अगरक्षक मारा गया था। इसी दिल्ली षड्यन्त्र काड के सिलसिले मे बाद में सेठी अर्जुनलाल को गिरफ्तार किया गया था और बारहठ केसरीसिंह पर सदेह के कारण नजर रखी जाने लगी थी।[४३] इन क्रातिकारियों द्वारा आयोजित दूसरा महत्वपूर्ण राजनीतिक हत्याकाड मारवाड के निमाज नामक कस्बे मे सेठी अर्जुनलाल के विद्यार्थियो द्वारा किया गया था।[४४] यद्यपि ये दोनो ही हत्याकाड सन् १६१२ और सन् १६१३ मे हुए थे परन्तु इनका सुराग मार्च, १६१४ तक पकड मे नही आ सका। सन् १६१४ मे वायसराय बमकाड के सिलसिले मे सेठी जी के एक शिष्य शिवनारायण को गिरफ्तार किया गया था। इस व्यक्ति ने घबरा कर निमाज महत हत्याकाड की भी जानकारी पुलिस को दे दी थी। इस पर मोतीचन्द को फासी की सजा व विष्णुदत्त को दस वर्ष की काले पानी की सजा दी गई।[४५]

भारत सरकार के गुप्तचर विभाग के अधिकारी हार्डिग बमकाड के अभियुक्त जोरावरसिंह (बारहठ केसरीसिंह के भाई जो निमाज हत्याकांड के अभियुक्त भी थे) की तलाश मे अप्रेल १६१४ में जोधपुर पहुँचे थे, उस समय गुप्तचर विभाग के सुपरिटेंडेंट आर्मस्ट्राग को यह पता चला कि वहा का एक धनी साधु भी गत दो वर्षो से लापता है। उसके अनुयायियो ने उनकी काफी तलाश भी की परन्तु उसका कही पता नही चल सका। इस सिलसिले मे ३ मई, १६१४ को रामकरण, केसरीसिंह जी बारहठ, लक्ष्मीलाल, हीरालाल और लाहड़ी को गिरफ्तार कर उन पर कोटा के सेशन्स न्यायालय मे मुकदमा चलाया गया।[४६]

अंग्रेज सरकार ने राव गोपालसिंह के विरुद्ध सबसे पहले अक्टूबर १९१४ मे कार्यवाही की।[४७] अजमेर के कमिश्नर ए० टी० होम्स ने उन्हे मिलने के लिए पुष्कर बुलाया। वहाँ उन्हे एक विशेष पत्र दिया गया तथा उनसे उनके बारे मे स्पष्टीकरण मागा। उन पर निम्न आरोप लगाए गए—

१. लाहटी के बयानो के अनुसार राव गोपालसिंह ने केवल सत्ता विरोधी विचारो का ही प्रचार नही किया, अपितु खुले रूप से क्रातिकारी आदोलन का समर्थन किया और उसे भी इसमे शामिल हो जाने के लिए कई व्यक्तियों को प्रोत्साहित किया।

२. उन पर यह भी आरोप था कि उनका सम्पर्क केसरीसिंह और विष्णुदत्त से रहा है। जिनका उद्देश्य अंग्रेज सरकार के विरुद्ध षडयन्त्र रचना तथा राजद्रोहात्मक कार्य करना था।

३. उन्होने विष्णुदत्त को अपने प्रतिनिधि के रूप मे अजमेर और जोधपुर में उपदेशक के रूप मे एक लम्बे समय तक नियुक्त रखा था।

४. उन्होने अपने व्यय पर अजमेर मे दो नवयुवक नारायणसिंह (मृत) और लाहडी को पढाया, जिनका कोटा व निमाज हत्याकाड मे प्रमुख भाग था।

५. जब विष्णुदत्त उनके यहाँ उपदेशक के रूप मे काम करता था तब उन्होंने उसकी सहायता के लिए मेंरसिंह को नियुक्त किया था जोकि केसरीसिंह द्वारा स्थापित गुप्त समिति का सदस्य रह चुका था।

आरोप पत्र मे यह भी लिखा गया कि उपर्युक्त आधार पर सरकार इस निर्णय पर पहुँची है कि इन क्रातिकारियो की गतिविधियो की उन्हे पूर्ण जानकारी होते हुए भी उन्होने उनसे सम्पर्क बनाए रखा तथा ताज के प्रति अपनी वफादारी का वचन निभाने मे वे असमर्थ रहे।[४८]

राव गोपालसिंह इस आरोप पत्र के सम्बन्ध मे कमिश्नर से मिलना चाहते थे परन्तु कमिश्नर ने उनसे मिलने के बजाय लिखित उत्तर की मांग की तथा उन्हें लिखित उत्तर के लिए पर्याप्त समय देने से भी इन्कार कर दिया गया। राव गोपालसिंह ने अपने लिखित उत्तर मे इन सभी आरोपो को अस्वीकार किया।[४९]

राव गोपालसिंह के लिखित उत्तर से यह अन्दाज लगाया जा सकता है कि वे आरोप-पत्र से भयभीत हो उठे थे तथा अपनी जागीर को बचाने के चक्कर मे थे। परन्तु वास्तव मे ऐसी बात नही थी। उस युग के क्रातिकारियो के लिए अपने बचाव मे इस तरह के वक्तव्य देना कोई अपराध नही था। इसलिए राव गोपालसिंह ने जो कदम उठाया वह क्रातिकारी परम्परा के विपरीत नहीं था। इसमे एक चुभने वाली बात यह थी कि उन्होने सम्पूर्ण दोष बारहठ केसरीसिंह पर थोप दिया था और उनके

विरुद्ध आरोप ऐसे समय प्रस्तुत किए जबकि उन पर कोटा में मुकदमा चल रहा था तथा इससे जोधपुर महन्त हत्याकांड के मुकदमे में उनके विरुद्ध सरकार को बल मिलता था। परन्तु उक्त वक्तव्य के आधार पर ही यह नहीं मान लेना चाहिए कि खरवा ठाकुर का क्रांतिकारी जीवन समाप्त हो चला था। बनारस षडयंत्र कांड में रामनाथ ने जो इकबाली बयान दिया उसमें उसने स्पष्ट कहा कि २१ फरवरी, १९१५ को सशस्त्र सैनिक विद्रोह की योजना तैयार करने और उसे व्यावहारिक रूप देने के लिए खरवा के राव गोपालसिंह भी प्रयत्नशील थे। उक्त क्रांति की योजना समय के पूर्व ही प्रकट हो गई और वह मूर्त रूप लेने से पहले ही दबा दी गई थी।[५०] इससे यह स्पष्ट है कि अंग्रेजों के आतंक से घबरा कर राव गोपालसिंह अपनी क्रांतिकारी कार्यवाहियों को छोड़ने वाले व्यक्ति नहीं थे। इसके विपरीत प्रस्तावित सशस्त्र क्रांति के लिए उनके द्वारा की गई तैयारी, यह प्रकट करती है कि निस्सन्देह उन्होंने अपनी गतिविधियों को और भी अधिक तेज कर दिया था।

बनारस षडयंत्र कांड के मुकदमे के दौरान सरकारी गवाहों और मुखबिरों ने अपने बयानों में राव गोपालसिंह का भी इस षडयंत्र में हाथ बतलाया था। मणिलाल ने स्वयं यह स्वीकार किया था कि राव साहब ने उसे तथा दामोदर व प्रतापसिंह को हथियार दिए थे। इसलिए सरकार का उनके प्रति संदेह होना स्वाभाविक था। राव गोपालसिंह की इन अंग्रेज विरोधी क्रान्तिकारी गतिविधियों के कारण अंग्रेज सरकार ने २५ जून, १९१५ को उनके विरुद्ध भारत रक्षा कानून के अन्तर्गत नजरबंदी आदेश जारी किया।[५१]

सरकार ने उन्हें चौबीस घन्टे के अन्दर खरवा छोड़ कर टाडगढ के तहसीलदार के समक्ष उपस्थित होने के आदेश दिए। उन्हें वहाँ तहसीलदार टाडगढ द्वारा निर्धारित स्थान पर अग्रिम आदेश प्राप्त होने तक तथा सूर्यास्त से सूर्योदय तक कहीं भी बाहर नहीं निकलने के आदेश दिए गए। उन पर तहसीलदार की पूर्व अनुमति के बिना टाडगढ़ निवासियों के अतिरिक्त अन्य बाहर के व्यक्तियों से मिलने पर भी प्रतिबंध लगा दिया गया था।[५२] २६ जून, १९१५ को राव गोपालसिंह को खरवा छोड़ना पड़ा। वहाँ से रवाना होते समय अपने पुत्र कुंवर गणपतसिंह को आशीर्वाद देते हुए उसे अपनी मातृभूमि और भगवान के प्रति वफादार रहने की सलाह दी।[५३]

३० जून, १९१५ को अजमेर के पुलिस सुपरिटेंडेंट ने खरवा के किले की तलाशी लेते समय जनाने महल को भी नहीं छोड़ा। राव गोपालसिंह के अनुचरों की संख्या केवल दस व्यक्तियों तक सीमित कर दी गई थी। उन्हें अपनी आत्मरक्षा के लिए केवल एक तलवार तथा शिकार के लिए दो बंदूक रखने की इजाजत थी।[५४] उन्हें इसके अतिरिक्त शस्त्रास्त्र सौंप देने के लिए कहा गया था परन्तु राव साहब ने इसे अस्वीकार कर दिया था। उन्हें यह सूचना मिल चुकी थी कि पुलिस

लोगों से उनके विरुद्ध जानकारी प्राप्त करने के लिए अत्याचार कर रही है। १० जुलाई को राव गोपालसिंह अपने सभी हथियारों सहित मोडसिंह के साथ ब्यावर की ओर निकल पड़े। उदयपुर और जोधपुर के पोलीटिकल एजेन्टों को उनकी गिरफ्तारी के लिए तार भेजे गए।[५५] पुलिस को राव साहब की जानकारी किशनगढ़ दरबार के माध्यम से मिली कि वे सलेमाबाद के मन्दिर में हैं। पुलिस ने वहां पहुंच कर मन्दिर को चारों ओर से घेर लिया।[५६] राव गोपालसिंह गिरफ्तार होने की अपेक्षा मरने-मारने के लिए तैयार थे।

इस तरह की तेज अफवाह फैल गई थी कि खरवा ठाकुर के सगे-संबंधी संगठित सशस्त्र विद्रोह के लिए तैयार हो रहे हैं। इन्सपेक्टर जनरल पुलिस ने स्थिति की गंभीरता का अनुभव करते हुए राव साहब को यह सलाह दी कि वे उनसे मिलें और पूर्ण भाईचारे के वातावरण में परिस्थिति पर विचार-विमर्श करें। राव गोपालसिंह ने उनसे लिखित रूप में यह जानना चाहा कि भारत रक्षा कानून के अंतर्गत अपराधों के अतिरिक्त टाडगढ़ छोड़कर चले आने की स्थिति में उन पर कौनसा जुर्म कायम किया जाएगा। सुपरिटेंडेंट ने राव गोपालसिंह को कहा कि उनकी यह व्यक्तिगत मान्यता है कि राजस्थान में दिल्ली-षड्यन्त्र काण्ड के मामले में जो प्रमाण मिले हैं वे इतने अपर्याप्त हैं कि उनके आधार पर उन पर कोई मुकदमा नहीं चलाया जा सकता है। उन्होंने यह भी कहा कि उनके पास दिल्ली के जांच अधिकारी का लिखित पत्र है कि यदि राव गोपालसिंह पर भारत रक्षा कानून के अन्तर्गत कार्यवाही की जाती है तो ऐसी संभावना है कि उन पर और मुकदमें लागू नहीं किए जाएगें।[५७] इस बातचीत के आधार पर राव गोपालसिंह ने स्वयं अपनेआपको पुलिस को सौंप दिया और उन्हें राजनीतिक बंदी के रूप में अजमेर लाया गया।[५८] उन्हें अजमेर के किले में रखा गया और १२ अक्टूबर, १९१५ को अजमेर के जिला दण्डनायक ने उन्हें दो वर्षों की सामान्य कारावास की सजा दी।

बनारस हत्याकाण्ड के सिलसिले में उन्हें नवम्बर में बनारस भेजा गया परन्तु सरकार के द्वारा मुकदमा हटा लेने के कारण २४ नवम्बर, १९१५ को उन्हें वापिस अजमेर भेज दिया गया।[५९] ४ सितम्बर, १९१७ को उन्हें रिहा कर दिया गया परन्तु उसी दिन पुनः उन्हें भारत रक्षा कानून के अन्तर्गत गिरफ्तार कर तिलहर भेज दिया गया जहाँ वे ढाई वर्ष तक हवालात में रहे। अजमेर-मेरवाड़ा जिले के खालसा ग्रामों व कस्बों के लोगों ने हजारों की संख्या में हस्ताक्षर करके राव गोपालसिंह की रिहाई के लिए वायसराय को प्रार्थना-पत्र भेजे।[६०] सन् १९२२ में उन्हें राजनीतिक बंदियों के साथ रिहा कर दिया गया। बारहठ केसरीसिंह को जून, १९१९ तक जेल का जीवन काटना पड़ा। उनकी यह आकांक्षा थी कि राजपूत समाज में सैनिक जागृति उत्पन्न कर मातृभूमि को मुक्त करवाया जाय। क्रांतिकारी योजनाओं

की असफलता से उन्हें इतना गहरा सदमा पहुँचा कि उन्होंने चम्बल तट पर एकान्तवास ग्रहण कर लिया था। अर्जुनलाल सेठी को प्रारम्भ में जयपुर जेल में बिना कार्यवाही के नौ महीने रखा गया। उसके बाद उन्हें वेलूर जेल में भेज दिया गया था। सन् १९१७ में अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने अपने कलकत्ता अधिवेशन में एक प्रस्ताव जेल में सेठी जी पर हो रहे अत्याचारों द्वारा सरकारी नीति की भर्त्सना की तथा केन्द्रीय सरकार से हस्तक्षेप की मांग की। सन् १९२० में, ६ वर्ष के लंबे जेल-जीवन के बाद उन्हें रिहा किया गया।[११]

बारहठ परिवार के सदस्य जोरावरसिंह और प्रतापसिंह का क्रांतिकारियों के इतिहास में सबसे महत्वपूर्ण स्थान है। निमाज हत्याकांड के बाद जोरावरसिंह फरारी का जीवन बिता रहे थे। उन्होंने दिल्ली में लार्ड हार्डिंग पर बम फैंकने के षड्यन्त्र में प्रमुख भूमिका निभाई थी। इसके पश्चात् उन्होंने पुलिस और गुप्तचर विभाग की आंखों में धूल झौंकते हुए अपनी गतिविधियां जारी रखीं। मालवा और राजपूताना के पर्वतीय क्षेत्रों में छिपे रहकर उन्होंने अपनी वृद्धावस्था के बावजूद अपनी क्रांतिकारी गतिविधियां जारी रखी थीं। बिहार में कांग्रेस मन्त्रिमंडल के गठन पर उनकी गिरफ्तारी के वारन्ट वापिस लिए जाने के प्रयत्न किए गए। उन पर से गिरफ्तारी के वारन्ट हटा लेने के एक दिन पूर्व ही नवम्बर, १९३९ को उनका देहान्त हो गया था।[१२]

राजपूताने के क्रांतिकारियों में सबसे अधिक ख्याति एवं महत्व प्रतापसिंह ने प्राप्त किया था। वह भारत की सभी महत्वपूर्ण क्रांतिकारी गतिविधियों से जुड़े हुए थे। शचीन्द्रनाथ सान्याल ने अपने बन्दी जीवन में प्रतापसिंह के अजेय साहस की मुक्तकंठ से सराहना की एवं उनके प्रति श्रद्धा व्यक्त की थी। उन्हें क्रांतिकारिता की घुट्टी बारहठ केसरीसिंह से विरासत में मिली थी और उन्होंने ही प्रताप के क्रांतिकारी जीवन को ढाला था। इसके लिए उन्हें आवश्यक प्रशिक्षण भी दिया गया। उन्होंने अजमेर में डी० ए० वी० कालेज में मेट्रिक तक शिक्षा प्राप्त की थी। किशोरावस्था में ही उन्हें दिल्ली में मास्टर अमीरचन्द के पास क्रांतिकारी प्रशिक्षण के लिए भेज दिया गया था। वहीं पर वे अवधबिहारी के निकट सम्पर्क में आए[१३] और रासबिहारी बोस तथा शचीन्द्रनाथ सान्याल से उनका परिचय हुआ।

वह शचीन्द्रनाथ सान्याल के निकटतम सहयोगी तथा रासबिहारी बोस के विश्वासपात्र थे। उत्तरी भारत में गदर आन्दोलन में वे शचीन्द्रनाथ सान्याल के साथ थे।[१४] उन्हें राजपूताना में सशस्त्र क्रांति को संगठित करने का काम सौंपा गया था ताकि अजमेर और नसीराबाद के मध्य सशस्त्र क्रांति आरम्भ की जा सके। इसके अतिरिक्त उन्हें भारत सरकार के गृह सदस्य को गोली से उड़ा देने का भी काम सौंपा गया था।[१५] रासबिहारी बोस के भारत छोड़ देने पर वे राजपूताना चले आए और

इस क्षेत्र मे क्रांतिकारी गतिविधियो का सचालन करते रहे। सेठी अर्जुनलाल और अपने पिता बारहठ केसरीसिंह की गिरफ्तारी के पश्चात् क्रांतिकारी गतिविधियों का सम्पूर्ण भार प्रताप को वहन करना पडा था। इसमें बृजमोहन माथुर और छोटेलाल जैन उनके सहयोगी थे। बनारस षडयत्र काड मे उनके खिलाफ वारट जारी हो जाने के कारण वे हैदराबाद (सिंध) चले गए थे। सिंध से वापस लौट आने पर बीकानेर जाते समय वे आशानाडा के अपने एक मित्र से मिलने रुक गए थे जोकि यहाँ स्टेशन मास्टर था। यही पर उन्हे विश्वासघात से गिरफ्तार कर लिया गया।[१६] प्रताप की गिरफ्तारी के साथ ही एक तरह से अजमेर और राजपूताना म क्रांतिकारी गतिविधियों का महत्वपूर्ण चरण समाप्त हो गया था।

सन् १९१५ के अग्रेज सरकार की दमनकारी नीति ने, जो कुछ भी क्रांतिकारी गतिविधियो के अवशेष बचे थे उन्हें क्रूरता से कुचल दिया था। राव गोपालसिंह और बारहठ केसरीसिंह के राजपूताने के राजघरानो एव अभिजात्य वर्ग से उनके निकटतम सपर्क के कारण अग्रेज अधिकारियो को यह सदेह होना स्वाभाविक ही था कि राजपूताना के राजघराने और जागीरदार भी इन क्रांतिकारियो की गतिविधियो मे थोडी बहुत रुचि लेते रहे हैं। इसलिए भारत सरकार ने राज दरबारों मे अपना सर्वोच्च सत्ता का नियत्रण-अकुश कस दिया था। इन रजवाडो मे लगभग एक दशक तक आतक का साम्राज्य स्थापित हो गया था। अग्रेज सरकार को अपनी वफादारी से आश्वस्त करने के लिए राजपूताना और अजमेर के नरेशो एव जागीरदारो ने अपनी प्रजा के लिए स्वराज्य की कल्पना तक को असभव बना दिया था।

लम्बे जेल जीवन एव अपनी योजनाओ की असफलता के कारण यहा के क्रांतिकारियो मे निराशा की भावना पैदा हो गई थी। यद्यपि वे इसके बारे मे यदा-कदा अपनी गतिविधियो से राजनीतिक जीवन मे हलचल अवश्य पैदा करते रहे। क्रांतिकारी जीवन के दौरान उनके परिवारो को जो आर्थिक क्षति उठानी पडी उसने भी उनकी स्थिति को डावाडोल कर दिया था।

क्रांतिकारी गतिविधियो की समाप्ति के चरण तक अजमेर का राजनीतिक आकाश एक दूसरे रग म रगने लगा था। क्रांतिकारियो की गतिविधियां शिक्षित समुदाय के कुछ व्यक्तियों तक ही केन्द्रित रही। ये लोग न तो खुला प्रचार ही कर पाते थे और न सार्वजनिक सभाए आयोजित कर सकते थे। पुलिस द्वारा आतकवादियो की गतिविधियों पर कडी नजर रहने के कारण वे आम जनता तक पहुँच भी नहीं पाते थे। बीसवी सदी के द्वितीय दशक के अत मे महात्मा गांधी के नेतृत्व मे राजनीतिक जागृति का प्रादुर्भाव हुआ। दिल्ली, अहमदाबाद रेलमार्ग के मध्य मे स्थित होने के कारण अजमेर इन हलचलो एव जागृति से अछूता नही रहा।[१७]

अजमेर मे राजनीतिक चेतना के प्रादुर्भाव के तीन आधार रहे हैं। प्रथम तो

अजमेर आर्य समाज की गतिविधियों का एक प्रमुख और शक्तिशाली केन्द्र रहा था। स्वामी दयानन्द ने अपने अन्तिम दिन यहीं व्यतीत किए थे और यहीं उनका निधन हुआ था। इसका परिणाम यह हुआ कि यथासमय अजमेर हिन्दू पुनर्जागरण की दिशा में भारतीय शिक्षा का एक महत्वपूर्ण केन्द्र बन गया था। आर्य समाज ने स्वामीजी की स्मृति में एक कालेज, स्कूल, पुस्तकालय, छापाखाना एवं अनाथालय की स्थापना कर अजमेर की जनता में सामाजिक और धार्मिक जाग्रति उत्पन्न कर दी थी।[६८] शिक्षा के इसी पुनर्जागरण के फलस्वरूप ही अजमेर की जनता की बौद्धिक चेतना का ही विकास नहीं हुआ अपितु उसमें एक नए ही ढंग की राजनीतिक चेतना भी जाग्रत हुई। बीसवीं सदी का प्रारम्भ अजमेर की जनता की बौद्धिक चेतना, सामाजिक जाग्रति एवं राजनीतिक स्थिरता का महत्वपूर्ण युग था। इस शैक्षणिक एवं प्रगतिशील तथा उदार सुधारवादी आन्दोलन ने अपना स्वरूप विकसित किया और अजमेर-मेरवाड़ा की जनता के सर्वांगीण विकास में महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ।[६९] आर्य समाज के अलावा इस क्षेत्र में ईसाई पादरियों द्वारा विभिन्न शिक्षण-संस्थान खोले गए थे। उनके द्वारा भी अजमेर की जनता का दकियानूसी पिछड़ापन समाप्त हुआ।[७०]

अजमेर में इस चेतना के फलस्वरूप राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक आन्दोलनों का उदय हुआ व अजमेर ने खिलाफत एवं सविनय अवज्ञा आंदोलनों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। १६ मार्च, १९२० को अजमेर में खिलाफत समिति की बैठक हुई। अजमेर में खिलाफत दिवस मनाया गया जिसमें डा० अंसारी, मौलाना मोईनुद्दीन, चांदकरण शारदा और अर्जुनलाल शारदा आदि ने भाग लिया।[७१] सार्वजनिक सभाओं में जलियांवाला बाग की क्रूरता की निंदा की गई तथा हिन्दू-मुस्लिम एकता के उद्देश्य को आगे बढ़ाने का प्रयास किया गया। जनता से सत्याग्रह में भाग लेने एवं कर न चुकाने का आह्वान किया गया तथा विदेशों को भारत से खाद्यान्न के निर्यात पर रोक की मांग के समर्थन में जनमत तैयार किया गया। स्वदेशी आंदोलन अजमेर में द्रुत गति से चला। सरकारी नौकरियों में सभी श्रेणियों एवं सभी पदों पर भारतीयों को रखने तथा अजमेर-मेरवाड़ा में भारतीय उद्योग धन्धों की स्थापना के बारे में समय समय पर प्रस्ताव व सभाओं से जनमत तैयार किया गया।[७२]

राजपूताने के मध्य में स्थित होने तथा राजनीतिक जाग्रति का केन्द्र होने के कारण अजमेर उन दिनों रियासती जनता के आन्दोलनों का भी केन्द्र बना हुआ था। रियासतों से निष्कासित राजनीतिक नेता यहीं शरण लेते थे। रियासती जनता में जाग्रति के लिए पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन भी यहीं से होता था। भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन के साथ-साथ रियासतों में उत्तरदायी शासन के लिए आन्दोलन का संचालन भी अजमेर से ही होता था। अंग्रेजों के सीधे नियन्त्रण में होने के बाद भी अजमेर ने

कभी अपने को राजपूताना की अन्य रियासतो से अलग नहीं माना। इसलिए रियासती आन्दोलनो मे अजमेर का महत्वपूर्ण योगदान रहा था।

अध्याय ११

१ चीफ कमिश्नर द्वारा सचिव भारत सरकार को प्रस्तुत रिपोर्ट, दिनाक १-१०-१८८२ फाइल सख्या ४६५ ई० (रा० रा० पु० म०)।

२ राजद्रोह समिति की रिपोर्ट पृ० ५५ (रा० रा० पु० म०)।
सम्राट के विरुद्ध मोतीचन्द एव विष्णुदत्त के मुकदमे मे सत्र न्यायाधीश शाहबाद का फैसला, फाइल सख्या ५१, अजमेर खण्ड १, राजपूताना षडयन्त्र (रा० रा० पु० म०)।

३. जोधपुर महत हत्याकाण्ड म कोटा महाराव का फैसला (रा० रा० पु० म०)।

४ राजद्रोह समिति की रिपोर्ट पृ० ५५ (रा० रा० पु० म०)।

५ शकरसहाय सक्सेना–राजस्थान केसरी श्री विजयसिंह पथिक की जीवनी (१९६३) पृ० ८७।

६ रेजीडेंसी रेकॉर्ड, फाइल स० ई० ३–४५ (रा० रा० पु० म०)।

७ कोटा रेकॉर्ड–सीमा मुत्फरीक भडार, सख्या ४, बस्ता सख्या १०२९ (रा० रा० पु० म०)।

८. राजपूताना हेराल्ड १८ मार्च, १८८५, ३० सितम्बर, १८८५, १० अगस्त, १८८७।

९ डॉ० दशरथ शर्मा–राजस्थान–सार्वजनिक जन सम्पर्क कार्यालय प्रकाशन (१९५१)।

१०. बारहठ केसरीसिंह की आत्मकथा–राजस्थान का गोपनीय एव रहस्यमय इतिहास–पाडुलिपि खण्ड ४ (रा० रा० पु० म०)।

११. फाइल सख्या ५१, खण्ड सख्या १, अजमेर रेकॉर्ड (रा० रा० पु० म०)।

१२ रामनारायण चौधरी–वर्तमान राजस्थान (१९४८) पृ० २७।

१३ शकरसहाय सक्सेना–राजस्थान केसरी श्री विजयसिंह पथिक की जीवनी (१९६३) पृ० ९५।

१४ खडगावत–राजस्थान्स रोल इन दी स्ट्रगल ऑफ १८५७ पृ० ८, ९।

१५ स्वामी दयानन्द और मेवाड के महाराजाधिराज सज्जनसिंह तथा शाहपुरा राजाधिराज नाहरसिंह के बीच पत्र व्यवहार (रा० रा० पु० म०)।

१६ सुरजनसिंह का बयान (रा० रा० पु० म०)।

१७ महर्षि दयानन्द शताब्दी के अवसर पर दिए गए भाषण, बीकानेर सरकार, गृह विभाग फाइल सख्या सी० २०३।

१८ राव गोपालसिंह का बयान, अजमेर रेकॉर्ड, फाइल सख्या ५१, खण्ड १, पृ० १२८ से १५४ (रा० रा० पु० म०)।

१९ रामनारायण चौधरी—वर्तमान राजस्थान (१९४८) पृ० २७।

२० उपरोक्त, राजस्थान षडयन्त्र पर आर्मस्ट्रोग की टिप्पणी, अजमेर रिकॉर्ड, फाइल न० ५१, खण्ड १ (रा० रा० पु० म०)।

२१. उपर्युक्त।

२२ राजपूताना षडयन्त्र, अजमेर रेकॉर्ड, फाइल सख्या ५१ खण्ड १ (रा० रा० पु० म०)।

२३ जोधपुर महत हत्याकाड मे कोटा महाराव का फैसला (रा० रा० पु० म०)।

२४ हर प्रसार, आजादी के दीवाने पृ० ४९–५०।

२५ मोडसिंह पुरोहित का बयान (रा० रा० पु० म०)।

२६ सुरजानसिंह का बयान (रा० रा० पु० म०)।

२७ सेडीशन कमेटी रिपोर्ट (१९१८) पृ० ५५ से ६०।

२८ जोधपुर महन्त हत्याकांड मे कोटा महाराव का फैसला (रा० रा० पु० म०)।

२९ सुरजानसिंह का बयान (रा० रा० पु० म०)।

३० सेडीशन कमेटी रिपोर्ट (१९१८) पृ० ५४ से ६०।

३१ राव गोपालसिंह खरवा फाइल न० ४६, पत्र सख्या एस० डी० एल० ५४०८ दि० ११–११–१९०९ (रा० रा० पु० म०)।

३२ राजपूताना षडयन्त्र अजमेर रेकॉर्ड, फाइल सख्या ५१, खण्ड १ (रा० रा० पु० म०)।

३३ जोधपुर महन्त हत्याकाड मे कोटा महाराव का फैसला (रा० रा० पु० म०)।

३४ राजपूताना षडयन्त्र, अजमेर रेकॉर्ड, फाइल न० ५१, खण्ड १ पृ० १७ से २६।

कभी अपने को राजपूताना की अन्य रियासतो से अलग नही माना। इसलिए रियासती आन्दोलनो में अजमेर का महत्वपूर्ण योगदान रहा था।

अध्याय ११

१ चीफ कमिश्नर द्वारा सचिव भारत सरकार को प्रस्तुत रिपोर्ट, दिनाक १–१०–१८८२ फाइल सख्या ४६५ ई० (रा० रा० पु० म०)।

२ राजद्रोह समिति की रिपोर्ट पृ० ५५ (रा० रा० पु० म०)।
सम्राट के विरुद्ध मोतीचन्द एव विष्णुदत्त के मुकदमे मे सत्र न्यायाधीश शाहबाद का फैसला, फाइल सख्या ५१, अजमेर खण्ड १, राजपूताना षडयन्त्र (रा० रा० पु० म०)।

३. जोधपुर महत हत्याकाण्ड मे कोटा महाराव का फैसला (रा० रा० पु० म०)।

४ राजद्रोह समिति की रिपोर्ट पृ० ५५ (रा० रा० पु० म०)।

५ शकरसहाय सक्सेना–राजस्थान केसरी श्री विजयसिंह पथिक की जीवनी (१६६३) पृ० ८७।

६ रेजीडेंसी रेकार्ड, फाइल स० ई० ३–४५ (रा० रा० पु० म०)।

७ कोटा रेकॉर्ड–सीमा मुतफरीक भडार, सख्या ४, बस्ता सख्या १०२६ (रा० रा० पु० म०)।

८. राजपूताना हेराल्ड १८ मार्च, १८८५, ३० सितम्बर, १८८५, १० अगस्त, १८८७।

६ डॉ० दशरथ शर्मा–राजस्थान–सार्वजनिक जन सम्पर्क कार्यालय प्रकाशन (१६५१)।

१०. बारहठ केसरीसिंह की आत्मकथा–राजस्थान का गोपनीय एव रहस्यमय इतिहास–पाडुलिपि खण्ड ४ (रा० रा० पु० म०)।

११. फाइल सख्या ५१, खण्ड सख्या १, अजमेर रेकॉर्ड (रा० रा० पु० म०)।

१२ रामनारायण चौधरी–वर्तमान राजस्थान (१६४८) पृ० २७।

१३ शकरसहाय सक्सेना–राजस्थान केसरी श्री विजयसिंह पथिक की जीवनी (१६६३) पृ० ६५।

१४ खडगावत–राजस्थान्स रोल इन दी स्ट्रगल ऑफ १८५७ पृ० ८, ६।

१५ स्वामी दयानन्द और मेवाड के महाराजाधिराज सज्जनसिंह तथा शाहपुरा राजाधिराज नाहरसिंह के बीच पत्र व्यवहार (रा० रा० पु० म०)।

१६ सुरजनसिंह का बयान (रा० रा० पु० म०)।

१७ महर्षि दयानन्द शताब्दी के अवसर पर दिए गए भाषण, बीकानेर सरकार, गृह विभाग फाइल सख्या सी० २०३।

१८ राव गोपालसिंह का बयान, अजमेर रेकॉर्ड, फाइल सख्या ५१, खण्ड १, पृ० १२८ से १५४ (रा० रा० पु० म०)।

१९ रामनारायण चौधरी–वर्तमान राजस्थान (१९४८) पृ० २७।

२० उपरोक्त, राजस्थान षडयन्त्र पर आर्मस्ट्रोग की टिप्पणी, अजमेर रिकॉर्ड, फाइल न० ५१, खण्ड १ (रा० रा० पु० म०)।

२१ उपर्युक्त।

२२ राजपूताना षडयन्त्र, अजमेर रेकॉर्ड, फाइल सख्या ५१ खण्ड १ (रा० रा० पु० म०)।

२३ जोधपुर महत हत्याकाड म कोटा महाराव का फैसला (रा० रा० पु० म०)।

२४ हर प्रसार, आजादी के दीवाने पृ० ४९–५०।

२५ मोडसिंह पुरोहित का बयान (रा० रा० पु० म०)।

२६ सुरजानसिंह का बयान (रा० रा० पु० म०)।

२७ सेडीशन कमेटी रिपोर्ट (१९१८) पृ० ५५ से ६०।

२८ जोधपुर महन्त हत्याकाड मे कोटा महाराव का फैसला (रा० रा० पु० म०)।

२९ सुरजानसिंह का बयान (रा० रा० पु० म०)।

३० सेडीशन कमेटी रिपोर्ट (१९१८) पृ० ५५ से ६०।

३१ राव गोपालसिंह खरवा फाइल न० ४६, पत्र सख्या एस० डी० एल० ५४०८ दि० ११–११–१९०९ (रा० रा० पु० म०)।

३२ राजपूताना षडयन्त्र अजमेर रेकॉर्ड, फाइल सख्या ५१, खण्ड १ (रा० रा० पु० म०)।

३३ जोधपुर महन्त हत्याकांड म कोटा महाराव का फैसला (रा० रा० पु० म०)।

३४ राजपूताना षडयन्त्र, अजमेर रेकॉर्ड, फाइल न० ५१, खण्ड १ पृ० १७ से २६।

कभी अपने को राजपूताना की अन्य रियासतो से अलग नही माना। इसलिए रियासती आन्दोलनो में अजमेर का महत्वपूर्ण योगदान रहा था।

अध्याय ११

१ चीफ कमिश्नर द्वारा सचिव भारत सरकार को प्रस्तुत रिपोर्ट, दिनाक १–१०–१८८२ फाइल सख्या ४६५ ई० (रा० रा० पु० म०)।

२ राजद्रोह समिति की रिपोर्ट पृ० ५५ (रा० रा० पु० म०)।
सम्राट के विरुद्ध मोतीचन्द एव विष्णुदत्त के मुकदमे मे सत्र न्यायाधीश शाहबाद का फैसला, फाइल सख्या ५१, अजमेर खण्ड १, राजपूताना षडयन्त्र (रा० रा० पु० म०)।

३. जोधपुर महत हत्याकाण्ड मे कोटा महाराव का फैसला (रा० रा० पु० म०)।

४ राजद्रोह समिति की रिपोर्ट पृ० ५५ (रा० रा० पु० म०)।

५ शकरसहाय सक्सेना–राजस्थान केसरी श्री विजयसिंह पथिक की जीवनी (१६६३) पृ० ८७।

६ रेजीडेंसी रेकॉर्ड, फाइल स० ई० ३–४५ (रा० रा० पु० म०)।

७ कोटा रेकॉर्ड–सीमा मुतफरीक भडार, सख्या ४, बस्ता सख्या १०२६ (रा० रा० पु० म०)।

८. राजपूताना हेराल्ड १८ माध, १८८५, ३० सितम्बर, १८८५, १० अगस्त, १८८७।

६ डॉ० दशरथ शर्मा–राजस्थान–सार्वजनिक जन सम्पर्क कार्यालय प्रकाशन (१६५१)।

१०. बारहठ केसरीसिंह की आत्मकथा–राजस्थान का गोपनीय एव रहस्यमय इतिहास–पाडुलिपि खण्ड ४ (रा० रा० पु० म०)।

११. फाइल सख्या ५१, खण्ड सख्या १, अजमेर रेकॉर्ड (रा० रा० पु० म०)।

१२ रामनारायण चौधरी–वर्तमान राजस्थान (१६४८) पृ० २७।

१३ शकरसहाय सक्सेना–राजस्थान केसरी श्री विजयसिंह पथिक की जीवनी (१६६३) पृ० ६५।

१४ खडगावत–राजस्थान्स रोल इन दी स्ट्रगल ऑफ १८५७ पृ० ८, ६।

१५ स्वामी दयानन्द और मेवाड़ के महाराजाधिराज सज्जनसिंह तथा शाहपुरा राजाधिराज नाहरसिंह के बीच पत्र व्यवहार (रा० रा० पु० म०)।
१६ सुरजनसिंह का बयान (रा० रा० पु० म०)।
१७ महर्षि दयानन्द शताब्दी के अवसर पर दिए गए भाषण, बीकानेर सरकार, गृह विभाग फाइल संख्या सी० २०३।
१८ राव गोपालसिंह का बयान, अजमेर रेकॉर्ड, फाइल संख्या ५१, खण्ड १, पृ० १२८ से १५४ (रा० रा० पु० म०)।
१९ रामनारायण चौधरी—वर्तमान राजस्थान (१९४८) पृ० २७।
२० उपरोक्त राजस्थान षड्यन्त्र पर आर्मस्ट्रोंग की टिप्पणी, अजमेर रिकॉर्ड, फाइल न० ५१, खण्ड १ (रा० रा० पु० म०)।
२१ उपर्युक्त।
२२ राजपूताना षड्यन्त्र, अजमेर रेकॉर्ड, फाइल संख्या ५१ खण्ड १ (रा० रा० पु० म०)।
२३ जोधपुर महंत हत्याकांड में कोटा महाराव का फैसला (रा० रा० पु० म०)।
२४ हर प्रसार, आजादी के दीवाने पृ० ४९–५०।
२५ मोड़सिंह पुरोहित का बयान (रा० रा० पु० म०)।
२६ सुरजानसिंह का बयान (रा० रा० पु० म०)।
२७ सेडीशन कमेटी रिपोर्ट (१९१८) पृ० ५५ से ६०।
२८ जोधपुर महन्त हत्याकाड में कोटा महाराव का फैसला (रा० रा० पु० म०)।
२९ सुरजानसिंह का बयान (रा० रा० पु० म०)।
३० सेडीशन कमेटी रिपोर्ट (१९१८) पृ० ५४ से ६०।
३१ राव गोपालसिंह खरवा फाइल न० ४६, पत्र संख्या एस० डी० एल० ५४०८ दि० ११–११–१९०९ (रा० रा० पु० म०)।
३२ राजपूताना षड्यन्त्र अजमेर रेकॉर्ड, फाइल संख्या ५१, खण्ड १ (रा० रा० पु० म०)।
३३ जोधपुर महन्त हत्याकांड में कोटा महाराव का फैसला (रा० रा० पु० म०)।
३४ राजपूताना षड्यन्त्र, अजमेर रेकॉर्ड, फाइल न० ५१, खण्ड १ पृ० १७ से २६।

३५. सुरजनसिंह का बयान (रा० रा० पु० मं०)।

३६. सुरजनसिंह व मोडसिंह के बयान (रा० रा० पु० म०)।

३७ उपर्युक्त।

३८ शकरसहाय सक्सेना, राजस्थान केसरी श्री विजयसिंह पथिक की जीवनी (१९६३) पृ० ९७ व १००।

३९. रामनारायण चौधरी–वर्तमान राजस्थान (१९४९)।
शकरसहाय सक्सेना–राजस्थान केसरी श्री विजयसिंह पथिक की जीवनी (१९६३)।

४० जोधपुर महन्त हत्याकाड मे कोटा महाराव का फैसला (रा० रा० पु० म०)।

४१ शकरसहाय सक्सेना–राजस्थान केसरी श्री विजयसिंह पथिक की जीवनी (१९६३) पृ० ९५–९६।

४२. जोधपुर महन्त हत्याकाड मे कोटा महाराव का फैसला (रा० रा० पु० म०)।

४३ अजमेर रेकॉर्ड, फाइल न० ५१, खण्ड १ (रा० रा० पु० मं०)।

४४ उपर्युक्त।

४५ उपर्युक्त।

४६ अजमेर रेकॉर्ड, फाइल न० ५१, खण्ड १।
जोधपुर महन्त हत्याकाड मे सेशन्स जज कोटा का फैसला (रा० रा० पु० म०)।

४७ अजमेर रेकॉर्ड, फाइल न० ५१, खण्ड १ व २ (रा० रा० पु० मं०)।

४८ होम्स का पत्र दिनाक २३–१०–१९१४ व कमिश्नर को प्रस्तुत रिपोर्ट दि० २६–७–१९१४।
अजमेर रेकॉर्ड, फाइल न० ५१, (रा० रा० पु० म०)।

४९ राव गोपालसिंह का जवाब दि० १४–८–१९१४ फाइल न० ५१ (रा० रा० पु० म०)।

५० मोडसिंह सुरजनसिंह व ईश्वरदान के बयान (रा० रा० पु० म०)।
रामनारायण चौधरी–वर्तमान राजस्थान (१९४९) पृ० ३१।
शकरसहाय सक्सेना–राजस्थान केसरी श्री विजयसिंह पथिक की जीवनी (१९६३) पृ० १००, १०१, १०२, १०३, १०४।

श्री शकरसहाय सक्सेना ने इस क्रान्ति का विस्तृत वर्णन करते हुए लिखा है —

दिसम्बर १६१४ मे वाराणसी मे जहाँ रासबिहारी बोस छिपे हुए थे, भारत के समस्त क्रातिकारी दलो के नेताओ का एक सम्मेलन हुआ। विप्लव की एक पूरी योजना बना ली गई। क्रातिकारी दल के दूत बन्नू पेशावर से सिंगापुर तक सभी अग्रेज छावनियो मे घुसकर वहाँ की परिस्थिति की जानकारी कर चुके थे। क्रातिकारियो ने सभी सैनिक छावनियों मे भारतीय सैनिको से सबध स्थापित कर लिया था और प्रत्येक छावनी मे देशभक्त क्रातिकारी सैनिको का एक दल खडा कर दिया था जो सेना मे क्रातिकारी भावनाओ को भरता था। क्रातिकारियो ने यह मालूम कर लिया था कि उस समय देश में कुल १५ हजार गोरे सैनिक थे। अधिकाश भारतीय सेनाए क्राति होने पर देश की आजादी के लिए क्रातिकारियों के साथ शस्त्र उठाने को तैयार थी। क्रातिकारियो की योजना थी कि पहले लाहौर, रावलपिंडी और फीरोजपुर की छावनियो की सेनाए विद्रोह कर क्रातिकारियो और देशभक्त जनता के सहयोग से वहाँ के शस्त्रागारो पर जहाँ कि देश के विशाल शस्त्रागार थे उन पर अधिकार करले। देश की दूसरी छावनियो की सेनाए उस सकेत को पाते ही उठ खडी होने को तैयार रखी जाए और क्रातिकारियो की मदद से अपने अपने प्रदेश के अग्रेजो को गिरफ्तार कर लिया जाए। अजमेर तथा अन्य स्थानों पर राजस्थान के क्रातिकारियों ने अग्रेजो के भारतीय नौकरों को पहले ही अपने साथ मिलाकर तय कर लिया था कि निश्चित तिथि पर सकेत पाते ही वे अग्रेजो को सोते हुए पकड उन्हे क्रातिकारियो के हवाले करदें। जहां तक हो सके रुधिर बहाने से बचा जाए और देश की शासन सत्ता अपने हाथ में करली जाए। देश के आन्तरिक शासन पर एक बार अधिकार प्राप्त कर लेने पर अग्रेजो के शत्रु देशो जर्मनी, तुर्की आदि से विधिवत् सम्बन्ध जोड कर, जिसके लिए प्रवासी भारतीय क्रातिकारी योरोप मे पहले से ही प्रयत्न कर रहे थे, उनसे सहायता प्राप्त कर अग्रेजों द्वारा किए जाने वाले जवाबी हमलो का सामना करने की तैयारी की जाए।

क्राति की सब तैयारिया हो जाने पर क्राति का आरम्भ स्वय अपने निरीक्षण और नेतृत्व मे कराने के लिए रासबिहारी बोस जनवरी, १६१५ के आरम्भ मे वाराणसी से हट कर लाहौर चले आए। दिल्ली और राजस्थान का प्रबन्ध देखने के लिए शचीन्द्र सान्याल को भेजा गया। २१ फरवरी, १६१५ भारत की आजादी के लिए सशस्त्र क्राति आरम्भ करने की तिथि निश्चित करदी गई। उस दिन प्रसिद्ध क्रातिकारी देशभक्त

कर्तारसिंह अपने दल के साथ फीरोजपुर के शस्त्रागार पर आक्रमण करने वाला था। उसकी सफलता की सूचना मिलते ही अन्य सभी स्थानों पर क्रांति आरम्भ की जाने वाली थी। राजस्थान में खरवा ठाकुर गोपालसिंह को दामोदरदास राठी से मिलकर ब्यावर पर और भूपसिंह को अजमेर और नसीराबाद पर अधिकार कर लेने का कार्य सौंपा गया। जनवरी के अन्त तक यह सारी व्यवस्था कर शचीन्द्र सान्याल वाराणसी लौट गया जहाँ क्रांति का सूत्रधार वह स्वयं था।

भूपसिंह अब तेजी से राजस्थान की क्रांतिकारी शक्तियों को संगठित करने में जुट गए।

यह सब तैयारी भारत में अत्यन्त गुप्त तरीके से की जा रही थी। परन्तु योरोप तथा अन्य देशों में भारतवासियों ने सशस्त्र क्रांति की तैयारी को उतनी सतर्कतापूर्वक गुप्त नहीं रखा। फ्रांस की पुलिस ने युद्ध आरम्भ होने के कुछ मास बाद ही अंग्रेजों को सूचना दी कि योरोप के भारतीयों में भारत में शीघ्र ही फूटने वाले किसी सैनिक विद्रोह की चर्चा बहुत जोरों पर है। अतएव भारत में भी पुलिस बहुत चौकसी हो गई और फरवरी, १९१५ के आरम्भ में वह अपने एक गुप्तचर को क्रांतिकारियों के दल में सम्मिलित कर देने में सफल हो गई। उसका नाम कृपालसिंह था। वह क्रांतिकारियों की सारी खबरें पुलिस को देता था। क्रांतिकारियों को उस पर शीघ्र ही संदेह हो गया। उन्होंने उस पर निगाह रखना आरम्भ की तो उनका सन्देह पक्का हो गया क्योंकि वह प्रतिदिन एक निश्चित समय पुलिस अधिकारियों के पास जाता था। होना तो यह चाहिए था कि उसको तुरन्त गोली मारदी जाती परन्तु पंजाबी क्रांतिकारी यह सोचते रहे कि कृपालसिंह को मार डालने से न जाने क्या गड़बड़ मच जाए अतएव उन्होंने कृपालसिंह को एक प्रकार से नजरबंद कर लिया और २१ फरवरी, १९१५ के स्थान पर क्रांति की तिथि बदलकर १९ फरवरी करदी। कारण यह था कि कृपालसिंह १९ फरवरी से तीन चार दिन पूर्व सेना में फूट पड़ने वाले उस विप्लव की सूचना लाहौर के अंग्रेज अधिकारियों को दे आया था। अस्तु २१ फरवरी के विद्रोह की सूचना अंग्रेज अधिकारियों के पास पहुँच चुकी थी। इसी कारण क्रांतिकारियों ने विप्लव की तारीख को १९ फरवरी अर्थात् दो दिन पूर्व कर दिया। परन्तु दुर्भाग्यवश एक और दुर्घटना हो गई। इस नई तारीख की सूचना को छावनी में ले जाने का कार्य जिसको सौंपा गया था उसने लौटकर रासबिहारी से कहा "छावनी में मैं १९ तारीख की सूचना दे आया" उस समय कृपालसिंह वहीं बैठा हुआ था। उस व्यक्ति

को कृपालसिंह के बारे में कुछ भी मालूम नहीं था। सम्भवत यह घटना १८ फरवरी की थी। कृपालसिंह ने किसी तरह यह सूचना भी पुलिस के पास भिजवा दी।

इसके कुछ घंटो बाद ही १९ फरवरी को धर पकड आरम्भ हो गई। अंग्रेजो को इस क्रांति का पता चल गया। क्रांति असफल हो गई। लाहौर मे रासबिहारी बोस और कर्तारसिंह को घोर निराशा हुई। सच तो यह है कि १८५७ के उपरान्त विप्लव की इतनी बडी तैयारी इस देश मे कभी नहीं हुई। वह सारी तैयारी व्यर्थ चली गई। रासबिहारी बोस को इससे गहरी निराशा हुई। लाहौर से रासबिहारी बोस तुरन्त वाराणसी की ओर चल पडे। देशद्रोही कृपालसिंह के विश्वासघात मे देश की स्वतन्त्रता का वह महायज्ञ असफल हो गया।

राजस्थान मे भूपसिंह, खरवा के रावसाहब गोपालसिंह, ठाकुर मोडसिंह तथा सवाईसिंह आदि २१ फरवरी, १९१५ को खरवा स्टेशन से कुछ दूर जगल मे कई हजार वीर योद्धाओ का क्रांतिकारी दल लिए विप्लव करने की तैयारी कर सकेत पाने की प्रतीक्षा कर रहे थे। रात्रि को दस बजे अजमेर से अहमदाबाद जाने वाली जो रेलगाडी खरवा से गुजरती थी उससे खरवा स्टेशन के समीप मे एक बम का धमाका कार्यारम्भ का सकेत था। उस सकेत को पाते ही भूपसिंह तथा खरवा ठाकुर साहब को अजमेर और ब्यावर पर आक्रमण कर देना था। किन्तु सकेत नही मिला। बम का धडाका नही हुआ। अगले दिन सदेशवाहक ने आकर लाहौर मे घटी घटनाओ की उन्हे सूचना दे दी। बहुत अधिक सख्या मे अस्त्र-शस्त्र इकट्ठे किए गए थे, जिनमें ३० हजार से अधिक बदूकें थीं, बहुत अधिक राशि में गोला और बारूद आदि था, उन सभी को तुरन्त गुप्त स्थानों मे छिपा दिया गया और क्रांतिकारी वीर स्वयसेवक सैनिक दल बिखर गया।

भूपसिंह दिल्ली के रहने वाले अपने एक साथी रलियाराम को साथ ले खरवा तथा अजमेर इत्यादि मे सब व्यवस्था कर बडौदा तक जाकर अपने सब क्रातिकारी साथियो को सावधान कर आए। सात आठ दिन बाद ही पुलिस ने खरवा पर छापा मार कर खरवा नरेश गोपालसिंह आदि को गिरफ्तार करने की तैयारी की। होने वाली गिरफ्तारी की खबर उन्हें क्रातिकारी भेदिए से पहले ही मिल गई थी। विचार-विमर्श हुआ कि क्या किया जाए। कारण यह था कि शीघ्र ही सेना की टुकडी उन्हें गिरफ्तार करने के लिए आन वाली थी। भूपसिंह ने कहा कि चुपचाप आत्मसमर्पण कर अग्रेजो की जेल मे अनिश्चित काल तक

पड़े रह कर सड़ने या फिर फासी के तख्ते पर लटकाए जाने की अपेक्षा लड़ते हुए मरना कही अधिक गौरवमय है। भूपसिंह की बात सबको उचित प्रतीत हुई और सभी ने आत्मसमर्पण न कर लड़ते हुए मर जाने का निश्चय किया।

अन्य सभी साधारण क्रांतिकारी दल के सदस्यों को खरवा से हटा दिया गया। इसके उपरान्त भूपसिंह, खरवा नरेश ठाकुर गोपालसिंह उसके भाई मोढ़सिंह, रलियाराम और सवाईसिंह पाच क्रांतिकारी वीर बहुत से अस्त्रशस्त्र, बन्दूकें, गोला बारूद, बम इत्यादि लेकर तथा आठ दस दिन के खाने का सामान आदि लेकर रातोंरात खरवा के गढ से निकलकर पास के जगल मे बनी हुई ओदी (शिकारी बुर्ज) मे मोर्चा-बन्दी कर जा डटे। दूसरे ही दिन अजमेर का अंग्रेज कमिश्नर ५०० सैनिको की टुकडी लेकर खरवा आया। उनके गढ मे न मिलने पर उन्हें खोजता हुआ वह उस शिकारी बुर्ज के पास पहुँचा और उसको चारो ओर से घेरकर उसने उन वीरो से आत्मसमर्पण करने के लिए कहा। लेकिन उन वीरो ने आत्मसमर्पण कर जेल मे सड़ने की अपेक्षा शत्रु से लड़कर मरना ही अधिक गौरवमय समझा। जब अंग्रेज कमिश्नर ने देखा कि वे लोग लड़कर मरने को तैयार हैं तो वह भयभीत हो गया। वह जानता था कि यदि वास्तव मे लड़ाई हुई तो बहुत सम्भव है कि वहा की जनता कहीं विद्रोही होकर उनकी रक्षा के लिए न उठ खडी हो। क्योकि खरवा नरेश राष्ट्रवर गोपालसिंह उस प्रदेश मे बहुत ही लोकप्रिय थे और जनता उन्हे श्रद्धा से देखती थी। इसके साथ ही भारतीय सैनिक टुकडी की राजभक्ति पर भी उसे पूरा भरोसा नही था। ऐसी दशा मे यदि वह घिरे हुए क्रांतिकारियो से युद्ध करता और कुछ समय युद्ध चलता तो समस्त राजस्थान मे विद्रोह की अग्नि भडक उठने का भय था। इसके अतिरिक्त ऊपर से भी कमिश्नर को यही आदेश मिला था कि जहाँ तक हो गोली चलने की *नौबत न आने दी जाए। परन्तु अजमेर के पुलिस रेकॉर्ड मे इस घटना* का कहीं वर्णन नहीं है।

५१. निदेशक क्रिमिनल इटेलिजेन्स ने सचिव, परराष्ट्र व राजनीतिक विभाग भारत सरकार को अपने पत्र दिनाक १६ जून, १९१५ मे लिखा कि मणिलाल ने देहली मजिस्ट्रेट के सम्मुख अपने बयान मे राव गोपालसिंह का नाम भी कई षडयत्रो मे लिया है। उसने यह भी लिखा है कि मणिलाल के बयानों के अलावा भी कई ऐसे प्रमाण हैं जो राव गोपालसिंह को दोषी ठहराते हैं। सचिव परराष्ट्र व राजनीतिक विभाग भारत

सरकार ने पत्र दि० १६–६–१५ मे ई० कॉलविन ए० जी० जी० राजपूताना को राव गोपालसिंह के विरुद्ध तुरन्त कार्यवाही करने के आदेश दिए-अजमेर रेकॉर्ड, फाइल सख्या ५६, खड एफ पृ० १,२,३,४,५, राव गोपालसिंह की नजरबन्दी के आदेश दि० २५–६–१६१५ इस फाइल में पृ० १० पर हैं।

५२. राव गोपालसिंह की नजरबन्दी के आदेश दि० २५–६–१६१५ अजमेर रेकॉर्ड, फाइल सख्या ५६, खड एफ पृ० १०।
शंकरसहाय सक्सेना राजस्थान केसरी श्री विजयसिंह पथिक की जीवनी (१६६३) पृ० १०५।

५३. सुरजनसिंह का बयान (रा० रा० पु० म०)।

५४. ई० कॉलविन ए० ए० जी० राजपूताना के माबू से निर्देश अजमेर रेकॉर्ड, फाइल सख्या ५६।

५५. अजमेर कमिश्नर का पत्र दि० २७–८–१६१५ अजमेर रेकॉर्ड, फाईल सख्या ५६।

५६. कमिश्नर अजमेर का तार दि० २७–८–१६१५ अजमेर रेकॉर्ड, फाइल सख्या ५६।

दीवान किशनगढ का ई० कॉलविन को तार दि० २७–८–१५ अजमेर रिकॉर्ड, फाइल सख्या ५६।

लै० कर्नल के द्वारा ई० कॉलविन को पत्र दि० २७–८–१५ अजमेर रेकॉर्ड, फाईल सख्या ५६।

शकरसहाय सक्सेना—राजस्थान केसरी श्री विजयसिंह पथिक की जीवनी (१६६३) पृ० ११४–११५।

५७. लै० कर्नल के द्वारा ई० कॉलविन को प्रस्तुत रिपोर्ट दिनांक २७–८–१५ अजमेर रेकॉर्ड, फाइल सख्या ५६ पृ० १२३–१३२।

५८. उपर्युक्त।

५६ सुरजनसिंह का बयान—अजमेर रेकॉर्ड, फाइल सख्या ५६।

६०. राजपूताना एजेन्सी गुप्त फाइल सख्या ५१ ए।

६१. हर प्रसाद—आजादी के दीवाने पृ० ६५,६६,६७।

६२. उपर्युक्त पृ० १३,१४।

६३. उपर्युक्त पृ० १५,१६।

६४. रामनारायण चौधरी—वर्तमान राजस्थान (१६४८) पृ० ३०।

शंकरसहाय सक्सेना—राजस्थान केसरी श्री विजयसिंह पथिक की जीवनी (१९६३) पृ० ६५।

६५. रामनारायण चौधरी—वर्तमान राजस्थान (१९४८) पृ० ३१-३२।

६६. रामनारायण चौधरी—वर्तमान राजस्थान (१९४८) पृ० ३२ से ३६।

६७. सीक्रेट इंटेलीजेन्स रिपोर्ट—अनुच्छेद ५६२ अजमेर रेकॉर्ड, फाइल संख्या ६८।

६८. सारदा—अजमेर हिस्टोरिकल एण्ड डिसक्रिप्टिव (१९४१) पृ० २९ से ३२।

रामनारायण चौधरी—वर्तमान राजस्थान (१९४८) पृ० ३।

शंकरसहाय सक्सेना—राजस्थान केसरी श्री विजयसिंह पथिक की जीवनी (१९६३) पृ० ८६।

सीक्रेट इन्टेलीजेन्स रिपोर्ट अनुच्छेद ६३ अजमेर रेकॉर्ड, फाइल, सं० ६८।

६९. तरुण राजस्थान—साप्ताहिक २७-७-१९२६—पृ० १३।

७०. सारदा—अजमेर हिस्टोरिकल एण्ड डिसक्रिप्टिव (१९४१) पृ० ३३ से ३६।

सीक्रेट इंटेलीजेन्स रिपोर्ट अनुच्छेद ५७० अजमेर रेकॉर्ड, फाइल सं० ६८।

७१. अजमेर रेकॉर्ड, फाइल संख्या ६८।

शब्दावली

अनुसूची (क)

अजमेर-मेरवाड़ा क्षेत्र मे स्थानीय बोली के प्रचलित शब्दो का अर्थ

आबी भूमि	तालाब के पेट की भूमि जो तालाब के भरने पर जलमग्न हो जाती है।
अर्हट	रहट या उस पर लगने वाला कर।
बारानी भूमि	वह भूमि जो कृषि के लिए पूर्णत वर्षा पर निर्भर करती हो।
बैसाख सुदि पूनम	वैशाख शुक्ला पूर्णिमा।
बिस्वा	बीघा का बीसवा भाग।
खूद	इस्तमरारदार द्वारा अपने घोड़ो और ढोरों के लिए किसानो से ली गई फसल।
ढाल	कुँए की जमीन का ढालू भाग।
बीस्वासी	बिस्वा का बीसवा हिस्सा (न्यूनतम नाप)
भोग	खेत की उपज म से हिस्सा (कर के रूप में)
बीघोड़ी	प्रति बीघा पर लिए जाने वाला न्यूनतम कर।
बीड़	घास का सुरक्षित मैदान या भूखण्ड।
बेगार	परिश्रम करवाने की दासता प्रथा जिसमे पारिश्रमिक न दिया जाए।

चाही भूमि	जो भूमि कुँओं से सिंचित की जाती है।
चवरी	लड़की के पिता द्वारा अपनी पुत्री के विवाह पर इस्तमरारदार को दी गई नकद भेंट।
रावरी जगा	वह भूमि जिसमें इस्तमरारदार अपनी खुदकाश्त के रूप में खेतिहर मजदूरों से फसल पैदा करवाता है।
कूंता	खड़ी फसल में इस्तमरारदार का हिस्सा निर्धारण करने की प्रक्रिया, भू-राजस्व का एक रूप।
खरीफ	यह फसल वर्षा पर आधारित होती है।
कांसा	सामूहिक भोजन पर सम्मिलित न होने पर घर पर भेजा गया भोजन।
खाजरू	भेड़ या बकरों की टोली में से जागीरदार द्वारा लिया गया बकरा या भेड़ा जो बलि के लिए काम लाया जाय।
कमीण	प्रायज—नाई, कुम्हार, सुथार, लुहार, दर्जी, धोबी, भंगी, चमार, बलाई इत्यादि जिनको फसल के मौके पर अनाज दिया जाता है, नगद नहीं दिया जाता।
खालसा	सरकार से सीधी नियन्त्रित भूमि।
खळा	फसल का खेत में साफ करने के लिए लगाया ढेर।
काकड़	बंजर, वन भूमि, अधिकांशतः ग्राम के सीमा क्षेत्र की भूमि जिसमें कृषि न होती हो और जो सुरक्षित बीड़ नहीं हो।
लाग	जबरन शुल्क।
लाटा या लटाई	खळे पर ही फसल का विभाजन कर इस्तमरारदार का हिस्सा अलग निकालने की प्रक्रिया।
माल भूमि	वह विशिष्ट भूमि जो बिना वर्षा के रबी की फसल देने में समर्थ हो।
माफीदार	वह भूमिधारक जिसे किसी को भू भोग नहीं देना होता।
नेवता	इस्तमरारदार द्वारा किसान के घर विवाह या मृत्यु भोज के अवसर पर आमन्त्रण और उस अवसर पर भेंट या नजराना।

नजराना	किसी काम की स्वीकृति लेने के लिए दी गई राशि जैसे उत्तराधिकार ग्रहण करने अथवा मकान या भू सपत्ति के हस्तातरण या स्वामित्व धारण करने के अवसर पर इस्तमरारदार को भेंट।
नेग धाणी तेल पाली धाणी पाली किराया धाणी	तेली के कोल्हू पर लगाए गए फुटकर कर।
नेग	बाँटा या विघोडी के अतिरिक्त नगदी के रूप मे इस्तमरारदार द्वारा किसानो से उगाहे गए उपकर।
पट्टा	भूमिधारक वर्ग के अधिकार प्रदान करने वाला प्रपत्र जो इस्तमरारदार से किसानो को प्राप्त होता है। किसान इसे भूमि पर अपने निरन्तर स्वामित्व के प्रमाणस्वरूप प्रस्तुत कर सकता था तथा आपसी विवादो मे अधिकार के निर्णय म यह पुख्ता प्रमाण सिद्ध हुआ करता था।
परवाना	एक तरह का अस्थाई अधिकार प्रपत्र, यह पट्टे से कुछ कम महत्व का माना जाता था।
पेशकसी हलसारा खालडी बरर (सपत्ति कर)	किसानो से उगाहे जाने वाला सपत्ति कर (इस्तमरारदार द्वारा)। खालडी—गैर किसानों से इस्तमरारदार द्वारा उगाहे जाने वाला सपत्ति कर।
पडाव फीस	ग्राम मे रात्रि वास करने का शुल्क।
पडतखाद	ग्राम की वह खाद जहाँ किसी का अधिकार न हो।
पडत खाल	उन मृत पशुओ का चमडा जिन पर किसी का अधिकार नहीं हो और परम्परागत ऐसी खालों को बेचने का अधिकार इस्तमरारदार को प्राप्त है।
सियालू फसल	रबी की फसल जिसकी बोवाई सर्दी म होती है।
ऊनालू फसल	खरीफ की फसल जिसकी बोवाई गर्मी में होती है।
राम राम या नजर	नगद नजर या भेंट।
रलाई	बीज बोने से पूर्व खेत में दिया गया पानी।

शहणा	भूमिपति द्वारा नियुक्त अधिकारी जो सरकारी फसल व कटाई आदि का प्रबन्ध हो।
साद	जमानत।
तालाबी जमीन	जलाशयो के निकट वाली भूमि।
थला	घास काट डालने के बाद बचा वह भू-भाग जो घास पैदा करने के लिए सुरक्षित रखा जाता है।

अनुसूची (ख)

इस्तमरारी जागीरो मे नगद कर अथवा "लाग" की वर्गीकृत सूची

१—मकान-चूंगी और भूमि-शुल्क—

इन दो मे से एक ही वसूल किया जाता था। जहाँ ये दोनो कर उगाए जाते थे वहाँ सामान्यत दूसरा कर "मकान चूंगी" न होकर किसी अन्य बहाने पर लिया जाता था और सुविधानुसार प्रत्येक मकान पर लागू किया जाता था। ये कर दो-चार आने से लेकर १० रुपये वार्षिक तक निर्धारित थे। ऊँची दरें गैर-काश्तकार या धनी लोगो से वसूल की जाती थी।

चूंगी का नाम	प्रयुक्त अर्थ
पेशकशी	सामान्यत किसानो से।
गोलरी	सामान्यत गैर काश्तकारों से।
बरर	"मांग"
सालिना या सालाना	"वार्षिक भुगतान"
मलबा	सामग्री का ढेर।
	सामान्यत यह शब्द सभी करो व चूंगियों के सम्मिलित रूप पर प्रयुक्त होता था जो प्रति खेत अथवा प्रति घर चुकाया जाता था।
अमराई	नियमित गृह-कर के साथ नाममात्र की चुराई जाने वाली राशि जो विकास के नाम पर ली जाती थी।
ग्राम खर्च	इसे इस्तमरारदार अपने ही हिसाब मे जोड लिया करते थे।
हलसारा	हल की चूंगी जो बहुधा प्रति घर से वसूली जाती थी।

किराया मकान	गृह-कर ।
नक्शा	लसाड़ियां मे प्रचलित लाग प्रति घर कुछ भागों पर ।
बांध	हिस्सा कभी-कभी अतिरिक्त गृह-कर के रूप में बांट-कर वसूल की जाने वाली राशि ।
टिगट	जैतपुरा मे प्रति घर १ रुपया की दर से वसूल विशिष्ट कर ।
सदाबंद	परम्परा से लिए जाने वाले दस्तूर ।
खरसड़	नादसी और कादेड़ा मे प्रयुक्त अतिरिक्त गृह-कर, यह विशेषतः हल की बेगार की छूट के एवज् मे वसूल किया जाता था ।
घूघरी	सरकारी अफसरों को दी जाने वाली भेंट ।
मवाज़्मा	सरकारी अधिकारियों के लिए विशिष्ट साधन ।
बाड़ा या बरर	बाड़े का कर रबी की फसल पर काम करने वाले
सिंचारी	मजदूरों के वेतन पर गृह-कर की एवज मे पीसागन मे लिया जाता था ।

२—जिला बोर्डों की चूंगी एवं चौकीदारी कर—

चूंगी का नाम	प्रयुक्त अर्थ
चौकी	हिफाज़्त के उपलक्ष मे लिए जाने वाली रकम ।
सड़क	जिला बोर्ड की चूंगी ।
खबर नवीस	ठिकाने द्वारा नियुक्त वेतन भोगी डाक लाने ले जाने वाला व्यक्ति ।

३—चराई कर 'जिसे कभी-कभी गांव शुमारी' के नाम से भी प्रयुक्त किया जाता था—

ये बहुधा सभी ठिकानों मे एक से थे और यदि इनकी पुरानी दरों में कुछ वृद्धि की जाती तो किसानों मे भारी असंतोष व्याप्त हो जाता था । सामान्य दरें निम्न थीं—

गाय, भैंस	८ आना
भोटी	४ आना
बकरी या भेड़	१ आना
मेमने या बकरी के बच्चे	६ पाई (दो कल्दार पैसे)

शहणा	भूमिपति द्वारा नियुक्त अधिकारी जो सरकारी फसल व कटाई आदि का प्रबन्ध हो।
साद	जमानत।
तालाबी जमीन	जलाशयो के निकट वाली भूमि।
बता	घास काट डालने के बाद बचा वह भू भाग जो घास पैदा करने के लिए सुरक्षित रखा जाता है।

अनुसूची (ख)

इस्तमरारी जागीरो मे नगद कर अथवा "लाग" की वर्गीकृत सूची

१—मकान-चूंगी और भूमि-शुल्क—

इन दो मे से एक ही वसूल किया जाता था। जहाँ ये दोनो कर उगाए जाते थे वहाँ सामान्यत दूसरा कर "मकान चूंगी" न होकर किसी अन्य बहाने पर लिया जाता था और सुविधानुसार प्रत्येक मकान पर लागू किया जाता था। ये कर दो-चार आने से लेकर १० रुपये वार्षिक तक निर्धारित थे। ऊँची दरें गैर-काश्तकार या धनी लोगो से वसूल की जाती थीं।

चूंगी का नाम	प्रयुक्त अर्थ
पेशकशी	सामान्यत किसानो से।
कोलरी	सामान्यत गैर काश्तकारो से।
वरर	"माँग"
सालिना या सालाना	"वार्षिक भुगतान"
मलबा	सामग्री का ढेर। सामान्यत यह शब्द सभी करो व चूंगियों के सम्मिलित रूप पर प्रयुक्त होता था जो प्रति खेत अथवा प्रति घर चुकाया जाता था।
अकराई	नियमित गृह-कर के साथ नाममात्र की चुराई जाने वाली राशि जो विकास के नाम पर ली जाती थी।
गाम खर्च	इसे इस्तमरारदार अपने ही हिसाब मे जोड लिया करते थे।
हलगारा	हल की चूंगी जो बहुधा प्रति घर से वसूली जाती थी।

किराया मकान	गृह-कर ।
नक्शा	ससाडियों में प्रचलित लाग प्रति घर कुछ आनो पर ।
बांच	हिस्सा कभी-कभी अतिरिक्त गृह-कर के रूप में बांट-कर वसूल की जाने वाली राशि ।
टिगट	जैतपुरा में प्रति घर १ रुपया की दर से वसूल विशिष्ट कर ।
सदाबद	परम्परा से लिए जाने वाले दस्तूर ।
तरखड़	नादसी और बादेडा में प्रयुक्त अतिरिक्त गृह कर, यह विशेषतः हल की बेगार की छूट के एवज में वसूल किया जाता था ।
घूघरी	सरकारी अफसरों को दी जाने वाली भेंट ।
सवाजमा	सरकारी अधिकारियों के लिए विशिष्ट सामान ।
बाड़ा या बरड़	बाड़े का कर रबी की फसल पर काम करने वाले
सिंचारी	मजदूरों के वेतन पर गृह-कर की एवज में पीसागन में लिया जाता था ।

२—जिला बोर्डों की चूंगी एवं चौकीदारी कर—

चूंगी का नाम	प्रयुक्त अर्थ
चौकी	हिफाजत के उपलक्ष में लिए जाने वाली रकम ।
सड़क	जिला बोर्ड की चूंगी ।
खबर नवीस	ठिकाने द्वारा नियुक्त वेतन भोगी डाक लाने ले जाने वाला व्यक्ति ।

३—चराई कर 'जिसे कभी कभी गाँव शुमारी' के नाम से भी प्रयुक्त किया जाता था—

ये बहुधा सभी ठिकानो में एक से थे और यदि इनकी पुरानी दरों में कुछ वृद्धि की जाती तो किसानों में भारी असंतोष व्याप्त हो जाता था । सामान्य दरें निम्न थीं—

गाय, भैंस	८ आना
झोटी	४ आना
बकरी या भेड़	१ आना
मेमने या बकरी के बच्चे	६ पाई (दो कल्दार पैसे)

४—भूस्वामी या ठिकानेदार के परिवार मे विवाह या अन्य समारोहो के अवसर पर प्रजा से उगाहा जाने वाला कर—

नाम कर	प्रयुक्त अर्थ
न्योता	विवाहादि या मृत सस्कारों पर प्रति घर बुलावा और उनसे वसूल किया जाने वाला कर।
भोल	इस्तमरारदार के पुत्र-पोत्रादि के जन्म एव विवाहादि के अवसरो पर प्रति घर से एक रुपया शुल्क वसूली (केवल जेतपुरा)।
मादली	एक अन्य विवाहादि कर जो न्योता जैसा ही होता है, कुछ ही ठिकानो मे लागू था—शोक्ली, मनोहरपुर, मादली आदि मे इसकी सामान्य दर एक रुपया थी।
जामणा	ठिकाने के बाहर ब्याही गई इस्तमरारदार की बहिन-बेटियो के पुत्र-पुत्री के जन्मोत्सव पर वसूल किया गया कर।
मायरा	राज्य-परिवार की बेटी के घर जन्म पर उगाया गया या उसी के विवाह के अवसर पर उगाया गया कर।
मुकलावा	इस्तमरारदार के घर से किसी के गौने के समय उगाही जाने वाली राशि।

५—आसामी के घर पर विवाहादि अवसरो पर वसूल किए जाने वाला कर—

चूनडी	यह एक नियमित रूप से वसूल किए जाने वाला विवाह-कर था और इससे ठिकानो को अच्छी आय हो जाती थी। आठ रुपए तक हैसियत के अनुसार वसूल किया जाता था।
कागली या नाता	विधवा पुनर्विवाह कर—सामान्य दर एक रुपया।
थानापाट	चूनडी के अलावा एक और कर जो जैतपुरा मे वसूला जाता था।
लगनशादी	कुछ मामलों में चूनडी के अलावा छोटे छोटे उपकर।

६—व्यवसाय-कर—

खदी	रँगरों और चमारो से लिया जाने वाला कर।
बसोला या खटोड	बढई (सुथार या खाती) की दुकान से वसूल किया गया कर, प्रति दुकान दो रुपए सात आने तक

	वार्षिक। कभी-कभी इसे भूमिकर माना जाता था।
पगरखी	चमारों से जूते बनवाई का कर।
हौद-भराई	मालियों के घर से प्रति घर चार आना।
तीवरी	महाजन के घर से प्रति घर पौने तीन आना।
दवात-पूजन	सवा रुपया प्रति घर हलवाइयों से वसूली।
रूखाली	साधुओं से पाँच आना प्रति घर।
खोड़ या सदावद	ढँकेतों के कैद रखने पर लिया जाने वाला कर जो जनसाधारण से वसूल होता था।
भाव	कुम्हारों का कर।
घासभारा	घास कटाई कर (जुनियाँ में प्रचलित)।
लाग महाजन	भू-स्वामी या जागीरदार द्वारा गेहूँ तथा अन्य सामान की खरीद पर महाजन द्वारा ली जाने वाली छूट रियायत।
रेजा रंगाई और कोठा नील	रंगरेज का कर।
मठा या दस्तूर रेगर	चमड़ा कमाने पर कर।
लगान औसरा	दुकान कर (बावनवाड़ा में प्रयुक्त)।
लगान रेजा	बुनकर का कर प्रति घर (देवलियाकलाँ में ५ रुपए प्रति घर सर्वाधिक)।
चौथ कदोई	हलवाई के वेतन का एक चौथाई।
पीनन खरीफ	धुनकों पर कर।
भखवान	रेगरों पर कर।

७—वाणिज्य कर—

गाडी या गाडी भाड़ा कर	सामान्य कर नहीं।
भरत	सामान्यतः ग्राम से निर्यातित सामान पर १ प्रतिशत विक्रय-मूल्य दर से वसूल किया जाता था। कभी-कभी आयातित वस्तुओं पर भी मंडियों एवं हाट में बिक्री कर के लिए प्रस्तुत सभी वस्तुओं पर चीफ कमिश्नर ने आदेश जारी कर अधिक से अधिक १ प्रतिशत कर-निर्धारण किया।

फेरा	ग्राम में विक्री के लिए महाजन द्वारा लाए गए सामान पर एक रुपए में आधे पैसे की दर से प्रयुक्त कर।
लदाई भैंसा	भैंसा-गाड़ी द्वारा ग्राम से माल बाहर ले जाने पर कर।
निकासी धारा या घास फूस इत्यादि	बाहरी लोगों को घास या फूस बेचने पर प्रति गाड़ी लागू कर कभी-कभी एक रु० पर एक आना तक।
परखाई	सिक्का जँचवाने का कर।
भरती गाड़ी	गाड़ी द्वारा सामान बाहर निर्यात करने पर कर।

८—नजराना—

उत्सवों पर ठाकुर की गद्दी नशीनी खेतो की पैमायश, ठाकुर के जन्मदिन पर तथा नवविवाहित व्यक्ति द्वारा ठाकुर को भेंट स्वरूप राशि। सामान्यतः प्रति गाँव एक रुपया अपवादस्वरूप अन्यथा पूर्व प्रस्तावित।

राम राम	इस्तमरारदार को सलाम करने दूल्हे द्वारा दिया गया रुपया का नजराना।
त्यौहार पर नजर होली, दशहरा, दिवाली	सामान्यतः पटेलों द्वारा परन्तु अन्य लोग भी हैसियत के अनुसार नजर करते हैं।
नजर डोरी	फसलों की नपाई पर पटेल द्वारा।
नजर आसोज और चैती	जुणिया और सारडा मे पटेलों द्वारा।
तीसाला	पटेलों द्वारा प्रति तीसरे या दूसरे साल।
लाग पटेलाई	कोढ़ा ग्राम मे पटेलों द्वारा प्रति वर्ष तीन रुपए।
नजर कूता	भिनाय मे प्रति गाँव दो रुपया।
पाट की नजर गद्दी नशीनी।	१) रु० प्रति घर उत्तराधिकार प्राप्ति पर।

९—ठिकाने के कर्मचारियों से संबंधित कर—

कामदार	ठाकुर के प्रतिनिधि को भेंट।
सेहना या सेहना भाभी	सामान्य फसल के रूप मे कभी-कभी नगदी में। सर्वाधिक केरोट ठिकानों में जहाँ एक रुपए पर उक्त कर एक आना था।
तमडा या ताम्हायत	राज्य द्वारा नियुक्त ब्राह्मण को विवाहादि पर सामान्यतः दी जाने वाली राशि।

ढोली या दमामी	ठिकाने के ढोली का कर (केवल ठिकाने द्वारा) नियुक्त ढोली ही बाजा बजा सकता था।
रुखाली या सासारी	प्रत्येक कर या खेत में रखवाली करने वाले का कर।
गाँव नेग	ठिकाने के नौकरों के लिए सामान्य कर।
मजर सालाना	पटेलों से प्रति वर्ष या प्रति दूसरे वर्ष।
साग दरख्त या भाडा दरख्त।	ठिकाने के कामदार को जिसकी देखरेख में पेड़ की कटाई हो प्रति वृक्ष एक आना।
दस्तूर नवाई	वसूली राशि में एक आना प्रति रुपया कामदार के लिए।
रखी तुलाई	तोलने का शुल्क अधिकतर फसल के रूप में कभी-कभी नकदी में भी।
पचकाऊ	विवाहादि अवसरों पर ठिकाने के कर्मचारियों तथा अंग्रेजों को दी जाने वाली नाममात्र की राशि।
सुगन भेंट या केसी पूजा	पैमायश के समय दिया गया शुल्क आमतौर पर ठिकानों द्वारा अपने उपभोग में ले लिया जाता था।
घवीनी	कूते के समय भोजन के उपलक्ष में दी जाने वाली राशि।
मनवा	(केवल दो गाँवों में लागू) देवलिया कला में कामदार की गुराबखाना में नाममात्र का शुल्क।
नवाई	गरवा के गाँवों के खातेदारों द्वारा प्रति गाँव एक बंधी राशि।

१०—भूराजस्व पर रियायत या छूट अथवा हिसाब पर शुल्क लगाने पर अतिरिक्त कर—

बसी	यह वास्तव में विनिमय का अन्तर है परन्तु इसके साथ और भी कई उपकर जुड़े हुए थे जैसे, कलदार और प्रचलित सिक्कों के विनिमय अन्तर की वसूली अन्तर न होने पर अथवा कम अन्तर पर भी अतिरिक्त की वसूली सामान्य बात थी। यह एक सामान्य और व्यापक कर था जो कृषकों पर थोपा हुआ था।
सवन्दा	प्रति रुपया १ प० तक।
तर्थ	प्रति रुपया दो आना रुपयों पर ([illegible])

मल्वा	जैतपुरा के किसानो की एक मरण ज्वार पर पौन आना। कुथल म १ आना, सावर मे भोग या ठिकाने के हिस्से।
घास बीड	पारा मे किसानो को जमीदार के लिए प्रचलित बाजार दर से एक रु० मे ६ आने मजूरी पर घास काटनी पडती थी।
अन्नी	फसल पर छोटा सा कर, मल्वा जैसा।
उगाई	शाब्दिक अर्थों मे वसूली खरवा मे प्रति क्षेत, कुँए या हल पर अतिरिक्त उपकर।
खाता	मसूदा के दो ग्रामी खातो पर पाँच प्रतिशत अतिरिक्त उपकर।
मप्ती	मसूदा के ठिकाने के किराए ग्राम मे बीघोडी के प्रति रुपए पर डेढ आने की दर से अतिरिक्त उपकर। भूमि की माप की दर।

११ बेगार के बदले मे वसूल किए जाने वाले उपकर—

बीड घास	घास कटाई के उपलक्ष मे शुल्क।
खड खड	प्रति हल १ रु० कभी-कभी इससे कम भी।
हलसरा हलवा	हल की बेगार के बदले अढाई रुपया प्रति हल।
भाडा गाडी	गाडी की बेगार के बदले।
सफाई गढ	कहारो द्वारा गुलगाँव मे सेवा के बदले प्रति घर चार आना।
लाग-बेगार	जाट और गूजरो से उनके बैलो से सेवा न लेने की एवजी मे कर, केबानिया मे ५ रुपए प्रति घर और पाडलिया में १ रुपया प्रति घर।
हल और जोड	गोविन्दगढ मे हल सारा के अलावा।

१२. मन्दिर का कर—

मन्दिर	प्रति खाता एक रुपया।
धर्मादा	निर्यात पर कर।

१३ सार्वजनिक सेवाओ पर कर अस्पताल एव भु सरक्षण व धर्मादा इत्यादि—

घोर या गावाई या तलाब	नालियों और जलाशयो की मरम्मत के लिए उगाहा जाने वाला कर।

कोट	जूनिया में किले की मरम्मत के लिए उगाही गई राशि।
शफाखाना	अस्पताल के लिए धन संग्रह बहुधा ठिकानो द्वारा अपने शफाखानो के कार्यों मे यह राशि व्यय कर दी जाती थी।
सायर या-ध	केवल भिनाय मे लागू।
चन्दा	सायर मे प्रति घर से दो आने से लेकर चार आने टीको एवं चिकित्सालयो के लिए।

१४ आटा की चक्कियो, चूने के भट्टो एवं तेल-घाणी एवं कोल्हू इत्यादि पर रायलिट—

लाग केही या शोरा	कलमीशोरा ठिकाने से बाहर निर्यात करने पर।
घाणी खट या तेल घाणी	तेली का कर सामान्यत प्रति कोल्हू परन्तु बहुधा घरों पर भी कभी-कभी नगदी में अन्यथा तेल के रूप मे।
लाग कोल्हू	प्रत्येक कुम्हार के भट्टे से या भट्टो से कुछ सौ खपरैल कर के रूप मे।
चक्की	भिनाय मे आटा चक्की कर।
भट्टे का चूना	प्रत्येक भट्टे से गिनती की चूने की टोकरिया।
किराया भट्टी	चूने निकालने की भट्टी का लायसेंस कर।

१५. नजराना—

यात्रा	इस्तमरारदार की तीर्थ-यात्रा पर नजराना।
नजराना गोद	उत्तराधिकारी प्राप्त करने पर या गोद लेने पर।
अन्य नजराने उत्तराधिकारी सम्बन्धी	
पटेलाई	पटेल द्वारा नियुक्ति पर नजराना।
पटवार पाना	पटवारी की बारी अनुसार नियुक्ति पर नजराना।

१६. खाता लिखित रसीद, रजिस्ट्री शुल्क—

बाँच	(हिस्सा) आठ आने से लेकर एक रुपया प्रति खाता।
गाँव	बाँच के अनुरूप ही कर।
लागडोरी	नपती के लिए प्रति खाता दो आने (मनोहरपुर मे)।
लेखा या लिखाई	लिखने या हिसाब जोड़ने का शुल्क।

चिट्ठी पट्टा	(बादनवाड़ा मे प्रचलित) सवा रुपया प्रति पट्टा।
काटा अगोतरी	अग्रिम राजस्व देने पर नाममात्र का उपकर।
पैमायश	पट्टे प्रदान करने पर लगान के प्रति रुपए पर एक पैसा अतिरिक्त कर, (पीसागन मे प्रचलित)।
पट्टा	पट्टा जारी करने पर शुल्क।

१७. पानी फालतू बहाने, नुकसान करने व सभी तरह के अनाधिकृत प्रवेशो पर जुर्माना वालो का शुल्क—

बाडा	मवेशियो के अनाधिकार प्रवेश पर अर्थ दड।
नुकसान जारायत	घास पेड़ो तालावो आदि की सामान्य क्षति पर।
मधलरारी	लाट मे देरी पर दड।
इजापत्र	नुकसान पर क्षतिपूर्ति कसरत की एवज मे कभी-कभी उक्त दड लागू किया जाता था।

१८ कुंओ पर कर—

बरर	प्रति कुंए पर जहां चडस या लाव चलता है। प्रति-लाव या चडस पर एक रुपया दस आने।
कुर	सामान्य कूप कर—प्राचीनकाल से चला आ रहा कर जो लेख बनवाने के लिए सभवत लकडी के उपयोग करने पर स्थापित किया गया था। लाव से अतिरिक्त कर।
खोर	कभी कभी कुर के समान ही उस किसान पर अर्थ दड के स्वरूप पाँच रुपए तक जो दूसरो के कुंओ पर से फसल सिंचित करते पाए जाते हो।
गाँव खर्च और नक्शा	सरकारी अधिकारियो तथा पैमायश वालो के लिए आतिथ्य खर्च।
हलसरा	हल चू गी (मनोहरपुर) में कुंओ पर चार रुपए प्रति कूप।
बावरा	मालियो और तेलियो पर मनोहरपुर मे विशेप कर।
साली वाज	(वाटा कोट मे) कूप कर।

१९. हल-शुल्क जो बेगार की एवज मे न हो—

हलवा खड खड	एक हल से अधिक नाप की भूमि पर कर।

हलसार	प्रति हल कर कभी-कभी गृह कर मान लिया जाता था।

२०. विविध उपकर : लगान तथा "लागों" के अतिरिक्त—

बीड़ कर	
दातली	हँसिए का कर।
कपरत	जहाँ निर्धारित क्षेत्र से अधिक फसल बोने पर कपास की निर्धारित सीमा खेत का चौथाई या आधा अथवा उससे अधिक बोने पर अर्थ दंड सामान्य लगान से दुगना, कुछ क्षेत्रों मे प्रति दस रुपए।
ठेका	बबूल के पत्ते बटोरने, लाख इकट्ठी करने, गाँव के मृत ढोरों की हड्डियाँ आदि का ठेका।
हक ठिकाना	पड़त खाल या गाँव मे मृत लावारिस पशु की खाल पर ठिकानेदार का अधिकार। घाट खाट-रोड़ी के ढेरों व पड़ाव की खाद पर ठिकाने का हक। पड़ाव-शुल्क-गाँव में रुकी बैलगाड़ियों पर चूंगी।
अहेरा	होली के दूसरे दिन शिकार वर्जन के लिए ग्राम महाजनों द्वारा ठाकुर को चूंगी।
मुतफरकत खर्च	(केवल मनोहरपुर मे) जागीरदार द्वारा यदाकदा वसूल किए जाने वाले उपकर।

अनुसूची (ग)

१. नेग और अन्य कर जो जिन्सो मे चुकाए जाते थे—

फसल के बँटवारे के समय नियमित नेग हिसाब मे लिए जाते थे जो राज्य के हिस्से भोग मे प्रति मण चालीस सेर पर दो सेर से १५ सेर तक वसूले जाते थे। केवेंडिश महोदय के समय मे भी प्रचलित थे —

साकी	(मसूदा में) भोग में दो से दस सेर प्रति मण।
धाराराज	सामान्य नेग ठिकाना।
कीना, कामदार, भाडा, कानूनगो	आमतौर पर ठिकाना वसूल करता था। कामदार को वेतन पर नियुक्त किया जाता था। कानूनगो [illegible]

कँवर कायली या कँवर मटकी	केवल कुँअर के लिए।
मंदिर नेग	कभी कभी देवता के उल्लेख से यह उपकर वसूल किया जाता था।
विविध	पशुओं के लिए या कबूतरों के लिए घास, चारा या दाना-पानी पर खर्च।
सुगन भेंट	खरीफ में ली जाने वाली नगद वसूली उल्लिखित नाम से।
तोल	पूर्णतया तोल के लिए प्रयुक्त कर परन्तु मेवारियों में यह ठिकाना नेग था।
भोम या दस्तूर	सामान्य नेग ठिकाना।
धर्मादा या सदावर्त	पुण्यार्थ कामों के लिए।
सेरूना	सेरी जैसा ही नेग, पर सेरू के अलावा कर वसूल किया जाता था।
सवाई बट्टी	भोम या इस्तमरारदार के हिस्से का एक चौथाई भारी नेग बादनवाड़ा में वसूला जाता था।
बढ़ोतरी	नगद वसूली को इजरफे से वसूल करना।
भाडा या किराया भोम	गढ़ तक अनाज ले जाने का खर्च वसूली।

२. ठिकाने के कर्मचारियों द्वारा ठिकाने के हिसाब के अतिरिक्त भी उपकर वसूली के अधिकार ठेके पर कभी-कभी दिए जाते थे इससे ठिकाने को भी नगद लाभ होता था। कई बार ठिकाना सीधा वसूल किया करता था और इससे उपकार्य के लिए नियुक्त कर्मचारियों को वेतन दिया जाता था। कई बार यह ठेके पर तब भी उठाया जाता था, जबकि उसकी वसूली उस सूरत में भी की जाती थी जबकि उस कार्य के लिए कर्मचारी नियुक्त न भी किया गया हो।

भव	पैमायश के लिए नियुक्त कर्मचारी।
तुलाई, पटवारी	तोलने वाले का शुल्क।
धार या मापा	
सेहान्गी	सहर्ष लिया गया शुल्क।
मीना हवलदार	चौकीदारी का शुल्क।

कूची (हरी, गांवा,) बरषा, हुबलक या पायला सामन्त सेर	ये सामान्यत गाँव के अन्त्यजों या ग्राम कर्मचारियों के लिए होते थे, परन्तु इसे कुछ ठिकाने या ठिकाने के कर्मचारी रखते थे ।
रखाला, कागलिया, सांसरी इत्यादि ।	फसल रखवाली वाले का कर ।
ढोली या दमामी	बाजे वाले का ।
विविध कर्मचारीगण, रसोईदार, भंगी, चौबदार, फर्राश, घरवादार	भुगतान असामान्य रहते थे ।
लाग कमीण	ठिकाने के कर्मचारियों का सामान्य उपकर ।
बचकी	फसल के माप के समय भगी या बलाई और सेहना फसल में से कुछ मुट्ठी भर लिया करते थे । बहुधा इन लोगों के सहायक नियुक्त होते थे जो यह काम किया करते थे ।

३ बांटा के अलावा लिया जाने वाला अनाज—

दूब	सागसब्जी बेचने वालों से नेग की सीमा निर्धारित नही थी ।
मुट्ठा या मकिया	सामान्यत सौ मुट्ठों तक परन्तु कई खेतों मे इससे भी अधिक ।
होला, डागी या छोला या बूटा	अन्न की बालिया ।
बीसवाया खुड	हरे चारे का उपकर, सामान्यत जौ की बालियां ।
काकडी खरबूजा	काछी लोगों से नेग वसूली ।
दोवडी	खेत की मेड पर उगी घास आदि ।

४. ग्राम में मृत पशुओं की खालों की रगाई पर ठिकाने के अधिकार के रूप में लिया गया उपकर—

खालियाना रंगर	चडस पर तैयार खाल ।
असवान या सूडिया	एक या दो खालें चरस के मुँह का कर चमारों से कभी-कभी नगदी के रूप मे ।
पगरखी या पापोज	चमारों से जूते, कभी-कभी नगदी के रूप में ।
पडीस या तगी पेरा	तग घोडे इत्यादि के लिए ।

डोलची	होली पर रेंगरो से चमडे की डोलची पानी खींचने के लिए या पिलाई के लिए।
५. विविध—	
खाजरू या बागोलाई	सामान्यत १ बकरा या मेढा प्रति २० भेडो पर, कभी-कभी नगद भुगतान, अधिक से अधिक तीन रुपए तक बलि के लिए।
दूध-दही	जाटों या गूजरो से कभी-कभी आवश्यकता पडने पर वसूली।
काड	ईंधन के लिए कडे।
केलू	कुम्हारो के प्रति घर से भट्टी से खपरेल।
भडा की घूघरी	होली के दूसरे दिन से अफीम, भांग।
घूघियाँ या चकमा	ऊनी साई या कम्बल, खटीक या गडरिया से।
गन्ने	सामान्यत किसान के गन्नें के खेतो से प्रति खेत १०० गन्नें।
गुड की भेली	गुड की ढेरी (पांच सेर के लगभग) प्रति गन्नें के खेत से।
खोडी	रेंगरो से घास की वसूली।
लागां भूसा	भूसा की वसूली।
लाग्नी	गडरिए से कुछ ऊन की वसूली।
मिर्च, गाजर, प्याज इत्यादि	आवश्यकतानुसार इन चीजो की वसूली।
बुनकरो पर कर	प्रति वर्ष सूत की एक लच्छी और एक तौलिया।
६. कांसे—	भोज सामग्री एव मिष्ठान्न पदार्थ मौसर या शादी के अवसर पर ठिकानेदार के लिए निर्धारित सख्या व मात्रा मे दिए जाते थे। इनकी सख्या व मात्रा एक ठिकाने के गांवो मे भी पृथक्-पृथक् थी। ठाकुरों द्वारा निर्धारित कांसो की सख्या मे अत्यजो व कर्मचारियो के कांसो की सख्या सम्मिलित नहीं है। सामान्यतः ठिकाने को बहुत कम कांसे जाते थे कुछ स्थानो पर इनकी सख्या निश्चित थी, उदाहरणस्वरूप ६८ कांसे। कुछ लोग इसकी एवज मे नगद राशि दे देते थे, अधिकतम १५ रुपयो तक।

तामडायत (पुरोहित या पण्डा आदि)
नट
मेहतर
रँगर
धोबी
टिड्डी वाला
बावर या बागरा
चमार